1

भारतीय अर्थव्यवस्था में राजस्थान की स्थिति

(Position of Rajasthan in Indian Economy)

राजस्थान 'एक पिछड़ी हुई अर्थव्यवस्था में एक पिछड़ा हुआ प्रदेश' (A backward region in a backward economy) माना गया है। सर्वप्रथम स्वयं भारतीय अर्थव्यवस्था एक अल्पविकसित व पिछड़ी हुई अर्थव्यवस्था मानी गई है, और द्वितीय राजस्थान की अर्थ व्यवस्था तो इसमें एक पिछड़े हुए प्रदेश को भाँति ही है। इस अध्याय में जनसंख्या, क्षेत्रफल कृषि, उद्योग व आधार-ढाँचे (इन्फ्रास्ट्रक्चर) की दृष्टि से भारत में राजस्थान की स्थिति का विवेचन किया जाएगा और साथ में अन्य राज्यों की स्थिति से भी इसकी तुलना की जाएगी।

राजस्थान अपने वर्तमान रूप मे 1 नवम्बर, 1956 को 19 देशी रियासतों तथा 3 सामन्ती राज्यो के एकीकरण से गठित हुआ था। इन रियासतों के आकार, जनसख्या, प्रशासनिक स्वरूप व क्षमता तथा सामाजिक-आर्थिक विकास के स्तर मे काफी अन्तर पाया जाता था। वर्ष 2003 में राज्य 32 जिलो विभक्त रहा है। इसमे 188 सब-डिवीजन, 241 तहसीले, 183 नगरपालिकाएँ, 9189 ग्राम पंचायते, 237 पंचायत समितियाँ तथा 222 शहर हैं। 2001 में राज्य में रेवेन्यू-गाँवो की संख्या 41353 तथा बसे हुए गाँवो की संख्या 39753 थी।

राजस्थान का क्षेत्रफल लगभग 3.42 लाख वर्ग किलोमीटर है और मध्य प्रदेश में से छत्तीसगढ के नए राज्य बनने के बाद अब यह भारत का सबसे बड़ा राज्य बन गया है। राज्य की पाकिस्तान के साथ काफी लम्बी अन्तर्राष्ट्रीय सीमा है। यह उत्तर पूर्व में पंजाब, हरियाणा व उत्तर प्रदेश से, दक्षिण-पूर्व में मध्य प्रदेश से तथा दक्षिण-पश्चिम में गुजरात से घिरा हुआ है। अरावली पहाड़ी शृंखला राज्य के बीच में से दक्षिण पश्चिम से उत्तर पूर्व की ओर जाती है। इन पहाड़ियों के पश्चिम व उत्तर-पश्चिम में ''थार का रेगिस्तान'' पड़ता है, जिसके 11 जिलों में राज्य के क्षेत्रफल का लगभग 61% आता है तथा इस भाग में राज्य की जनसंख्या का 40% निवास करता है।

राजस्थान की अर्थव्यवस्था के कुछ प्रमुख सूचक भारतीय अर्थव्यवस्था के सन्दर्भ में अग्र तालिका में प्रस्तुत किए गए हैं। इन पर विभिन्न क्षेत्रों के अनुसार आगे चलकर सविस्तार विचार किया जाएगा। यहाँ इन पर एक नजर डालना काफी उपयोगी होगा।

क्र सं.	मद	वर्ष	राजस्थान	भारत	राजस्थान का समस्त भारत में अंश या अन्य टिप्पणी
1	जनसख्या	2001	5 56 करोड	102 70 करोड	5 5%
2	क्षेत्रफल	2001	लगभग 3 42 लाख वर्ग किमी (342239 वर्ग किमी)	लगभग 32 87 लाख वर्ग किमी (3287263 वर्ग किमी.)	10 4% (देश में प्रथम स्थान)
3	जनसख्या की दसवर्षीय वृद्धि-दर	1991-2001	28 33%	21 34%	भारत से ज्यादा
4	कुल साक्षरता-दर (7 वर्ष व अधिक आयु-वर्ग में)	2001	61 03%	6[illegible] 38%	भारत से नीची
5	घनत्व (प्रति वर्ग किमी मे जनसख्या)	2001	165	324	भारत से कम
6	अनुसूचित जाति का जनसख्या में अनुपात	2001	17 16%	16 33% (1991)	भारत से थोडा ज्यादा
7	अनुसूचित जनजाति का जनसख्या में अनुपात	2001	12 56%	8 01% (1991)	भारत से काफी ज्यादा
8	खाद्यान्नो में क्षेत्रफल	2002-03 (फाइनल)	8 61 मिलियन हैक्टेयर	111 5 मिलियन हैक्टेयर	7.7%
9	रिपोर्टिंग फैक्ट्रियों की सख्या	1999-2000	5160	133234	3.9%
10	प्रति हैक्टेयर बोए गए क्षेत्र-फल पर उर्वरकों का उपभोग	2002-03	28 54	84 82	भारतीय स्तर का 34% (1/3)
11	जोतों का औसत आकार	1995-96	3 96 हैक्टेयर	1 41 हैक्टेयर	भारत का 2 8 गुना
12.	इन्फ्रास्ट्रक्चर के सापेक्ष विकास का सूचकांक	नवीनतम्*	76	100	राष्ट्रीय स्तर का 3/4
13	विद्युत का प्रति व्यक्ति उपभोग	2002-03	291 किलोवाट घंटे (kwh)	373 किलोवाट घंटे (kwh)	राष्ट्रीय स्तर का 78%
14	सडकों की लम्बाई (प्रति 100 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में)	2001-2002	44 07 किलोमीटर	74 90 किलोमीटर	राष्ट्रीय औसत का लगभग 3/5
15	ग्रामीण विद्युतीकरण	दिनांक 31-3-03	97 4%	83 8%	राष्ट्रीय स्तर से कुछ अधिक
16	प्रति व्यक्ति आय (1993-94 के मूल्यों पर) (स्थिर भावों पर) (अग्रिम)	2003-04	8571	11684	भारत की प्रति व्यक्ति आय का लगभग 73% (लगभग 3/4)

[स्रोत : **Statistical Outline of India 2003-2004 (Tata Services Ltd.), Economic Survey 2003-04 (GOI) and Economic Review 2003-04 (GOR)**]

* Eleventh Finance Commission Report, June 2000, p.218, a study by Anant, Krishna and Roy Choudhry (1999)

उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट होता है कि राजस्थान में जनसंख्या की वार्षिक वृद्धि-दर भारत की तुलना में ज्यादा है। यहाँ जोतों का औसत आकार भी राष्ट्रीय औसत से काफी ऊँचा पाया जाता है। लेकिन राज्य का इन्फ्रास्ट्रक्चर आज भी काफी कमजोर है और भविष्य में उसका विकास किए जाने की काफी सम्भावनाएँ हैं। अब हम विभिन्न क्षेत्रों के अनुसार राजस्थान की स्थिति पर विस्तृत रूप से प्रकाश डालेंगे।

1. जनसंख्या की दृष्टि से राजस्थान की स्थिति

2001 की जनगणना के परिणामों के अनुसार, **राजस्थान की जनसंख्या लगभग 5.65 करोड़ व्यक्ति रही है,** जबकि भारत की कुल जनसंख्या लगभग 102.70 करोड़ आँकी गई है। **अतः 2001 में राजस्थान की जनसंख्या भारत की कुल जनसंख्या का लगभग 5.5% रही है।** 1991 की जनगणना के अनुसार, यह अनुपात लगभग 5.2% रहा था। इस प्रकार 2001 में राजस्थान का भारत की कुल जनसंख्या में अंश मामूली बढ़ा है। 1981-91 की अवधि में भारत की जनसंख्या में 23.85% की वृद्धि हुई, जबकि राजस्थान की जनसंख्या में 28.44% की वृद्धि हुई थी। 1991-2001 की अवधि में जहाँ भारत की जनसंख्या में 21.34% की वृद्धि हुई, वहाँ राजस्थान की जनसंख्या में लगभग 28.33% की वृद्धि हुई। इस प्रकार, यद्यपि 1991-2001 की अवधि में राजस्थान की जनसंख्या में 1981-91 की अवधि की तुलना में वृद्धि-दर में मामूली गिरावट आई है, फिर भी यह भारत में हुई जनसंख्या की वृद्धि-दर से अधिक रही। अतः राजस्थान में जनसंख्या समस्त भारत की तुलना में अधिक तेज रफ्तार से बढ़ रही है, जो एक चिन्ता का विषय है।

भारत में 25 राज्य और 7 संघीय प्रदेश हैं। 25 राज्यों में 2001 में जनसंख्या के घटते हुए क्रम में राजस्थान का आठवाँ स्थान रहा है। सर्वाधिक जनसंख्या उत्तर प्रदेश की रही है जो लगभग 16.61 करोड़ थी। यह भारत की कुल जनसंख्या का 16.2% थी। सबसे कम जनसंख्या वाला राज्य सिक्किम रहा है, जिसकी जनसंख्या मात्र 5.40 लाख ही है, जो भारत की जनसंख्या का 0.05% थी।

जनसंख्या की दृष्टि से राजस्थान की स्थिति कुछ राज्यों की तुलना में निम्न तालिका में दर्शाई गई है—

2001 की जनगणना के अनुसार

राज्य	समस्त भारत की जनसंख्या का (%)	भारत में स्थान
राजस्थान	5.5	8
गुजरात	4.9	10
महाराष्ट्र	9.4	2
मध्य प्रदेश	5.9	7
उत्तर प्रदेश	16.2	1

2001 की जनगणना के अनुसार राजस्थान का स्थान जनसंख्या की दृष्टि से आठवाँ आता है। इससे अधिक जनसंख्या उत्तर प्रदेश, महाराष्ट्र, बिहार, पश्चिम बंगाल, आंध्र प्रदेश, तमिलनाडु व मध्य प्रदेश में पाई गई हैं।

लिंग-अनुपात (Sex Ratio) : प्रति एक हजार पुरुषों के पीछे स्त्रियों की संख्या लिंग अनुपात कहलाती है। 2001 में राजस्थान में लिंग-अनुपात भारत व कुछ अन्य राज्यों की तुलना में इस प्रकार रहा—

लिंग अनुपात[1]	
भारत	933
राजस्थान	922
केरल	1058
तमिलनाडु	986
हरियाणा	861
मध्य प्रदेश	920
पंजाब	874
उत्तर प्रदेश	898

इस प्रकार राजस्थान में लिंग-अनुपात तमिलनाडु से तो कम रहा, लेकिन उत्तर प्रदेश से अधिक पाया गया। केरल में यह सर्वाधिक पाया गया है। वहाँ स्त्रियों की संख्या पुरुषों से अधिक है। वहाँ 2001 में यह 1058 रही, जो 1991 के 1036 से कुछ अधिक थी। भारत व राजस्थान में लिंग-अनुपात में कुछ वृद्धि हुई है। 1991 में राजस्थान में लिंग-अनुपात 910 रहा था। अतः 2001 में इसमें 12 बिन्दुओं की वृद्धि हुई है।

जनसंख्या का घनत्व[2]

प्रति वर्ग किलोमीटर में जनसंख्या का निवास जनसंख्या का घनत्व कहलाता है। 2001 में घनत्व की स्थिति निम्न तालिका में दर्शाई गई है—

भारत	324
बिहार	880
राजस्थान	165
पश्चिम बंगाल	904
केरल	819
उत्तर प्रदेश	689
पंजाब	482
दिल्ली	9,294

1 Some Facts About Rajasthan, 2003, (June 2003), pp 65-66

2 ibid, pp 65-66.

उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट होता है कि राजस्थान में जनसंख्या का घनत्व भारत की तुलना में लगभग आधा है। 1991 में राजस्थान का घनत्व 129 था। अत: 2001 में घनत्व में पहले की अपेक्षा वृद्धि हुई है। 2001 में 28 राज्यों में सबसे ज्यादा घनत्व पश्चिम बंगाल में 904 तथा सबसे कम अरुणाचल प्रदेश में 13 था। 2001 में दिल्ली प्रदेश में घनत्व 9,294 रहा था, जो सर्वाधिक था।

साक्षरता-दर (Literacy Rate)—जो व्यक्ति एक साधारण पत्र लिख-पढ़ सकते हैं, वे साक्षर माने जाते हैं। राजस्थान की साक्षरता-दर भारत व अन्य राज्यों की तुलना में काफी नीची रही है। अब साक्षरता की दर का अनुमान लगाते समय साक्षर व्यक्तियों की संख्या में सात व अधिक आयु के व्यक्तियों की संख्या का भाग दिया जाता है। 1981 के आँकड़े भी इस नई परिभाषा के अनुसार संशोधित किए गए हैं। राजस्थान में महिला-वर्ग में साक्षरता-दर बहुत नीची पाई जाती है।

2001 में साक्षरता-दर की स्थिति आगे की तालिका में दी गई है[1]—

(% में)

राज्य	कुल व्यक्तियों में	पुरुषों में	महिलाओं में
राजस्थान	61 0	76 5	44 3
भारत	65 4	75 9	54.2
केरल	90 9	94 2	87 9
बिहार	47 5	60 3	33 6

2001 में राजस्थान में साक्षरता की दृष्टि से काफी सुधार हुआ है। यह 1991 में लगभग 38.6% से बढ़ कर 2001 में लगभग 61% पर आ गयी है। बिहार की स्थिति इस दृष्टि से काफी पिछड़ी हुई है। महिला-साक्षरता की दर राजस्थान में बिहार से ऊँची हो गई है। 2001 में बिहार में महिला-वर्ग में साक्षरता की दर 33.6% थी, जबकि राजस्थान में यह 44 3% हो गई है। आगे भी राजस्थान को महिला-वर्ग में साक्षरता बढ़ाने की दृष्टि से विशेष प्रयास करना होगा। आज भी राजस्थान में ग्रामीण क्षेत्रों में महिला-वर्ग में साक्षरता की दर नीची पाई जाती है जिसे बढ़ाने की आवश्यकता है।

2. क्षेत्रफल की दृष्टि से राजस्थान की स्थिति

अब क्षेत्रफल की दृष्टि से राजस्थान का भारत में प्रथम स्थान आता है। वर्ष 2001 में राजस्थान का क्षेत्रफल लगभग 3.42 लाख वर्ग किलोमीटर था, जो भारत के कुल क्षेत्रफल का 10 41% था। मध्य प्रदेश से छत्तीसगढ़ के अलग हो जाने के बाद राजस्थान क्षेत्रफल की दृष्टि से भारत का सबसे बड़ा राज्य बन गया है।

---

1 Provisional Population Totals, Paper I of 2001 Raj 27 March, 2001, p 38

राजस्थान के अन्य पड़ौसी राज्यों की स्थिति क्षेत्रफल की दृष्टि से इस प्रकार है[1]—

भारत के क्षेत्रफल का अंश (17 राज्यों की सूची में)

	प्रतिशत	भारत के राज्यों में स्थान
महाराष्ट्र	9.36	3
आन्ध्र प्रदेश	8.37	4
गुजरात	5.96	7
हरियाणा	1.34	16
उत्तर प्रदेश	7.27	5

इस प्रकार राजस्थान का क्षेत्रफल भारत के कुल क्षेत्रफल का 10.41% (लगभग दसवाँ भाग है), जबकि गुजरात का 6% तथा उत्तर प्रदेश का लगभग 7.3% है । क्षेत्रफल की दृष्टि से ऊँचा अनुपात होने के कारण ही राजस्थान राज्यों की ओर किए जाने वाले केन्द्रीय आयकर व संघीय उत्पाद-शुल्क के राजस्व के के हस्तान्तरणों में 'क्षेत्रफल' को एक आधार के रूप मे शामिल किए जाने पर सदैव बल देता रहा है, जिसे दसवें वित्त आयोग ने 5% भार के रूप मे पहली बार शामिल किया है । **राज्य के क्षेत्रफल की दूसरी विशेषता यह है कि 11 मरु जिलों में कुल क्षेत्रफल का 61 प्रतिशत अंश पाया जाता है, जबकि इन जिलों में राज्य की 40 प्रतिशत जनसंख्या ही निवास करती है । ये जिले अरावली पर्वतमाला के पश्चिम में "थार मरुस्थल" में पाये जाते हैं ।**

यही कारण है कि राज्य की अर्थव्यवस्था तथा इनके निवासियों को निरन्तर सूखे व अभाव की समस्याओ से जूझना पड़ता है ।

3. कृषि की दृष्टि से भारत में राजस्थान की स्थिति

(*i*) 1995-96 की कृषिगत संगणना के अनुसार राजस्थान में कार्यशील जोत का औसत आकार 3.96 हैक्टेयर पाया गया (समस्त भारत में 1.41 हैक्टेयर) । यह 1990-91 में 4.11 हैक्टेयर रहा था (समस्त भारत में 1.57 हैक्टेयर) । 1995-96 में 17 राज्यों की औसत कृषि-जोत के आकार की दृष्टि से राजस्थान का स्थान सर्वोच्च रहा था । दूसरा स्थान पंजाब का रहा था, जिसकी औसत जोत 3.79 हैक्टेयर रही थी ।

कुछ अन्य राज्यों की स्थिति इस प्रकार रही—

(1995-96 में औसत जोत का आकार)[2]

(हैक्टेयर में)

गुजरात	2.62
मध्य प्रदेश	2.28
उत्तर प्रदेश	0.86
पश्चिम बंगाल	0.85

1 Economic Review 2003-04, table 10, Statewise Important Economic Indicators.

2 ibid, table 10

इस प्रकार कार्यशील जोतों के औसत आकार की दृष्टि से राजस्थान की स्थित उत्तम मानी गई है । । तालिका से पता चलता है कि उत्तर प्रदेश व पश्चिम बंगाल में यह एक हैक्टेयर से भी कम हो गई है ।

(ii) **कुल कृषित क्षेत्रफल**[1]—2001–02 में राजस्थान में भारत के कुल कृषित क्षेत्रफल का 11.1 प्रतिशत पाया गया । मध्य प्रदेश में यह 13.5% महाराष्ट्र में 11.5% तथा उत्तर प्रदेश में 13 8% प्रतिशत रहा । बिहार मे केवल 5.2 प्रतिशत ही पाया गया । इस प्रकार भारत में कुल कृषित क्षेत्रफल की दृष्टि से राजस्थान का अंश संतोषजनक माना जा सकता है । इस सूचक के अनुसार भारत में राजस्थान का स्थान चतुर्थ रहा । प्रथम स्थान उत्तर प्रदेश, द्वितीय स्थान मध्यप्रदेश व तृतीय स्थान महाराष्ट्र का रहा । 2001–02 में राजस्थान में कुल कृषित क्षेत्रफल राज्य के कुल रिपोर्टिंग क्षेत्रफल का *60.7%* रहा था । यह 2000–01 में लगभग 56 1% रहा था ।

(iii) **सिंचाई व उर्वरकों के उपभोग की दृष्टि से स्थान**[2]—राजस्थान में 2001–02 में सकल सिंचित क्षेत्रफल सकल कृषित क्षेत्रफल का 32 43% रहा, जबकि समस्त भारत में वर्तमान में यह अंश लगभग 39% है । इस प्रकार सिंचित क्षेत्रफल के दृष्टि से राजस्थान का अंश भारत की तुलना में थोड़ा नीचा पाया जाता है । 2002–03 में राजस्थान में सकल सिंचित क्षेत्रफल सकल कृषि क्षेत्रफल का 39 9% रहा था ।

2002–03 में राजस्थान में प्रति हैक्टेयर बोये गए क्षेत्रफल के अनुसार रासायनिक उर्वरकों का उपभोग 28.5 किलोग्राम रहा, जबकि समस्त भारत के लिए यह औसत 84.8 किलोग्राम था । मध्यप्रदेश मे यह 36.4 किलोग्राम, बिहार में 87.2 किलोग्राम तथा उत्तर प्रदेश में 126.5 किलोग्राम पाया गया । पंजाब में प्रति हैक्टेयर बोये गए क्षेत्रफल पर उर्वरकों का उपभोग 175 किलोग्राम पाया गया । इस प्रकार उर्वरकों के उपभोग की दृष्टि से राजस्थान काफी पिछडा हुआ है । मोटे तौर पर यह कहा जा सकता है कि आज भी राजस्थान मे प्रति हैक्टेयर उर्वरको का उपभोग समस्त भारत की तुलना में काफी कम पाया जाता है ।

(iv) **प्रमुख फसलों के उत्पादन में राजस्थान की समस्त भारत में स्थिति**[3]—पिछले वर्षों में राजस्थान देश में तिलहन के उत्पादन की दृष्टि से एक महत्त्वपूर्ण राज्य के रूप में उभरा है । देश के तिलहन उत्पादन का लगभग 1/8 भाग राजस्थान में होने लगा है । राई व सरसों (rape and mustard) के उत्पादन में यह अग्रणी राज्य हो गया है । यहाँ देश की कुल राई व सरसों के उत्पादन का लगभग 31% अंश होने लगा है । 2002–03 में राज्य मे राई व सरसो का उत्पादन 11.8 लाख टन तथा समस्त भारत में 39 लाख टन आँका गया है ।

---

1 Stastical Outline in India 2003-04 p 140

2 Economic Review 2003-2004, Govt of Raj p 48, Economic Survey 2003-04, p 164, & (for fertilisers) Agricultural Statistics, Raj 2001-02, p 1

3 Economic Survey 2003-2004, p S-16 & Economic Review 2003-2004 Govt of Raj , pp 41-42

राज्य के खाद्यान्नों के उत्पादन में प्रतिवर्ष भारी उतार-चढ़ाव आते रहते हैं । 2001-02 में राजस्थान में खाद्यान्नों का उत्पादन 140 लाख टन रहा जबकि इसी वर्ष समस्त भारत में यह 21.2 करोड़ टन रहा । इस प्रकार 2001-02 में राजस्थान में खाद्यान्नों का उत्पादन समस्त भारत की तुलना में लगभग 6.6% रहा । 1996-97 से 1999-2000 का खाद्यान्नों का औसत उत्पादन लेने पर राजस्थान का अंश 6 3% रहा था । गेहूँ में राजस्थान के लिए यह अंश 9 6% व चावल में 0.2% रहा था । राजस्थान कपास का भी एक महत्त्वपूर्ण उत्पादक राज्य माना गया है । लेकिन तिलहन के उत्पादन में राजस्थान की भूमिका विशेष रूप से सराहनीय हो गई है । 2001-02 के संशोधित अन्तिम अनुमानों के अनुसार राज्य में तिलहन का उत्पादन 31.3 लाख टन हुआ, जो 2002-03 के अन्तिम अनुमानों में 17.6 लाख टन तथा 2003-04 के लिए सम्भावित उत्पादन 39.4 लाख टन आँका गया है ।

4. उद्योगों की दृष्टि से राजस्थान की भारत में स्थिति

(*i*) राज्य की शुद्ध घरेलू उत्पत्ति व श्रमशक्ति में उद्योगों का अंश– उद्योगो मे विनिर्माण (Manufacturing) (पजीकृत व अपजीकृत), निर्माण तथा विद्युत, गैस व जल-पूर्ति लेने पर 1999-2000 मे राजस्थान मे उद्योगो का योगदान राज्य की शुद्ध घरेलू उत्पत्ति मे (1993-94 के मूल्यो पर) 25 7% रहा, जबकि समस्त भारत के लिए यह अश 24 4% रहा।

केवल विनिर्माण (manufacturing) को लेने पर राजस्थान मे 1999-2000 मे इसका अश मात्र 12% रहा। इस प्रकार (पजीकृत व अपजीकृत) विनिर्माण मे राजस्थान को अपना अश 12% से ऊँचा करने का प्रयास करना होगा। 1991 मे मुख्य श्रमिको (main workers) मे खनन, उद्योग (पारिवारिक व अन्य) तथा निर्माण मे लगे श्रमिको का अश राजस्थान मे 10 9% तथा भारत मे 12.75% पाया गया।

(*ii*) उद्योगों के वार्षिक सर्वेक्षण (Annual Survey of Industries) **के आधार पर राजस्थान की फैक्ट्री-क्षेत्र की स्थिति**—वर्ष 1999-2000 के लिए रिपोर्टिंग फैक्ट्री-क्षेत्र की सूचना के आधार पर राजस्थान की स्थिति इस प्रकार रही ।[1]

1999-2000 में अंश (प्रतिशत में)

	रिपोर्टिंग फैक्ट्रियों की संख्या में	श्रम-लागत (Labour Cost)	कर्मचारियों की संख्या	विनिर्माण द्वारा शुद्ध जोड़े गए मूल्य में (Net Value Added)
राजस्थान	39	29	26	21

1 Annual Survey of Industries 1999-2000 (CSO), March 2001, Quick Estimates, Various tables

इस प्रकार 1999-2000 में फैक्ट्री क्षेत्र के विभिन्न सूचकों में राजस्थान का अंश समस्त भारत में 3 से 4 प्रतिशत रहा है, जो राज्य की पिछड़ी औद्योगिक दशा का सूचक है। लेकिन वर्तमान में स्थिति में सुधार हुआ है, क्योंकि पिछले वर्षों में राज्य में औद्योगिक विकास के प्रयास किए गए हैं।

1999-2000 में फैक्ट्री-क्षेत्र के सम्बन्ध में कुछ राज्यों की स्थिति निम्न तालिका में दर्शाई गई है—

	रिपोर्टिंग फैक्ट्रियों की संख्या	श्रम-लागत (करोड़ रु. में)	कर्मचारियों (Employees) की संख्या (लाखों में)	विनिर्माण द्वारा जोड़े गए शुद्ध मूल्य (NVA) (करोड़ रु. में)
राजस्थान	5160	1690	2.64	3197
गुजरात	15210	6002	9.03	19868
महाराष्ट्र	19235	12433	14.40	37741
भारत	133234	57719	99.0	155343

तालिका से पता चलता है कि राजस्थान में फैक्ट्री-क्षेत्र का विकास काफी पिछड़ा हुआ है। 1999-2000 में गुजरात में फैक्ट्री-क्षेत्र में स्थिर पूँजी राजस्थान की तुलना में लगभग 3.4 गुनी व विनिर्माण द्वारा जोड़े गए मूल्य में 6.2 गुनी राशि पाई गई, जबकि भारत की जनसंख्या में दोनों का अंश लगभग 5% पाया जाता है, हालांकि क्षेत्रफल में राजस्थान का अंश 10.4% व गुजरात का 6% है। आर्थिक साधन, जैसे खनिज पदार्थ आदि, दोनों में पाये जाते हैं। लेकिन गुजरात औद्योगिक दृष्टि से उन्नत माना जाता है, जबकि राजस्थान अभी भी पीछे है। उपर्युक्त तालिका से यह भी स्पष्ट होता है कि महाराष्ट्र में फैक्ट्रियों में कर्मचारियों की संख्या राजस्थान की तुलना में लगभग 5.5 गुनी पाई जाती है, जिससे राजस्थान के पिछड़ेपन का अनुमान लगाया जा सकता है।

हम आगे के अध्यायों में देखेंगे कि राजस्थान में शक्ति के विकास की सम्भावनाएँ काफी मात्रा में विद्यमान हैं जिनका समुचित विदोहन करके वह भी एक अग्रणी औद्योगिक राज्य बन सकता है।

1986-87 में प्रथम बार राजस्थान का फैक्ट्री-क्षेत्र में विनिर्माण द्वारा जोड़े गए शुद्ध मूल्य (NVA) में घटते हुए क्रम में दसवाँ स्थान आया था। लेकिन यह स्थिति आगे के वर्षों में जारी नहीं रह सकी। इससे पूर्व भी इसको यह स्थान कभी प्राप्त नहीं हुआ था।

हमें यह स्मरण रखना होगा कि राजस्थान की स्थिति, हाथकरघा, दस्तकारी व ग्रामीण उद्योगों में विशेष रूप से उल्लेखनीय है। राज्य रत्न व आभूषणों, गलीचों, दस्तकारी के सामान, आदि के निर्यात से काफी विदेशी मुद्रा अर्जित कर सकता है। अत: इस क्षेत्र पर अधिक ध्यान देने की आवश्यकता है।

5. आधार-ढाँचे (Infrastructure) की दृष्टि से राजस्थान की भारतीय अर्थव्यवस्था में स्थिति

आधार ढाँचे के अन्तर्गत विद्युत, सिंचाई, सड़कों, रेलों, डाकघर, शिक्षा, स्वास्थ्य एवं बैंकिंग की स्थिति का अध्ययन किया जाता है। सिंचाई पर पहले प्रकाश डाला जा चुका है। ताजा अनुमानों के आधार पर आधार-ढाँचे के सापेक्ष विकास के सूचकांक निम्न तालिका में दर्शाए गए हैं[1]—

नवीनतम सूचना के अनुसार (समस्त भारत = 100)

	आधार-ढाँचे के सापेक्ष विकास का सूचकांक	14 गैर-विशिष्ट श्रेणी के राज्यों में स्थान
राजस्थान	76	14
गुजरात	124	—
हरियाणा	138	—
मध्य प्रदेश	77	—
उत्तर प्रदेश	101	—
पंजाब	188	—
समस्त भारत	100	—

14 गैर-विशिष्ट श्रेणी के राज्यों (गुजरात, हरियाणा, कर्नाटक, महाराष्ट्र, पंजाब, पश्चिम बंगाल, आन्ध्र प्रदेश, बिहार, केरल, मध्य प्रदेश, उड़ीसा, राजस्थान, तमिलनाडु व उत्तर प्रदेश) में आधार-ढाँचे के सापेक्ष विकास के सूचकांक की दृष्टि से राजस्थान का 14वाँ स्थान पाया गया है। इससे इस दिशा में इसके अत्यधिक पिछड़े होने का परिचय मिलता है।

तालिका से पता चलता है कि ताजा सूचना के अनुसार आधार-ढाँचे के सापेक्ष विकास का सूचकांक राजस्थान के लिए 76 रहा, जो समस्त भारत के 100 से कम था। यह हरियाणा के 138 अंक से काफी नीचा था।[2]

अब हम आधार-ढाँचे के विभिन्न उप-क्षेत्रों की स्थिति का उल्लेख करेंगे।

(i) **विद्युत**—2003-04 के अन्त मे राजस्थान में शक्ति की प्रस्थापित क्षमता 5237.72 मेगावाट थी, जिसमें लगभग आधी राज्य के बाहरी साधनों से प्राप्त होती है और शेष आधी राज्य के स्वयं के साधनों से प्राप्त होती है। 2003-04 में 690.54

---

1 Anant Krishna & Uma Datta Roy Choudhry (1999), Measuring Inter-state Differentials in Infrastructure in Eleventh Finance Commission Report, June 2000, p 218

2 सूचकांक बनाने के लिए विभिन्न मदों को भार दिए गए हैं, जो इस प्रकार होते हैं-शक्ति (power) 20%, सिंचाई (20%), सड़कें (15%) रेलवे (20%) डाकघर (5%), शिक्षा (10%), स्वास्थ्य (4%) एवं बैंकिंग (6%)।

मेगावाट अतिरिक्त विद्युत क्षमता सृजित की गयी है । विद्युत सप्लाई में भारी उतार-चढ़ाव आने से उत्पादन को क्षति पहुँचती है । राज्य में विद्युत के विकास की भारी सम्भावनाएँ विद्यमान हैं, जिनका उपयोग करने का प्रयास तेज किया जा रहा है ।

नीचे दी गई तालिका से पता लगता है कि राजस्थान में प्रति व्यक्ति विद्युत का उपयोग 2002-03 में लगभग 291 किलोवाट घंटे रहा, जो पंजाब के लगभग 870 किलोवाट घंटे की तुलना में बहुत नीचा था । प्रति व्यक्ति विद्युत के उपभोग की दृष्टि से 17 राज्यों में राजस्थान का स्थान 10वाँ रहा । पंजाब का स्थान सर्वोच्च पाया गया । लेकिन राजस्थान की स्थिति उत्तर प्रदेश की तुलना में बेहतर रही, जिसका स्थान 13वाँ रहा ।

2002-03 में प्रति व्यक्ति विद्युत का उपभोग इस प्रकार रहा ।[1]

	किलोवाट घंटों (KWH) में) (लगभग)	(17 राज्यों की तुलना)
राजस्थान	291	11
बिहार	145	16
गुजरात	838	2
हरियाणा	580	4
मध्य प्रदेश	278	13
पंजाब	870	1
उत्तर प्रदेश	188	15
अखिल भारत	373	—

कुल ग्रामों में विद्युतीकृत गाँवों का अनुपात[2]—31 मार्च, 2003 में राजस्थान मे कुल ग्रामो में विद्युतीकृत गाँवों का अनुपात 97 4% पाया गया । हरियाणा, हिमाचल प्रदेश, कर्नाटक, केरल, पंजाब आदि के गाँवो में यह 100 प्रतिशत पाया गया; आंध्र प्रदेश, गुजरात, मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र व तमिलनाडु में यह 100 प्रतिशत के समीप रहा एवं असम, उड़ीसा, प. बंगाल आदि मे यह 77 प्रतिशत से ऊपर रहा ।

(ii) **सड़कें**—सड़कों की स्थिति के सम्बन्ध में तुलनात्मक दृष्टि से प्राय: नवीनतम आँकड़ों का अभाव पाया जाता है । 2003-04 के अन्त में राजस्थान में प्रति 100 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र पर सड़कों की लम्बाई 45 93 किलोमीटर रहने का अनुमान है, जबकि राष्ट्रीय औसत 74.9 किलोमीटर (1996-97) आंका गया है । अत: राज्य में सड़कों की औसत लम्बाई भारत की तुलना में नीची पाई जाती है । यह गुजरात, हरियाणा व मध्य प्रदेश से भी कम है ।

1 Economic Review 2003-04, Govt of Raj . table 10

2 ibid, table 10.

1997-98 मे राजस्थान में सडकों की कुल लम्बाई का 57.5% ग्रामीण सडको का था। हरियाणा मे यह अनुपात 76 3%, केरल मे 75 1%, मध्य प्रदेश में 69.2% तथा गुजरात मे 27 1% था। इस प्रकार राजस्थान मे कुल सडकों की लम्बाई का लगभग आधा भाग ग्रामीण सडको के रूप मे पाया जाता है।[1]

(iii) रेलमार्ग– 31 मार्च, 2001 के अत मे प्रति हजार वर्ग किलोमीटर क्षेत्रफल पर रेलमार्ग की लम्बाई इस प्रकार रही[2]–

	(किमी. में)		(किमी. में)
राजस्थान	17 32	बिहार	36 55
गुजरात	27 10	उत्तर प्रदेश	35 93
पजाब	41 73	पश्चिम बगाल	41 26

इस प्रकार रेलमार्ग की लम्बाई की दृष्टि से भी राजस्थान पिछड़ा हुआ है । इस क्षेत्र में पंजाब का प्रथम स्थान आता है (उपर्युक्त तालिका के अनुसार) । वैसे दिल्ली राज्य में रेलमार्ग की लम्बाई 134.63 किलोमीटर प्रति 1000 वर्ग किलोमीटर रही थी, जो सर्वाधिक थी ।

(iv) शिक्षा– हम प्रारम्भ मे बतला चुके हैं कि राज्य मे साक्षरता की अनुपात काफी नीचा है। 2001 मे यह सभी व्यक्तियों के लिए 61 0% रहा, जबकि पुरुषो के लिए 76 5% व महिलाओ के लिए 44 3% रहा। राजस्थान की स्थिति महिला–साक्षरता की दृष्टि से ज्यादा पिछडी हुई है, इसमे भी ग्रामीण महिलाओ मे साक्षरता का अनुपात और भी नीचा पाया जाता है। इससे परिवार–नियोजन मे भी बाधा पहुँचती है। राज्य मे अनुसूचित जाति व अनुसूचित जनजाति के लोगो मे साक्षरता का अनुपात काफी नीचा पाया जाता है।

योजनाकाल मे स्कूलो मे भर्ती होने वालो का अनुपात बढा है, लेकिन इस दिशा मे अभी भी विशेष प्रगति की आवश्यकता है। स्कूल छोडने वाले बच्चो की संख्या भी काफी अधिक पाई जाती है। यह विशेषतया 6-11 वर्ष के आयु–समूह मे अधिक पाई जाती है।

वर्ष 2001-02 के लिए राजस्थान व भारत के लिए सकल नामांकन-अनुपात (Gross Enrolment Ratio) कक्षा I से V तथा VI से VIII के लिए अग्र तालिका में दर्शाया गया है।[3]

(% में)

	प्राइमरी (I–V)			अपर प्राइमरी (VI–VIII)		
	लड़के	लड़कियाँ	कुल	लड़के	लड़कियाँ	कुल
राजस्थान	139.1	83.2	112.2	102.0	47.5	76 2
समस्त भारत	105.3	86.9	96.3	67 8	52.1	60.2

प्राइमरी कक्षा में 6–11 वर्ष के आयु–समूह के तथा अपर-प्राईमरी कक्षा मे 11–14 वर्ष के लड़के-लड़कियाँ आते हैं। प्राइमरी कक्षा में लड़को के लिए राजस्थान में नामांकन–अनुपात

1 Report on Currency & Finance, Vol 1, 1997-98 p XI–31.

2 Draft Tenth Five-year Plan 2002-07, Vol III p 63

3 Economic Survey 2003-2004 GOI, p S-110

139.1 आने का कारण यह है कि इस समूह में कुल लड़के 6 वर्ष से कम आयु के होंगे। लेकिन यहाँ ध्यान देने की मुख्य बात यह है कि प्राइमरी व अपर-प्राइमरी दोनों स्तरों पर राजस्थान में लड़कियों में नामांकन-अनुपात समस्त भारत से नीचा पाया गया है। अनुसूचित जाति व अनुसूचित जनजाति समूह में यह और भी नीचा रहा है। राज्य में स्कूल छोड़कर जाने वाले बच्चों का अनुपात भी ऊँचा रहता है। अतः प्राइमरी शिक्षा में लड़कियों की शिक्षा पर विशेष रूप से ध्यान देने की आवश्यकता है।

(v) स्वास्थ्य के सूचक तथा स्वास्थ्य की सुविधाएँ :

(अ) (i) स्वास्थ्य के सूचक— इसके अन्तर्गत हम जीने की औसत आयु शिशु मृत्यु-दर, जन्म दर व मृत्यु-दर को ले सकते हैं जिनके बारे में तुलनात्मक स्थिति निम्न तालिका में दर्शाई गई है।[1]

	जन्म के समय जीने की प्रत्याशा (Life Expectancy) (2001-06) पुरुष (Male)	शिशु मृत्यु-दर (IMR) (2000 में प्रति हजार)	जन्म-दर (2002 में	मृत्यु-दर प्रति हजार)
राजस्थान	62 2	79	30 6	7.7
भारत	63 9	68	25.0	8.1
केरल	71 7	14	16 8	6 4

तालिका से स्पष्ट होता है कि राजस्थान में 2002 में जन्म-दर प्रति हजार 30 6 थी, जो भारत से अधिक थी। मृत्यु-दर में विशेष अन्तर नहीं था, लेकिन शिशु-मृत्यु-दर भारत की तुलना में राजस्थान में अधिक थी। जीने की औसत आयु में ज्यादा अन्तर नहीं था। उपर्युक्त सभी सूचकों की दृष्टि से केरल की स्थिति राजस्थान व अन्य राज्यों से काफी बेहतर रही है।

(ii) 1998-99 मे राजस्थान मे असंक्रमीकरण (immunization) के दायरे मे 17% बच्चे लाए जा सके जब कि मध्य प्रदेश में इनका अनुपात 22% व समस्त भारत मे 42% रहा। (राष्ट्रीय-परिवार-स्वास्थ्य सर्वेक्षण, 1998-99)

(iii) इसी सर्वेक्षण के अनुसार 1998-99 मे 3 वर्ष की आयु से नीचे के 82% बच्चे राजस्थान मे खून की कमी (anaemic) के शिकार पाये गये। भारत मे यह अनुपात 74% रहा।

(iv) यूनीसेफ की MICS 2000 की रिपोर्ट के अनुसार 5 वर्ष की आयु से नीचे के बच्चों के जन्म के समय कम वजन (2500 ग्राम से नीचे) का अनुपात राजस्थान मे 30% व भारत मे 22% पाया गया।

(v) 1998-99 मे बाल-कुपोषण का अनुपात राजस्थान मे 51% रहा। 1993-94 से

1. Economic Survey 2003-2004 p S-109.

1998-99 की अवधि में 14 बडे राज्यो मे राजस्थान में इस दिशा में प्रगति सबसे कमजोर रही।

(आ) स्वास्थ्य सुविधाएँ— इसके अन्तर्गत डॉक्टरो, अस्पतालों, पेयजल आदि की सुविधाएँ आती हैं। 1996-97 मे राजस्थान मे अस्पतालो की सख्या 219, डिस्पेन्सरियों की 278 व बिस्तरों की सख्या 36702 पाई गई। इसी वर्ष प्रति अस्पताल जनसख्या 2 20 लाख, प्रति डिस्पेन्सरी जनसख्या 1 73 लाख तथा प्रति बिस्तर जनसंख्या 1313 पाई गई। इसी वर्ष उत्तर प्रदेश मे प्रति अस्पताल जनसख्या 17854, बिहार मे लगभग 3 लाख व मध्यप्रदेश मे 2 10 लाख थी। इस प्रकार स्वास्थ्य की सुविधाएँ राजस्थान मे बिहार से बेहतर पाई गई हैं। लेकिन अन्य राज्यो के मुकाबले आज भी राजस्थान में इनका अभाव पाया जाता है। गुजरात मे भी लोगों के लिए स्वास्थ्य की सुविधाएँ राजस्थान की तुलना में बेहतर पाई जाती हैं। राज्य मे स्वास्थ्य की सुविधाओं का गाँवों व शहरों में विस्तार करने की आवश्यकता है।

(इ) बैंकिंग सुविधाएँ—दिसम्बर 2003 में प्रति लाख जनसंख्या पर बैंकों की संख्या निम्न तालिका में दी गई है[1]—

बैंकों की संख्या (प्रति लाख जनसंख्या पर)

राज्य		क्रम (rank)	राज्य		क्रम (rank)
राजस्थान	5.6	12	केरल	10.3	3
हिमाचल प्रदेश	12 6	1	गुजरात	6.9	8
मध्य प्रदेश	5.4	13	उत्तर प्रदेश	4 7	15
अखिल भारत	6.2	—			

बैंकों की संख्या की दृष्टि से हिमाचल प्रदेश का स्थान प्रथम व पंजाब का द्वितीय रहा है । इस सम्बन्ध में राजस्थान व मध्य प्रदेश की स्थिति लगभग एक-सी पाई गई है । बैंकिंग सुविधाओं के विकास की दृष्टि से राजस्थान की स्थिति समस्त भारत की तुलना में ज्यादा पिछड़ी हुई नहीं है । फिर भी केरल व हिमाचल प्रदेश की तुलना मे यह काफी पिछड़ी हुई मानी जा सकती है ।

दिसम्बर 2003 मे राजस्थान में उधार-जमा का अनुपात (credit deposit ratio) 54.6% रहा था, जबकि समस्त भारत में यह 57 9% था । इस प्रकार उधार-जमा अनुपात राजस्थान में समस्त भारत की तुलना में नीचा है । राजस्थान में साख विस्तार करना आवश्यक है ।[2]

कृषि, उद्योग व उधार-ढाँचे (इन्फ्रास्ट्रक्चर) में राजस्थान की पिछड़ी स्थिति के प्रमुख कारण—हमने इस अध्याय में जनसख्या, क्षेत्रफल, कृषि, उद्योग व आधार-ढाँचे की दृष्टि से राजस्थान की स्थिति का अध्ययन भारतीय परिप्रेक्ष्य व अन्य राज्यों के सन्दर्भ में

1 Economic Review 2003-2004, table III

2 ibid, p 19

प्रस्तुत किया है । तुलनात्मक दृष्टि से राजस्थान काफी पिछड़ा रहा है । इस सम्बन्ध में प्रमुख कारण इस प्रकार दिए जा सकते हैं—

(1) नियोजन के प्रारम्भ में विभिन्न क्षेत्रों में राजस्थान की स्थिति अत्यन्त दयनीय व पिछड़ी हुई थी—आज भी भारतीय अर्थव्यवस्था में राजस्थान के पिछड़े रहने का प्रमुख कारण यह है कि नियोजन के आरम्भ में राज्य की आर्थिक स्थिति नितान्त शोचनीय थी । 1950–51 में शक्ति की प्रस्थापित क्षमता मात्र 13 मेगावाट ही थी, सिंचित क्षेत्रफल कुल कृषित क्षेत्रफल का 12% ही था, राज्य में केवल 42 स्थानों को ही बिजली मिली हुई थी तथा केवल 17,399 किलोमीटर दूरी में सड़कें थीं । सड़क, जल व बिजली के अभाव में बड़े उद्योगों का विकास सम्भव नहीं था । शिक्षा व चिकित्सा के क्षेत्र में भी उस समय अभाव की दशाएँ विद्यमान थीं, जैसे 1950–51 में 6–11 वर्ष की उम्र के बच्चों में स्कूल जाने वालों का अनुपात 16.6% तथा 11–14 वर्ष की आयु वालों में 5.4% ही था । उस समय अस्पतालों में रोगियों के बिस्तरों की संख्या कुल 5,720 ही थी ।

इस प्रकार प्रारम्भ में विभिन्न क्षेत्रों में विकास के स्तर बहुत नीचे रहने से नियोजन के 53 वर्षों के बाद भी अभाव पूरी तरह दूर नहीं हो पाए हैं, हालांकि विकास के कारण महत्त्वपूर्ण उपलब्धियाँ प्राप्त की गई हैं, जो अन्यथा सम्भव नहीं थी ।

(2) राज्य की विषम भौगोलिक व प्राकृतिक परिस्थितियाँ—जैसा कि पहले बतलाया जा चुका है, राजस्थान के 61 प्रतिशत भूभाग में रेगिस्तान पाया जाता है, जहाँ बहुधा अकाल पड़ते रहते हैं । **राज्य में सतह के जल-साधन (surface water resources) समस्त भारत की तुलना में 1% मात्र हैं** । राजस्थान में पिछड़े क्षेत्रों में बुनियादी सुविधाओं को उपलब्ध कराने में प्रति व्यक्ति लागत ऊँची आती है । *अतः* विकास के लिए अपेक्षाकृत अधिक वित्तीय साधनों की आवश्यकता होती है, जिनके अभाव में विकास पर्याप्त मात्रा में नहीं हो पाया है । मानसून की अनिश्चितता का प्रभाव राजस्थान में और भी अधिक प्रतिकूल रहता है, जिससे यहाँ कृषिगत उत्पादन के उतार-चढ़ाव अधिक तीव्र होते हैं । उदाहरण के लिए 2001–02 में खाद्यान्नों का उत्पादन 140.0 लाख टन हुआ जो घटकर 2002–03 में 75.3 लाख टन पर आ गया । 2003–2004 में इसके लगभग 189 लाख टन के स्तर पर पहुँचने का अनुमान है जो पिछले वर्ष के दुगुने से अधिक होगा ।

(3) राज्य में जनसंख्या की ऊँची वृद्धि दर के कारण प्रति व्यक्ति उपलब्धि पर विपरीत प्रभाव पड़ा है—1981–91 की अवधि में राज्य में जनसंख्या की वृद्धि 28.44% रही, जबकि 1991–2001 के बीच यह पहले से कुछ कम 28.33% रही, दोनों ही अवधियों में यह राष्ट्रीय औसत से अधिक थी । जनसंख्या की तीव्र वृद्धि-दर का राज्य के आर्थिक विकास पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है ।

(4) भूजल (ground water)—भूजल बहुत से स्थानों पर लवणीय (Brakish) पाया जाता है और सूखे के कारण जलस्तर (Water-lable) निरन्तर नीचे गिरता जा रहा है, जिससे कृषिगत विकास में बाधा पहुँचती है ।

(5) 2001 में राज्य की कुल जनसंख्या में अनुसूचित जाति के लोग 17.2% तथा अनुसूचित जनजाति के 12.6% पाए गए । इस प्रकार इनका व अन्य पिछड़ी जाति के लोगों

का राज्य की जनसंख्या में 30% से अधिक अनुपात होने से राज्य सामाजिक विकास की दृष्टि से भी काफी पिछड़ा हुआ है।

(6) विकास के लिए वित्तीय साधनों का अभाव—राज्य की वित्तीय स्थिति काफी कमजोर व डांवाडोल रही है जिससे आर्थिक प्रगति के मार्ग में बाधाएँ आती हैं। राज्य में योजनाकाल में काफी धनराशि व्यय की गई है। प्रति व्यक्ति विनियोजन बढ़ा है। दसवीं पंचवर्षीय योजना (2002–07) का आकार, प्रचलित भावों पर 31832 करोड़ रु. प्रस्तावित किया गया है जो नवीं योजना से अधिक है, लेकिन वित्तीय साधनों के अभाव में इसे प्राप्त करना कठिन होगा। राज्य पर कई कारणों से बकाया कर्ज का भार काफी बढ़ गया है। मार्च 1999 के अन्त में राज्य पर कर्ज का कुल भार लगभग 24,170 करोड़ रु. आँका गया था। इसके मार्च 2005 तक 59280 करोड़ रु. के समीप पहुँच जाने की संभावना है।[1] इसमें काफी अंश केन्द्रीय ऋणों का रहने की आशा है। इससे राज्य पर ब्याज की वार्षिक देनदारी असहनीय हो गई है। राज्य में विभिन्न क्षेत्रों में तीव्र विकास के लिए आवश्यक वित्तीय साधनों का अभाव पाया जाता है। भविष्य मे भी राज्य की वित्तीय दशा को सुधारने के मार्ग में कई प्रकार की बाधाएँ आएँगी, जैसे पुराने कर्जों पर ब्याज व देय किश्त का भार, राज्य कर्मचारियो के महँगाई भत्तों में वृद्धि का भार, अकाल राहत-कार्यों पर व्यय का भार, पाँचवें वेतन आयोग की सिफारिशों का प्रभाव आदि।

(7) राज्य के पिछड़ेपन का एक कारण यहाँ नियोजन-प्रक्रिया का कमजोर रहना भी माना जा सकता है—राज्य ने पंचायती राज संस्थाओं की स्थापना करके इनका राजनीतिक आधार-ढाँचा तो खड़ा किया, लेकिन भूतकाल में विकेन्द्रित नियोजन (जिला या खण्ड स्तर पर) नहीं अपनाने के कारण नियोजन की प्रक्रिया सबल व सुदृढ़ नहीं हो सकी। परिणामस्वरूप, स्थानीय नियोजन के अभाव में स्थानीय साधनों, स्थानीय श्रम-शक्ति व स्थानीय आवश्यकताओं के बीच आवश्यक समन्वय व ताल-मेल स्थापित नहीं किया जा सका। हाल के वर्षों में पंचायती राज संस्थाओं की स्थापना में प्रगति हुई है। इस पर संविधान के 73वें व 74वें संशोधन का प्रभाव पड़ा है।

राज्य में कृषि व औद्योगिक विकास तथा आधारभूत ढाँचे के विकास की काफी सम्भावनाएँ हैं। राज्य में भारतीय जनता पार्टी के नेतृत्व में नई सरकार जनवरी 2004 से आर्थिक विकास के लिए भरसक प्रयास कर रही है। भविष्य में औद्योगिक विकास, खनन-विकास, सड़क-विकास, पर्यटन-विकास व पावर-विकास की एक समयबद्ध व पारदर्शी योजना तैयार की जानी चाहिए जिसमें काफी मात्रा में विदेशी निजी विनियोग का भी उपयोग किया जाना चाहिए ताकि राजस्थान विकसित राज्यों की श्रेणी में आ सके। राज्य सरकार इस दिशा में प्रयत्नशील भी है। विश्व बैंक से विशेष सहायता प्राप्त करके कृषिगत-विकास की काफी विस्तृत व व्यापक योजना पर कार्य करने से विभिन्न प्रकार की फसलों, फलों, पशु-पालन,

---

1. Finance Department GOR, March 2004, tables.

चारा, वृक्षारोपण आदि का विकास किया जा रहा है जिससे रोजगार में काफी वृद्धि होगी, ग्रामीण निर्धनता कम होगी तथा आर्थिक असमानता में भी कमी आएगी।

इन विभिन्न विषयों का यथास्थान समुचित विवेचन किया जाएगा। यहाँ पर इतना कहना ही पर्याप्त होगा कि उचित आर्थिक नीतियाँ अपनाकर व प्रशासन को अधिक ईमानदार व चुस्त-दुरुस्त करके राज्य विकास के नए कीर्तिमान स्थापित करने में सक्षम व सफल हो सकता है।

प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. राजस्थान का क्षेत्रफल भारत के क्षेत्रफल का कितने प्रतिशत है—
   (अ) 9% (ब) 10 4% (स) 15% (द) 20% (ब)

2. राजस्थान का क्षेत्रफल भारत के क्षेत्रफल का कितना प्रतिशत है ?
   (अ) 9% (ब) 10 4% (स) 16% (द) 20% (ब)

3. 1994-95 से 1997-98 की अवधि में राजस्थान का खाद्यान्नों के उत्पादन में भारत में कितना प्रतिशत योगदान रहा ?
   (अ) 5 2 (ब) 6 3 (स) 10 4 (द) 3 5 (ब)

4. वर्तमान में क्षेत्रफल की दृष्टि से राजस्थान का भारत में कौन-सा स्थान आता है ?
   (अ) प्रथम (ब) द्वितीय
   (स) तृतीय (द) कोई नहीं (अ)

5. विभिन्न औद्योगिक सूचकों में, जैसे फैक्टरियों की संख्या, स्थिर पूँजी, कर्मचारियों की संख्या व जोड़े गये शुद्ध मूल्य, आदि में राजस्थान का समस्त भारत में कितना अंश आता है ?
   (अ) 3 से 4% तक (ब) लगभग 3%
   (स) लगभग 4% (द) 2 से 3% तक (अ)

6. इन्फ्रास्ट्रक्चर का सूचकांक बनाने के लिए कौन-सी मदों का उपयोग किया जाता है ?
   (अ) सिंचाई व शक्ति (ब) सड़कें व रेलें
   (स) डाकघर व बैंकिंग (द) शिक्षा व स्वास्थ्य
   (ए) सभी (ए)

7. राजस्थान में इन्फ्रास्ट्रक्चर का सूचकांक भारत से कितना नीचा है ?
   (अ) 10 बिन्दु (ब) 24 बिन्दु
   (स) 30 बिन्दु (द) लगभग समान है। (ब)

अन्य प्रश्न

1. राजस्थान की अर्थव्यवस्था की उन विशेषताओं को समझाइए जिनसे ज्ञात होता है कि राजस्थान की अर्थव्यवस्था पिछड़ी अवस्था में है।

[उत्तर—संकेत :

(1) जनसंख्या की वृद्धि-दर 1991-2001 में 28.3% रही जो समस्त भारत की वृद्धि-दर 21.3% से अधिक थी।

(2) साक्षरता-अनुपात 2001 में 61% था, जबकि समस्त भारत में यह लगभग 65.4% था। महिलाओं में साक्षरता की दर और भी नीची है; विशेषतया ग्रामीण महिलाओं में यह काफी नीची है।

(3) राज्य में सतह जल-साधन भारत के कुल सतह जल-साधनों का मात्र 1% ही है, जिससे राजस्थान में जल का नितान्त अभाव पाया जाता है। राज्य में मरुस्थल का विस्तार ज्यादा है।

(4) 2002-03 में कुल सिंचित क्षेत्रफल सकल कृषित क्षेत्रफल लगभग 39.9% था, (सकल कृषित क्षेत्रफल के नीचा रहने के कारण) जबकि समस्त भारत में भी यह वर्तमान में लगभग 39% आँका गया है।

(5) प्रति हैक्टेयर उर्वरकों का उपभोग राष्ट्रीय औसत से कम है।

(6) खाद्यान्नों के उत्पादन में भारी वार्षिक उतार-चढ़ाव आते हैं।

(7) 1999-2000 में राज्य में फैक्ट्री क्षेत्र पिछड़ा था। विभिन्न औद्योगिक सूचकों में राज्य का स्थान समस्त भारत में 3 से 4% के बीच ही आता है।

(8) आधार-ढाँचा कमजोर है जो विद्युत, सड़कों आदि के अभाव के रूप में प्रगट होता है, तथा

(9) शिक्षा व स्वास्थ्य की सेवाएँ पिछड़ी हैं।

(10) विकास के लिए वित्तीय साधनों का नितान्त अभाव पाया जाता है।]

2. भारतीय अर्थव्यवस्था में राजस्थान की जनसंख्या, क्षेत्रफल, कृषि, उद्योग एवं इन्फ्रास्ट्रक्चर के सन्दर्भ में क्या स्थिति है?

3. राजस्थान की आर्थिक स्थिति की तुलना समस्त भारत व कुछ राज्यों की आर्थिक स्थिति से कीजिए और उन कारणों पर प्रकाश डालिए जिनकी वजह से यह राज्य अन्य राज्यों की तुलना में पीछे रह गया है।

4. संक्षिप्त टिप्पणियाँ लिखिए—

(i) राजस्थान की भारतीय अर्थव्यवस्था में औद्योगिक स्थिति,

(ii) राजस्थान में विद्युत व सड़कों की भारतीय परिप्रेक्ष्य में तुलनात्मक स्थिति,

(iii) भारत के संदर्भ में राजस्थान की जनसंख्या, 2001,

(iv) राजस्थान में साक्षरता की स्थिति।

5. भारतीय अर्थव्यवस्था में राजस्थान राज्य की वर्तमान स्थिति निर्धारित कीजिए।
(Raj. Iyr 2004)

6. उद्योगों की दृष्टि से राजस्थान का भारत में स्थान बताइए। (100 शब्दों में)

2

जनसंख्या
(Population)

आकार व वृद्धि—2001 की जनगणना के अनुसार 1 मार्च, 2001 को सूर्योदय के समय राजस्थान की जनसंख्या लगभग 5 65 करोड़ व्यक्ति आंकी गई है। 1991 में यह लगभग 4 40 करोड़ व्यक्ति थी। इस प्रकार 1991-2001 की अवधि में राज्य की जनसंख्या में लगभग 124 7 लाख व्यक्तियों की बढ़ोत्तरी हुई, जो 28 33% वृद्धि को सूचित करती है। इसी अवधि में भारत की जनसंख्या में 21 34% की वृद्धि हुई थी। इस प्रकार 1991-2001 के दशक में राजस्थान में जनसंख्या की वृद्धि समस्त भारत की तुलना में 7 प्रतिशत बिन्दु अधिक हुई है।

निम्न तालिका में 1901 से 2001 तक की अवधि में राजस्थान में जनसंख्या की दस वर्षीय वृद्धि (लाखों में) तथा दस वर्षीय वृद्धि-दरों का परिचय दिया गया है।[1]

वर्ष	जनसंख्या (करोड़ में)	दस वर्षीय वृद्धि (लाखों मे)	दस वर्षीय वृद्धि दर (% में)
1901	1 03	—	—
1911	1 10	7	6 7
1921	1 03	(–) 7	(–) 6 3
1931	1 17	14	14 1
1941	1 39	21	18 0
1951	1 60	21	15 2
1961	2 02	42	26 2
1971	2 [illegible]	56	27 8
1981	3 43	85	33 0
1991	4 40	97	28 4
2001	5 65	125	28 3

---

1 Provisional Population Totals, Paper-1 of 2001 March 2001, p 25 (Director of census operations, Rajasthan) आगे भी अधिकांश सूचना इसी पर आधारित है।

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट होता है कि 1951 2001 के 50 वर्षों में राजस्थान की जनसंख्या 1 60 करोड़ से बढ़कर 5 65 करोड़ हो गई, अर्थात् इसमें 4 करोड़ 5 लाख की वृद्धि हो गई । शुरू में 1901 51 के पचास वर्षों में इसमें केवल 57 लाख की वृद्धि हुई थी । **ध्यान देने की बात है कि 1901-61 के 60 वर्षों में राजस्थान की जनसंख्या में लगभग एक करोड़ की वृद्धि हुई, जबकि 1991-2001 के दस वर्षों में 1.25 करोड़ की वृद्धि दर्ज की गई है** । इससे हाल के दशक में जनसंख्या की तीव्र वृद्धि का अनुमान लगाया जा सकता है ।

1911 से 1921 के बीच जनसंख्या में गिरावट आई थी, जिसका सम्बन्ध अकाल व महामारी के प्रकोप से था । 1961 में जनसंख्या 1951 की तुलना में 26 2% बढ़ी । उसके बाद के दशकों में जनसंख्या की वृद्धि काफी तेज रफ्तार से हुई है । 1971-81 में यह 33% रही, जो सर्वोच्च थी । 1981-91 के दशक में जनसंख्या की वृद्धि 28.4% तथा 1991-2001 के दशक में 28 3% हुई । लेकिन 1991-2001 में समस्त भारत की वृद्धि-दर (21 3%) से तो अभी भी यह काफी ऊँची है, जिसे भविष्य में कम करने की आवश्यकता है । 2001 में राजस्थान की जनसंख्या भारत की कुल जनसंख्या का 5 5 प्रतिशत रही है । यह 1991 में भारत की जनसंख्या का 5 2% थी ।

1991-2001 की अवधि में राजस्थान में जनसंख्या का 28 3% बढ़ जाना इस बात का सूचक है कि राज्य में जनसंख्या-नियंत्रण की दिशा में विशेष प्रयास करने की आवश्यकता है ।

राज्य में जन्म-दर (प्रति हजार) समस्त भारत की तुलना मे ऊँची रही है । वर्ष 2002 के सेम्पल रजिस्ट्रेशन सिस्टम (SRS) (रजिस्ट्रार जनरल ऑफ इण्डिया) के अनुमानों के अनुसार राजस्थान में जन्म-दर (प्रति हजार) 30.6 व मृत्यु-दर (प्रति हजार) 7.7 रही है । समस्त भारत के लिए ये दरे क्रमश: 25.0 तथा 8.1 रही हैं ।[1] इस प्रकार राजस्थान में मृत्यु-दर तो भारत की मृत्यु-दर के लगभग समान है, लेकिन यहाँ की जन्म-दर भारत की जन्म-दर से लगभग 5 बिन्दु (प्रति हजार) ऊँची है, जो वास्तव में एक चिन्ता का विषय है ।

राज्य में पिछले दशकों में जन्म-दर व मृत्यु-दर में गिरावट आई है जो निम्न तालिका में दर्शाई गई है । आगामी वर्षों में भी जन्म-दर के ऊँचा रहने के आसार हैं ।

राजस्थान में अनुमानित जन्म-दर, मृत्यु-दर व जनसंख्या की वृद्धि-दरें[2]—

(प्रति हजार) (त्रिवर्षीय चल औसत लेने पर)

अवधि	जन्म-दर	मृत्यु-दर	वृद्धि-दर
1993	34 0	9.1	24 9
1998	31 5	8.8	22.7
2002	30 6	7.7	.22.9

1 Economic Survey 2003-2004 p S 109

2 Economic Review 2003 04 p 3

2002 की अवधि के लिए समस्त भारत के लिए जन्म-दर प्रति हजार 25.0 तथा मृत्यु-दर 8.1 अनुमानित है । तालिका से स्पष्ट होता है कि राजस्थान में जनसंख्या की वृद्धि-दर आज भी लगभग 23 प्रति हजार है, जबकि भारत में यह 16.9 प्रति हजार है । इस प्रकार राजस्थान में जनसंख्या काफी तेज गति से बढ़ रही है ।

राजस्थान में ऊँची जन्म-दर के लिए निम्न तत्त्व जिम्मेदार माने गए हैं—जैसे कुल महिलाओं में शादीशुदा महिलाओं (married females) का ऊँचा अनुपात, शादी की औसत उम्र का नीचा पाया जाना, परिवार नियोजन की विधियों के उपयोग का अभाव, सामाजिक पिछड़ापन, निर्धनता, निरक्षरता आदि । ऊँची जन्म-दर के मुख्य कारणों पर नीचे प्रकाश डाला जाता है ।

(1) शादीशुदा महिलाओं का ऊँचा अनुपात—1971 व 1981 के लिए विवाहित महिलाओं का अनुपात इस प्रकार रहा ।[1]

(विवाहित महिलाओं का प्रतिशत)

आयु-समूह (Age-group)	1971	1981
15–44	91 2	88 6
15–19	75 5	64 3
20–24	96 6	94 7

तालिका से स्पष्ट होता है कि राजस्थान में कुल महिलाओं में विवाहित महिलाओं का अनुपात काफी ऊँचा पाया जाता है । 15-44 वर्ष के आयु-समूह में 1971 में यह 91.2% तथा 1981 में 88 6% पाया गया था । 20-24 वर्ष के आयु-समूह में तो विवाहित महिलाओं का अनुपात 1981 में 94 7% पाया गया था । ऐसी स्थिति में जन्म-दर का ऊँचा रहना स्वाभाविक है ।

(2) शादी की औसत आयु का नीचा होना—शादी की औसत उम्र भी राजस्थान मे नीची पाई जाती है। **राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वे 1992-93 के अनुसार शहरी क्षेत्रों मे लडकियों की शादी की प्रभावी औसत उम्र 20.5 वर्ष तथा ग्रामीण क्षेत्रों में 17.9 वर्ष पायी गई है। समग्र रूप से यह 18.4 वर्ष रही है। राष्ट्रीय-परिवार-स्वास्थ्य-सर्वेक्षण (NFHS), 1998-99 के अनुसार राजस्थान में 82% लडकियों की शादी 18 वर्ष की उम्र तक कर दी जाती है।** इनमे भी 48% लडकियो की शादी तो 15 वर्ष की उम्र तक ही कर दी जाती है और 34% लडकियों की 15 से 18 वर्ष की उम्र तक कर दी जाती है।

राजस्थान मे शादी के समय लडके व लडकी दोनो की औसत उम्र इनके लिए निर्धारित न्यूनतम स्तर, क्रमश 21 वर्ष व 18 वर्ष से नीची पाई जाती है। राज्य मे बाल–विवाह की कुप्रथा भी प्रचलित है। इस सम्बन्ध मे आवश्यक कानून की निरन्तर अवहेलना की जाती रही है। ग्रामीण क्षेत्रो मे बाल–विवाह के मामले ज्यादा देखने को मिलते हैं। शिक्षा व चेतना के अभाव मे आज भी 'आखा–तीज' पर खूब शादियाँ रचायी जाती हैं। 1996-97 मे राजस्थान मे शादी की औसत उम्र (mean age) महिलाओ के लिए 15 4 वर्ष रही। लेकिन भीलवाडा जिले मे यह 11 1 वर्ष जोधपुर जिले मे 11 7 वर्ष तथा सिरोही जिले मे 17 8 वर्ष रही।[2]

1 Population and Demography 1988 DES Jaipur p 25
2 Concurrent Evaluation of Spacing Method and MCH Services 1996-97 Family welfare Department, Rajasthan

(3) दम्पत्ति-सुरक्षा-दर का नीचा पाया जाना—कुल दम्पत्तियों में परिवार नियोजन अपनाने वालों के अनुपात को दम्पत्ति-सुरक्षा-दर (couple protection rate) (CPR) कहते हैं। 1995 में को कुछ राज्यों में दम्पत्ति-सुरक्षा-दर अग्र तालिका में दर्शाई गई है[1]—

दम्पत्ति-सुरक्षा-दर (CPR) अथवा परिवार नियोजन अपनाने वाले दम्पत्तियों का अनुपात

(1995 में)

	प्रतिशत में
राजस्थान	32 6
बिहार	21 1
केरल	46 7
मध्य प्रदेश	47 4
महाराष्ट्र	51 0
समस्त भारत	45 4

इस प्रकार राजस्थान में परिवार नियोजन अपनाने वाले दम्पत्तियो का अनुपात कम है। सन् 2000 तक समस्त भारत के लिए इसका लक्ष्य 60% रखा गया था, जिसे प्राप्त नहीं किया जा सका है। **31 मार्च 2001 को राज्य में दम्पत्ति-सुरक्षा-दर 43.5% थी** (वर्तमान में सुरक्षा प्राप्त (Currently protected का प्रतिशत) (Statistical Abstract, Rajasthan 2001, p 94)

(4) महिलाओं में साक्षरता की बहुत नीची दर, विशेषतया ग्रामीण महिलाओं में—2001 में राजस्थान में महिला साक्षरता-दर 44 3% थी। अतः आज भी राज्य में 56% महिलाएँ निरक्षर हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में महिला-वर्ग में निरक्षरता ज्यादा पाई जाती है। 1991 में ग्रामीण महिलाओं में साक्षरता की दर केवल 11 6% ही थी। बाड़मेर जिले में ग्रामीण महिलाओं में साक्षरता की दर 4.2% तथा जैसलमेर जिले में 4.7% थी। नीची साक्षरता-दरों के कारण राज्य में परिवार नियोजन का अभाव देखा जाता है जिससे जन्म-दर ऊँची पाई जाती है।

(5) सामाजिक पिछड़ापन—1991 में राज्य में अनुसूचित जाति के लोगों का जनसंख्या में अनुपात 17.3% तथा अनुसूचित जनजाति के लोगों का 12.4% रहा था। अन्य पिछड़ी जाति के लोगों को शामिल करने पर राज्य में 30% से अधिक लोग सामाजिक दृष्टि से पिछड़े वर्ग में आते हैं। व्यापक निरक्षरता, अज्ञानता व सामाजिक अभावों के कारण परिवार नियोजन के साधनों का पर्याप्त मात्रा में उपयोग नहीं हो पाता है। दूर-दराज के रेगिस्तानी क्षेत्रों, पहाड़ी क्षेत्रों, जनजाति-क्षेत्रों आदि में सामाजिक-आर्थिक दशाएँ काफी प्रतिकूल पाई जाती हैं।

---

1 Ninth Five Year Plan 1997–2002 (GOI). A Nabhi Publications, Feb 2000 p 26

इस प्रकार राज्य मे सामाजिक पिछड़ापन ऊँची जन्म–दर मे सहायक रहा है। आवश्यक सामाजिक परिवर्तन व सामाजिक सुधार से ही जनसख्या पर नियंत्रण स्थापित किया जा सकता है। इसके लिए परिवार नियोजन अपनाने वाले दम्पत्तियों का प्रतिशत बढाने की आवश्यकता है।

अब हम राजस्थान मे जनसंख्या के विभिन्न पहलुओ का विवेचन करेगे।

1991-2001 की अवधि में जनसंख्या की चक्रवृद्धि दर[1]– 1991-2001 की अवधि में जनसख्या की वार्षिक चक्रवृद्धि–दर (exponential growth rate) (ब्याज पर ब्याज वाले सूत्र के अनुसार) भारत के लिए 1 93% तथा राजस्थान के लिए 2 49% रही। 1981-91 की अवधि के लिये ये दरें भारत के लिए 2 14% तथा राजस्थान के लिए 2 50% रही थीं। 1991-2001 के दशक मे जनसंख्या की वार्षिक चक्रवृद्धि–दरें कुछ राज्यों के लिए निम्नांकित रहीं–

(प्रतिशत में)

बिहार	2 50
मध्य प्रदेश	2 18
उत्तर प्रदेश	2.30
केरल	0 90
गुजरात	2 03
पजाब	1 80
महाराष्ट्र	2.04
पश्चिम बगाल	1 64

इस प्रकार 1991-2001 के दशक मे जनसख्या की वार्षिक चक्रवृद्धि–दर राजस्थान मे 2 49% रही, जो पजाब, मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश केरल, महाराष्ट्र, पश्चिम बगाल व गुजरात राज्यो से अधिक थी। यह न्यूनतम केरल में 0 9% रही। यह बिहार मे लगभग बराबर थी।

राजस्थान मे 1991-2001 की अवधि मे जिलेवार जनसंख्या की वृद्धि-दरें[2]– 1991-2001 की अवधि मे राजस्थान के 32 जिलो मे जनसख्या की सर्वाधिक वृद्धि–दर जैसलमेर जिले में 47 45% पाई गई है, जबकि सबसे कम वृद्धि–दर राजसमद जिले मे 19 88% पाई गई है। 32 जिलो में जनसख्या से सम्बन्धित विस्तृत आँकडो की तालिका इस अध्याय के परिशिष्ट–2 में दी गई हैं।

---

1 Provisional Population Totals, Paper-I of 2001, India, pp 42–43

2 Provisional Population Totals, Paper I of 2001, Raj March p 39.

राज्य की औसत जनसंख्या वृद्धि-दर (28 3%) की तुलना में तेरह जिलों में अर्थात् जयपुर, दौसा, धौलपुर, करौली, बाड़मेर, सिरोही, अलवर, नागौर, कोटा, बीकानेर, बांसवाड़ा, जैसलमेर व जोधपुर जिलों में जनसंख्या में अधिक प्रतिशत वृद्धि हुई तथा अन्य 19 जिलों में यह राज्य के औसत से कम रही।

राज्य में सबसे अधिक आबादी जयपुर जिले की है, जो 2001 में 52.52 लाख रही। यह राज्य की कुल जनसंख्या का 9 30% है। आबादी की दृष्टि से जैसलमेर का स्थान अंतिम आता है। 2001 में यहाँ की आबादी 5 08 लाख रही, जो राज्य की कुल जनसंख्या का मात्र 0.90 प्रतिशत है।

राज्य में जनसंख्या के घनत्व की स्थिति—2001 के परिणामों के अनुसार राजस्थान में जनसंख्या का घनत्व प्रति वर्ग किलोमीटर 165 रहा, जबकि 1991 में यह 129 था। भारत में 2001 में घनत्व 324 रहा, जबकि 1991 में यह 267 रहा था। 28 राज्यों में सबसे ज्यादा घनत्व पश्चिम बंगाल में 904 पाया गया तथा सबसे कम अरुणाचल प्रदेश में 13 रहा।

2001 जनगणना के अनुसार राज्य के 32 जिलों में भी परस्पर घनत्व के काफी अन्तर पाए जाते हैं। जयपुर जिले में घनत्व 471 रहा, जो सर्वाधिक था तथा जैसलमेर जिले में न्यूनतम 13 रहा (यहाँ 1991 में यह केवल 9 ही था)। राज्य के 22 जिलों में घनत्व राज्य के *औसत घनत्व से अधिक पाया गया है तथा शेष 10 जिलों में यह राज्य के औसत घनत्व* से कम पाया गया है।

राज्य में लिंग-अनुपात (sex-ratio) की स्थिति—राज्य में प्रति 1000 पुरुषों के पीछे स्त्रियों की संख्या 2001 में 922 रही, जबकि 1991 में यह 910 रही थी। इस प्रकार राजस्थान में लिंग-अनुपात में 12 अंकों की वृद्धि हुई है। 2001 में केरल में लिंग-अनुपात 1058 रहा था; अर्थात् वहाँ पुरुषों की तुलना में स्त्रियों की संख्या अधिक रही। राजस्थान के विभिन्न जिलों में लिंगानुपात में अन्तर पाया जाता है।

वैसे राजसमंद व डूंगरपुर को छोड़कर सभी जिलों में 2001 में स्त्रियों की संख्या पुरुषों से कम पाई गई, लेकिन राज्य के सोलह जिलों में लिंग-अनुपात राज्य के औसत अनुपात से अधिक पाया गया है। उदाहरण के लिए, डूंगरपुर जिले में यह अनुपात 1027, राजसमंद जिले में 1002, बांसवाड़ा जिले में 978 व उदयपुर जिले में 972 रहा। 2001 में **डूंगरपुर जिला ऐसा जिला रहा जिसमें लिंग-अनुपात 1027 रहा जो सर्वोच्च था। लेकिन 1991 में इसमें भी पुरुषों के पक्ष में परिवर्तित हो गया था जो 995 रहा था। न्यूनतम लिंग-अनुपात जैसलमेर जिले में पाया गया है, जहाँ यह 821 रहा है।**

राज्य में साक्षरता-दर (Literacy-rate)—2001 में राज्य में 7 वर्ष व इससे अधिक आयु की जनसंख्या में साक्षर व्यक्तियों का अनुपात 61 0% रहा है। पुरुषों में साक्षरता-दर

लगभग 76.5% थी तथा स्त्रियों में यह लगभग 44.3% रही है। 1951 व बाद के वर्षों के लिए राजस्थान मे साक्षरता की प्रभावी दरे निम्न तालिका मे दी गई हैं।[1]

(प्रतिशत में)

वर्ष	सभी व्यक्तियों के लिए	पुरुष	स्त्रियाँ
1951	8.9	14.4	3
1961	15.2	23.7	5.8
1971	19.1	28.7	8.5
1981	30.1	44.8	14.0
1991	38.6	55.0	20.4
2001	61.0	76.5	44.3

स्मरण रहे कि उपर्युक्त तालिका में 1981 व बाद के वर्षों के लिए साक्षरता की प्रभावी दरें 7 वर्ष व अधिक की आयु-वर्ग के लिए हैं, जबकि पिछली अवधियों में माप का आधार 5 वर्ष व अधिक आयु-वर्ग रखा गया था। इसलिए तुलना मे थोडी कठिनाई आती है। फिर भी यह ध्यान देने योग्य है कि 1951 से 2001 की अवधि मे साक्षरता की दर में सुधार हुआ है। महिलाओ के लिए साक्षरता की दर 1951 में 3% से बढकर 2001 में 44.3% हो गई है (प्रतिशत की दृष्टि से यह लगभग 15 गुनी हो गई है)। फिर भी राज्य साक्षरता की दृष्टि से आज भी पिछडा हुआ माना जाता है।

ग्रामीण व शहरी क्षेत्रो के अनुसार 1961 से साक्षरता की स्थिति निम्न तालिका मे दी जाती है–

(प्रतिशत मे)

वर्ष	कुल व्यक्तियों के लिए	ग्रामीण	शहरी
1961	15.2	10.9	37.6
1971	19.1	13.9	43.5
1981	30.1	17.8	47.9
1991	38.6	30.4	65.3
2001	61.0	55.9	76.9

तालिका से स्पष्ट होता है कि 1961 मे ग्रामीण क्षेत्रो मे साक्षरता की दर 11% से बढ कर 2001 में 56% हो गई तथा शहरी क्षेत्रो मे यह 38% से बढकर 77% हो गई। इस प्रकार अब शहरी क्षेत्रो मे साक्षरता का अनुपात ग्रामीण क्षेत्रो की तुलना मे प्रतिशत की दृष्टि से ज्यादा पाया जाता है।

इस प्रकार 1991-2001 के दशक मे राजस्थान में साक्षरता की दर मे काफी सुधार हुआ है, लेकिन आज भी यह राज्य साक्षरता की दृष्टि से पिछडा हुआ माना जाता है।

---

1 Some Facts About Rajasthan, 2003 (June 2003), Part II p 17 and provisional Population Totals, Paper 2 of 2001 for Rural-Urban Distribution of Population Rajasthan Ch 10.

इस प्रकार 1991-2001 के दशक में राजस्थान में साक्षरता की दर में काफी सुधार हुआ है, लेकिन आज भी यह राज्य साक्षरता की दृष्टि से पिछडा हआ माना जाता है। राज्य मे महिलाओ मे साक्षरता की दर नीची है। 2001 में ग्रामीण स्त्रियों में साक्षरता की दर केवल 37 7% थी जो बहुत नीची थी। बासवाडा जिले में ग्रामीण महिलाओं मे साक्षरता की दर 23.8% (न्यूनतम) रही, जबकि झुन्झुनूं जिले मे यह 59 8% (अधिकतम) रही। **वैसे तहसीलवार लेने पर कोटरा तहसील (उदयपुर) में यह 11.1% तथा उदयपुर तहसील (झुन्झुनूँ) मे यह लगभग 68% रही।**

2001 में कुछ जिलों में साक्षरता-दर निम्न तालिका में दर्शायी गयी है (दशमलव के एक स्थान तक)—

जिले	सात वर्ष व अधिक आयु-वर्ग में साक्षरता-दर (% में) (व्यक्ति) (Persons) (पुरुष व स्त्रियों दोनों को शामिल करके)
कोटा	74 5 (अधिकतम)
झुंझुनूं	73 6
सीकर	71 2
जयपुर	70 6
चूरु	67 0
हनुमानगढ	65 7
अजमेर	65 1
गंगानगर	64 8
करौली	64 6
बांसवाड़ा	44 2 (न्यूनतम)

इस प्रकार 2001 में साक्षरता की दर कोटा जिले में सर्वोच्च 74 5% रही, वहीं यह बांसवाड़ा जिले में न्यूनतम 44 2% रही। राज्य में साक्षरता का प्रचार बढ़ाकर इसकी दर बढ़ाई जानी चाहिए।

2001 में राजस्थान में साक्षरता की दर 61% रही, जब भारत के लिए यह 65 4% रही।

राजस्थान में नीची साक्षरता-दरों के लिए उत्तरदायी कारण

(1) नवम्बर 1956 में राजस्थान के पुनर्गठन के समय विभिन्न क्षेत्रों में साक्षरता की दरें बहुत नीची थीं। उस समय की सामन्ती रियासतों में लोगों की शिक्षा पर विशेष ध्यान नहीं दिया गया था।

(2) राज्य में विभिन्न सरकारों ने भी प्रारम्भिक वर्षों में साक्षरता-अभियान उतनी तत्परता से नहीं चलाए जितने हाल के वर्षों में चलाए हैं। वर्तमान में सम्पूर्ण साक्षरता-अभियान पर जोर दिया जा रहा है। राज्य में साक्षरता-कार्यक्रम तीन चरणों में चलाया जा रहा है; प्रथम चरण में निरक्षरों का सर्वे किया जाता है, दूसरे चरण में उत्तर-साक्षरता कार्यक्रम (post-literacy programme) के अन्तर्गत साक्षरता का स्तर सुदृढ़ किया जाता है और

तृतीय चरण में निरंतर शिक्षा (continuing education) (CE) के अन्तर्गत नव-साक्षरों को दैनिक जीवन के लायक ज्ञान प्रदान किया जाता है।

वर्तमान में सभी 32 जिलों में उत्तर-साक्षरता अभियान चल रहा है। तेरह जिलों में यह अन्तिम चरण में है।[1]

(3) सामाजिक व आर्थिक कारणों से प्राथमिक स्कूलों से छात्र-छात्राओं के बीच में ही अपना अध्ययन छोड़कर चले जाने से भी शिक्षा की प्रगति में बाधा पहुँची है।

(4) प्राय: ग्रामों में व शहरों के निर्धन परिवारों में सामाजिक-आर्थिक कारणों से विशेषतया लड़कियों की शिक्षा पर पर्याप्त ध्यान नहीं दिया जाता। वे प्राय: घरेलू काम-काज में अपने माता-पिता का हाथ बँटाती हैं और परिवारों को अनेक प्रकार से सहायता पहुँचाती हैं। अधिकांश गरीब परिवार शिक्षा के व्यय का भार उठाने में अपने आपको असमर्थ पाते हैं।

(5) बहुधा गाँवों में प्राथमिक स्कूलों की कमी पाई जाती है। गाँवों के आस-पास भी इनका अभाव देखा जाता है।

हाल के वर्षों में शिक्षा के प्रति लोगों का रुझान बढ़ा है और सरकार भी शिक्षा के विस्तार के लिए कई कदम उठा रही है; जैसे प्राथमिक स्कूलों में पाठ्य पुस्तकों का निःशुल्क वितरण, अनुसूचित जाति व अनुसूचित जनजाति के छात्र-छात्राओं के लिए कुछ जनजाति व रेगिस्तानी जिलों में ड्रेस के लिए नकद-राशि का भुगतान तथा स्कूलों में जाने व पढ़ने के लिए नई प्रेरणाएँ, आदि। आशा है इन उपायों से शिक्षा व साक्षरता की दिशा में ठोस प्रगति हो पाएगी। इससे शादी की उम्र भी बढ़ेगी, मानवीय साधनों का विकास होगा, लोगों की कार्यक्षमता बढ़ेगी और परिवार-नियोजन को भी अधिक सुदृढ़ आधार मिल पायेगा।

जिलेवार व शहरी जनसंख्या का वितरण[2]—राज्य में 1991 में शहरी जनसंख्या का अनुपात 22.9% था जो 2001 में बढ़कर 23.4% हो गया। अत: ग्रामीण जनसंख्या का अनुपात लगभग 76 6 प्रतिशत है।

2001 में निम्न जिलों में ग्रामीण जनसंख्या का अनुपात 90% से अधिक रहा—

जिले	(प्रतिशत में)
जालौर	92 41
डूँगरपुर	92 76
बांसवाड़ा	92 85 (सर्वाधिक)
बाड़मेर	92 60

जिन जिलों में ग्रामीण जनसंख्या का अनुपात 70% से नीचे पाया गया, वे अग्र प्रकार हैं—

1. Economic Review 2003-04, p 69
2. Some Facts About Rajasthan, 2003, Part II pp 30-31

(ग्रामीण जनसंख्या का अनुपात)

जिले	(प्रतिशत में)
अजमेर	59 91
बीकानेर	64 48
जयपुर	50 62
जोधपुर	66 25
कोटा	46 58(न्यूनतम)

शेष जिलों में ग्रामीण जनसंख्या का अनुपात 70% से 90% के बीच पाया गया। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि सर्वाधिक ग्रामीण जनसंख्या वाले जिलों में बाड़मेर, बाँसवाड़ा, डूँगरपुर व जालौर का स्थान आता है। इसके विपरीत अजमेर, बीकानेर, जयपुर, जोधपुर व कोटा जिलों में ग्रामीण जनसंख्या अपेक्षाकृत कम अनुपात में पाई जाती है।

2001 में बांसवाड़ा जिले में ग्रामीण जनसंख्या का अनुपात 92.85% रहा, जो सर्वाधिक था तथा कोटा जिले में यह 46.58% रहा, जो न्यूनतम था।

राजस्थान में जनसंख्या-नियंत्रण की दिशा में सरकारी प्रयास—अन्य राज्यों की भाँति राजस्थान में भी परिवार नियोजन कार्यक्रम अपनाया गया है जिसके परिणामस्वरूप राज्य में दम्पत्ति-सुरक्षा-दर (CPR) 1995 में 32.6% हो गई थी, जबकि भारत में यह दर 45 4% थी। छोटे परिवार के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए सम्पूर्ण राज्य में सघन परिवार कल्याण कार्यक्रम चलाया गया है। 1997-98 में इसके लिए एक नई पद्धति को अपनाया गया जिसमें लक्ष्य निर्धारित करने की जरूरत नहीं समझी गई। वर्ष 2003-04 में 3 लाख नसबन्दी, 2 66 लाख लूप (I U D) के प्रयोग, 4 51 लाख गर्भ निरोधक गोलियों का वितरण तथा 5 04 लाख 'निरोध' वितरण के कार्य सम्पन्न किए गए। इनसे दम्पत्ति-सुरक्षा-दर में काफी सुधार होने की आशा है।[1]

राज्य ने परिवार-नियोजन के प्रोत्साहन हेतु निम्न कार्यक्रम चलाये हैं—

(1) पंचायत चुनावों में सीमित परिवार के लिए कानूनी प्रावधान—राज्य सरकार ने 15 जून, 1992 को एक महत्त्वपूर्ण कदम उठाते हुए पंचायत चुनाव में परिवार को सीमित रखने का कानूनी प्रावधान करने का फैसला किया था। इसके लिए एक आदेश जारी किया गया था जिसके अनुसार दो बच्चों के बाद निर्वाचन के एक साल आगे की अवधि में तीसरा बच्चा होने पर चुना हुआ पंच या सरपंच स्वत: ही चुनाव की दृष्टि से अयोग्य हो जाता है। चुनाव के समय उम्मीदवार के चाहे जितने बच्चे हों, मगर यदि निर्वाचन के एक वर्ष के अन्तराल के बाद कोई बच्चा होता है तो दो से अधिक बच्चे होने पर उसका निर्वाचन निरस्त घोषित हो जाता है। यदि निर्वाचन तक उम्मीदवार के एक भी बच्चा नहीं है तो उसे दो सन्तान तक की छूट होगी। यह एक अच्छी शुरुआत है जिससे आगे चलकर परिवार नियोजन को बढ़ावा मिलेगा। लेकिन इसको अधिक तत्परता व अधिक प्रभावी ढंग से लागू किया जाना चाहिए।

---

1. Economic Review 2003-04, (GOR), p 76

(2) लड़कियों के लिए राज-लक्ष्मी-बॉण्ड की स्कीम—दो बच्चों तक के छोटे परिवार को प्रोत्साहन देने के लिए तत्कालीन मुख्यमंत्री श्री भैरोंसिंह शेखावत ने 1992-93 के बजट-भाषण में राज-लक्ष्मी-बॉण्ड योजना का प्रस्ताव रखा था। इसके अनुसार जिस परिवार में माता या पिता की आयु 35 वर्ष से कम होती है एवं एक या दो बच्चों के बाद माता या पिता किसी ने भी परिवार कल्याण (नसबन्दी) का आपरेशन करवाया है, तो सरकार की ओर से परिवार की एक लड़की अथवा दो लड़कियों तक के लिए एक-एक हजार रुपये का 'फिक्स्ड डिपोजिट' का खाता खुलवाया जाएगा। यह डिपोजिट परिवार नियोजन बॉण्ड कहलाएगा। यह राशि इन लड़कियों के खातों में उनकी 20 वर्ष की आयु तक जमा रहेगी, जिसके बाद ये स्वयं के लिए इसका उपयोग कर सकेंगी। 20 वर्ष में पुत्री को 21 हजार रु (अनुसूचित जाति व अनुसूचित जनजाति की पुत्री को 31 हजार 500 रु) मिलेंगे। ऐसी योजना को जारी रखा जाना चाहिए। यह योजना बाल-विवाह, अशिक्षा, दहेज प्रथा तथा भ्रूण हत्या जैसे सामाजिक अपराधों पर नियंत्रण करने में भी सहायक सिद्ध होती है। 1992-93 से लेकर अब तक इस स्कीम से मार्च 1998 तक 61472 परिवार लाभान्वित हो चुके हैं। जून 1996 से इस स्कीम को अधिक सरल कर दिया गया जिसके अनुसार पति-पत्नी की आयु-सीमा का बंधन हटा दिया गया। सभी के लिए बांड की राशि 1500 रु. निर्धारित की गई है। इस प्रकार इस स्कीम में बालिका के उज्ज्वल भविष्य के लिए राज्य सरकार द्वारा पूंजी-निवेश किया जाता है।

(3) परिवार-नियोजन की नयी विकल्प योजना—1997-98 में राजस्थान में जनसंख्या-नियंत्रण व परिवार-कल्याण के लिए एक नई "विकल्प" (Vikalp) योजना चालू करने का निर्णय लिया गया था। इसकी मुख्य विशेषताएँ इस प्रकार हैं—

(1) इसमें ऊपर से थोपे जाने वाले लक्ष्यों को समाप्त कर दिया गया तथा उनके स्थान पर जिला-परिवार-कल्याण-ब्यूरो अपने कर्मचारियों से विचार-विमर्श करके स्वयं वार्षिक लक्ष्य निर्धारित करता है।

(2) नकद व वस्तुओं के रूप में दिए जाने वाले प्रलोभनों को समाप्त किया गया। निर्धारित रकम का उपयोग सेवाओं की गुणवत्ता को सुधारने, उपभोक्ताओं को स्वास्थ्य-बीमा, मेडी-क्लेम, आदि सुविधाएँ प्रदान करने में किया जाता है।

(3) इसमें निजी अस्पताल, नर्सिंग होम तथा निजी चिकित्सकों की भी महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है।

(4) यह प्रारम्भ में टौंक व दौसा जिलों में चलायी गई।

इस प्रकार राज्य सरकार ने परिवार नियोजन की दिशा में अधिक ठोस व व्यावहारिक कदम उठाए हैं जिनकी भारत सरकार व अन्य राज्य सरकारों द्वारा काफी सराहना की गई है। लेकिन आवश्यकता इस बात की है कि राज्य में जन्म-दर वर्तमान स्तर की तुलना में कम की जाए, तभी राज्य की बढ़ती जनसंख्या को नियंत्रित करना सम्भव हो पाएगा।

राजस्थान के लिए नई जनसंख्या नीति की घोषणा

सरकार ने 20 जनवरी 2000 को राज्य के लिए नई जनसंख्या-नीति की घोषणा की। आंध्र प्रदेश और मध्यप्रदेश के बाद जनसंख्या-नीति की घोषणा करने वाला

राजस्थान तीसरा राज्य है। राज्य की जनसंख्या नीति के चार मुख्य बिन्दु हैं, जो इस प्रकार हैं—

(i) प्रजनन व बाल स्वास्थ्य को आधार मान कर सेवाएँ प्रदान करने के लिए सर्वेक्षण करके पैकेज तैयार करना;

(ii) सेवा-प्रणाली के प्रबंधन में गुणात्मक सुधार करना;

(iii) छोटे परिवार की अवधारणा के लिए उपयुक्त वातावरण तैयार करना तथा

(iv) सेवाएँ प्रदान करने तथा सामाजिक चेतना जागृत करने में पंचायती राज संस्थाओं, स्वैच्छिक संगठनों, निजी, सहकारी व अन्य संस्थाओं को भागीदार बनाना।

नई जनसंख्या-नीति को लागू करने के संबंध में सरकार निम्न बातों पर जोर देगी—

(1) छोटे परिवार का माहौल तैयार करने के लिए महिला-साक्षरता बढ़ाने पर बल दिया जाएगा। इसके लिए प्राथमिक शिक्षा के लिए वांछित कानून बनाया जाएगा, बालिकाओं के लिए स्कूलों की स्थापना की जाएगी तथा महिला-शिक्षा-पाठ्यक्रम में महिला स्वास्थ्य और प्रजनन स्वास्थ्य संबंधी जानकारी का समावेश किया जाएगा।

(2) प्रथम प्रसव में विलम्ब, दो प्रसवों के बीच अंतराल, प्रजनन-व्यवहार में पुरुषों के उत्तरदायी योगदान तथा सुखी व सीमित परिवार की अवधारणाओं का प्रचार-प्रसार किया जाएगा। बालक-बालिकाओं को मानव-प्रजनन, जीव-विज्ञान, आरोग्य पद्धतियों और उत्तरदायी यौन व्यवहार व परिवार नियोजन साधनों की जानकारी दी जाएगी। इसके लिए शिक्षा-पाठयक्रमों में आवश्यक संशोधन किया जाएगा।

(3) जनसंख्या की नई रणनीति का केन्द्र बिन्दु परिवार होगा। राज्य में बाल विवाह पर अंकुश लगाने के लिए विवाह का कानूनी-पंजीकरण, सरकारी सुविधाओं व सेवाओं के लिए विवाह की स्वीकृत न्यूनतम आयु को अनिवार्य तथा वर्तमान कानून को अधिक दण्डात्मक बनाया जाएगा। महिला सशक्तिकरण (women-empowerment) के लिए विशेष योजनाएँ तैयार की जाएँगी।

(4) नई नीति में वित्तीय प्रोत्साहन योजना समाप्त कर दी गई है। दो बच्चों के बाद भी नसबंदी नहीं कराने वालों को हतोत्साहित किया जाएगा। दो से अधिक बच्चे होने पर अयोग्यता के प्रावधान सहकारी संस्थाओं तथा राज्य कर्मचारियों की सेवा-शर्तों में शामिल करने की बात कही गयी है।

(5) सुरक्षित-प्रसव-सेवाएँ उपलब्ध कराने के लिए सन् 2001 तक प्रत्येक गाँव में प्रशिक्षित दाई की सुविधा मुहैया की जाएगी। प्रशिक्षित दाई की सुविधा प्रदान करने के लिए दाई-कर्म-प्रशिक्षण-कोर्स चालू किया जाएगा तथा आयुर्वेद-चिकित्सालयों में प्रसव-सुविधा उपलब्ध कराई जाएगी।

आशा है इस नई स्पष्ट, व्यावहारिक व प्रावैगिक नीति के क्रियान्वयन से राज्य में जन्म-दर अवश्य घटेगी। नई जनसंख्या-नीति घोषित करने की दिशा में सरकार की पहल सराहनीय कही जा सकती है।

राज्य सरकार ने जनसंख्या-नियन्त्रण व परिवार-नियोजन को बढ़ावा देने के लिए 20 जून, 2001 को एक अधिसूचना जारी की है जिसके अनुसार राज्य में एक जून 2002 को या इसके पश्चात दो से अधिक बच्चों वाले अभ्यर्थी को सरकारी नौकरी नहीं मिलेगी, तथा ऐसे व्यक्तियों की पदोन्नति पर भी पाँच वर्ष तक विचार नहीं होगा। पहले एक बच्चा हो, और यदि बाद में एक से अधिक बच्चे होते हैं तो दूसरी बार के जन्मे बच्चों को एक इकाई ही समझी जायेगी। यह एक महत्त्वपूर्ण कदम है। आशा है इससे परिवार-नियोजन को अवश्य प्रोत्साहन मिलेगा।

श्रम-शक्ति का व्यावसायिक ढाँचा

राज्य में 1991 में कुल श्रमशक्ति जनसंख्या का 39% थी, जो 2001 में 42.1% हो गई।[1] इसमें मुख्य श्रमिक व सीमान्त श्रमिक दोनों को शामिल कर लिया गया है। इसे काम में भाग लेने की दर (work participation rate) भी कहते हैं। 2001 में भारत में काम में भाग लेने की दर 39.3% रही। इस प्रकार 2001 में काम में भाग लेने की दर राजस्थान में भारत से लगभग 3% बिन्दु अधिक थी।

मुख्य श्रमिकों (main workers) के औद्योगिक श्रेणी-विभाजन के अनुसार 1991 में 68.8% श्रमिक कृषक व खेतिहर मजदूर थे तथा 2001 में यह अंश (मुख्य व सीमान्त श्रमिकों को मिलाकर) 66% हो रहा जो पहले से मामूली कम माना जा सकता है। लेकिन खेतिहर मजदूरों का अनुपात कुल श्रमिकों में पहले की तुलना में बढ़ रहा है। 2001 में राजस्थान में गैर-कृषिगत क्रियाओं में 34% श्रमिक कार्यरत थे।

निम्न तालिका में भारत व कुछ राज्यों में 2001 में कुल श्रमिकों का कृषिगत व गैर-कृषिगत क्षेत्र में वितरण दर्शाया गया है[2]—

(मुख्य + सीमान्त श्रमिकों में अनुपात)

		कृषिगत क्षेत्र में श्रमिकों का (कृषक व खेतिहर मजदूर) प्रतिशत	गैर-कृषिगत क्षेत्र में प्रतिशत
1	भारत	58 4	41 6
2	राजस्थान	66 0	34 0
3	बिहार	77 4	22 6
4	मध्य प्रदेश	71 6	28 4
5	महाराष्ट्र	55 4	44 6

तालिका से स्पष्ट होता है कि 2001 में राजस्थान में लगभग 2/3 श्रमिक खेती में संलग्न थे (कृषकों व खेतिहर मजदूरों के रूप में) और शेष 1/3 गैर-कृषिगत

---

1 1991 में मुख्य श्रमिकों का अनुपात 32% तथा सीमान्त श्रमिकों का 7% रहा। मुख्य श्रमिक सम्बद्ध आर्थिक क्रिया में छः महीने व अधिक के लिए भाग लेते हैं, और सीमान्त श्रमिक उसमें छः महीने से कम अवधि के लिए भाग लेते हैं।

2. Provisional Population Totals, Paper-3 of 2001, (Distribution of Workers and Non-workers), pp 39–40

क्रियाओं में संलग्न थे। लेकिन बिहार में कृषिगत क्षेत्र में कुल श्रमिकों का 77.4% लगा हुआ था जबकि महाराष्ट्र में यह अनुपात 55 4% ही था। इस प्रकार श्रमिकों के वितरण में राज्य स्तर पर भारी असमानता पाई जाती है।

1991 में मुख्य श्रमिकों में, कृषक, खेतिहर मजदूर व पारिवारिक उद्योगों में संलग्न श्रमिकों के अलावा शेष 29.2% श्रमिकों का विभिन्न उप-श्रेणियों में अनुपात अग्र प्रकार रहा था।[1]

(प्रतिशत में)

1	पशु पालन, मछली, शिकार, बागान व कृषि की सहायक क्रियाएँ	1 8
2	खनन व पत्थर निकालना	1 0
3	पारिवारिक उद्योगों के अलावा अन्य उद्योग	5 5
4	निर्माण (Construction)	2 4
5	व्यापार व वाणिज्य	6 4
6	परिवहन, संचार, संग्रह	2 4
7	अन्य सेवाएँ	9 7
	शेष क्रियाओं का कुल योग	29 2

1991 में राजस्थान में श्रम-शक्ति के व्यावसायिक वितरण में पहले की तुलना में परिवर्तन आया है। इससे राज्य में कृषि व पारिवारिक उद्योगों के अलावा अन्य क्रियाओं की प्रगति झलकती है। आशा है, आगामी वर्षों में राज्य के औद्योगिक विकास से यह प्रवृत्ति और जोर पकड़ेगी, जिससे श्रम-शक्ति का व्यावसायिक वितरण अधिक संतुलित हो सकेगा। इसके लिए राज्य में विभिन्न प्रकार के उद्योगों का जाल बिछाना होगा।

राजस्थान में कृषि-आधारित उद्योगों, खनिज-आधारित उद्योगों तथा पशु-आधारित उद्योगों के विकास की काफी संभावनाएँ हैं। **रत्न व आभूषण, हथकरघा, दस्तकारी, गलीचों व विभिन्न प्रकार के ग्रामीण उद्योगों में श्रमिकों को रोजगार दिया जा सकता है।** कुछ कर्मचारियों को पर्यटन-विकास, शिक्षा व चिकित्सा के विकास कार्यों में लगाना भी सम्भव हो सकता है।

मानवीय साधनों से सम्बन्धित उपर्युक्त तथ्य यह स्पष्ट करते हैं कि राजस्थान में एक तरफ जनसंख्या की वृद्धि को नियंत्रित किया जाना चाहिए और दूसरी तरफ तीव्र गति से आर्थिक विकास किया जाना चाहिए। राज्य में जनसंख्या-वृद्धि को नियंत्रित करने के लिए आवश्यक आर्थिक व सामाजिक उपाय करने होंगे। राजस्थान में कृषिगत विकास व औद्योगिक विकास की गति को तेज करके लोगों की आर्थिक स्थिति में आवश्यक सुधार लाया जा सकता है। आगे चलकर सम्बन्धित अध्यायों में इन पहलुओं पर अधिक प्रकाश डाला जाएगा।

---

1 *Some Facts About Rajasthan, 2003, pp 47-49* से जोड़कर प्रतिशत निकाले गए हैं।

राज्य में मानवीय साधनों का विकास
(Human Resource Development in the State)

मानवीय साधनों का सदुपयोग व विकास करना योजना का प्रमुख उद्देश्य माना गया है। इसके लिए सरकार को साक्षरता, शिक्षा, चिकित्सा, स्वास्थ्य, सफाई व पोषण (विशेषतया स्त्रियों व बच्चों के पोषण) आदि पर समुचित ध्यान देना होता है। इससे शिशु मृत्यु-दर (infant mortality rate) (एक वर्ष से कम आयु के बच्चों में मृत्यु-दर) व सामान्य जन्म-दर में कमी आती है, उचित पोषण से श्रम की कार्यकुशलता बढ़ती है और जीने की प्रत्याशा (expectation of life), अथवा जीने की औसत आयु, में वृद्धि होती है और लोगों का जीवन-स्तर ऊँचा होता है।

भारत में केरल व पंजाब में जन्म-दरों व मृत्यु-दरों में कमी की दिशा में प्रगति हुई है। केरल में बड़ी मात्रा में बेरोजगारी व प्रति-व्यक्ति नीची आय के बावजूद जनसंख्या की वृद्धि-दर न्यूनतम रही है, तथा शिशु मृत्यु-दर भी बहुत कम हो गई है। वहाँ शिक्षा का स्तर-विशेषतया महिलाओं की शिक्षा का स्तर-बहुत ऊँचा है और स्वास्थ्य व सफाई के स्तर भी बहुत ऊँचे हैं। पंजाब में ऊँची आमदनी के फलस्वरूप शिक्षा व स्वास्थ्य के स्तर सुधरे हैं।

राजस्थान में प्रति व्यक्ति आमदनी के नीचा होने व सामाजिक पिछड़ेपन के कारण मानवीय साधनों का विकास अपर्याप्त रूप से हो पाया है। यहाँ महिलाओं में साक्षरता का नितान्त अभाव पाया जाता है-विशेषतया ग्रामीण महिला-वर्ग में, तथा अनुसूचित जाति व अनुसूचित जनजाति के वर्ग में (पुरुषों व स्त्रियों दोनों में)। स्त्रियों के लिए प्रसव से पूर्व व बाद की देखरेख का अभाव पाया जाता है। गर्भवती स्त्रियों व प्रसव के बाद की अवधि में स्त्रियों के लिए पोषण का अभाव पाया जाता है। बच्चे कुपोषण का शिकार रहते हैं। कई प्रकार की बीमारियों से गर्भवती महिलाओं व बच्चे के जन्म के बाद स्त्रियों की मृत्यु हो जाती है। अधिकांश परिवार केलोरी व प्रोटीन की अपर्याप्तता के शिकार पाये जाते हैं। नीचे साक्षरता, स्वास्थ्य व पोषण आदि सूचकों के आधार पर राजस्थान की स्थिति का विवेचन किया गया है—

(1) साक्षरता—जैसा कि पहले कहा जा चुका है राजस्थान में साक्षरता का स्तर बहुत नीचा है। 2001 में राज्य में साक्षरता की दर 61.0% रही, जो पुरुष-वर्ग में 76.5% तथा महिला-वर्ग में 44.3% रही। 1991 में साक्षरता की दर केवल 38.6% रही थी, जो पुरुषों में 55% तथा महिलाओं में मात्र 20.4% रही थी। इस गणना में सात वर्ष व अधिक आयु के साक्षर व्यक्ति शामिल है। राज्य में ग्रामीण महिला-वर्ग में साक्षरता की दर बहुत नीची पाई जाती है। 1991 में राज्य में अनुसूचित जाति के पुरुषों में साक्षरता की दर 42.4% व स्त्रियों में 8.3% रही एवं अनुसूचित जनजाति के पुरुषों में यह 33.3% तथा स्त्रियों में 4.4% रही। इस प्रकार अनुसूचित जाति व अनुसूचित जनजाति की महिलाओं में निरक्षरता व्यापक रूप से फैली हुई है। इनमें भी जिलों के अनुसार काफी अन्तर पाये जाते हैं।

राजस्थान में 2001-02 में कक्षा I-IV तथा V से VIII के समूहों में कुल-नामांकन-अनुपात (Enrolment Ratio) में लड़कियों का अनुपात क्रमशः 83.2% व 47.5% रहा, जो राष्ट्रीय औसत, क्रमशः 86.9% व 52.1% से काफी नीचे था ।

1992-93 मे 6-14 वर्ष के आयु-समूह में स्कूल छोड़ने वाले बच्चों का अनुपात निम्न तालिका में दर्शाया गया है[1]—

	% में					
	ग्रामीण			शहरी		
	पुरुष	स्त्रियाँ	कुल	पुरुष	स्त्रियाँ	कुल
राजस्थान	56	110	74	08	34	19

तालिका से स्पष्ट होता है कि स्कूल छोड़ने वालों मे सर्वोच्च अनुपात ग्रामीण स्त्री-वर्ग का था, जो 11% था और सबसे कम शहरी पुरुष-वर्ग में था, जो केवल 0 8% ही था।

नामाकन व स्कूल छोड़ने की क्रियाओं पर कई सामाजिक-आर्थिक कारकों का प्रभाव पडता है। इन पर परिवारो की गरीबी का सबसे ज्यादा प्रभाव पडता है। बच्चे परिवार की कम आमदनी में कुछ सहायता पहुँचाने का प्रयास करते हैं, काफी बच्चे अपने से छोटे बच्चो की देखभाल के लिए घर पर रोक लिए जाते हैं और कई बार बच्चो व उनके माता-पिताओ की शिक्षा मे रुचि भी कम पाई जाती है।

(2) (अ) स्वास्थ्य की दशा (Health Status)— साक्षरता व शिक्षा का प्रभाव परिवार-नियोजन पर पडना स्वाभाविक है। केरल मे साक्षरता का स्तर (अब लगभग शत-प्रतिशत) बहुत ऊँचा होने से वहाँ जन्म-दर नीची है तथा जनसंख्या की वृद्धि-दर भी काफी कम है। वर्ष 2000 के सेम्पल रजिस्ट्रेशन सिस्टम (SRS) के प्रारम्भिक अनुमानों के अनुसार केरल में शिशु मृत्यु-दर (IMR) (प्रति 1000 जीवित जन्मे बच्चों पर) (per 1000 live births) 14 थी, जबकि राजस्थान में यह 79 थी। कुछ राज्यों में 2000 मे शिशु मृत्यु-दर की स्थिति निम्न प्रकार रही—

2000 में शिशु मृत्यु-दर (IMR)[2]

	(प्रति 1000 जीवित जन्मे बच्चों पर)
मध्य प्रदेश	87
बिहार	62
गुजरात	62
उडीसा	96
उत्तर प्रदेश	83
राजस्थान	79
अखिल भारत	68

1 Chakrabarty and Pal, Human Development Profile of the Indian States, 1995, p 50

2. Economic Survey 2003-2004 (G O I), p S-110

इसमें कोई सन्देह नहीं कि शिशु मृत्यु-दर कम करने के लिए महिला-वर्ग में साक्षरता का प्रसार करना बहुत आवश्यक है। इससे परिवार नियोजन को भी बल मिलता है। शिशु मृत्यु-दर घटने से छोटे परिवार के प्रति रुझान बढ़ता है। शिशु मृत्यु-दर कम करने के लिए स्वास्थ्य, परिवार कल्याण व सफाई पर भी ध्यान देना जरूरी होता है।

(आ) स्वास्थ्य की सुविधाएँ—चिकित्सा, स्वास्थ्य व सफाई की सुविधाएँ (Health Facilities)—राजस्थान में चिकित्सा-संस्थाओं का बहुत अभाव है। 1996-97 में राजस्थान में उपलब्ध स्वास्थ्य की सुविधाओं की तुलना कुछ राज्यों से निम्न तालिका में की गई है।[1]

राज्य	प्रति अस्पताल के पीछे जनसंख्या	प्रति डिस्पेन्सरी जनसंख्या	प्रति बिस्तर (per bed) जनसंख्या
राजस्थान	220091	173381	1313
पंजाब	103846	14694	863 (1995 96)
महाराष्ट्र	116712	60578	689

तालिका से स्पष्ट होता है कि प्रति अस्पताल व प्रति डिस्पेन्सरी जनसंख्या की दृष्टि से राजस्थान की स्थिति पंजाब व महाराष्ट्र से काफी पिछड़ी हुई थी। प्रति बिस्तर जनसंख्या भी राजस्थान में इन दोनों राज्यों से अधिक थी। इस प्रकार राजस्थान स्वास्थ्य की सुविधाओं में इन राज्यों से पीछे रहा है।

अतः राज्य में चिकित्सा की सुविधाओं का नितान्त अभाव पाया जाता है। दूर-दराज के गाँवों में चिकित्सा की सुविधाओं का भारी अभाव पाया जाता है। **1987 में राजस्थान में ग्रामीण क्षेत्रों में 88.7% बच्चों के जन्म के समय किसी प्रशिक्षित व्यक्ति ने देखरेख नहीं की थी।** 1987 में 0-4 वर्ष के बच्चों में मृत्यु का अनुपात कुल मृत्युओं में (death ratio in total deaths) 51.1% पाया गया था।

(3) पोषण (Nutrition)—भारत मे करोडो बच्चे अपर्याप्त खुराक पर जीते हैं। **1998-99 में राजस्थान में 51% बच्चे कुपोषण के शिकार थे, जबकि भारत में इनका अनुपात 47% था।** राजस्थान मे भी निर्धनता, कम आमदनी, महँगाई, सामाजिक पिछड़ेपन परिवार नियोजन आदि के अभाव के कारण पोषण का नितान्त अभाव पाया जाता है। गर्भवती महिलाओ व प्रसव के बाद की अवधि मे महिलाओ मे पोषण मे काफी कमी पाई जाती है। स्कूल जाने वाले बच्चे कुपोषण के कारण अपना मानसिक विकास नहीं कर पाते।

कुछ राज्यों के लिए बाल-कुपोषण (Child-Malnutrition) की स्थिति का परिवर्तन 1992-93 से 1998-99 के लिए अग्र तालिका मे दर्शाया गया है।

1. Report on Currency And Finance 1996-97 Vol I. pXI-22

राज्य	1992-93	1998-99	% बिन्दुओं का अंतर
बिहार	63	54	–9
मध्य प्रदेश	57	55	–2
उडीसा	57	55	–2
राजस्थान	42	51	9 (बडे राज्यो मे सबसे कमजोर स्थिति)
उत्तर प्रदेश	59	52	–7
भारत	53	47	–6

तालिका से स्पष्ट होता है कि 1992-93 से 1998-99 की अवधि मे बिहार, मध्य प्रदेश उडीसा व उत्तर प्रदेश तथा समस्त भारत मे बाल–कुपोषण की स्थिति मे थोडा सुधार नजर आया है, लेकिन राजस्थान की स्थिति मे गिरावट परिलक्षित हुई है क्योंकि 1992-93 मे 42% बालक कुपोषण के शिकार थे जबकि 1998-99 मे इनका घटने की बजाय बढकर 51% हो गया जो एक चिंता का विषय है।[1]

राजस्थान में मानवीय साधनों के विकास की दिशा में उठाए गए कदम–

(1) राज्य में लोगों की प्रति व्यक्ति वास्तविक आमदनी को बढ़ाने के लिए आर्थिक विकास पर बल दिया जा रहा है। इसके लिए नवीं योजना में सार्वजनिक क्षेत्र में व्यय की वास्तविक राशि लगभग 19 5 हजार करोड़ रु. थी, जिसे दसवीं पंचवर्षीय योजना में 31.8 हजार करोड़ रु. तक बढ़ाया जा रहा है, ताकि विकास की गति और तेज की जा सके।

(2) 1994-95 के राज्य का बजट शिक्षा को, 1995-96 का बजट चिकित्सा व स्वास्थ्य को, 1996-97 ऊका बजट पेयजल को तथा 1997-98 का बजट गरीब व कमजोर वर्ग को समर्पित किया गया था। 1999-2000 का बजट नई सरकार द्वारा किसी विभाग या सेवा विशेष को समर्पित नहीं करके राज्य की जनता को ही समर्पित किया गया था। 2000-2001 का बजट राजकोषीय स्थिति को सुदृढ करने तथा वित्तीय अनुशासन को प्राप्त करने के लिए समर्पित किया गया। पूर्व वर्षों में विभिन्न क्षेत्रो मे व्यय की राशियाँ बढाई गई है। पिछले वर्षो मे राज्य मे मानवीय साधनो के विकास पर ध्यान दिया गया है, जिसे भविष्य मे और तेज करने की आवश्यकता है।

(3) राज्य में साक्षरता-अभियान पर विशेष बल—जैसा कि पहले कहा जा चुका है राज्य मे सभी जिलों मे साक्षरता–अभियान–कार्यक्रम लागू किया गया है । वर्तमान में 30 जिलों में उत्तर-साक्षरता (post-literacy) कार्यक्रम चल रहा है । राज्य के कुछ जिलों में अनौपचारिक शिक्षा की 'गुरु–मित्र' योजना 'यूनीसेफ' की वित्तीय सहायता से चलाई गयी है । सीडा की मदद से लोक–जुम्बिश योजना चलाई गयी थी । शिक्षित महिला की देखरेख मे 'सरस्वती' स्कीम चलाई जा रही है । जनजाति व मरुक्षेत्रो में शिक्षा के विस्तार के लिए कई प्रकार की प्रेरणाएँ दी गयी है । स्वैच्छिक संस्थाएँ व गैर-सरकारी एजेन्सियाँ इस कार्य में विशेष योगदान दे सकती है । मानवीय साधनों के विकास के लिए लोगो की आमदनी बढ़ाना तथा शिक्षा, चिकित्सा, पोषण, पेयजल, आदि की सुविधाएँ बढ़ाना बहुत आवश्यक है । नयी सरकार को इस दिशा में अपने प्रयास तेज करने चाहिए ।

1 National Family Health Survey (NFHS) I & 2 1992-93 & 1998-99

सारांश– जैसा कि पहले कहा जा चुका है, राजस्थान मे 1991-2001की अवधि मे जनसख्या मे 28 3%की वृद्धि हुई, जो 1971-81 की 33% की वृद्धि की तुलना मे तो कम थी फिर भी यह भारतीय औसत से ऊँची थी। इसलिए 2000 के दशक व बाद में राज्य मे जन्म-दर कम करने पर विशेष रूप से बल दिया जाना चाहिए। इसके लिए महिला- वर्ग मे साक्षरता का अनुपात बढाना होगा। राजस्थान मे लडकियो की शादी की औसत आयु 1994 मे 18 4 वर्ष थी जिसमे वृद्धि करनी होगी तथा परिवार-नियोजन के विभिन्न उपाय अपनाने वाले दम्पत्तियो का अनुपात (जो 1995 मे 32 6%आका गया है) बढाना होगा। इन सबका प्रभाव जन्म-दर को घटाने के रूप मे प्रगट होगा। राज्य में यह प्रयास युद्ध स्तर पर चलाना होगा। इसके लिए जहाँ प्रति व्यक्ति शिक्षा स्वास्थ्य व पोषण पर व्यय बढाना होगा, वहाँ साथ मे गरीब-वर्ग के लोगो तक सामाजिक सेवाओ को पहुँचाना होगा, अन्यथा अधिकाश व्यय प्रशासनिक व्यवस्था पर हो जाएगा। यदि हम महिला-साक्षरता, शिक्षा तथा जन्म-दर के सम्बन्ध को, एवं जन्म-दर व शिशु मृत्यु-दर के सम्बन्ध को तथा माता व बच्चों के पर्याप्त पोषण, जन्म-दर तथा शिशु-मृत्यु-दर में परस्पर सम्बन्ध को ठीक से समझ लें तो आम जनता के जीवन की गुणवत्ता को सुधारने में काफी मदद मिलेगी।

राज्य में कुल प्रजनन-दर (Total Fertility Rate) को कम करने की नितान्त आवश्यकता है। TFR बच्चों की उस संख्या को सूचित करती है जिन्हें एक स्त्री जन्म देगी; बशर्ते की वह अपने प्रसव-काल के वर्षों के अंत तक जीवित रहती है, और वर्तमान आयु-विशिष्ट प्रजनन-दरों (age-specific fertility rates) के अनुसार बच्चे पैदा करती है। दूसरे शब्दों में यह एक महिला के जीवन में औसत जन्मों की संख्या (average births) को सूचित करती है।

1994 में राजस्थान में कुल प्रजनन-दर (TFR) 4.5, उत्तर प्रदेश में 5.1, केरल में 1.7 तथा समस्त भारत में 3.5 थी। आजकल जनसंख्या-विशेषज्ञ यह मानते हैं कि जनसंख्या-स्थिरीकरण के लक्ष्य (population-stabilisation-goal) की तरफ बढ़ने के लिए कुल प्रजनन-दर (TFR) 2.1 होनी चाहिए, जो केरल में 1988 में व तमिलनाडु में 1993 में प्राप्त कर ली गयी है, लेकिन राजस्थान में इसे 4.5 से घटाकर 2.1 पर लाने में कई वर्ष लगेंगे। अतः इसके लिए विशेष प्रयास करने होंगे और केरल व तमिलनाडु के अनुभवों से लाभ उठाना होगा।

राजस्थान में जन्म-दर को वर्ष 1999 में 31.1 प्रति हजार के स्तर से घटाकर भविष्य में 22 प्रति हजार पर लाने की नितान्त आवश्यकता है। 1999 में कर्नाटक, आन्ध्र-प्रदेश, पश्चिम बंगाल व महाराष्ट्र में जन्म-दर का स्तर लगभग 22 प्रति हजार पर आ गया था। इसलिए प्रयत्न करने पर यह स्तर राजस्थान में भी लाया जा सकता है। राजस्थान को इन राज्यों से प्रेरणा लेनी चाहिए। केरल में तो जन्म-दर 1999 में 18 0 प्रति हजार रही थी। पिछले वर्षों के अध्ययनों से यह पता चलता है कि शिशु मृत्यु-दर कम करने,

साक्षरता का अनुपात बढ़ाने (विशेषतया महिला-वर्ग में) तथा शादी की आयु बढ़ाने से जन्म-दर में निश्चित रूप से गिरावट आती है। अतः हमें एक तरफ सघन अभियान चलाकर परिवार-नियोजन अपनाने वाले दम्पत्तियों का अनुपात बढ़ाना चाहिए और दूसरी तरफ साक्षरता बढ़ाकर, शिशु मृत्यु-दर घटाकर तथा शादी की औसत आयु में वृद्धि करके और महिलाओं के लिए रोजगार, स्वास्थ्य व कल्याण पर विशेष बल देकर जनसंख्या की वृद्धि-दर घटानी चाहिए। भावी पंचवर्षीय योजनाओं में राजस्थान में इसे सर्वोच्च प्राथमिकता दी जानी चाहिए।

परिशिष्ट–I

2001 में एक लाख से अधिक आबादी वाले शहरों व नगरों की संख्या इस प्रकार थी[1]—

क्र. सं.	शहर	(लाखों में)	1991-2001 में % वृद्धि
1	जयपुर	23 24	59 4
2	जोधपुर UA*	8 56	28 5
3	कोटा UA	7 05	31 1
4	बीकानेर	5 29	27 1
5	अजमेर UA	4 90	21 7
6	उदयपुर	3 89	26.2
7	भीलवाड़ा	2 80	52.3
8	अलवर UA	2 66	26 5
9	गंगानगर UA	2 23	38 0
10	भरतपुर UA	2 05	30 7
11	पाली	1 [redacted]	37 1
12	सीकर UA	1 86	25 1
13	टोंक	1 36	35 3
14	हनुमानगढ़	1 30	56 7
15	ब्यावर UA	1.26	18 0
16	किशनगढ़	1 16	41 7
17	गंगापुर सिटी UA	1 05	52 9
18	सवाई माधोपुर UA	1 02	31 3
19	चूरू UA	1 02	22 9
20	झुन्झुनूं	1 00	39 2

1. Some Facts About Rajasthan, 2003, Part II. pp 8-11.

* Urban Agglomeration. (शहरी सकुल)

जिला	जनसंख्या (हजार में)		1991–2001 मे दसवर्षीय वृद्धि-दर (% में)	लिंग-अनुपात (Sex-Ratio) (प्रति 1000 पुरुष पर स्त्रियों की संख्या)	घनत्व (Density) (प्रति वर्ग किलोमीटर)	साक्षरता की दरें (प्रतिशत में) (7 वर्ष से अधिक के आयु-समूह में)		
	1991	2001				(व्यक्तियों में)	(पुरुषों में)	(स्त्रियों में)
राजस्थान	44,006	56473	28.33	922	165	61.0	76.5	44.3
श्रीगंगानगर	1403	1788	27.5	873	224	64.8	75.5	52.7
हनुमानगढ़	1220	1517	24.3	895	120	65.7	77.4	52.7
बीकानेर	1211	1674	38.2	889	61	57.5	70.8	42.6
चूरू	1543	1923	24.6	948	114	67.0	79.5	53.9
झुंझुनूं	1582	1913	20.9	946	323	71.6	86.6	60.1
अलवर	2297	2991	30.2	887	357	62.5	78.9	44.0
भरतपुर	1652	2098	27.0	857	414	64.2	81.4	44.1
धौलपुर	750	983	31.1	828	324	60.8	75.9	42.4
करौली	928	1206	30.0	858	218	64.6	80.9	45.4
सवाईमाधोपुर	876	1116	27.4	889	248	57.3	76.8	35.4
दौसा	994	1317	32.4	899	384	62.8	80.4	43.2
जयपुर	3888	5252(H)	35.1	897	471 (H)	70.6	83.6	56.2
सीकर	1843	2287	24.1	951	296	71.2	85.2	56.7
नागौर	2145	2774	29.3	951	157	58.3	75.3	40.5

जोधपुर	2154	2881	33 8	908	126	57 4	73 9	39 2	
जैसलमेर	345	508(L)	47 5(H)*	821(L)	13 (L)	51 4	66 9	32 3	
बाड़मेर	1435	1964	36 8	896	69	59 7	73 6	43 9	
जालौर	1143	1448	26 8	968	136	46 5	65 1	27 5(L)	जालौर
सिरोही	654	851	30 1	944	166	54 4	70 6	37 4	
पाली	1486	1819	22 4	983	147	54 9	73 1	36 7	
अजमेर	1729	2181	26 1	932	257	65 1	80 0	49 1	
टोंक	975	1211	24 2	936	168	52 4	71 3	32 3	
बूँदी	770	961	24 8	908	173	55 8	72 2	37 8	
भीलवाड़ा	1593	2010	26 1	964	192	51 1	68 1	33 5	
राजसमंद	823	986	19 9(L)	1002 (स्त्रियों की संख्या अधिक)	256	55 8	74 1	37 9	
उदयपुर	2067	2632	27 4	972	196	59 3	74 5	43 7	
डूँगरपुर	875	1107	26 6	1027(H) (स्त्रियों की संख्या अधिक)	294	48 3	66 2	31 2	
बांसवाड़ा	1156	1500	29 8	978	298	44 2(L)	60 2(L)	27 9	बांसवाड़ा
चित्तौड़गढ़	1484	1803	21 5	966	166	54 4	71 8	36 5	
कोटा	1221	1569	28 5	895	288	74 5(H)	86 3(H)	61 3(H)	कोटा
बारां	810	1023	26 2	909	146	60 4	76 9	42 2	
झालावाड़	957	1180	23 3	928	190	58 0	74 3	40 4	

स्रोत : जनगणना कार्य निदेशालय, राजस्थान, जयपुर, अप्रैल 2001.

[H = Highest (अधिकतम); L = Lowest (न्यूनतम)]

* अधिक सुनिश्चित रूप में 47 45%, निम्न जिलों में जहाँ जनसंख्या की वृद्धि-दर 1991-2001 के दशक में 30% से अधिक रही है उनमें इसके नियंत्रण [illegible] अधिक ध्यान दिया जाना चाहिए : जैसलमेर, बीकानेर, बाड़मेर, जयपुर, जोधपुर, दौसा, सिरोही, अलवर व धौलपुर।

जैसा कि पहले कहा जा चुका है राज्य में राज लक्ष्मी योजना परिवार-नियोजन को दिशा में एक सराहनीय कदम माना गया है । बाद में "विकल्प" योजना के अन्तर्गत परिवार कल्याण कार्यक्रम को एक नया रूप दिया गया। इसे 'चिकित्सा-स्वरूप' से 'सामाजिक-स्वरूप' में बदला गया । यह निजी क्षेत्र व जनता की भागीदारी से चलाया जाना था । यह कार्यक्रम सिर्फ गर्भ निरोधक-साधनों के प्रचार तक सीमित नहीं था, बल्कि इसके द्वारा एक खुशहाल व स्वस्थ परिवार के लक्ष्य को प्राप्त करने का भरसक प्रयास किया जाना था । 20 जनवरी 2000 से सरकार ने नई जनसंख्या नीति की घोषणा की है जो अधिक व्यापक, अधिक स्पष्ट व अधिक व्यावहारिक प्रतीत होती है । इसे लागू करके जन्म-दर घटाई जानी चाहिए । राज्य मे 1991 में एक लाख से अधिक जनसंख्या वाले शहर 14 ही थे । 2001 में इस श्रेणी में ब्यावर, किशनगढ़, गंगापुर सिटी, सवाई माधोपुर, चूरू व झुन्झुनूं और जुड़े हैं जिससे इनकी संख्या 20 हो गई है । 1991-2001 में सबसे कम वृद्धि ब्यावर शहर की जनसंख्या में हुई, जो केवल 18% रही है । 20 जून 2001 को सरकार ने एक अधिसूचना जारी कि है जिसके अनुसार राजस्थान में अब दो से अधिक संतान वालों को सरकारी नौकरी नहीं मिलेगी तथा इनकी 5 वर्ष तक पदोन्नति भी रुकेगी । इसके लिए 1 जून 2002 व इसके बाद की अवधि को आधार बनाया गया है । आशा है इससे परिवार-नियोजन को प्रेरणा मिलेगी ।

परिशिष्ट

वर्ष 1999 में राजस्थान में जिलेवार मानवीय विकास सूचकांक[1]
(District wise Human Development Index for Rajasthan in 1999)

हाल मे राजस्थान सरकार ने योजना आयोग यू.एन.डी.पी. तथा भारत सरकार के सहयोग से राजस्थान के लिए जिलेवार मानवीय विकास सूचकांक प्रकाशित किए हैं, जिससे विभिन्न जिलो के सम्बन्ध मे शिक्षा, स्वास्थ्य व आमदनी के तथ्यो के आधार पर वर्ष 1999 के लिए मानवीय विकास की स्थिति की जानकारी होती है। इस अध्ययन के प्रमुख निष्कर्ष इस प्रकार हैं–

(1) मानवीय विकास का सर्वोच्च सूचकांक गंगानगर जिले मे रहा है (0.656)। हनुमानगढ जिले मे यह 0.644, कोटा जिले मे 0.613 व जयपुर जिले में 0.607 रहा हैं। कम विकसित जिलो मे यह 0.5 या इससे कम रहा है, जैसे डूँगरपुर जिले मे यह 0.456, बाड़मेर जिले में 0.461, बासवाड़ा जिले में 0.472 व जालोर जिले में 0.500 रहा है। मानवीय विकास की दिशा मे राजस्थान के समक्ष चुनौतियाँ व अवसर विद्यमान हैं, जिन पर ध्यान दिया जाना चाहिए।

(2) शिक्षा के सूचकांक को लेने पर पता चलता है कि इस सम्बन्ध में कोटा जिला सर्वोच्च स्थान पर है (0.449), जबकि बाडमेर सबसे निचे है (0.208)।

(3) स्वास्थ्य के सूचकांक को लेने पर सबसे आगे गंगानगर व हनुमानगढ जिले आए हैं जहाँ सूचकांक 0.752 रहा है और सबसे नीचा सूचकांक चित्तौडगढ का 0.542 रहा है।

---

1. Rajasthan Human Development Report, 2002, Govt. of Rajasthan, p.154, released in April, 2002

(4) आमदनी का सूचकांक सर्वाधिक गंगानगर जिले का 0.842 रहा है और सबसे नीचा डूँगरपुर जिले का 0.530 रहा है।

इन आर्थिक क्षेत्रों व जिलो के अनुसार मानवीय विकास के सम्बन्ध में जो परिणाम सामने आए हैं उनके आधार पर हम भावी कार्य के लिए प्राथमिकताएँ निर्धारित कर सकते हैं; जैसे शिक्षा को बढ़ावा देने के लिए हमें निम्न जिलों पर अधिक ध्यान केन्द्रित करना चाहिए: जैसलमेर (0 261) जालोर (0 219), बासवाड़ा (0 231), बाड़मेर (0 208) तथा डूँगरपुर (0 274), स्वास्थ्य को बढ़ावा देने के लिए निम्न जिलों पर ध्यान देना होगा: पाली (0 563), चित्तौड़गढ़ (0 542) धौलपुर (0 563), बासवाड़ा (0 548) व डूँगरपुर (0 563)। आमदनी को बढ़ाने की दृष्टि से निम्न जिलों पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए : झुन्झुनूं (0 627), सीकर (0 600), चूरू (0 614), बाड़मेर (0 581), व डूँगरपुर (0 530)। इस प्रकार राजस्थान मे मानवीय विकास के लिए उचित नीतियाँ निर्धारित करने की आवश्यकता है।

प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. राजस्थान मे 1991-2001 के दशक मे जनसख्या की वृद्धि–दर कितनी रही?
   (अ) 28 33% (ब) 25 21% (स) 31 46% (द) 17 78% (अ)
2. जनगणना 2001 के अनुसार राजस्थान के किस जिले में सबसे अधिक जनसंख्या वृद्धि दर रही—
   (अ) जयपुर (ब) कोटा (स) जैसलमेर (द) सीकर (स)
3. 1991-2001 के दशक में राजस्थान राज्य में निम्न में से किस जिले में जनसंख्या की सबसे कम वृद्धि-दर रही ?
   (अ) जैसलमेर (ब) जयपुर (स) अजमेर (द) राजसमंद (द)
4. राजस्थान में 2001 की जनगणना के अनुसार 1000 पुरुषो के मुकाबले में स्त्रियों की संख्या का लिंगानुपात कितना रहा ?
   (अ) 935 (ब) 922 (स) 920 (द) 905 (ब)
5. वर्ष 2001 की जनगणना के अनुसार राजस्थान मे महिला साक्षरता का प्रतिशत क्या है?
   (अ) 44 3% (ब) 52 11% (स) 39 42% (द) 38 41 (अ)
6. वर्ष 2001 की जनगणना मे राजस्थान मे निम्न मे से किस जिले में महिलाओं में साक्षरता की दर सबसे अधिक रही ?
   (अ) बीकानेर (ब) जयपुर (स) जैसलमेर (द) कोटा (द)
7. राजस्थान में 2001 मे सबसे कम साक्षरता दर किस जिले में रही ?(व्यक्तियो में)
   (अ) जयपुर (ब) बीकानेर (स) अजमेर (द) बाँसवाड़ा (द)
8. 2001 मे जिस जिले में साक्षरता दर सबसे अधिक रही है, वह है:
   (अ) जयपुर (ब) झुंझुनूं (स) सीकर (द) कोटा (द)
9. जनगणना 2001 के अनुसार राजस्थान मे किस जिले में जनसंख्या का घनत्व सबसे कम रहा:
   (अ) जैसलमेर (ब) झुंझुनूं (स) उदयपुर (द) अजमेर (अ)

10. राज्य में सर्वाधिक आबादी वाला जिला है—
(अ) जयपुर (ब) कोटा (स) जोधपुर (द) टोंक (अ)

11. राज्य की नई जनसंख्या–नीति कब घोषित गई है?
(अ) 30 जनवरी 1999 (ब) 20 जनवरी 1998
(स) 20 जनवरी 2000 (द) 20 जनवरी 1997 (स)

12. राजस्थान में वर्तमान में जन्म–दर को 31 प्रति हजार से घटाकर निकट भविष्य मे 25 प्रति हजार पर लाने के लिए कौन–सा उपाय सबसे ज्यादा प्रभावी रहेगा?
(अ) दम्पत्ति–सुरक्षा–दर (CPR) में वृद्धि (ब) शिशु मृत्यु–दर मे गिरावट
(स) लडकियो की शादी की आयु मे वृद्धि
(द) साक्षरता–अभियान (अ)

13. राजस्थान मे मानवीय विकास का कौन–सा सूचक सबसे ज्यादा कमजोर है?
(अ) जन्म के समय जीने की प्रत्याशा (ब) पुरुष साक्षरता–दर
(स) महिला साक्षरता–दर (द) शिशु मृत्यु–दर
(ए) जन्म–दर (ऐ) मृत्यु–दर (स)

अन्य प्रश्न

1. 2001 की जनगणना के अनुसार राजस्थान की जनसंख्या के प्रमुख लक्षण बताइए ।
2. राजस्थान राज्य की जनसंख्या के विभिन्न पहलुओं का उल्लेख कीजिए । इसकी तीव्र वृद्धि के कारण बताइए । (Raj. Iyr 2004)
3. राजस्थान मे जनसख्या के आकार एव वृद्धि का विवेचन कीजिए। वे कौन से तत्त्व (घटक) हैं जो मानव संसाधन के विकास मे सहयोगी रहे हैं?
4. राजस्थान की जनसख्या–वितरण का व्यवसाय, ग्रामीण–शहरी एव जिले के आधार पर उल्लेख करें। वे कौन से तत्व हैं जो मानव ससाधन के विकास मे सहयोगी रहे हैं?
5. राजस्थान मे साक्षरता की दर, शिशु–मृत्यु–दर व जन्म–दर का विवेचन करके इनमें परस्पर कडी स्थापित कीजिए।
6. राजस्थान मे श्रम शक्ति का व्यावसायिक वितरण स्पष्ट कीजिए।
7. सक्षिप्त टिप्पणी लिखिए–
(i) राजस्थान मे कुल प्रजनन–दर (Total Fertility Rate) (TFR)
(ii) मानवीय साधनो के विकास के प्रमुख सूचक व इनमे राजस्थान की स्थिति,
(iii) राज्य मे शिशु मृत्यु–दर,
(iv) राजस्थान मे जनसख्या–नियत्रण के लिए सुझाव।
8. राजस्थान राज्य मे मानव ससाधन विकास के लिए क्या प्रयास किए गए हैं? शिक्षा के क्षेत्र मे किए गए कार्यों के विशेष सन्दर्भ मे वर्णन कीजिए।
9. राजस्थान मे 1951 के पश्चात् साक्षरता के क्षेत्र में हुई प्रगति की समीक्षा कीजिए।
10. राजस्थान राज्य की जनसख्या की प्रमुख विशेषताएँ बतलाइए।
11. निम्नाकित पर सक्षिप्त टिप्पणियाँ लिखिए–
(अ) राजस्थान मे साक्षरता (ब) राजस्थान मे कार्यशील जनसख्या
12. राजस्थान मे जनसख्या वृद्धि के प्रमुख कारण बताइये।
13. राजस्थान राज्य की जनसख्या के विभिन्न पहलुओ का उल्लेख कीजिए। इसकी तीव्र वृद्धि के कारण बताइए।

3

राजस्थान की भौतिक रचना–प्राकृतिक भाग, जलवायु, मिट्टी, वनस्पति एवं वन

(Rajasthan's Physiography-Physical Divisions, Climate, Soils, Vegetation and Forests)

> *"राजस्थान की प्राकृतिक व जलवायु की दशाओं ने यहाँ की प्राकृतिक वनस्पति, मिट्टी व कृषिगत क्रियाओं को बहुत प्रभावित किया है।"*
>
> —डॉ. वी सी. मिश्र, "राजस्थान का भूगोल", पृ.-5

राजस्थान का निर्माण

वर्तमान राजस्थान राज्य एकीकरण की एक लम्बी प्रक्रिया के बाद बन पाया है। यह प्रक्रिया 17 मार्च, 1948 को प्रारम्भ होकर 1956 में समाप्त हुई थी। शुरू में 17 मार्च, 1948 को अलवर, भरतपुर, धौलपुर व करौली राज्यों एवं नीमराना की चीफशीप को मिलाकर **मत्स्य संघ** बनाया गया था। 25 मार्च, 1948 को अन्य पड़ौसी राज्य जैसे—कोटा, बूँदी, झालावाड़, बांसवाड़ा, डूंगरपुर, किशनगढ़, प्रतापगढ़, शाहपुरा व टोंक इस संघ में मिल गये थे। इससे 'पूर्व-राजस्थान' का निर्माण कार्य सम्पन्न हो गया था। मत्स्य संघ के निर्माण के एक माह बाद उसमें उदयपुर शामिल हो गया। 30 मार्च, 1949 तक पहले के राजस्थान में बीकानेर, जयपुर, जैसलमेर व जोधपुर भी शामिल हो गए थे। इस प्रकार 'वृहद् राजस्थान' का निर्माण हुआ। छठी अवस्था में सिरोही राज्य का कुछ भाग इसमें मिला दिया गया। 1956 में राज्य पुनर्गठन अधिनियम लागू हो जाने पर अजमेर राज्य, पहले के बम्बई राज्य का आबू रोड तालुका एवं पहले के मध्य भारत का सुनेल थापा प्रदेश राजस्थान में मिल गए और कोटा जिले का सिरोंज उपखण्ड मध्य प्रदेश को दे दिया गया। **इस प्रकार राजस्थान अपने वर्तमान रूप में 19 देशी रियासतों व 3 सामन्ती राज्यों के एकीकरण से बना है।**

जैसा कि पहले बतलाया गया था वर्तमान में राजस्थान में कुल 32 जिले हो गए हैं तथा राजस्व-गाँवों की कुल संख्या 41,353 हो गई है । राज्य में विधानसभा की 200 सीटें, लोकसभा की 25 सीटें व राज्यसभा की 10 सीटें हैं ।

राजस्थान राज्य हमारे देश के उत्तर-पश्चिमी भाग में स्थित एक बहुत बड़ा राज्य है । इसका क्षेत्रफल 3 42 लाख वर्ग किलोमीटर है, जो भारत के कुल क्षेत्रफल का लगभग 10 4 प्रतिशत है । अब क्षेत्रफल की दृष्टि से भारत में इसका प्रथम स्थान आता है । जनसंख्या की दृष्टि मे भारत में इसका नवाँ स्थान है । सन् 2001 में राजस्थान की जनसंख्या लगभग 5.65 करोड़ व्यक्ति है, जो देश की जनसंख्या का लगभग 5 5 प्रतिशत है । 2001 में राज्य में जनसंख्या का औसत घनत्व 165 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर रहा है, जबकि भारत के लिए यह 324 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर है । अतः यह भारत के औसत घनत्व का लगभग आधा है ।

राजस्थान की भौतिक रचना

स्थिति (Location)—*राजस्थान राज्य 23°3′ उत्तरी अक्षांश से 30°12′ उत्तरी अक्षांश* तथा 69°30′ पूर्वी देशान्तर से 78°17′ पूर्वी देशान्तर के बीच में स्थित है । यह राज्य पूर्णतः उष्ण कटिबन्ध में आता है । भारतीय उपमहाद्वीप के पश्चिमी भाग में स्थित होने के कारण इस राज्य की जलवायु पूर्णतः उष्ण मरुस्थलीय है ।

इसकी आकृति एक पतंग के समान है । उत्तर से दक्षिण तक अधिकतम लम्बाई 748 किमी है और पूर्व से पश्चिम तक अधिकतम चौड़ाई 850 किमी. है । राज्य की पश्चिमी सीमा पाकिस्तान की अन्तर्राष्ट्रीय सीमा को छूती है । यह सीमा 1070 किमी. लम्बी है । इस सीमा से राजस्थान के चार जिले बाड़मेर, जैसलमेर, बीकानेर और गंगानगर जुड़े हैं। राज्य की अन्तर्राज्यीय सीमाएँ भारत के पाँच राज्यों को छूती हैं । राजस्थान की उत्तरी सीमा पंजाब से, उत्तर-पूर्वी सीमा हरियाणा से, पूर्वी सीमा उत्तर प्रदेश से, दक्षिण-पूर्वी व दक्षिण सीमा मध्य प्रदेश से तथा दक्षिण-पश्चिमी सीमा गुजरात से जुड़ी हुई है । यह राज्य समुद्र से बहुत दूर है । देश के आन्तरिक भाग में स्थित होने के कारण यहाँ की जलवायु गर्म व शुष्क रहती है ।

राजस्थान की पश्चिमी सीमा पर भारत और पाकिस्तान एक-दूसरे के समक्ष जो अन्तर्राष्ट्रीय सीमा बनाते हैं, वह मूलतः प्राकृतिक है, और वह थार के रेगिस्तान से गुजरती है । इस क्षेत्र में वर्षा कम होती है और यातायात की कठिनाइयाँ भी पाई जाती हैं । इसीलिए इस क्षेत्र में सीमा-सुरक्षा पर भी व्यय अधिक करना पड़ता है । इस क्षेत्र में सड़कें बनाना भी आवश्यक है । वैसे सीमा पर रेगिस्तान के आ जाने से कुछ प्राकृतिक रोक लग जाती है । लेकिन युद्ध व संघर्ष के समय साज-सामान भेजने के लिए परिवहन के साधनों के अधिक विकास की आवश्यकता होती है । अतः सीमावर्ती क्षेत्रों के समुचित विकास पर ध्यान देना जरूरी हो जाता है ।

संकेत—
जिला मुख्यालय •
राज्य के 32 जिले चित्र में प्रदर्शित

भौतिक विशेषताएँ (Physical Features)—राजस्थान की भौगोलिक स्थिति ने इस क्षेत्र की भौतिक विशेषताओं और सामाजिक दशाओं पर काफी प्रभाव डाला है। राज्य का लगभग 61 प्रतिशत भाग रेगिस्तानी है जो रेत के विशाल टीलों से ढका हुआ है। मध्यवर्ती भाग में अरावली पर्वतमालाएँ उत्तर-पूर्व में दिल्ली के समीप से दक्षिण-पश्चिम में गुजरात तक फैली हुई हैं। ये पर्वत बहुत कम ऊँचाई वाले हैं और राज्य के 12 प्रतिशत भाग में फैले हुए हैं। पूर्वी व दक्षिण-पूर्वी भाग में नदियों द्वारा बनाए गए मैदान हैं जिन्होंने इस क्षेत्र की मिट्टी को काफी उपजाऊ बना दिया है। दक्षिणी भाग में पर्वत-पठारी क्षेत्र है। इस क्षेत्र में वर्षा भी अधिक होती है।

राज्य की मुख्य विशेषता जलवायु की विषमता है। पश्चिमी व उत्तरी मरुस्थलीय प्रदेश में गर्मियों में अत्यधिक ऊँचे तापमान बने रहते हैं, जो कभी-कभी 48° सेल्सियस से भी अधिक हो जाते हैं। सर्दियों में इन्हीं क्षेत्रों में तापमानों की भारी गिरावट होती है, तब न्यूनतम तापमान (–) 3° सेल्सियस तक गिर जाते हैं। इस प्रदेश में रेत के भारी जमाव के कारण यह विषमता उत्पन्न होती है। बलुई रेत के मोटे कण होते हैं जो दिन में धूप के कारण जल्दी गर्म हो जाते हैं और रात के समय शीघ्र ही ठण्डे हो जाते हैं। इसलिए रेगिस्तानी भागों में दिन और रात के तापमानों में भी भारी अन्तर रहता है। मरुस्थली भागों में वर्षा भी कम होती है। इसलिए जलवायु शुष्क बनी रहती है और वनस्पति भी कम उत्पन्न होती है। रेगिस्तान क्षेत्र में वार्षिक वर्षा का औसत 50 सेंटीमीटर से कम रहता है। कहीं-

कहीं वर्षा 10 सेमी. से भी कम होती है। वर्षा की मात्रा के उतार-चढ़ाव भी बहुत अधिक होते हैं। कुछ वर्षों में वर्षा बहुत कम तथा कुछ में बहुत अधिक होती है।

राज्य के पूर्वी और दक्षिणी भाग अपेक्षाकृत अधिक वर्षा वाले क्षेत्र हैं जहाँ 50 से 100 सेमी. तक सालाना वर्षा होती है। इसलिए इन भागों में वनस्पति भी अधिक पायी जाती है तथा जनसंख्या भी अधिक होती है। ये क्षेत्र भी गर्म अर्ध-मरुस्थली जलवायु से प्रभावित हैं।

प्राकृतिक धरातल और जलवायु को दशाओं ने राज्य के जनसंख्या-वितरण तथा लोगों की आर्थिक व सामाजिक दशाओं को बहुत प्रभावित किया है। जनसंख्या का वितरण वार्षिक वर्षा के अनुरूप पाया जाता है। ज्यों-ज्यों हम पूर्व से पश्चिम की ओर बढ़ते जाते हैं, त्यों-त्यों वार्षिक वर्षा में कमी होती जाती है और उसी के अनुसार जनसंख्या का घनत्व भी कम होता जाता है। इसी प्रकार पूर्वी भागों में अधिक वर्षा और उपजाऊ मिट्टी होने के कारण अधिकांश लोग खेती करते हैं, जबकि पश्चिमी भागों में कम वर्षा और अनुपजाऊ मिट्टी के कारण अधिकांश लोग पशु-पालन करते हैं।

राजस्थान के प्राकृतिक भाग
(Physiographic or Natural Divisions of Rajasthan)

धरातल और जलवायु के अन्तरों के आधार पर राजस्थान राज्य को मोटे-तौर पर निम्नांकित चार भागों में बाँटा जा सकता है—

(1) उत्तर-पश्चिमी मरुस्थलीय प्रदेश
(2) मध्यवर्ती अरावली पर्वतीय प्रदेश
(3) पूर्वी मैदानी प्रदेश
(4) दक्षिण-पूर्वी पठारी प्रदेश (हाड़ौती पठार)

(1) उत्तर-पश्चिमी मरुस्थलीय प्रदेश (North-West Desert Region)—राज्य का लगभग 61 प्रतिशत भाग इस रेगिस्तानी प्रदेश में शामिल है। इस प्रदेश में सम्पूर्ण जैसलमेर, बाड़मेर, जोधपुर, जालौर, बीकानेर, गंगानगर, चूरू, झुंझुनूं, नागौर और सीकर जिले शामिल हैं। इनके अतिरिक्त सिरोही, पाली, अजमेर और जयपुर जिलों के उत्तर-पश्चिमी भाग भी इसी प्रदेश में आते हैं। इस प्रदेश का पूर्वी भाग 'मारवाड़' कहलाता है तथा पश्चिमी भाग "थार का रेगिस्तान" (The Thar Desert) कहलाता है।

इस प्रदेश के अधिकांश भाग में 20 से 50 सेमी. तक वार्षिक वर्षा होती है। परन्तु जैसलमेर जिले के सुदूर पश्चिमोत्तर भाग में वर्षा का औसत 10 सेमी. से भी कम पाया जाता है। गर्मियों में कुछ स्थान जैसे जैसलमेर, फलौदी और चूरू में उच्चतम तापमान 48° से. तक पहुँच जाता है, जबकि सर्दियों में इन्हीं स्थानों पर न्यूनतम तापमान (–) 3° से. तक चला जाता है।

इस क्षेत्र में बलुई मिट्टी का अत्यधिक जमाव पाया जाता है। जैसलमेर, बाड़मेर, जोधपुर और जालौर जिलों में रेत के स्थायी टीले हैं, जो कहीं-कहीं 6-7 किलोमीटर लम्बे और 50-60 मीटर ऊँचे हैं। ये टीले रेत की पहाड़ियों के समान दिखाई देते हैं। उत्तरी भागों में विशेषतः चूरू, झुंझुनूं, सीकर और बीकानेर जिलों में अस्थायी टीले हैं जो तेज हवाओं के

साथ उड़कर दूसरे स्थानों पर चले जाते हैं। रेत के एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाते रहने से कृषि-कार्यों में काफी बाधा पहुँचती है। कभी-कभी उपजाऊ मिट्टी वाले खेत भी इन टीलों की मिट्टी से भर जाते हैं। इस क्षेत्र में प्रायः टीलों द्वारा सड़क-मार्ग व रेल-मार्ग भी अवरुद्ध हो जाते हैं।

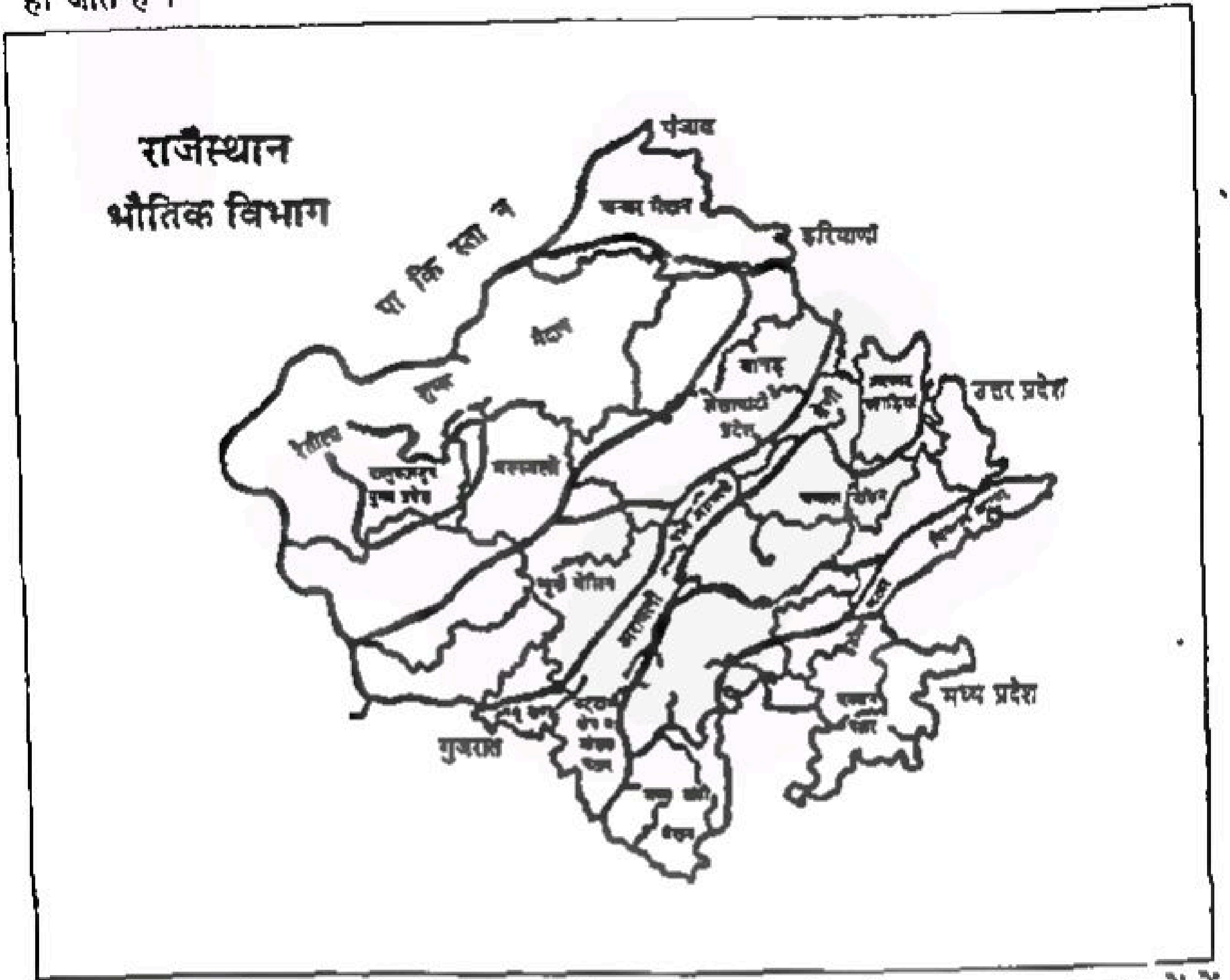

मरुस्थलीय भाग में भूमिगत जल भी अधिक गहरा होता है। साधारणतः इन भागों में कुओं की गहराई 20 से 100 मीटर तक होती है जिनसे पानी निकालना कठिन होता है। इसलिए बैल अथवा ऊँट को जोतकर कुओं से पानी निकाला जाता है। वर्षा की कमी के कारण सतह के जल (Surface Water) का नितान्त अभाव रहता है। इस क्षेत्र में नदियाँ बहुत कम हैं। केवल लूनी ही एकमात्र नदी है। **इसका उद्गम अजमेर के पास पुष्कर घाटी के समीप अरावली की पहाड़ियों में आनासागर से होता है और यह पश्चिम में बहती हुई दक्षिण-पश्चिमी भाग में 320 किलोमीटर तक बहकर कच्छ के रण में प्रवेश करती है जहाँ पहुँचकर इसका पानी फैल जाता है।** इसमें भी केवल वर्षा के दिनों में पानी रहता है। इस नदी का जल भी दक्षिणी बहाव क्षेत्र में खारा है और पीने के अयोग्य है। रेगिस्तानी क्षेत्र के अधिकांश भाग में भूमिगत जल खारा पाया जाता है जिसे न तो पीने के काम में लिया जा सकता है और न ही उससे सिंचाई की जा सकती है। **अरावली पर्वत के पश्चिम में बहने वाली केवल एकमात्र नदी लूनी ही है।**

इस प्रदेश में कृषि-कार्यों के लिए बहुत कम भूमि उपलब्ध है। रेत के टीलों के बीच स्थित निम्न ऊँचाई वाले मैदानों में तथा रेत के समतल विशाल मैदानों में बरसात के दिनों में खेती की जाती है। सिंचित कृषि बहुत कम क्षेत्रों में की जाती है। बाजरा, मूँग, मोठ आदि

मुख्य फसलें होती हैं जो थोड़ी-सी वर्षा से ही उत्पन्न हो सकती हैं । खेती के अभाव में यहाँ पशु-पालन मुख्य उद्योग बन गया है । यहाँ राठी और थारपारकर नस्ल की गायें पाली जाती हैं जो कठिन जलवायु की परिस्थितियों में भी रह सकती हैं । इनके अतिरिक्त भेड़ और बकरी-पालन भी किया जाता है जिन्हें कम पानी और कम चारे की आवश्यकता होती है ।

117226

मरुस्थलीय प्रदेश में कुछ स्थानों पर छोटी-छोटी पहाड़ियाँ भी होती हैं । इनसे इमारती पत्थर निकाला जाता है । जैसलमेर के समीप पीला और जोधपुर के पास लाल रंग का इमारती बलुआ पत्थर मिलता है । इन पहाड़ियों से कहीं-कहीं बहुमूल्य खनिज भी प्राप्त होते हैं । डेगाना (नागौर जिला) की पहाड़ी से टंगस्टन नामक धातु प्राप्त होती है । भारत में टंगस्टन की प्राप्ति का यही एकमात्र स्थान है । इसके अलावा मरुस्थलीय भाग में जिप्सम और रॉक-फॉस्फेट खनिजों के भी विशाल भण्डार हैं जिनका आजकल खनन किया जा रहा है ।

राजस्थान के प्राकृतिक भागों को पिछले चित्र की सहायता से पहचाना जा सकता है ।

(1) थार का मरुस्थल (The Thar Desert)—अरावली पर्वतीय प्रदेश के सुदूर पश्चिमी भाग में भारत-पाक सीमा को छूते हुए थार का मरुस्थल फैला हुआ है । इसमें जैसलमेर, बीकानेर, जोधपुर, बाड़मेर व मारवाड़ के वे क्षेत्र शामिल हैं जिनमें मरुस्थल अपने प्रखर व उग्र रूप में विद्यमान है । इस प्रदेश की जलवायु अत्यधिक उष्ण है और इसमें दूर-दूर तक केवल बालू का ही साम्राज्य फैला हुआ है । यह मरुस्थल हवाओं के प्रभाव से आगे बढ़ता रहा है जिससे अन्य स्थानों की उपजाऊ मिट्टी को भारी क्षति हुई है । अतः इसकी निरन्तर जारी रहने वाली यात्रा को रोकना आवश्यक माना जाता है ।

(2) मध्यवर्ती अरावली पर्वतीय प्रदेश (Central Aravalli Hill Region)—यह भौतिक प्रदेश सम्पूर्ण उदयपुर और डूंगरपुर जिलों तथा सिरोही, पाली, बाँसवाड़ा, चित्तौड़गढ़ व अजमेर जिलों के कुछ भागों में फैला हुआ है । अरावली पर्वत विश्व के अत्यन्त प्राचीन पर्वत माने गए हैं । इन पर्वतों पर समय के साथ-साथ ऐसी भौतिक क्रियाएँ होती रही हैं, जिनसे ये पहाड़ आज बहुत कम ऊँचाई के रह गए हैं । उदयपुर जिले में इन पर्वतों की अधिकतम ऊँचाइयाँ पाई जाती हैं । अधिक ऊँचाई वाला यह क्षेत्र कुंभलगढ़ और गोगुन्दा तहसीलों में है । स्थानीय रूप से इस क्षेत्र को भोराट का पठार (Bhorat Plateau) कहा जाता है ।

अरावली पर्वतों का सबसे ऊँचा शिखर गुरु शिखर (1722 मी.) है, जो माउन्ट आबू (सिरोही जिले) में है । गुरुशिखर के आसपास की अन्य चोटियों में सेर (1597 मीटर), अचलगढ़ (1380 मीटर) और दिलवाड़ा के पश्चिम में तीन अन्य चोटियाँ हैं । इस क्षेत्र में वार्षिक वर्षा भी अधिक होती है । इसलिए इन पर्वतों पर वनस्पति भी अधिक होती है । अरावली पर्वतों की कई समानान्तर श्रेणियाँ सिरोही, उदयपुर और डूंगरपुर जिलों में फैली हुई हैं ।

अरावली पर्वतों का विस्तार उत्तर-पूर्व से दक्षिण-पश्चिम दिशा की ओर है । ये पर्वत अजमेर, जयपुर और अलवर जिलों में भी फैले हैं, जहाँ इनकी ऊँचाई बहुत कम है । इन जिलों में इनकी औसत ऊँचाई 550 से 670 मीटर तक पाई जाती है । अजमेर में तारागढ़ (870 मीटर) और जयपुर में नाहरगढ़ इस क्षेत्र की सर्वाधिक ऊँची पर्वत-मालाएं हैं ।

अरावली क्षेत्र में अधिकांश भूमि ऊबड़-खाबड़ है जो खेती के अयोग्य है। इस पर्वत-पठारी क्षेत्र में नदियों द्वारा निर्मित कई उपजाऊ घाटियाँ हैं। लूनी की कई सहायक नदियाँ जैसे जवाई, लीलरी, जोजरी, सूकड़ी, आदि अरावली की पश्चिमी ढालों से निकलती हैं। इन नदियों की घाटियों में अच्छी खेती होती है। अरावली की ढालों पर मक्का की खेती विशेष रूप से की जाती है। अरावली पर्वतों की चट्टानों में कई स्थानों पर खनिज भी प्राप्त होते हैं। यह क्षेत्र अभ्रक के लिए प्रसिद्ध है। खेतड़ी-सिंघाना क्षेत्र में ताँबा और जावर में जस्ते व सीसे की खानें हैं।

अरावली पहाड़ की दिशा उत्तर-पूर्व से दक्षिण-पश्चिम की ओर होने के कारण इसके बायें भाग में उत्तर-पश्चिमी मरुस्थलीय प्रदेश पाया जाता है, जहाँ मानसूनी वर्षा कम होती है और दायें भाग में मैदानी प्रदेश पाये जाते हैं जहाँ वर्षा अधिक होती है। इसका उत्तरी-पूर्वी भाग खेतड़ी के समीप है और दक्षिणी-पश्चिमी छोर माउण्ट आबू के समीप है। अरावली पर्वत-मालाओं ने राज्य को प्राकृतिक भागों में बाँट दिया है। राजस्थान का $\frac{3}{5}$ भाग अरावली के उत्तर-पश्चिम में पड़ता है तथा $\frac{2}{5}$ भाग दक्षिण-पूर्व में पड़ता है। इनका जलवायु पर भी गहरा प्रभाव पड़ता है। ये पश्चिम से आने वाली मिट्टी को भी रोकते हैं।

यदि इस पहाड़ की दिशा उत्तर-पश्चिम से दक्षिण-पूर्व की तरफ होती तो राज्य की जलवायु व धरातलीय बनावट पर काफी भिन्न व विपरीत प्रभाव पड़ते। इससे राज्य के पूर्वी भाग में वर्षा का अभाव बढ़ जाता और कृषिगत पैदावार पर विपरीत प्रभाव पड़ता। उपजाऊ मैदानी भाग की भी सम्भवतया कमी हो जाती। लेकिन मरुस्थलीय क्षेत्र (जैसलमेर, बाड़मेर आदि) में वर्षा अधिक होती जिससे इसको लाभ होता। इस प्रकार अरावली पर्वत-मालाओं ने राजस्थान की जलवायु व धरातल की संरचना पर गहरा प्रभाव डाला है।

(3) पूर्वी मैदानी प्रदेश (Eastern Plains)—यह भौतिक प्रदेश राजस्थान के पूर्वी भाग में फैला हुआ है। इस प्रदेश में मुख्यतः बनास व उसकी सहायक नदियाँ बहती हैं जिन्होंने इस भाग में उपजाऊ मिट्टी को जमा किया है। इस कारण इस भाग में अच्छी खेती होती है और गेहूँ, जौ, चना, बाजरा, ज्वार, सरसों, तिलहन, गन्ना, आदि का उत्पादन होता है। इसलिए यहाँ जनसंख्या का घनत्व भी अधिक पाया जाता है।

बनास नदी का स्रोत उदयपुर जिले में कुम्भलगढ़ के निकट खमनौर की पहाड़ियों से है। यह नदी उदयपुर, चित्तौड़गढ़, भीलवाड़ा, अजमेर, टोंक, बूँदी और सवाई माधोपुर जिलों में बहती हुई खण्डार (सवाई माधोपुर जिला) के समीप चम्बल नदी में मिल जाती है। इसे 'वन की आशा' भी कहा जाता है। स्वयं बनास में कई सहायक नदियाँ मिलती हैं। इनमें से मुख्य नदियाँ बेड़च, गम्भीरी, कोठारी, खारी, मुरेल आदि हैं। बनास और उसकी सहायक नदियाँ केवल बरसात के मौसम में ही बहती हैं, इसलिए इनके पानी का खेती के लिए उपयोग साल भर नहीं किया जा सकता। परन्तु इन नदियों की घाटियों में भूमिगत जल अधिक उपलब्ध होता है जो जल के रिसाव के कारण इकट्ठा होता रहता है, इसलिए इस क्षेत्र में कुओं द्वारा सिंचाई की जाती है।

इस मैदानी भाग में चम्बल ही एक प्रमुख नदी है जो साल-भर बहती है । यह मध्य प्रदेश में विन्ध्याचल पर्वत के उत्तरी ढाल में मऊ नामक स्थान से निकलती है । राजस्थान में चम्बल का प्रवाह-क्षेत्र केवल कोटा, बूंदी और झालावाड़ जिलों में है । चम्बल घाटी परियोजना का राजस्थान व मध्य प्रदेश के आर्थिक विकास में केन्द्रीय स्थान है । इन जिलों में चम्बल की सहायक नदियाँ; जैसे पार्वती, काली सिन्ध, बामनी, चन्द्रभागा, आदि भी बहती हैं । चम्बल नदी सवाई माधोपुर और धौलपुर जिलों में राजस्थान और मध्य प्रदेश की सीमा बनाती है । इस क्षेत्र में चम्बल नदी ने मिट्टी का भारी जमाव किया है । इस जमाव के कारण भूमि ऊबड़-खाबड़ हो गई है और अनेक स्थानों पर ऊँचे रेत के टीले व उनके बीच गहरी घाटियाँ बन गई हैं । ऐसी भूमि को बीहड़ भूमि (Ravine Land) कहते हैं । यह क्षेत्र खेती के लिए सर्वथा अयोग्य होता है । सरकार कंदराओं की भूमि का विकास करने के लिए वृक्षारोपण कर रही है । चम्बल नदी अन्त में उत्तर प्रदेश में यमुना में मिलती है ।

इन मैदानों में कई अन्य छोटी-छोटी नदियाँ भी हैं । जयपुर जिले में ढुन्ड (Dhund) और बाणगंगा नदियाँ हैं । बाणगंगा जयपुर के पास विराटनगर की पहाड़ियों से निकलकर पूर्वी भाग में बहती हुई (भरतपुर व धौलपुर में से) उत्तर प्रदेश के फतेहाबाद के समीप यमुना में मिलती है । अलवर में रूपारेल और कोटपूतली तहसील में साबी-सोता नदियाँ हैं । इस प्रदेश का ढाल पूर्व की ओर है । इसलिए इसकी सभी नदियाँ पश्चिम से पूर्व की ओर बहती हैं ।

राज्य के दक्षिणी भाग में माही व उसकी सहायक नदियाँ बहती हैं । माही की दो मुख्य सहायक नदियाँ एराव और एरन हैं । माही नदी मुख्यतया गुजरात की नदी है । इसका उद्गम-स्थल मध्य प्रदेश के धार जिले में विन्ध्याचल पर्वत में है । माही का प्रवाह-क्षेत्र बाँसवाड़ा, प्रतापगढ़ (चित्तौड़गढ़ जिला) और डूँगरपुर जिलों में है । इस क्षेत्र के मैदानों को 'छप्पन-मैदान' (Chhappan Plains) कहते हैं । माही भी एक बरसाती नदी है जिसका प्रवाह अरब सागर की ओर है । यह नदी खम्भात की खाड़ी (Gulf of Cambay) में गिरती है और अरब सागर में समा जाती है । इस नदी पर बाँसवाड़ा जिले में लोहारिया गाँव के समीप एक बाँध बनाया गया है जिससे सिंचाई की जाती है । इस परियोजना को माही बजाज सागर परियोजना कहते हैं । इस बाँध के जल से जल-विद्युत भी उत्पन्न की जाती है ।

घग्घर नदी हिमाचल प्रदेश में शिमला के पास शिवालिक की पहाड़ियों से निकलकर पंजाब में बहती हुई राजस्थान में हनुमानगढ़ में प्रवेश करती है । यह हनुमानगढ़ के पश्चिम में लगभग तीन किलोमीटर में प्रवाहित होती है । इसमें वर्षा ऋतु में कभी-कभी काफी जल आ जाता है ।

पूर्वी मैदानी भाग में वार्षिक वर्षा का औसत 60 से 100 सेमी. तक है । छप्पन के मैदान तथा कोटा, बूँदी, झालावाड़, भरतपुर आदि जिलों में अच्छी वर्षा होती है, इसलिए कृषिगत उपज भी अधिक होती है । मैदानी भागों में सड़क व रेलमार्ग भी अधिक विकसित हुए हैं । इन कारणों से इस प्रदेश में जनसंख्या का घनत्व भी अधिक पाया जाता है ।

(4) दक्षिण-पूर्वी पठारी प्रदेश (South-Eastern Plateau Region)—इस प्रदेश में कटे-फटे पठार पाये जाते हैं जिन पर कई छोटी-बड़ी नदियाँ बहती हैं । दक्षिणी राजस्थान में

यह पठारी भाग बाँसवाड़ा और चित्तौड़गढ़ जिलों में तथा दक्षिण-पूर्वी राजस्थान में कोटा, बूँदी, झालावाड़ और सवाई माधोपुर जिलों में फैला हुआ है। **हाड़ौती पठारी भाग दो पृथक्-पृथक् क्षेत्रों में बँटा हुआ है जिन्हें विन्ध्या स्कार्पलैण्ड और दक्षिणी लावा पठार कहते हैं।**

हाड़ौती पठार मुख्यत: कोटा और बूँदी जिलों में फैला हुआ है। **इस पठारी क्षेत्र में काली उपजाऊ मिट्टी पाई जाती है जिसका निर्माण प्रारम्भिक ज्वालामुखी चट्टानों से हुआ है।** दक्षिणी लावा का पठार मुख्यत: चित्तौड़गढ़, बाँसवाड़ा और झालावाड़ जिलों में फैला हुआ है। यहाँ की मिट्टी भी काली और उपजाऊ होती है। पठारी क्षेत्र की उपजाऊ मिट्टी में कपास, अफीम, तम्बाकू और गन्ने की फसलें पैदा की जाती हैं, क्योंकि ये सभी फसलें मिट्टी से अधिक मात्रा में रासायनिक लवणों का शोषण करती हैं।

ये पठार धौलपुर और करौली क्षेत्रों के कुछ सीमित क्षेत्रों में भी फैले हुए हैं। इनसे इमारती पत्थर जैसे पट्टियाँ और चौके प्राप्त होते हैं। सम्पूर्ण पठारी क्षेत्र में नदियों के बहाव के कारण कटे-फटे भाग अधिक दिखाई देते हैं। इनके पहाड़ी भागों को पठार (Higher Plateau) कहते हैं। निचले भागों में खेती की जाती है। पहाड़ी भागों पर उष्ण कटिबन्धीय वन हैं जो अब धीरे-धीरे समाप्त होते जा रहे हैं।

राजस्थान की झीलें

राजस्थान में दो प्रकार की झीलें पाई जाती हैं—

(1) खारे पानी की झीलें, **(2) मीठे पानी की झीलें।**

(1) खारे पानी की झीलें—ये सभी पश्चिमी राजस्थान में स्थित हैं।

***(i)* सांभर झील**—यह जयपुर से 65 किलोमीटर दूर फुलेरा रेलमार्ग के समीप स्थित है। **यह भारत में खारे पानी की सबसे बड़ी झील है।** इस झील से नमक का उत्पादन किया जाता है। यह दक्षिण-पूर्व से उत्तर-पश्चिम की ओर लगभग 32 किलोमीटर लम्बी तथा 3 से 12 किलोमीटर चौड़ी है।

***(ii)* पचपदरा (या पंचभद्रा) झील**—यह बाड़मेर जिले की बालोतरा के समीप स्थित है। यहाँ का नमक उच्च कोटि का होता है। इसमें सोडियम क्लोराइड 98% तक पाया जाता है।

इसके अलावा जोधपुर जिले की फलौदी तहसील की झील, नागौर जिले की डीडवाना झील तथा बीकानेर जिले की लूणकरसर नामक झीलें भी प्रसिद्ध हैं।

(2) मीठे पानी की झीलें—*(i)* उदयपुर के निकट स्थित **जयसमंद झील** मीठे पानी की कृत्रिम झील है। *(ii)* उदयपुर जिले में कांकरोली के समीप **राजसमंद झील** है, जिसमें गोमती नदी गिरती है। *(iii)* अजमेर की **आनासागर झील**, *(iv)* अजमेर के समीप तीन तरफ पहाड़ियों से घिरी **पुष्कर झील**, *(v)* उदयपुर में स्थित **पिछौला व फतहसागर झीलें**, *(vi)* जयपुर का रामगढ़ बाँध, *(vii)* जोधपुर के समीप कायलाना बाँध या झील, *(viii)* अलवर के समीप राजसमंद व सिलीसेढ़ झीलें, *(ix)* बाँसवाड़ा के पास बजाज सागर, कडाणा बाँध, मेजा बाँध आदि मशहूर झीलों के उदाहरण हैं। राज्य के अन्य भागों में कई झीलें और हैं।

झीलों में कुछ प्राकृतिक हैं तथा कुछ कृत्रिम अथवा मानव-निर्मित हैं। खारे पानी की सांभर झील प्राकृतिक है तथा मीठे पानी की पुष्कर झील भी प्राकृतिक है। माउण्ट आबू का नक्खी तालाब/झील काफी सुन्दर व रमणीय है।

जलवायु (Climate)—राजस्थान के जलवायु को इस प्रदेश की भौगोलिक स्थिति ने अधिक प्रभावित किया है । अधिकांश भाग में मरुस्थलीय जलवायु पाई जाती है और शेष भाग में अर्ध नम जलवायु पाई जाती है । राज्य में तीन मुख्य मौसम होते हैं—

(1) गर्मी, (2) वर्षा, (3) सर्दी ।

गर्मी का मौसम—यह मौसम मध्य मार्च से जून तक रहता है । इस मौसम में तापमान निरन्तर बढ़ते जाते हैं । मई और जून सबसे गर्म महीने होते हैं । इस समय औसत दैनिक तापमान 32° सेल्सियस से 36° सेल्सियस तक हो जाता है । मई के महीने में उच्चतम तापमान 44° सेल्सियस से 48° सेल्सियस तक रहते हैं । जैसलमेर, बीकानेर, चूरू, बाड़मेर, फलौदी आदि शहरों में राजस्थान के ही नहीं, बल्कि प्रायः सम्पूर्ण देश के उच्चतम तापमान रिकार्ड किए जाते हैं ।

मई के महीने के औसत दैनिक तापमानों के अध्ययन से ज्ञात होता है कि इस समय जैसलमेर जिले के उत्तरी भाग, बीकानेर जिले के पश्चिमी भाग और कोटा जिले के पूर्वी भागों में सर्वोच्च तापमान पाये जाते हैं । ये तापमान सम्पूर्ण जैसलमेर, बीकानेर और बाड़मेर तथा जोधपुर, कोटा, बूँदी, झालावाड़, चूरू और नागौर ज़िले के कुछ भागों में पाये जाते हैं ।

सिरोही जिले के पर्वतीय भागों में ऊँचाई अधिक होने के कारण औसत तापमान कम रहते हैं । ये तापमान 28° से 30° सेल्सियस तक होते हैं ।

गर्मियों के मौसम में तापमान के अधिक रहने के कारण वायु का दवाब कम हो जाता है । सूर्य की गर्मी से पृथ्वी का धरातल शीघ्र ही गर्म हो जाता है और वायुमण्डल भी धीरे-धीरे गर्म होता रहता है । धरातल की समीपवर्ती वायु गर्म होकर ऊपर उठती है और अधिक ऊँचाई पर जाकर ठण्डी होती है । इसलिए धरातल के समीप वायु की कमी हो जाती है और वायु के कम दबाव की स्थिति उत्पन्न हो जाती है ।

वायु के निम्न दबाव वाले क्षेत्रों में वायु की कमी को पूरा करने के लिए चारों ओर से तेज हवाएँ आती हैं । ये हवाएँ अपने साथ रेत और मिट्टी को भी उड़ाकर लाती हैं । इन आँधियों के आने से मौसम थोड़ा ठण्डा हो जाता है । तापमान में गिरावट आती है । पश्चिमी राजस्थान में औसतन 28 से 35 दिन तक तेज गति से धूल भरी हवाएँ चलती हैं, जबकि पूर्वी राजस्थान में ये हवाएँ 8 से 15 दिन तक औसतन चलती हैं । आँधियों के साथ कभी-कभी गरज के साथ वर्षा भी होती है और ओले भी गिरते हैं ।

गर्मी के मौसम में वायु में नमी की कमी हो जाती है । वायुमण्डल की नमी को सापेक्ष आर्द्रता (Relative Humidity) में व्यक्त किया जाता है । यह औसतन 10 से 45 प्रतिशत तक रहती है । आर्द्रता के कम रहने के कारण दिन में प्रायः 'लू' चलती है ।

गर्मी के मौसम में दैनिक तापमानों में भारी अन्तर रहता है । यह अन्तर विशेष रूप से पश्चिमी राजस्थान के मरुस्थलीय क्षेत्र में अधिक होता है । इस क्षेत्र में रेत का जमाव होने के कारण दिन में तापमान बहुत अधिक हो जाता है और रात के समय बहुत कम, क्योंकि रेत के मोटे कण दिन में शीघ्र ही ताप सोखते हैं और रात के समय बहुत जल्दी ही ताप का विकीर्णन कर देते हैं । इसलिए पश्चिमी राजस्थान में दिन के तापमान 45° सेल्सियस से अधिक व रात के तापमान 20° सेल्सियस से कम रहते हैं ।

वर्षा का मौसम—प्राय: जून के अन्तिम सप्ताह से वर्षा का मौसम शुरू हो जाता है जो सितम्बर के अन्तिम सप्ताह तक अथवा अक्टूबर के प्रथम सप्ताह तक रहता है । शेष भारत की तरह राजस्थान में भी दक्षिण-पश्चिम मानसून से सर्वाधिक वर्षा होती है । इस मानसून की दो शाखाएँ होती हैं जिन्हें बंगाल की खाड़ी की शाखा और अरब सागर की शाखा कहते हैं । इन दोनों शाखाओं का लाभ राजस्थान को मिलता है । गर्मी के मौसम में उच्च तापमानों से उत्पन्न हुए निम्न वायु के दबाव के कारण दोनों ओर की जलभरी हवाएँ राजस्थान में केन्द्रित होती हैं । परन्तु इनसे अधिक वर्षा नहीं हो पाती, क्योंकि राजस्थान समुद्र तट से बहुत दूर है । यहाँ तक पहुँचते-पहुँचते दोनों मानसूनी धाराएँ अपने जल की मात्रा को खो देती हैं और लगभग शुष्क हो जाती हैं ।

इन कारणों से समूचे राजस्थान में वार्षिक वर्षा का औसत 10 से 125 सेमी. तक पाया जाता है । पश्चिमी मरुस्थलीय क्षेत्र में 10 से 50 सेमी तक वर्षा होती है । सबसे अधिक वर्षा सिरोही जिले के माउण्ट आबू पर्वतीय क्षेत्र में होती है, जहाँ इसका औसत 100 से 125 सेमी वार्षिक रहता है । दक्षिण राजस्थान के डूँगरपुर, बाँसवाड़ा, झालावाड़ जिलों तथा चित्तौड़गढ़ व पाली जिलों के कुछ भागों में वर्षा का औसत 75 सेमी. से अधिक रहता है । **इस प्रकार अरावली पर्वत एक वर्षा-विभाजक रेखा का काम करते हैं । इन पर्वतों के पूर्व में अधिक व पश्चिम में कम वर्षा होती है ।**

सितम्बर के मध्य से मानसून कमजोर हो जाता है, क्योंकि इस क्षेत्र में तापमानों की भारी गिरावट होती है और यहाँ का निम्न वायु दबाव वाला क्षेत्र कमजोर हो जाता है । इसलिए मानसूनी हवाएँ अपनी सक्रियता खो देती हैं । ये आर्द्र बरसाती हवाएँ भारत के दक्षिणी व पूर्वी भागों तक ही बहती हैं । इससे अक्टूबर माह में तापमान की कुछ वृद्धि होती है । सितम्बर-अक्टूबर महीनों के मौसम को मानसून के लौटने का समय कहा जाता है । देश के सभी भागों में मानसूनी वर्षा का अत्यधिक महत्त्व होता है । इस वर्षा से ही जल की सर्वाधिक प्राप्ति होती है । इस मौसम में खरीफ की फसलें जैसे—बाजरा, ज्वार, दालें, मूंगफली आदि बोई जाती हैं । असिंचित क्षेत्रों में इसी वर्षा से फसलें उत्पन्न की जाती हैं ।

बरसात के मौसम में तापमान कम हो जाते हैं । सापेक्ष आर्द्रता भी बढ़ जाती है जो दिन के समय औसतन 45 प्रतिशत व रात के समय 70 प्रतिशत तक रहती है । राजस्थान के सभी जिलों में वर्षा के दिन प्राय: कम रहते हैं ।

सर्दी का मौसम—यह मौसम नवम्बर से मार्च के मध्य रहता है । सर्दी में नवम्बर माह के बाद तापमानों में निरन्तर भारी गिरावट आती जाती है । जनवरी का महीना सबसे अधिक सर्दी का होता है । इस महीने में उत्तरी राजस्थान के गंगानगर व चूरू जिलों तथा अलवर, झुंझुनूं, सीकर व बीकानेर जिलों के उत्तरी भागों में औसत दैनिक तापमान 12° से 14° सेल्सियस तक बने रहते हैं ।

चूरू, बीकानेर, गंगानगर, फलौदी, जैसलमेर आदि नगरों में न्यूनतम तापमान (–)3° सेल्सियस तक चले जाते हैं, जो पानी के जमाव-बिन्दु से भी कम होते हैं ।

राज्य के कुछ भागों में शीतकालीन वर्षा भी होती है जिसे 'महावट' कहते हैं । इस वर्षा का औसत 5 से 10 सेमी तक रहता है । यह वर्षा विशेषत: उत्तरी व पश्चिमी राजस्थान

में होती है । इस वर्षा से रबी की फसलों को बहुत लाभ मिलता है । इस मौसम में गेहूँ, जौ, सरसों, चने आदि की खेती की जाती है, जो थोड़ी-सी वर्षा से ही भरपूर फसल देते हैं । इस शीतकालीन वर्षा का मुख्य कारण भूमध्य सागरीय चक्रवात (Cyclones) होते हैं, जो यूरोपीय क्षेत्रों में ईरान, अफगानिस्तान, पाकिस्तान आदि देशों से होते हुए उत्तरी भारत में प्रवेश करते हैं । इन चक्रवातों से हिमालय के क्षेत्र में भारी हिमपात होता है । हिमपात के कारण कभी-कभी तेज गति वाली ठण्डी हवाएँ भी चलती हैं । इन्हें 'शीत लहर' (Cold Wave) कहते हैं । इनसे तापमानों में अचानक भारी गिरावट आ जाती है ।

मार्च के मध्य से तापमान फिर बढ़ने लगते हैं और गर्मी के मौसम का प्रारम्भ हो जाता है । इसके बाद तापमानों में पुन: वृद्धि होने लगती है ।

जलवायु-आधारित प्रदेश (Climatic Regions)—तापक्रम, वर्षा और आर्द्रता के आधार पर राज्य को चार मुख्य प्रदेशों में बाँटा जा सकता है—

(i) **शुष्क प्रदेश** (Dry Region)—इस प्रदेश में गर्म और शुष्क जलवायु की दशाएँ पाई जाती हैं । गर्मियों में औसत दैनिक तापमान 34° सेल्सियस और सर्दियों में 12° सेल्सियस रहते हैं । सालाना वर्षा 10 से 25 सेमी तक होती है । इसलिए साल-भर शुष्कता बनी रहती है । इतनी कम वर्षा वाले भागों में वनस्पति बहुत कम होती है । इस प्रदेश में सम्पूर्ण जैसलमेर, बाड़मेर और जोधपुर का उत्तरी भाग, बीकानेर का पश्चिमी भाग और गंगानगर का दक्षिणी भाग शामिल हैं ।

(ii) **अर्द्ध-शुष्क प्रदेश** (Semi-Dry Region)—इसमें पश्चिमी राजस्थान के वे क्षेत्र शामिल हैं जहाँ सालाना वर्षा 25 से 50 सेमी. तक होती है । इस प्रदेश में झाड़ियाँ, घास के मैदान और कुछ रेगिस्तानी पेड़-पौधे उगते हैं । इस प्रदेश में गंगानगर, बीकानेर, जोधपुर, बाड़मेर, चूरू, झुंझुनूं, सीकर, नागौर, पाली व जालौर जिले शामिल हैं ।

(iii) **उप-आर्द्र प्रदेश** (Sub-humid Region)—इस प्रदेश में पूर्वी राजस्थान के ज्यादातर वे क्षेत्र शामिल हैं जहाँ वार्षिक वर्षा का औसत 50 से 80 सेमी. तक रहता है । अधिक वर्षा के कारण वनस्पति भी अच्छी होती है । इस प्रदेश में अलवर, भरतपुर, धौलपुर, जयपुर, अजमेर, भीलवाड़ा, टोंक, सवाई माधोपुर, कोटा, बूँदी, चित्तौड़गढ़ आदि शामिल हैं ।

(iv) **आर्द्र प्रदेश** (Humid Region)—इसमें वार्षिक वर्षा का औसत 80 सेंटीमीटर से अधिक रहता है । गर्मियों और सर्दियों के तापमान उप-आर्द्रता प्रदेश की भाँति ही रहते हैं । अधिक वर्षा के कारण पहाड़ी भागों पर सघन वन पाये जाते हैं । इस प्रदेश में झालावाड़, बाँसवाड़ा, डूँगरपुर आदि जिले शामिल हैं जो सभी दक्षिणी राजस्थान में स्थित हैं ।

मिट्टियाँ (Soils)—मिट्टियों का कृषिगत उत्पादन से सीधा सम्बन्ध होता है । इनसे ही विभिन्न किस्म की खाद्यान्न-फसलें व व्यापारिक फसलें उत्पन्न की जाती हैं । मिट्टी के विभिन्न भौतिक व रासायनिक गुणों पर यह निर्भर करता है कि उस क्षेत्र में कौन-सी फसलें बोई जाएँगी और किस प्रकार सिंचाई की व्यवस्था की जाएगी ।

राजस्थान राज्य में मुख्यतः निम्नांकित आठ प्रकार की मिट्टियाँ पायी जाती हैं—

(1) भूरी मिट्टी (brown soil)

(2) सीरोजम मिट्टी

(3) लाल-बलुई मिट्टी

(4) लाल-दुमट मिट्टी

(5) पर्वतीय मिट्टी

(6) बलुई मिट्टी व रेत के टीले

(7) जलोढ़ मिट्टी या दुमट मिट्टी

(8) लवणीय मिट्टी

(1) भूरी मिट्टी (Brown Soil)—इस मिट्टी का रंग भूरा होता है । इस प्रकार की मिट्टी टोंक, सवाई माधोपुर, बूँदी, भीलवाड़ा, उदयपुर और चित्तौड़गढ़ जिलों में पाई जाती है । इस मिट्टी का जमाव विशेषतः बनास व उसकी सहायक नदियों के क्षेत्र मे पाया जाता है । इस प्रकार इसका क्षेत्र मुख्यतया अरावली के पूर्वी भाग में माना जाता है । इस मिट्टी में नाइट्रोजन और फॉस्फोरस लवणों का अभाव होता है । इसलिए इन लवणों से युक्त कृत्रिम खाद देने पर अच्छी फसलों का उत्पादन हो सकता है । इस मिट्टी में खरीफ की फसलें बिना सिंचाई के तथा रबी की फसलें सिंचाई के द्वारा पैदा की जा सकती हैं ।

(2) सीरोजम मिट्टी (Sierozem Soil)—इसका रंग पीला-भूरा (yellow-brown) होता है। मिट्टी के कण मध्यम मोटाई के होते हैं। इनमें नाइट्रोजन और कार्बनिक पदार्थों की कमी होती है। इसलिए इस प्रकार की मिट्टी में उर्वरा शक्ति की कमी होती है। इनमें बारानी खेती की जाती है। रबी की फसलों के लिए निरन्तर सिंचाई की आवश्यकता होती है तथा अधिक मात्रा में रासायनिक खाद डालनी पड़ती है। इन मिट्टियों का विस्तार पाली, नागौर, अजमेर व जयपुर जिले के बहुत बड़े क्षेत्र में पाया जाता है, जो ज्यादातर अरावली के पश्चिम में पड़ता है। इन्हें 'धूसर मरुस्थलीय मिट्टी' भी कहते हैं, क्योंकि ये मिट्टियाँ रेत के छोटे टीलों वाले भागों में पाई जाती हैं।

(3) लाल-बलुई मिट्टी (Red Desertic Soil)—इस मिट्टी का रंग लाल होता है और यह मुख्यतः मरुस्थलीय भागों में पाई जाती है। इसका मुख्य विस्तार जालौर, जोधपुर, नागौर, पाली, बाड़मेर, चूरू और झुंझुनूं जिलों के कुछ भागों में पाया जाता है। इस मिट्टी में नाइट्रोजन व कार्बनिक तत्वों की मात्रा कम होती है। साधारणतः ऐसी मिट्टी वाले क्षेत्रों में बरसाती घास और कुछ झाड़ियाँ उगती हैं। इस भाग में सिंचाई करने और रासायनिक खाद डालने पर रबी की फसलें—गेहूँ, जौ, चना आदि पैदा किए जा सकते हैं। खरीफ के मौसम में बारानी खेती की जाती है, जो पूर्णतः वर्षा पर निर्भर होती है।

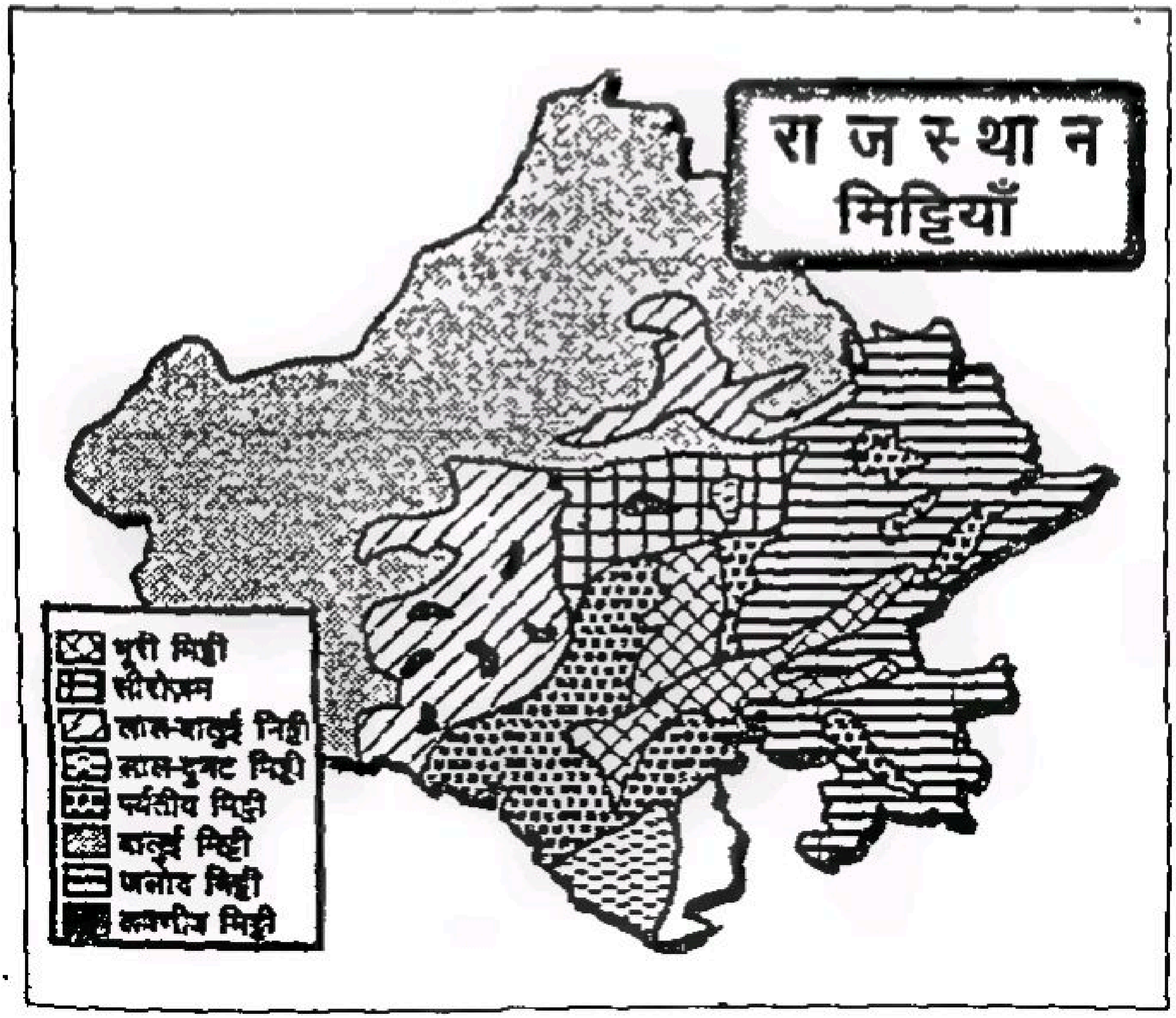

(4) लाल-दुमट मिट्टी (Red-Loamy Soil)—इसका रंग लाल होता है । मिट्टी के कण बारीक होते हैं । बारीक कणों वाली मिट्टी को दुमट मिट्टी कहते हैं । ऐसी मिट्टी में पानी अधिक समय तक रहता है । इसलिए वर्षा के बाद एक लम्बे समय तक मिट्टी में नमी बनी रहती है । इस मिट्टी में लौह ऑक्साइड के लवण अधिक होते हैं, जिनसे मिट्टी का रंग लाल हो जाता है । परन्तु इसमें नाइट्रोजन, फॉस्फोरस और कैल्सियम लवणों की कमी होती है । ऐसी मिट्टी में रासायनिक खाद देने और सिंचाई करने से कपास, गेहूँ, जौ, चना आदि की अच्छी फसलें पैदा की जा सकती हैं । यह मिट्टी दक्षिणी राजस्थान के डूँगरपुर, बाँसवाड़ा, उदयपुर और चित्तौड़गढ़ जिलों के कुछ भागों में पाई जाती है ।

(5) पर्वतीय मिट्टी (Mountain Soil)—ऐसी मिट्टी अरावली पर्वतों के नीचे के प्रदेशों (Foothills) में मिलती है । मिट्टी का रंग लाल से लेकर पीले, भूरे रंग तक होता है । ये मिट्टियाँ पहाड़ी ढालों पर होती हैं । इसलिए मिट्टी की गहराई बहुत कम होती है और मिट्टी की कुछ गहराई के बाद ही चट्टानी धरातल आता है, जिन्हें छोटे पौधों की जड़ें नहीं भेद सकती हैं । ऐसी मिट्टी पर खेती नहीं की जा सकती है, बल्कि केवल जंगल लगाए जाते हैं । ये मिट्टियाँ सिरोही, उदयपुर, पाली, अजमेर और अलवर जिलों के पहाड़ी भागों में पाई जाती हैं ।

(6) बलुई मिट्टी (Sandy Soil)—यह मिट्टी रेत के टीलों के रूप में होती है जो पश्चिमी राजस्थान के अधिकांश क्षेत्रों में पाई जाती है । मिट्टी के कण मोटे होते हैं जिनमें पानी शीघ्र ही विलीन हो जाता है । इसलिए वर्षा का जल बहुत थोड़े समय के लिए नमी बना पाता है और सिंचाई का भी विशेष लाभ नहीं होता । ऐसी मिट्टी में नाइट्रोजन व कार्बनिक लवणों की कमी होती है । परन्तु इसमें कैल्सियम लवणों की अधिकता रहती है । ऐसे क्षेत्रों में बाजरा, मोठ, मूँग, आदि की फसलें खरीफ के मौसम में पैदा की जाती हैं । कुछ सिंचित भागों में रबी में गेहूँ की खेती की जाती है । रेत के ऊँचे-ऊँचे टीलों के समीप कुछ स्थानों पर निचले गहरे भाग भी बन गए हैं । इनमें बारीक कणों वाली मटियारी मिट्टी का जमाव हो गया है । इन निचले भूभागों को 'खडीन' कहते हैं । ये बहुत उपजाऊ होते हैं ।

(7) जलोढ़ या दुमट मिट्टी (Alluvial Soil)—ऐसी मिट्टी की रचना नदी-नालों के किनारे तथा उनके प्रवाह के क्षेत्र में होती है । जलोढ़ मिट्टी नदियों के पानी द्वारा बहाकर लाई गई मिट्टी होती है । यह मिट्टी बहुत उपजाऊ होती है । इसमें नमी बहुत समय तक मौजूद रहती है । ऐसी मिट्टी में नाइट्रोजन व कार्बनिक लवण पर्याप्त मात्रा में होते हैं । मिट्टी का रंग पीला होता है । कहीं-कहीं कंकरों का भी जमाव होता है । इसमें कैल्सियम तत्वों की मात्रा बढ़ जाती है । ऐसी मिट्टी अलवर, जयपुर, अजमेर, टोंक, सवाई माधोपुर, भरतपुर, धौलपुर, कोटा आदि जिलों में पाई जाती है । इस मिट्टी में खरीफ व रबी दोनों प्रकार की फसलें उगायी जाती हैं ।

(8) लवणीय मिट्टी (Alkaline Soils)—ऐसी मिट्टी में क्षारीय लवण तत्त्वों की मात्रा अधिक होती है। लवणों का जमाव अधिक सिंचाई करने से भी हो जाता है। प्राकृतिक रूप से ये मिट्टियाँ निम्न भूभागों में उत्पन्न हो जाती हैं, जहाँ पानी का जमाव निरन्तर होता रहता है। ये मिट्टियाँ पूर्णतः अनुपजाऊ होती हैं। इनमें केवल चरागाह, प्राकृतिक झाड़ियाँ व बरसाती पेड़-पौधे ही उग सकते हैं। **लवणीय मिट्टी के अधिकांश क्षेत्र पश्चिमी राजस्थान में बाड़मेर व जालौर जिलों में पाये जाते हैं।** आजकल गंगानगर, भरतपुर व कोटा जिलों में भी अधिक सिंचाई वाले भागों में लवणीय मिट्टियाँ अधिक पाई जाने लगी हैं।

मिट्टी का कटाव (Soil Erosion)—राज्य में मिट्टी का कटाव एक मुख्य समस्या है। **मिट्टी का कटाव पानी और हवाओं से होता है।** पश्चिमी राजस्थान में तेज हवाएँ चलती हैं। इसलिए इस क्षेत्र में हवाओं द्वारा भूमि का कटाव होता है। अरावली पर्वतीय भागों में तथा पूर्वी राजस्थान में नदियाँ अधिक हैं। अतः इन क्षेत्रों में बहते हुए जल द्वारा मिट्टी का कटाव होता है। दोनों प्रकार के कटावों से खेत की उपजाऊ मिट्टी उड़कर अथवा बहकर दूर चली जाती है। इसलिए मिट्टी के कटाव की रोकथाम करना जरूरी होता है।

मिट्टी के कटाव को कम करने के लिए जंगलों और चरागाहों की वृद्धि करना आवश्यक है। पेड़-पौधों और घास की जड़ें मिट्टी को पकड़े रखती हैं और उसका कटाव नहीं होने देतीं। **गंगानगर जिले में घग्घर नदी, भरतपुर जिले में बाणगंगा और गम्भीरी नदियाँ तथा कोटा और धौलपुर जिलों में चम्बल नदी मिट्टी का भारी कटाव करती हैं।** इसलिए इन सभी नदियों के किनारों पर पेड़ों और स्थाई घास का रोपण किया जाना आवश्यक है।

राजस्थान में वनस्पति (Vegetation)—राजस्थान में विभिन्न प्रकार की प्राकृतिक वनस्पति पाई जाती है। इन पर भौतिक तत्त्वों जैसे तापक्रम व मिट्टी, जलवायु तथा जैविक (Biotic) तत्त्वों (पशुओं की चराई) का प्रभाव पड़ा है। राज्य में पश्चिमी शुष्क प्रदेश में वनस्पति का अभाव पाया जाता है, जबकि अरावली श्रेणियों के पूर्व व दक्षिण-पूर्व में मिश्रित पतझड़ (mixed deciduous) एवं अर्द्ध-उष्ण सदाबहार (sub-tropical evergreen) वन पाये जाते हैं।

जैसा कि पहले बतलाया जा चुका है, अरावली पर्वतमाला का राजस्थान की भौतिक संरचना पर गहरा प्रभाव पड़ा है। इस पर्वतमाला के पूर्व व दक्षिण-पूर्व में वनस्पति काफी विकसित है। माउण्ट आबू के इर्द-गिर्द भारी वर्षा के कारण वनस्पति काफी सघन पाई जाती है। राजस्थान का पश्चिमी प्रदेश झाड़ियों की बहुतायत प्रदर्शित करता है। बाड़मेर, बीकानेर, जैसलमेर आदि की तरफ वृक्ष गायब होने लगते हैं, और काफी झाड़ियाँ पाई जाती हैं। राज्य की वनस्पति पर जैविक तत्त्वों (Biotic Factors) का भी प्रभाव पड़ा है। भारी संख्या में भेड़-बकरियों व ऊँट जैसे अन्य पशुओं द्वारा अनियंत्रित चराई, वृक्षों की अनियमित

कटाई, भूमि का कृषि के लिए बढ़ता हुआ उपयोग, आदि कारणों से प्राकृतिक वनस्पति को बहुत हानि हुई है। पशु-पालक अपने पशुओं को लेकर चराई के लिए भ्रमण करते रहते हैं जिससे भी वनों को भारी क्षति पहुँची है।

राजस्थान में वन क्षेत्र—अगस्त 1996 में राजस्थान सरकार के वन-विभाग ने **"स्टेट फोरेस्ट्री एक्शन प्रोग्राम"** (1996-2016) **नामक रिपोर्ट** प्रकाशित की है, जिसमें वन-क्षेत्र (जिलेवार), वनों की किस्म, वन नीति, भावी कार्यक्रम, आदि पर विस्तृत रूप से प्रकाश डाला गया है।

उपर्युक्त रिपोर्ट के अनुसार राजस्थान में कुल भौगोलिक क्षेत्रफल 342239 वर्ग किलोमीटर है, जिसके 31902 वर्ग किलोमीटर (लगभग 32 हजार वर्ग किलोमीटर) में वन-क्षेत्र हैं, जो इसका 9.32% है। इस प्रकार राज्य में वन-क्षेत्र का अभाव है, क्योंकि सामान्यतया भौगोलिक क्षेत्रफल के 1/3 भाग में वनों का होना उचित माना जाता है। जिलों के अनुसार वन-क्षेत्र का भौगोलिक क्षेत्र से अनुपात काफी असमान पाया जाता है। **जहाँ वन-क्षेत्र का अनुपात सिरोही जिले में लगभग 31% (अधिकतम), उदयपुर व राजसमंद जिलों में 29.4%, कोटा व बारां जिलों में 28.8%, सवाई माधोपुर जिले में (अब करौली सहित) 27.6% व बूँदी में 26.7% पाया जाता है, वहीं बाड़मेर जिले में यह मात्र 1.5%, जोधपुर जिले में 1.3%, नागौर में 1.25%, जैसलमेर जिले में 1.1% तथा चूरू जिले में मात्र 0.5% (न्यूनतम) पाया जाता है।** 27 जिलों के वन-क्षेत्र के अनुपात अध्याय के अन्त में एक परिशिष्ट में दिए गए हैं।[1]

31902 वर्ग किलोमीटर में फैले वन-क्षेत्र, अथवा (एक वर्ग किलोमीटर = 100 हैक्टेयर लेने पर) लगभग 31.9 लाख हैक्टेयर क्षेत्रफल में फैले वन-क्षेत्र में, 11.2% भाग में सघन वन (40% से अधिक ढके हुए), 29.8% भाग में खुले वन (open forest) (10% से अधिक व 40% से कम आच्छादित) तथा शेष लगभग 59% भाग में मात्र झाड़ियाँ व बंजर वन (barren forests) (10% से कम आच्छादित) हैं।

कानूनी स्थिति के अनुसार 1997-98 के लिए वनों का वर्गीकरण निम्न तालिका में दर्शाया गया है[2]—

क्र. सं.	कानूनी स्थिति (legal status)	क्षेत्रफल (लाख हैक्टेयर)	प्रतिशत
(i)	आरक्षित (reserved) वन	11.86	36.5
(ii)	सुरक्षित (protected) वन	17.65	54.3
(iii)	अवर्गीकृत (unclassified) वन	2.98	9.2
	कुल	*32.49*	*100.0*

इस प्रकार 36.5% वन-क्षेत्र आरक्षित है, जहाँ पशुओं को घास चरने व लोगों को सूखे पेड़ काटने की आज्ञा नहीं दी जाती है। लगभग आधे वन-क्षेत्र सुरक्षित श्रेणी में आते हैं जहाँ

1 State Forestry Action Programme (1996-2016), August 1996, p. 15
2 Some Facts About Rajasthan, 2003, p. 19

जैविक दबाव बहुत ज्यादा पाया जाता है, और अवर्गीकृत क्षेत्र में मुख्यतया मरु जिले आते हैं और इसी में इन्दिरा गाँधी नहर क्षेत्र की व्यर्थ भूमि पर उगाये गये पेड़ भी शामिल हैं।

वनों का वर्गीकरण (Classification of Forests)—राज्य में वन मुख्यत: अरावली के पर्वतीय भागों में पाये जाते हैं। वनों में उत्पन्न होने वाले पेड़-पौधे उस स्थान की जलवायु की दशाओं से प्रभावित होते हैं। अत: वनस्पति और जलवायु का परस्पर गहरा सम्बन्ध होता है। इस आधार पर राजस्थान के वनों को मुख्यतया चार वर्गों में बाँटा जा सकता है—

***(i)* शुष्क सागवान के वन (Dry Teak Forests)**—ये वन मुख्यत: दक्षिणी राजस्थान के बाँसवाड़ा और डूँगरपुर जिलों में पाये जाते हैं। उदयपुर, चित्तौड़गढ़ तथा कोटा जिलों के कुछ भागों में इनका विस्तार पाया जाता है। सागवान के वन राज्य के उन भागों में पाए जाते हैं जहाँ वर्षा 75 से 110 सेमी तक होती है तथा सर्दियों में अधिक ठण्ड नहीं पड़ती। इन वनों में ऊँचे साल के वृक्ष पाये जाते हैं। पिछले वर्षों में इन वनों का काफी विनाश हुआ है। ये वन-क्षेत्र के 7% भाग में फैले हुए हैं।

***(ii)* मिश्रित पतझड़ वाले वन (Mixed Deciduous Forests)**—इन वनों में ऐसे पेड़ व झाड़ियाँ उगती हैं जो वर्ष में एक बार अपने पत्ते गिरा देते हैं। राजस्थान में पतझड़ का यह मौसम मार्च-अप्रैल के महीने में गर्मियाँ शुरू होने से पहले होता है। इन वनों में मुख्यत: धोंक, खैर, ढाक, साल और बाँस के वृक्ष मिलते हैं। धोंक के वृक्षों की लकड़ी जलाने और कोयला बनाने के काम आती है। खैर से कत्था प्राप्त होता है। साल की लकड़ी का उपयोग दरवाजे और खिड़कियाँ बनाने में किया जाता है। इस लकड़ी से पैकिंग केस भी बनाए जाते हैं। साल के जंगलों का विस्तार अलवर, उदयपुर, चित्तौड़गढ़, सिरोही और अजमेर जिलों में अधिक पाया जाता है। ढाक के पेड़ों की पत्तियों से पत्तल व दोने बनाए जाते हैं। बाँस को छप्पर, टोकरियाँ, चारपाई आदि बनाने के काम में लिया जाता है।

धोंक के वनों का विस्तार विशेषत: सवाई माधोपुर, बूँदी, चित्तौड़गढ़, भरतपुर और अलवर जिलों में पाया जाता है। ये पेड़ कठोर चट्टानों पर भी सरलता से उग सकते हैं और इन्हें अधिक पानी की भी आवश्यकता नहीं होती। इसलिए ये पेड़ अधिकांशत: वन प्रदेश में फैले रहते हैं। खैर के वृक्षों की उत्पत्ति मुख्यत: झालावाड़, कोटा, टोंक, चित्तौड़गढ़ व अलवर जिलों के वनों में होती है। साल के वृक्षों का विस्तार अलवर, जोधपुर, उदयपुर, सिरोही, अजमेर, जयपुर और चित्तौड़गढ़ जिलों में पाया जाता है। ये वृक्ष पठारी-पर्वतीय प्रदेशों में अधिक उगते हैं। ढाक के वन सवाई माधोपुर, अलवर, जयपुर और टोंक जिलों में अधिक पाये जाते हैं। बाँस की उत्पत्ति विशेषत: आबू के पहाड़ों, उदयपुर, कोटा और अलवर जिलों में अधिक होती है।

मिश्रित पतझड़ वाले वनों में कई अन्य छोटे-बड़े पेड़-पौधे भी मिलते हैं। इन वनों में तेंदू, नीम, पीपल, आम, जामुन, सीताफल, बेर, आदि के वृक्ष भी पाये जाते हैं। इन वनों का भी पिछले तीस वर्षों में काफी विनाश हुआ है। इनके वृक्षों की लकड़ी का उपयोग जलाने के लिए तथा इमारती लकड़ी के रूप में होता रहा है, इसलिए वनों की सघनता काफी कम हो गई है। ये वन-क्षेत्र के 27% भाग में फैले हुए हैं।

***(iii)* शुष्क वन** (Dry Forests)—इन वनों में पेड़ बहुत छोटे आकार के होते हैं। छोटी झाड़ियाँ अधिक होती हैं। ये वन राज्य के शुष्क उत्तर-पश्चिमी भाग में पाये जाते हैं। इनमें प्राकृतिक वनस्पति बहुत कम होती है और काफी छितरी हुई अवस्था में दिखाई देती है। रेगिस्तानी टीलों तथा चम्बल व बनास नदियों के बीहड़ों में भी इसी प्रकार की वनस्पति होती है।

इस प्रकार के शुष्क जलवायु वाले वनों में खेजड़ी, रोहिड़ा, बेर, कैर, थोर आदि के वृक्ष तथा झाड़ियाँ उगते हैं। इन पेड़ों और झाड़ियों की जड़ें बहुत गहराई तक पहुँचती हैं। इसलिए ये गर्मियों की कठोर शुष्कता को भी सहन कर लेते हैं। इन सभी पेड़-पौधों का रेगिस्तानी भागों में बहुत महत्त्व होता है। खेजड़ी के छोटे-छोटे पते पालतू पशुओं को खिलाने के काम में आते हैं। बेर के पत्तों से बना 'पाला' भी पशुओं को खिलाया जाता है। **खेजड़ी का वृक्ष इतना अधिक उपयोगी होता है कि उसे रेगिस्तान का 'कल्पवृक्ष' कहा गया है।** ये वन-क्षेत्र के 2/3 भाग (लगभग 65%) में पाये जाते हैं।

***(iv)* अर्द्ध-उष्ण सदाबहार वन** (Sub-tropical Evergreen Forests)—ये वन सदैव हरे-भरे रहते हैं, इसलिए इन्हें सदाबहार वन कहते हैं। इनकी उत्पत्ति राज्य के अर्द्ध-गर्म भागों में होती है। अतः इन्हें अर्द्ध-उष्ण कहा जाता है। इन वनों का विस्तार राज्य के बहुत छोटे और सीमित भाग आबू पर्वतीय क्षेत्र में पाया जाता है। यहाँ वृक्षों की सघनता अधिक होती है और साल-भर हरियाली बनी रहती है। इन वनों में अनेक प्रकार के पेड़ पाये जाते हैं। जैसे—आम, बाँस, नीम, सागवान, आदि। ये वन ऊँचाई वाले पहाड़ी ढालों पर फैले होते हैं। अतः यहाँ की जलवायु भी शेष राजस्थान से अधिक ठण्डी होती है। इस क्षेत्र में पर्याप्त वर्षा के कारण पौधों को भूमिगत जल पर्याप्त मात्रा में मिलता रहता है। इनका फैलाव बहुत कम होता है। ये कुल वन-क्षेत्र के मात्र 0.4% (1/2 % से भी कम) भाग में पाये जाते हैं।

राजस्थान में वनों से जलाने की लकड़ी व चारकोल प्राप्त होता है। इनसे इमारती लकड़ी, बाँस, कत्था, तेन्दू के पते, शहद व गोंद, अडवल की छाल, घास आदि वस्तुएँ प्राप्त होती हैं, जिनका विभिन्न कार्यों में उपयोग किया जाता है। वनों का राज्य की घरेलू उत्पत्ति में लगभग 716 करोड़ रु. का योगदान माना गया है; जिसमें जलाने की लकड़ी का योगदान 72 करोड़ रु., चारे का 570 करोड़ रु., टिम्बर का 34 करोड़ रु. व गैर-टिम्बर वनोत्पादों का 40 करोड़ रु., (पत्तियाँ, फल-फूल, दवाई के पौधे, आदि) आँका गया है।[1] वनों से लोगों को रोजगार भी मिलता है और ये पशुओं के जीवन का आधार होते हैं।

अतः वन-सम्पदा व वनस्पति के संरक्षण, विकास व उचित विदोहन की आवश्यकता से इन्कार नहीं किया जा सकता। वनों से जलाने की लकड़ी, टिम्बर, बांस व तेन्दू पत्ता, आदि प्राप्त होते हैं।

वर्तमान समय में राज्य में वन-क्षेत्र कुल रिपोर्टिंग क्षेत्र का 9.3% आँका गया है। पंजाब को छोड़कर देश में सबसे कम वन-सम्पदा राजस्थान की ही मानी जाती है। **ताजा सूचना के अनुसार राजस्थान में कुल वन क्षेत्र का सर्वाधिक अंश 16% उदयपुर जिले**

---

1 State Forestry Action Programme, 1996-2016, p 23

में पाया जाता है तथा जोधपुर जिले में यह मात्र 0.9% ही है। इस प्रकार राज्य में वनों का वितरण काफी असमान है। वनों के अन्तर्गत कम क्षेत्रफल होने के कारण राज्य में ईंधन व औद्योगिक लकड़ी की माँग की पूर्ति कर सकना कठिन रहता है। पश्चिमी राजस्थान में वनों का नितान्त अभाव पाया जाता है। वहाँ कुछ कांटेदार झाड़ियाँ व घास-पात ही होते हैं। राष्ट्रीय वन-नीति के अनुसार लगभग $\frac{1}{3}$ भौगोलिक क्षेत्र में वन होने चाहिए। इस दृष्टि से राज्य में वनों का अत्यधिक अभाव पाया जाता है। जिस क्षेत्र में वन दिखाए गए हैं उनमें भी बहुत कम भाग में उत्तम किस्म के वन पाये जाते हैं। ज्यादातर घटिया श्रेणी के वन होते हैं। वृक्षों को अत्यधिक कटाई, आवश्यकता से अधिक चराई व भूमि के अविवेकपूर्ण उपयोग के कारण अरावली के पूर्वी क्षेत्रों में भी वनों का काफी ह्रास हुआ है। वैज्ञानिक अनुसंधान की बिड़ला इन्स्टीट्यूट के एक अध्ययन के अनुसार अरावली पर्वतमाला के क्षेत्र में पड़ने वाले 16 जिलों के कुछ भागों में 1972-75 से 1982-84 की अवधि में वन-क्षेत्र में *41.5% की गिरावट आई है।*[1] इससे पता चलता है कि राज्य में कितनी भयावह रफ्तार से वनों का ह्रास हुआ है। इसका मुख्य कारण यह है कि लोग ईंधन की लकड़ी सिर पर ढोकर वनों का विनाश करते रहे हैं। ऐसा जयपुर, अलवर, बूँदी, उदयपुर, कोटा आदि शहरों के समीप के क्षेत्रों में देखा गया है, जहाँ आस-पास की पहाड़ियाँ बंजर हो गई हैं और उनमें पर्यावरण की समस्याएँ बढ़ गई हैं। राज्य में ईंधन की लकड़ी की माँग तेजी से बढ़ रही है। **इसके 2001 तक 67.3 लाख टन होने की आशा है, जबकि इसकी पूर्ति राज्य के साधनों से केवल 11.8 लाख टन ही हो पाएगी, जिससे लगभग 55.5 लाख टन का अभाव रहेगा।** इसलिए राज्य में ईंधन की लकड़ी का उत्पादन बढ़ाने की नितान्त आवश्यकता है।

राज्य में व्यर्थ भूमि (Wasteland) की मात्रा काफी अधिक है जो घटिया वन-भूमि, अकृष्य भूमि (Unculturable Land), चराई व चरागाह-भूमि, कृषि योग्य व्यर्थ भूमि तथा सड़कों, नहरों आदि के किनारे भूमि के टुकड़ों के रूप में पाई जाती है। **देश की कुल व्यर्थ भूमि का लगभग $\frac{1}{5}$ भाग अकेले राजस्थान में पाया जाता है।** विपरीत जलवायु व अन्य जैविक दबावों के कारण राज्य में व्यर्थ पड़ी भूमि का उपयोग करना एक दुष्कर कार्य है। राज्य में ईंधन की लकड़ी, चारे व इमारती लकड़ी का उत्पादन बढ़ाने के लिए एक दीर्घकालीन नीति की आवश्यकता है ताकि वानिकी (Forestry) में अधिक विनियोग किया जा सके। **राज्य में वर्ष 2001 में चारे की माँग का अनुमान 7.2 करोड़ टन व पूर्ति 5 करोड़ टन आंकी गई है, जिससे 2.2 करोड़ टन का अभाव रहने का अनुमान है।** अत: घास के मैदानों व चरागाहों का विकास किया जाना भी अत्यावश्यक है। इसी प्रकार टिम्बर की माँग भी इसकी पूर्ति से अधिक रहेगी। उसका उत्पादन भी बढ़ाया जाना चाहिए।

वर्तमान समय में जापान की आर्थिक सहायता से इन्दिरा गाँधी नहर क्षेत्र में वृक्षारोपण व चरागाह-विकास से इस क्षेत्र को हरा-भरा करने की एक व्यापक योजना पर कार्य चल

---

1 Eighth Five Year Plan 1992-97, March 1993, p 122

रहा है तथा अरावली वनरोपण प्रोजेक्ट के माध्यम से उस क्षेत्र में वृक्षारोपण, चरागाह विकास, मिट्टी व नमी-संरक्षण के कार्यक्रम संचालित किए जा रहे हैं।

वनों के विकास के लिए सरकारी कार्यक्रम

वनों की उपयोगिता देखते हुए राज्य सरकार तेजी से वन-विकास के कार्यक्रम चला रही है। राज्य में वन लगाने का काम कई विभाग करते हैं। ये विभाग इस प्रकार हैं—

(1) वन-विभाग, (2) भू-संरक्षण विभाग (Soil Conservation Department), (3) कमाण्ड क्षेत्र विकास विभाग, (4) मरुस्थल विकास प्रोग्राम (Desert Development Programme) के अन्तर्गत, (5) सूखा-सम्भावित क्षेत्र-कार्यक्रम (Drought-Prone Area Programme) (DPAP) के अन्तर्गत, (6) जवाहर रोजगार योजना और (7) आकाशीय बीजारोपण (Aerial Seeding) हैं। इन सभी विभागों व कार्यक्रमों के अन्तर्गत वृक्षारोपण का विस्तार किया जा रहा है जिनको भविष्य में अधिक सफल बनाने की आवश्यकता है।

इसके अतिरिक्त राज्य में सामाजिक वानिकी (Social Forestry) और फार्म वानिकी (Farm Forestry) के कार्यक्रम चलाए जा रहे हैं। सामाजिक-वानिकी कार्यक्रम के अन्तर्गत पंचायती राज संस्थाओं तथा व्यक्तियों को निश्चित संख्या में छोटे-छोटे पेड़ दिए जाते हैं जिन्हें गाँवों व शहरों की बंजर भूमि, नहरों व सड़कों के किनारे, रेल की पटरियों के दोनों तरफ व अन्य स्थानों पर लगाया जाता है और पूरी देखरेख के साथ विकसित किया जाता है। राज्य में सामाजिक वानिको-कार्यक्रम के अन्तर्गत वृक्षारोपण की योजना लागू की जा रही है। फार्म-वानिकी कार्यक्रम के अन्तर्गत इच्छुक किसानों को अपने खेतों पर पेड़ लगाने के लिए पौधे दिए जाते हैं। इस प्रकार सभी तरह के सम्भावित वन-विकास-कार्यक्रम चलाए जा रहे हैं जिससे राज्य में वनों का विकास व विस्तार हो सके।

वानिकी कार्य के लिए सरकार प्रति वर्ष धनराशि के व्यय का प्रावधान करती है। वन-विभाग रेगिस्तान को बढ़ने से रोकने का कार्य कर रहा है।

राज्य के 10 जिलों—अलवर, जयपुर, सीकर, झुंझुनूं, नागौर, पाली, उदयपुर, चित्तौड़गढ़, बाँसवाड़ा एवं सिरोही—में जापान सरकार के सहयोग से 1992-93 से अरावली वृक्षारोपण परियोजना के अन्तर्गत वृक्षारोपण किया गया है। **इस परियोजना का कार्यकाल 31 मार्च, 2000 को समाप्त हो गया है।** इंदिरा गाँधी नहर परियोजना क्षेत्र में जापान सरकार के सहयोग से वृक्षारोपण व चरागाह विकास के कार्य किए जा रहे हैं। **यह परियोजना 1991-92 में प्रारम्भ की गई और इसका कार्यकाल 5 फरवरी, 2000 को समाप्त होना था, जिसे बाद में 2 साल बढ़ाकर 5 फरवरी, 2002 तक कर दिया गया।** वन-सुरक्षा व विकास हेतु उत्तम काम वाली संस्थाओं, स्कूलों, पंचायतो व कर्मचारियों को पुरस्कार देने के लिए धन राशि का प्रावधान किया गया है। इंदिरा गाँधी नगर परियोजना वानिकी-प्रोजेक्ट के लिए जापान के **Overseas Economic Co-operation Fund (OECF) से वित्तीय सहायता प्राप्त हुई है (अब इसका नाम बदलकर Japan Bank of International Co-operation (JBIC) कर दिया गया है)।** इसकी संशोधित लागत

288 करोड़ रु. आँकी गयी है । इसके माध्यम से वृक्षारोपण, सीडलिंग-वितरण, नमी-संरक्षण व नई नर्सरी के कार्यक्रम सम्पन्न किए गए हैं । JBIC, जापान की सहायता से 2003-04 में 35 करोड़ रु. के प्रावधान से 'राजस्थान वानिकी एवं जैव विविधता परियोजना' नाम की नई बाह्य सहायता प्राप्त योजना स्वीकृत की गई है ।

गैर-अरावली व गैर-मरु (15 जिलों में) वानिकी-विकास-परियोजना 1995-2002 के लिए 145 करोड़ रु. की लागत से प्रारम्भ की गयी है । इसमे भी इंदिरा गाँधी नहर वानिकी-प्रोजेक्ट की भाँति कार्य किए जा रहे हैं ।

1999-2000 में एक शत-प्रतिशत केन्द्र-प्रवर्तित स्कीम—"बनास भू व जल-संरक्षण स्कीम"—4 जिलों टोंक, जयपुर, सवाईमाधोपुर व दौसा में 10 करोड़ रु. के (प्रारम्भिक वर्ष में) व्यय से चालू की गयी है ।

भारत वन-सर्वेक्षण के अनुसार राजस्थान में 1993 से 1999 तक 982 वर्ग किलोमीटर में सेटेलाइट सर्वे के आधार पर नया वृक्षारोपण किया गया है । इसमें जनता व सरकार के सहयोग से प्रगति हुई है । विश्व खाद्य कार्यक्रम के तत्वावधान में '*मरुस्थलीकरण को रोकने की परियोजना*' केन्द्र ने स्वीकृत की है । इसे उदयपुर, बाँसवाड़ा, चित्तौड़गढ़ व डूँगरपुर जिलों में अनुसूचित जनजाति के लाभ के लिए भी चलाया जायगा ।

परिशिष्ट

वन क्षेत्र भौगोलिक क्षेत्र के अनुपात में (% में)

क्र.	जिला		क्र.	जिला	
1	अजमेर	72	2	अलवर	18 9
3	बाँसवाड़ा	23 6	4	बाड़मेर	1 5
5	भीलवाड़ा	7 6	6	बीकानेर	4 6
7	बूँदी	26 7	8	चित्तौड़गढ़	24 3
9	चूरू	0 5 (L.) (न्यूनतम)	10	धौलपुर	21 1
11	डूँगरपुर	17 1	12	गंगानगर व हनुमानगढ़	4.2
13	जयपुर व दौसा	8.3	14	जैसलमेर	1 1
15	जालौर	5 3	16	झालावाड़	21 0
17	झुंझुनूँ	6 8	18	जोधपुर	1 3
19	कोटा व बारां	28 8	20	नागौर	1.25

क्र.	जिला		क्र.	जिला	
21	पाली	74	22	सवाईमाधोपुर व करौली	27 6
23	सीकर	8 3	24	सिरोही	31 0 (H) (अधिकतम)
25	टोंक	4 6	26	उदयपुर व राजसमंद	29 4
27	भरतपुर	7 0			
समस्त राजस्थान 9 32					

स्रोत : State Forestry Action Programme (1996-2016) p 15

नोट : प्रतिशत की दृष्टि से अधिकतम अनुपात सिरोही जिले का तथा न्यूनतम अनुपात चूरू जिले का आंका गया है।

प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. भारत में खारे पानी की सबसे बड़ी कौनसी झील है ?
   (अ) पंचभद्रा झील (ब) सांभर झील
   (स) रामगढ़ झील (द) लेक पैलेस झील (ब)

2. जिस जिले की वार्षिक वर्षा में विषमता का प्रतिशत सर्वाधिक है, वह है—
   (अ) बाड़मेर (ब) जयपुर
   (स) जैसलमेर (द) बाँसवाड़ा (अ)

3. नक्की झील स्थित है—
   (अ) माऊंट आबू में (ब) उदयपुर में
   (स) जैसलमेर में (द) बीकानेर में (अ)

4. राजस्थान राज्य की सीमाएँ जिन अन्य राज्यों को छूती हैं, उनके नाम हैं—
   (अ) पंजाब, हरियाणा, दिल्ली, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश
   (ब) पंजाब, हरियाणा, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, गुजरात
   (स) पंजाब, दिल्ली, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, गुजरात (ब)

5. राजस्थान के वे जिले जो अन्तर्राष्ट्रीय सीमा पर अवस्थित हैं—
   (अ) गंगानगर, बीकानेर, जैसलमेल एवं बाड़मेर
   (ब) गंगानगर, जोधपुर, जैसलमेर एवं जालोर
   (स) गंगानगर, बीकानेर, जोधपुर एवं जालोर
   (द) जालोर, जैसलमेर, बाड़मेर एवं बीकानेर (अ)

6. राजस्थान के पड़ोस में राज्य है :
(अ) गुजरात (ब) मध्य प्रदेश
(स) हरियाणा (द) उपरोक्त सभी (द)

7. राजस्थान की राजधानी है :
(अ) जयपुर (ब) जोधपुर
(स) बीकानेर (द) भीलवाड़ा (अ)

8. बिड़ला समूह कहलाता है :
(अ) मारवाड़ी (ब) पंजाबी
(स) सिंधी (द) गुजराती (अ)

9. अरावली श्रेणियों की दूसरे नम्बर की ऊँची चोटी का नाम है—
(अ) कुम्भलगढ़ (ब) नागपहाड़
(स) सेर (द) अचलगढ़ (स) (1597 मीटर)
[RAS, 1998]

10. निम्नांकित में से कौन-सा युग्म सही है ?
(अ) बाणगंगा—बनास (ब) कोठारी—लूनी
(स) सूकड़ी—चम्बल (द) जाखम—माही (द)
[RAS, 1998]

11. हाड़ौती-पठार की मिट्टी है—
(अ) कछारी (जलोढ़) (ब) लाल
(स) भूरी (द) मध्यम काली (द)
[RAS, 1998]

12. राजस्थान के वे दो जिले जिनमें कोई नदी नहीं है—
(अ) जैसलमेर एवं बाड़मेर (ब) जैसलमेर एवं जालोर
(स) बीकानेर एवं चूरू (द) जोधपुर एवं जैसलमेर (स)
[RAS, 1998]

13. राजस्थान के मरुस्थलीय प्रदेश में जो मुख्य नदी बहती है उसका नाम है—
(अ) बनास (ब) माही
(स) लूनी (द) गम्भीरी (स)

14. गर्मियों के मौसम में आबू क्षेत्र में तापमान कम रहता है, क्योंकि वहाँ की—
(अ) ऊँचाई अधिक है।
(ब) भूमध्य रेखा से दूरी अधिक है।
(स) समुद्र-तट से दूरी अधिक है।
(द) मानसूनी हवाओं का वेग अधिक होता है। (अ)

15. राजस्थान में सबसे अधिक उपजाऊ मिट्टी का नाम है—

(अ) सीरोजम (ब) लाल-दुमट

(स) जलोढ़ (alluvial) (द) बलुई

(ए) भूरी (स)

16. राजस्थान में वनों का क्षेत्रफल निम्न जिलो में से किस जिले में सबसे ज्यादा पाया जाता है ?

(अ) नागौर जिला (ब) भरतपुर जिला

(स) गंगानगर जिला (द) सवाई माधोपुर जिला (द)

17. राजस्थान में सर्वाधिक वन-क्षेत्र निम्न में से किस जिले में पाया जाता है ?

(अ) उदयपुर व राजसमंद जिले (ब) कोटा व बारां जिले

(स) चित्तौड़गढ़ जिला (द) सवाई माधोपुर व करौली जिले (अ)

18. राजस्थान में वनों का शीघ्र ह्रास होने का कारण है—

(अ) वर्षा की कमी (ब) वायु द्वारा भूमि का कटाव

(स) तापक्रम की अधिकता (द) पेड़ों की अनियंत्रित कटाई (द)

अन्य प्रश्न

1. राजस्थान की भौतिक संरचना का विवेचन निम्न शीर्षकों के अन्तर्गत करिए—

(अ) प्राकृतिक भाग, (ब) जलवायु

(स) मिट्टियाँ तथा (द) वनस्पति

2. क्या राजस्थान की भौतिक संरचना राज्य के आर्थिक विकास के अनुकूल है ? इस सम्बन्ध में राज्य की वनस्पति सम्बन्धी स्थिति का विवरण दीजिए और सरकार द्वारा इनके विकास के उपाय स्पष्ट कीजिए।

3. राज्य की वन-सम्पदा पर एक संक्षिप्त निबन्ध लिखिए।

4. राज्य के प्राकृतिक भागों की आर्थिक विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।

5. राजस्थान की नदियों, झीलों व मिट्टी का संक्षिप्त परिचय दीजिए। इनकी राज्य के आर्थिक विकास में क्या भूमिका मानी जा सकती है ?

6. राज्य में निम्नलिखित नदियाँ कहाँ से निकलती हैं और किसमें मिलती हैं ?

(अ) लूनी (ब) चम्बल

(स) माही (द) बनास

4

प्राकृतिक साधन : भूमि, जल, पशु-धन व वन्य-जीव*

(Natural Resource Endowments : Land, Water, Livestock and Wild life)

किसी भी राज्य के आर्थिक विकास पर उसके प्राकृतिक साधनों की मात्रा का अत्यधिक प्रभाव पड़ता है। प्राकृतिक साधनों में भूमि की मात्रा व किस्म का कृषिगत उत्पादन से सीधा सम्बन्ध होता है। मिट्टी की किस्म, जलवायु व वर्षा से फसलों की किस्में निर्धारित होती हैं। भूमि का उपयोग कृषिगत उत्पादन, वनों की उपज, चरागाहों के माध्यम से पशु-धन के विकास, बंजर भूमि की मात्रा, आदि को प्रभावित करता है। जल-साधन—सतही जल व भूजल—राज्य के आर्थिक जीवन को कई प्रकार से प्रभावित करते हैं। कृषि के लिए सिंचाई की व्यवस्था, उद्योगों के लिए जल की उपलब्धि, जल-विद्युत का विकास, पेयजल की आपूर्ति, आदि राज्य में जल की पर्याप्त उपलब्धि पर ही निर्भर करते हैं। राज्य की खनिज सम्पदा औद्योगिक विकास की दिशा व दशा को निर्धारित करती है, जिसका दूरगामी प्रभाव राज्य में रोजगार, आमदनी व निर्यात की प्रगति, आदि पर पड़ता है। इस प्रकार यह कहना उचित होगा कि *प्राकृतिक साधनों की मात्रा व गुणवत्ता राज्य में आर्थिक विकास की दर को* प्रभावित करते हैं। प्राकृतिक साधनों का उचित विदोहन करके वहाँ के नागरिकों का जीवन-स्तर उन्नत किया जा सकता है। लेकिन उनका विदोहन करते समय पर्यावरण की सुरक्षा व संरक्षण पर भी पर्याप्त ध्यान देना होगा, अन्यथा भावी पीढ़ी के लिए कई प्रकार की कठिनाइयाँ उत्पन्न हो सकती हैं।

प्राकृतिक साधनों का सदुपयोग करके व उनका समुचित विकास करके निर्धनता व बेरोजगारी जैसी जटिल समस्याओं का समाधान निकाला जा सकता है। अतः आर्थिक विकास में प्राकृतिक साधनों का केन्द्रीय स्थान होता है।

---

* वनों का विवरण पिछले अध्याय में दिया जा चुका है।

इस अध्याय में हम राज्य के प्राकृतिक साधनों में भूमि, जल व पशु-धन का वर्णन करेंगे तथा अगले अध्याय में खनिज-पदार्थों व राज्य की अगस्त 1994 में घोषित नई खनिज नीति की विस्तृत चर्चा करेंगे, जो आगामी वर्षों में राज्य के औद्योगिक विकास पर गहरा प्रभाव डाल सकती है।

राजस्थान में भूमि का उपयोग[1]—इसका विस्तृत विवेचन कृषि के अध्याय में किया जाएगा। यहाँ मोटे तौर पर यह बतलाया जाएगा कि राज्य में रिपोर्टिंग क्षेत्र कितना है और वर्तमान में उसका उपयोग किस प्रकार से किया जा रहा है।

2001-02 की सूचना के अनुसार, राजस्थान में रिपोर्टिंग क्षेत्र लगभग 3 करोड़ 42 लाख 65 हजार हैक्टेयर था। शुद्ध कृषित क्षेत्र (net area sown) इसका 48.9% था। शुद्ध कृषित क्षेत्र एक फसल के आधार पर जोता-बोया क्षेत्र होता है। इसी वर्ष बंजर व अकृषित भू-क्षेत्र (barren and uncultuvated land) लगभग 7.4 प्रतिशत था और कृषि योग्य व्यर्थ (Culturable waste) क्षेत्र 13.8 प्रतिशत था। चालू परती भूमि (जो एक वर्ष के लिए बिना खेती के रखी जाती है) 5.2 प्रतिशत तथा अन्य परती भूमि (जो एक से पाँच वर्ष तक बिना बोए छोड़ी जोती है) का अनुपात भी लगभग 6 8 प्रतिशत था। इस प्रकार कुल परती भूमि का क्षेत्र लगभग 12 प्रतिशत था। वनों के अन्तर्गत रिपोर्टिंग क्षेत्र का अंश 7.7 प्रतिशत था।[2] शेष भूमि अन्य कार्यों; जैसे अकृषिगत उपयोगों, स्थायी चरागाह, वृक्ष-फसलों (tree-crops) व कुंजों, आदि में लगी हुई थी।

ध्यान देने की बात है कि राज्य में कृषि योग्य व्यर्थ भूमि की मात्रा काफी अधिक है। यह कुल रिपोर्टिंग क्षेत्र का लगभग 13.8% है। चालू परती व अन्य परती भूमि का अनुपात भी लगभग 12% पाया जाता है। DES के आँकड़ों के अनुसार राज्य में वनों का क्षेत्र बहुत कम, लगभग 7.7 प्रतिशत ही है। कृषियोग्य व्यर्थ भूमि का उपयोग करके राज्य में आमदनी व रोजगार के अवसर बढ़ाए जा सकते हैं। प्रयत्न करके इस पर वृक्षों व घास का उत्पादन बढ़ाया जा सकता है। भविष्य में इसके उपयोग पर अधिक ध्यान देने की आवश्यकता है।

जल-साधन (Water Resources)—भारत में राजस्थान ही एक ऐसा राज्य है जिसमें जल-साधनों का सबसे ज्यादा अभाव पाया जाता है। राज्य में जल-साधनों की कमी का अनुमान निम्न तालिका से लगाया जा सकता है जिसमें कुछ सूचकों में राजस्थान की स्थिति भारत की तुलना में दर्शाई गई है—

(i)	भौगोलिक क्षेत्र में राजस्थान का अंश	10 4%
(ii)	कृषित क्षेत्र में राजस्थान का अंश	10 6%
(iii)	1991 की जनसंख्या में राजस्थान का अंश	5 2%
(iv)	सतही जल (Surface water) की उपलब्धि में राजस्थान का भारत के कुल सतही जल में अंश	1 04%

1. Some Facts About Rajasthan, 2003, pp.12-13 (प्रतिशत निकाले गए हैं)
2. State Forestry Action Programme (1996-2016) के अनुसार वन-क्षेत्र कुल भौगोलिक क्षेत्रफल का 9 3% आंका गया है।

इस प्रकार सतही जल-साधनों (surface water sources) में राजस्थान का केवल 1% अंश है, जो अन्य सूचकों की तुलना में काफी नीचा है । वैसे जल-साधनों में सतही-जल साधन व भू-जल साधन दोनों आते हैं, लेकिन यहाँ सतही जल-साधन को ही लिया गया है ।

(i) सतही-जल साधन (Surface Water Sources)—राजस्थान में कुल सतह जल की सम्भाव्यता 15.86 मिलियन एकड़ फुट (MAF) की है । इसलिए राज्य को जल के लिए अन्तर्राज्यीय नदी बेसीनों पर निर्भर रहना पड़ता है, जिनके तहत राज्य को निम्न प्रकार से 14.51 MAF जल आवंटित किया गया है ।[1]

117226

		मिलियन एकड़ फुट (MAF) में
(i)	गंग नहर	1.11
(ii)	भाकड़ा नहर	1.41
(iii)	नर्मदा	0.50
(iv)	रावी-व्यास	8.60
(v)	यमुना का जल	0.91
(vi)	माही का जल	0.37
(vii)	चम्बल/कोटा बैराज	1.60
	कुल	14.50

LIBRARY GOVT. COLLEGE KOTA Accession Number

अन्तर्राज्यीय नदी-सिंचित प्रदेशों में से राजस्थान को सर्वाधिक मात्रा रावी-व्यास से 8.60 MAF आवंटित है । इसमें से 7.59 MAF का उपयोग इन्दिरा गाँधी नहर परियोजना (IGNP) के माध्यम से किया जाना है तथा शेष 1.02 MAF का इस्तेमाल गंग व भाकड़ा नहर-प्रणालियों में सिद्धमुख, नोहर व पूरक गंग नहर के माध्यम से किया जाना है ।

भू-जल (Ground Water) की उपलब्धि राज्य की जल-विज्ञान सम्बन्धी दशाओं के कारण काफी परिवर्तनशील व असमान रहती है । लेकिन अधिकांश भागों में भू-जल की किस्म घटिया किस्म की पाई जाती है ।

राज्य के जल-साधनों पर पेनल ने भू-जल साधनों के निम्नांकित अनुमान पेश किए हैं—

		(MAF में)
1	कुल भू-जल साधन	10.183
2	पीने, औद्योगिक व अन्य उपयोगों के लिए निर्धारित	1.527
3	शेष सिंचाई के लिए प्रयोज्य	8.656
4	इसमें से अब तक प्रयुक्त मात्रा	4.354
5	भू-जल की बकाया मात्रा जो भविष्य के लिए उपलब्ध होगी	4.302
6	भू-जल के उपयोग का वर्तमान स्तर [(4) का (3) से अनुपात]	50.30%

1 Draft Tenth Five Year Plan, 2002-07, Vol. I GOR, p 13.1.

इस प्रकार राज्य में भू-जल की प्रयोज्य मात्रा का लगभग आधा अंश काम में लिया जा रहा है। लेकिन इसमें प्रादेशिक अन्तर बहुत ज्यादा पाया जाता है। **जून 1988 तक राज्य के 237 खण्डों में से 81 खण्ड 'काली श्रेणी' (dark category) में आ चुके थे, तथा 31 खण्ड 'भूरी श्रेणी' (grey category) में आ चुके थे।** इसका आशय यह है कि उनमें पानी की सतह बहुत नीचे चली गई है। इसलिए राज्य में भूमि के नीचे के जल का उपयोग अधिक सावधानी से करने की आवश्यकता है।

राजस्थान पत्रिका में 22 मई 1997 को प्रकाशित सूचना के अनुसार 1995 में डार्क व ग्रे जोनों की संख्या बढ़कर 109 हो गई है। राज्य में 2.13 लाख वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में भूजल उपलब्ध है। अब इसमें से 92,285 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र (43%) डार्क व ग्रे जोन में आ चुका है। राज्य में कई क्षेत्रों में भूजल का स्तर तेजी से घट रहा है। यदि यही सिलसिला जारी रहा तो कुछ ही वर्षों में भूगर्भीय पानी खत्म हो जायेगा, या फिर वह इतना लवणीय और अशुद्ध हो जायेगा कि न तो पीने के काम आ सकेगा और न ही सिंचाई के। इस सम्बन्ध में नागौर व जयपुर जिलों की स्थिति सबसे ज्यादा चिन्ताजनक बतलायी गयी है

इसके विपरीत पत्रिका की ही 29 मई, 1997 की सूचना के अनुसार **बाड़मेर जिले के धोरीमन्ना इलाके में भूजल के बढ़ते उपयोग से वहाँ के किसान इसबगोल, जीरा व सरसों जैसी फसलें बोने लगे हैं** और गेहूं, बाजरा, जौ, मूँग-मोठ उनकी दूसरी प्राथमिकता -(second priority) बन गये हैं। धोरीमन्ना क्षेत्र से ही मारवाड़ की गंगा लूणी नदी बाड़मेर जिले से जालोर जिले की सांचोर तहसील में प्रवेश कर नेहड़ इलाके से गुजरती हुई कच्छ के रण में प्रवेश करती है। धोरीमन्ना क्षेत्र में पानी की उपलब्धता की जानकारी वहाँ के किसानों को तो पहले भी थी, लेकिन पहले सामन्ती शासन के कारण वहाँ भूजल-स्रोतों पर पर्याप्त रूप से ध्यान नहीं दिया गया और स्वतन्त्रता-प्राप्ति के बाद भी सरकारों ने इस क्षेत्र के भूजल-स्रोतों के विकास की कोई सुदृढ़ योजना नहीं प्रारम्भ की। उम्मीद है कि भविष्य में इस क्षेत्र की माली हालत सुधरेगी।

जुलाई 1997 की सूचना के अनुसार नागौर व चूरू जिलों के **लाडनूं व सुजानगढ़ समेत विभिन्न स्थानों के भूगर्भीय जलस्तर व इसकी गुणवत्ता में अप्रत्याशित रूप से फेरबदल हो रहा है।** लाडनूं की धरती में खूब पानी निकलने लगा है। इससे उस क्षेत्र में हरियाली बढ़ी है और कृषिगत विकास की नई सम्भावनाएँ उत्पन्न हुई हैं, जिनका नियोजित ढंग से उपयोग व विकास किया जाना चाहिए।

राज्य में सकल सिंचित क्षेत्रफल 1971-72 में 24.40 लाख हैक्टेयर से बढ़कर 2001-02 में 67.44 लाख हैक्टेयर तक पहुँच गया है। नहरों, कुओं व नलकूपों से सिंचित क्षेत्रफल बढ़ा है। राज्य में योजनाकाल में सिंचाई के साधनों का काफी विकास हुआ है।

राज्य में जल-साधनों के सदुपयोग के लिए सुझाव—(1) अन्तर्राज्यीय जल-साधनों में राज्य के अंश का शीघ्रतापूर्वक पूरा उपयोग किया जाना चाहिए। इसके लिए इन्दिरा गाँधी नहर परियोजना, नर्मदा, सिद्धमुख व नोहर सिंचाई परियोजनाओं को पूरा किया जाना चाहिए। इस कार्य को सम्पन्न करने के लिए भारत सरकार को पर्याप्त धन उपलब्ध कराना चाहिए। सिंचाई परियोजनाओं को समयबद्ध कार्यक्रम के अनुसार पूरा किया जाना चाहिए ताकि इनकी लागत न बढ़े।

(2) पानी का उपयोग इस प्रकार किया जाना चाहिए ताकि उत्पादन अधिकतम हो सके। इसके लिए फव्वारा-सिंचाई (sprinkler irrigation) व बूँद-बूँद सिंचाई (Drip-irrigation) की विधियाँ अपनाई जा सकती हैं, जिनमें पानी की किफायत होती है और कम पानी से ज्यादा-से-ज्यादा लाभ प्राप्त किया जा सकता है।

(3) इन्दिरा गाँधी नहर परियोजना क्षेत्र में भू-जल व सतह-जल का मिला-जुला उपयोग (Conjunctive use) इस प्रकार का होना चाहिए जिससे सर्वाधिक लाभ प्राप्त हो सके।

(4) जिन क्षेत्रों में पानी की सतह (Water-level) सूखे की दशाओं के कारण बहुत नीचे जा रही है उनमें भू-जल के उपयोग में विशेष सावधानी बरतनी होगी तथा अन्य उपाय भी करने होंगे।

(5) सरकार को जल-पूर्ति के विकास पर अधिक विनियोग करना चाहिए। इससे पेयजल की सुविधा भी बढ़ेगी।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट होता है कि राज्य में पानी के अभाव की स्थिति को ध्यान में रखते हुए जल-साधनों का उपयोग अधिक सावधानीपूर्वक करना होगा ताकि मनुष्यों व पशुओं को पेयजल मिल सके, फसलों को सिंचाई के लिए पर्याप्त मात्रा में जल मिल सके तथा भवन-निर्माण, औद्योगिक क्षेत्र व अन्य प्रकार की जल की आवश्यकताओं की यथा-सम्भव पूर्ति की जा सके।

राजस्थान का पशु-धन—राजस्थान के लिए पशु-सम्पदा का विशेष रूप से आर्थिक महत्त्व माना गया है। राज्य के कुल क्षेत्रफल का 61 प्रतिशत मरुस्थलीय प्रदेश है जहाँ जीविकोपार्जन का मुख्य साधन पशुपालन ही है। इससे राज्य की शुद्ध घरेलू उत्पत्ति का 15% से अधिक अंश प्राप्त होता है। राजस्थान में देश के पशु-धन का 7% तथा भेड़ों का 25% अंश पाया जाता है। राज्य में देश के दूध-उत्पादन का 11% तथा ऊन के उत्पादन का 40% प्राप्त होता है।

राज्य में प्रति पाँच वर्ष में एक बार पशु-संगणना होती है। पशुओं की संख्या पर सूखे व अकाल का विपरीत प्रभाव पड़ता है। 1987-88 के भयंकर सूखे व अकाल के कारण 1983-88 की अवधि में पशुओं की संख्या लगभग 88 लाख घट गयी थी। **1992 की पशु-संगणना के अनुसार पशुओं (total livestock) की संख्या 4.78 करोड़ आंकी गयी है जो बढ़कर 1997 में 5.47 करोड़ हो गई है। 1997 में विभिन्न प्रकार के पशुओं का वर्गीकरण इस प्रकार रहा—गोधन (गाय-बैल) 1.21 करोड़, भैंस-जाति 97.7 लाख, भेड़-जाति 1.46 करोड़, बकरी-जाति 1.70 करोड़ तथा शेष 12.0 लाख में घोड़े व टट्टू, ऊँट व सूअर तथा गधे वगैरह शामिल थे।**[1]

जैसा कि पहले बतलाया गया है राज्य में समस्त भारत की भेड़ों की संख्या का लगभग 25% अंश पाया जाता है। भेड़-पालन में लगभग 2 लाख परिवार संलग्न हैं, और लगभग इतने ही परिवार ऊन-प्रोसेसिंग की क्रियाओं में संलग्न हैं। प्रतिवर्ष लगभग 170 लाख

1. Some Facts About Rajasthan, 2003, part I, p II (प्रतिशत निकाले गए हैं) (संशोधित)।

किलोग्राम ऊन उत्पन्न किया जाता है और 30 लाख से अधिक भेड़-बकरियाँ मांस के लिए प्रयुक्त होती हैं।

राजस्थान में पशुओं की कुछ सर्वोत्तम नस्लें पाई जाती हैं। नागौरी बैल माल ढोने में बहुत चुस्त पाए जाते हैं। ये प्रतिवर्ष हजारों की संख्या में राजस्थान से बाहर भेजे जाते हैं। राज्य सरकार ने राठी, थारपारकर व नागौरी नस्लों वाले क्षेत्रों में चुने हुए ढंग पर पशुओं के प्रजनन (Selective Breeding) की नीति अपनाई है। इसके अन्तर्गत एक नस्ल के उत्तम पशुओं को चुना जाता है। कांक्रेज या सांचोरी, गिर, हरियाणा व मालवी नस्लों के लिए चुने हुए ढंग (सिलेक्टिव) पर तथा 'क्रोस-ब्रीडिंग' दोनों विधियों के आधार पर पशुओं की नस्ल के विकास का काम किया जाता है। क्रोस-ब्रीडिंग में सुधरी नस्ल के उत्तम पशुओं का प्रजनन हेतु प्रयोग किया जाता है। यह पशुओं की नस्ल-सुधार व उत्पादकता बढ़ाने में मदद देता है।

देश में ऊन के कुल उत्पादन का लगभग 40% अंश अकेले राजस्थान में उत्पन्न होता है। राजस्थान में भेड़ों की निम्न 8 नस्लें पायी जाती हैं : चोकला, मगरा, नाली, पूगल, जैसलमेरी, मारवाड़ी, मालपुरा तथा सोनाड़ी। इनमें प्रथम तीन बीकानेर की प्रमुख नस्लें हैं। जोधपुर की मारवाड़ी नस्ल मशहूर है। चोकला भेड़ से वस्त्रों की ऊन प्राप्त होती है। नाली नस्ल का ऊन दोनों में काम आता है। राज्य में 1992 में भेड़ों की संख्या मेढ़ों व मेमनों सहित 1.22 करोड़ थी जो 1997 में बढ़कर 1.43 करोड़ हो गई। राजस्थान में देश की कुल भेड़ों का लगभग 25% अंश होने पर भी देश के कुल ऊन के उत्पादन का 40% अंश प्राप्त होता है। इससे स्पष्ट होता है कि यहाँ प्रति भेड़ ऊन की मात्रा ज्यादा प्राप्त होती है। यहाँ प्रति भेड़ लगभग 1.6 किलो ऊन प्राप्त होता है, जबकि समस्त देश का औसत केवल 0.9 किलो ही माना गया है। भेड़-नस्ल-सुधार-कार्यक्रम में मारवाड़ी, जैसलमेरी व मगरा भेड़ों को 'सिलेक्टिव ब्रीडिंग' स्कीम में लिया गया है। इसके लिए उसी नस्ल के चुने हुए उत्तम मेंढ़े प्रयुक्त किए जाते हैं। नाली, चोकला, सोनाड़ी व मालपुरा नस्लों का विकास 'क्रोस-ब्रीडिंग' के माध्यम से किया जाता है, जिसमें भेड़ों की नस्ल में गुणात्मक सुधार करने के लिए किसी उत्तम किस्म की दूसरी नस्ल का ब्रीडिंग के लिए उपयोग किया जाता है। वर्तमान में राज्य में लगभग 1.70 करोड़ किलोग्राम अथवा 17 हजार टन ऊन उत्पन्न किया जाता है। मांस के विक्रय से करोड़ों रुपयों का वार्षिक व्यापार होता है। बाड़मेर, सीकर, जोधपुर व भीलवाड़ा के सुदूर ग्रामीण क्षेत्रों में ऊन-आधारित उद्योग का विकास किया जा रहा है। कोटा व सवाई माधोपुर में बकरियों की नस्ल दूध व मांस दोनों दृष्टियों में उत्तम मानी गई है। राज्य में ऊँटों की कई नस्लें पाई जाती हैं। जैसलमेर के समीप नाचना का ऊँट सर्वश्रेष्ठ माना जाता है। राज्य में प्रति व्यक्ति दूध की उपलब्धि समस्त भारत के औसत की तुलना में अधिक पाई जाती है। राजस्थान से प्रतिदिन काफी मात्रा में अण्डे अन्य राज्यों को भेजे जाते हैं।

राजस्थान में कृषि के बाद जीविकोपार्जन का दूसरा महत्त्वपूर्ण साधन पशुपालन ही माना गया है। इसलिए यहाँ की अर्थव्यवस्था को कृषि व पशुपालन की अर्थव्यवस्था

कहा जाता है । सरकार को पशुपालन के विकास पर काफी ध्यान देना चाहिए । राज्य के निवासियों की आय बढ़ाने के लिए पशु-धन के विकास पर ज्यादा बल देना उचित होगा । पानी, चारा (उत्पादन एवं संग्रह) आदि के विस्तार से पशु-सम्पत्ति को अधिक उत्पादक बनाया जा सकता है । अकाल व सूखा पड़ जाने से पिछले वर्षों में कई बार राजस्थान से पशुओं को अन्यत्र भेजना पड़ा है और पशु-धन को काफी क्षति पहुँची है । लेकिन अब अन्य राज्यों में भी कठिनाइयाँ होने के कारण वहाँ पशुओं को भेजना मुश्किल होता जा रहा है । राज्य में पानी व चारे की सुविधाएँ बढ़ाकर अर्द्धशुष्क ■ शुष्क प्रदेशों में भेड़-पालन व अन्य पशुओं का विकास किया जाना चाहिए । **राजस्थान में पशु-आधारित उद्योगों के विकास की सम्भावनाएँ हैं; जैसे ऊन का उद्योग, दुग्ध व दुग्ध-निर्मित पदार्थ, मांस का उद्योग, चमड़े का उद्योग व हड्डी का उद्योग ।** यदि पशु-धन के विकास पर समुचित ध्यान दिया जाए तो सरकार व जनता दोनों की आय में वृद्धि हो सकती है ।

राजस्थान सहकारी डेयरी संघ सहकारी आधार पर डेयरी के विकास में संलग्न है । वर्तमान में राज्य में 16 जिला डेयरी संघों की प्रतिदिन की दूध-संग्रह की क्षमता 9 लाख लीटर दूध से बढ़कर 13.45 लाख लीटर हो गयी है । 2002-03 में पंजीकृत सहकारी डेयरी समितियों (DCS) की संख्या 6961 थी तथा इसके नीचे 16 जिला दुग्ध संघ थे । 2003-04 में प्रतिदिन दुग्ध का औसत संग्रहण 10.33 लाख किलोग्राम हो पाया था[1] वर्तमान में दूध का संग्रहण—स्तर प्रतिदिन बढ़ने लगा है । पिछले दो वर्षों की दूध के संग्रहण व बिक्री की सफलता को देखते, हुए राज्य को—"व्यवसाय-उपक्रमों के ग्लोबल-संगठन" की तरफ से 'ज्ञान ज्योति' का अवार्ड दिया गया है बीकानेर में 'सरस रसगुल्लों' का उत्पादन भी किया जाता है । इसके अलावा सरस पनीर, सरस घी व 90 दिन तक खराब न होने वाले 'टेट्रापैक दूध' (Tetrapak milk) का उत्पादन भी किया जाता है ।

राज्य में पशु-पालन व डेयरी-विकास के सम्बन्ध में नीति व राजकीय प्रयास— राज्य मे पशु—पालन व डेयरी विकास की दिशा मे महत्त्वपूर्ण कदम उठाए गये हैं। मरु-विकास कार्यक्रम के अन्तर्गत पशुधन के विकास को प्राथमिकता दी गई है। पशुओ की नस्ल को सुधारने के लिए प्रजनन की उत्तम विधियाँ अपनाई गई हैं। कृत्रिम गर्भाधान की व्यवस्था की गई है। पशुओ में बीमारी की रोकथाम का इन्तजाम किया गया है। इसके लिए पशु—चिकित्सा—केन्द्र खोले गए हैं।

प्रतिदिन दूध के सकलन की व्यवस्था की गई है। जैसा कि ऊपर कहा गया है राज्य मे 10 डेयरी संयत्र लगाए जा चुके हैं तथा 25 अवशीतन केन्द्र स्थापित किए गए हैं। दूध का उत्पादन करने वालो की सहकारी समितियाँ बनाई गई हैं। उनको सतुलित पशु—आहार व चारा उपलब्ध कराया जाता है।

पशु--पालको की आर्थिक दशा सुधारने के लिए 1 अप्रैल, 1986 को भारत एग्रो-इण्डस्ट्रीज-फाउन्डेशन (BAIF) की सहायता से क्रोस-ब्रीडिंग के लिए 50 केन्द्र स्थापित

1 Economic Review 2003-04, pp.53-54 & Some Facts About Rajasthan, 2003, part I, p.25.

करने का समझौता किया गया था। ये केन्द्र भीलवाड़ा, कोटा, बूँदी, उदयपुर, चित्तौड़गढ़, डूँगरपुर व बाँसवाड़ा जिलों में स्थापित किए गए हैं।

इस प्रकार सरकार पशुओं की नस्ल सुधारने, पशु-चिकित्सा, पशु-पालकों की आर्थिक स्थिति को ठीक करने तथा पशुधन की अभिवृद्धि करके राज्य की आय बढ़ाने का प्रयास कर रही है। **पशु-नस्ल-सुधार के लिए 'गोपाल योजना'** काफी उपयोगी रही है। वर्तमान में राज्य के दक्षिणी व पूर्वी भागों के 12 जिलों की 40 चुनी हुई पंचायत समितियों में 586 गोपाल कार्यरत हैं। राज्य में विभिन्न स्थानों पर पशु-मेले आयोजित किए जाते हैं, जिनमें परबतसर व पीपलू गाँव के पशु मेले उल्लेखनीय हैं। बस्सी (जयपुर) में पशु-प्रजनन फार्म स्थापित किया गया है, यहाँ विशेषतया जरसी गायों का प्रजनन होता है। गौशालाओं को उन्नत नस्ल के दुधारू पशुओं के प्रजनन केन्द्र बनाने के लिए **"कामधेनु" नाम की एक नई योजना प्रारम्भ की गई है।** इसका लाभ कृषि-विकास केन्द्र व स्वयंसेवी संस्थाओं को मिलेगा। आगे चलकर चयनित निजी पशुपालकों को भी इस योजना में शामिल किया जा सकता है।

वन्य जीव-सुरक्षा (Wild life protection)—राजस्थान की अधिकांश भूमि रेतीली, बंजर व पर्णपाती वनों से घिरी होते हुए भी वन्य-जन्तु व पशु-पक्षियों से भरपूर है। विभिन्न वन्य-पशु आवास हेतु राष्ट्रीय पार्क, सुरक्षित स्थल व पक्षी-विहार विकसित किए गए हैं। इन्हें प्राकृतिक रूप में संजोकर रखा गया है।

राज्य में **तीन** राष्ट्रीय पार्क व 25 अभयारण्य हैं। तीन राष्ट्रीय पार्कों का परिचय नीचे दिया जाता है—

(1) रणथम्भौर नेशनल पार्क, सवाई माधोपुर—यह 389 वर्ग किलोमीटर में फैला बाघ का आवास-क्षेत्र माना जाता है। यह स्थान बाघ के अभयारण्य के रूप में सुरक्षित रखा गया है। **इसे 'शेरों की भूमि'** भी कहा जाता है। पिछले समय में यहाँ शेरों की संख्या को लेकर थोड़ा विवाद रहा है। रणथम्भौर की संकरी घाटी को बाघ, शेर व रीछ के छिपने का उपयुक्त स्थान माना गया है। यहाँ गीदड़, लकड़बग्घा, हिरण, चिंकारा, नीलगाय आदि जानवर भी विचरण करते दिखाई देते हैं। पास की झील में मगरमच्छ व पक्षियों के झुण्ड भी पाए जाते हैं।

(2) राष्ट्रीय मरुउद्यान (डेजर्ट सैंक्चुअरी), जैसलमेर—यह 1981 में स्थापित किया गया था। यहाँ के प्राकृतिक वातावरण में चिंकारा, रेगिस्तानी बिल्ली, लोमड़ी, खरगोश आदि पाए जाते हैं। यहाँ रंग-बिरंगी चिड़ियाँ, शाही रेगिस्तानी मुर्गा, सारस व बस्टर्ड, गरुड़, बाज आदि पाए जाते हैं। मरुस्थल के बहुत भीतरी भाग में **ग्रेट इंडियन बस्टर्ड (गोंडावन पक्षी)** अपनी वंश-वृद्धि करते हैं, हालांकि यह नस्ल तेजी से लुप्त होती जा रही है।

(3) केवलादेव घना नेशनल पार्क, भरतपुर—यहाँ अद्वितीय हंसों की अनेक प्रजातियाँ पाई जाती हैं। यहाँ पक्षी कीकर के पेड़ों पर अपने घोंसले बनाते हैं। यहाँ कई प्रकार के सारस देखे जा सकते हैं। यहाँ पर प्रति वर्ष साइबेरिया से उड़ने वाले सारस विश्राम करने के लिए आते हैं। यहाँ नीलगाय, चीतल, साँभर व हिरण भी विचरण करते हैं। कहीं-कहीं शेर व चीते भी देखे जा सकते हैं।

वन्य जीवन शरणस्थलों या अभयारण्यों (sanctuaries) में कुछ प्रसिद्ध स्थल इस प्रकार हैं—टाइगर प्रोजेक्ट, सरिस्का (अलवर) वन्य जीवन अभयारण्य कुम्भलगढ़ (उदयपुर), सीतामाता (चित्तौड़गढ़), केलादेवी (सवाईमाधोपुर), टोडगढ़ रवाली (अजमेर), फुलवारी की नाल (उदयपुर), आदि।

उदयपुर के समीप विभिन्न स्थानों में कुछ जाने-अनजाने विहार और स्थित हैं, जिनमें वन्य पशु-पक्षी पाए जाते हैं। कोटा नगर से 40 किलोमीटर दूर दर्राह वन्य अभयारण्य तथा माउंट आबू अभयारण्य में भी कई प्रकार के वन्य जीव पाये जाते हैं। जोधपुर जिले के मांचिया में एक सफारी पार्क एवं कई लघु मृग पार्क हैं। इस प्रकार राजस्थान प्रमुखतया मरुस्थलीय प्रदेश होते हुए भी वन-प्राणियों से विहीन नहीं है। ये प्राणी प्रकृति की शोभा बढ़ाते हैं और पर्यावरण व परिवेश के संतुलन को बनाए रखने में मदद देते हैं। सरकार सदैव इनकी सुरक्षा व संरक्षण के लिए प्रयत्नशील रहती है। इनके चोरी-छिपे शिकार पर कठोर प्रतिबन्ध होना जरूरी है, अन्यथा भविष्य में इनकी कमी मानवता के लिए अभिशाप बन सकती है।

प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. राष्ट्रीय मरुस्थल पार्क कहाँ है ?
   (अ) जोधपुर (ब) बाड़मेर
   (स) जैसलमेर (द) जालौर (स)

2. प्राकृतिक साधनों की प्रकृति एवं उपलब्धता के आधार पर राजस्थान में उन उद्योगों के विकास की सर्वाधिक संभावनाएँ हैं जिनका आधार है—
   (अ) पशुधन (ब) वन
   (स) कृषि (द) खनिज (द)

3. राजस्थान में 2001-02 में शुद्ध जोता-बोया क्षेत्र कुल रिपोर्टिंग क्षेत्रफल का लगभग कितना अंश है ?
   (अ) 49% (ब) दो-तिहाई
   (स) 60% (द) कोई नहीं (अ)

4. राज्य में कृषियोग्य व्यर्थ भूमि कुल रिपोर्टिंग क्षेत्रफल का कितना भाग है ? (2001-02 में)
   (अ) 5% (ब) 14%
   (स) 20% (द) 25% (ब)

5. राज्य में कौन-सा जल समस्त राष्ट्रीय जल का लगभग 1% अंश माना गया है ?
   (अ) सतही जल (ब) भूजल
   (स) सतही तथा भूजल (द) कोई भी नहीं (अ)

6. हाल में राज्य में जल की कौन-सी समस्या सर्वाधिक गम्भीर होती जा रही है ?
   (अ) पानी खारा होता जा रहा है
   (ब) डार्क व ग्रे जोनों की संख्या बढ़ रही है
   (स) पानी सिंचाई के लायक नहीं रह गया है
   (द) पानी की कमी बढ़ती जा रही है। (ब)

7. आर्थिक विकास की दृष्टि से राज्य के प्राकृतिक साधनों की स्थिति पर कौन-सा कथन लागू होता है ?
   (अ) सभी प्राकृतिक साधन अपर्याप्त हैं
   (ब) कुछ साधन पर्याप्त हैं और कुछ का अभाव है
   (स) कृषि के लिए भूमि की कोई कमी नहीं है
   (द) औद्योगिक विकास के लिए सभी साधन विद्यमान हैं। (ब)

अन्य प्रश्न

1. राजस्थान के प्रमुख प्राकृतिक साधनों का विवेचन कीजिए और बताइए कि वे राजस्थान के आर्थिक विकास में किस प्रकार महत्वपूर्ण हैं।
2. राजस्थान के 'जल-साधनों' पर एक संक्षिप्त निबन्ध लिखिए।
3. राजस्थान के पशुधन का संक्षिप्त परिचय दीजिए।
4. राजस्थान के आर्थिक साधनों का मूल्यांकन कीजिए।
5. राजस्थान में प्रचुर प्राकृतिक साधन हैं, समझाइए।
6. प्राकृतिक संसाधन निधियों में राजस्थान किस सीमा तक धनी है ?
7. संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए—
   (i) राजस्थान का पशु-धन,
   (ii) राज्य के जल-साधन,
   (iii) राज्य में भूमि का उपयोग।
8. राजस्थान के प्राकृतिक साधनों का विवेचन कीजिए और बताइए कि ये राजस्थान के आर्थिक विकास में किस प्रकार महत्त्वपूर्ण हैं ?
9. प्राकृतिक साधनों का आर्थिक विकास में महत्व बताइए।
10. राजस्थान राज्य के भूमि, पशुधन एवं जल-संसाधनों का वर्णन कीजिए।

5

खनिज पदार्थ व राज्य की नई खनिज नीति, अगस्त 1994

(Minerals and New Mineral Policy of the State, August, 1994)

राजस्थान खनिज पदार्थों का एक अजायबघर (A Museum of Minerals) माना गया है। वर्तमान में यहाँ 42 किस्म के बड़े खनिज तथा 23 प्रकार के लघु खनिज पाए जाते हैं। अलौह धातु (non-ferrous metals) (सीसा, जस्ता व ताँबा) के उत्पादन-मूल्य की दृष्टि से भारत में इसका प्रथम स्थान है, तथा लौह खनिजों (ferrous minerals) जैसे टंगस्टन, आदि के उत्पादन-मूल्य में इसका चौड़ा स्थान है। प्रचलित कीमतों पर (at current prices) खनन (mining) से 1991-92 में 462 करोड़ रुपये की आमदनी हुई थी, जो राज्य की शुद्ध घरेलू उत्पत्ति (NSDP) का 2.3% थी। यह 2002-03 में 1955 करोड़ रुपये हो गई, जो राज्य की शुद्ध घरेलू उत्पत्ति का 2.6% अंश रही। खनन-क्षेत्र से राज्य को गैर-कर राजस्व (non-tax revenue) 1993-94 में 161.2 करोड़ रु. प्राप्त हुआ था जिसके भविष्य में बढ़ने की आशा है। इसी वर्ष खनन-क्रिया में 3.25 लाख व्यक्तियों को रोजगार मिला हुआ था।

वर्तमान में राजस्थान जास्पर व वोलस्टोनाइट का एकमात्र उत्पादक राज्य है, तथा टंगस्टन, सीसा व जस्ता कन्सन्ट्रेट्स, ताँबा धातु, सीमेंट व स्टील ग्रेड चूना पत्थर, सोप-स्टोन, बाल क्ले, कैल्साइट, फैल्सपार, प्राकृतिक जिप्सम, चीनी मिट्टी (केओलिन), रॉक फॉस्फेट, गेरू (ऑकर) एवं इमारती पत्थर का अग्रणी उत्पादक माना गया है।

राज्य में जिन खनिजों का उत्पादन भारत के कुल उत्पादन का 70% या अधिक होता है, वे अग्रांकित तालिका में दर्शाए गए हैं।[1]

---

1 Mineral Policy, August 1994, Department of Mines, Govt of Raj., p 1

राजस्थान में देश के कुल खनिज उत्पादन मूल्य का 5 7% होता है । **इस दृष्टि से भारत में राज्य का पाँचवाँ स्थान है ।** उत्पादन-मूल्य की दृष्टि से बिहार (13 1%), मध्य प्रदेश (9 7%), गुजरात (8 6%) तथा असम (7 3%) इससे आगे हैं ।

राजस्थान में समस्त भारत के उत्पादन का प्रतिशत

खनिज पदार्थ		खनिज पदार्थ	
वोलस्टोनाइट	100	सीसा कन्सन्ट्रेट	80
जास्पर	100	रॉक फॉस्फेट	75
जस्ता कन्सन्ट्रेट	99	बाल क्ले	71
फ्लोराइट	96	कोटा स्टोन	70
जिप्सम	93	फैल्सपार	70
मार्बल	90	कैल्साइट	70
एसबेस्टस	89	सैण्डस्टोन	70
सोप स्टोन	87		

खनिज ईंधनों (Mineral fuels) में पलाना की लिग्नाइट की खानें आती हैं, जिनमें काफी वर्षों से काम होता रहा है । नागौर जिले के मेड़ता रोड तथा बाड़मेर जिले के कपूरड़ी क्षेत्रों में लिग्नाइट के विशाल भण्डार मिले हैं । कपूरड़ी में 6 करोड़ टन के लिग्नाइट के भण्डार आँके गए हैं । **मई 1983 में जैसलमेर जिले में घोटारू नामक स्थान पर प्राकृतिक गैस का एक विशाल भण्डार पाया गया था ।** यहाँ एक अरब घनमीटर में प्राकृतिक गैस मिली है । इस क्षेत्र में सीमेंट प्लांट और विद्युत-गृह स्थापित करने की योजना है । **6 जुलाई, 1990 को डांडेवाला (जैसलमेर) में प्राकृतिक गैस का एक भण्डार मिला है ।** इससे प्रतिदिन 4 लाख क्यूबिक मीटर गैस उपलब्ध होने का अनुमान है जिससे एक बिजलीघर व कई गैस-आधारित उद्योग चलाए जा सकते हैं । राजस्थान राज्य विद्युत मण्डल, रीको, सेंचुरी रेयन, दिग्विजय सीमेंट, गोविन्द ग्लास उद्योग, गैस के लिए ऑयल इण्डिया लि. को अनुरोध कर चुके हैं । मार्च 1984 में जैसलमेर से करीब 145 किलो-मीटर दूर सादेवाला में तेल का एक बड़ा भण्डार मिला था । तेल व प्राकृतिक गैस आयोग ने जून 1983 के अन्त में वहाँ खुदाई का काम शुरू किया था । जैसलमेर में तेल व प्राकृतिक गैस आयोग एक हीलियम गैस प्लांट लगाने का विचार कर रहा है । सादेवाला से पाक सीमा के बीच करीब छ: किलोमीटर की ही दूरी है । रामपुरा-आगुचा (भीलवाड़ा जिले) में जिंक व सीसे के विपुल भण्डार मिलने से राजस्थान में भारत सरकार ने चंदेरिया में एक जिंक स्मेल्टर प्लांट लगाने की स्वीकृति दी है, जिसकी लागत लगभग 447 करोड़ रु. अनुमानित है । इसे हिन्दुस्तान जिंक लिमिटेड कार्यान्वित करेगा । इस परियोजना में खनिज दोहन पर 170 करोड़ रुपये की लागत को शामिल करने पर कुल लागत का अनुमान 617 करोड़ रुपये लगाया गया है । चित्तौड़गढ़ जिले के गाँव केसरपुरा (प्रतापगढ़) के निकट हीरे की खोज उल्लेखनीय है । इसका विस्तृत सर्वे किया जा रहा है ।

जैसलमेर जिले के सोनू क्षेत्र में 50 करोड़ टन स्टील ग्रेड लाइमस्टोन के भण्डारों का पता लगाया गया है। यह पीले रंग का स्टील ग्रेड लाइमस्टोन उत्तम किस्म का होता है। यह इस्पात बनाने की फैक्ट्रियों में प्रयुक्त किया जा सकता है।

अप्रैल 1992 में ऑयल इण्डिया को बीकानेर के निकट बाधेवाला क्षेत्र में तेल के विशाल भण्डार मिले हैं। बाधेवाला से तुवरीवाला तक 13 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में हैवी क्रूड ऑयल के भण्डार का पता चला है, जो करीब 125 मीटर मोटी परत के रूप में है। इस क्षेत्र में करीब साढ़े तीन करोड़ टन तेल के भण्डार है। राज्य में तेल व गैस की खोज के सक्रिय प्रयास किए जा रहे है। पोलैण्ड की सुप्रसिद्ध कम्पनी-पोलिश ऑयल एण्ड गैस कम्पनी के सहयोग से एसार ऑयल द्वारा बीकानेर, गंगानगर व चूरू जिलों के 32 हजार वर्ग किलोमीटर में खोज कार्य शुरू करने की चर्चा रही है। शैल इन्टरनेशनल ने बाड़मेर-जालौर जिलों में अपना सर्वेक्षण का काम पूरा कर लिया है तथा वहाँ परीक्षण के तौर पर कुए खोदे जा रहे हैं।

नीचे विभिन्न खनिज पदार्थों के सम्बन्ध में संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत किया जाता है—

धात्विक खनिज (Metallic Minerals)[1]

(i) **ताँबा**—खेतड़ी की ताँबे की खानें सिंघाना से रघुनाथपुरा तक फैली हुई हैं। राज्य के अन्य भागों में भी ताँबे के भण्डारों का सर्वेक्षण किया गया है। दरीबा के समीप का क्षेत्र भी उल्लेखनीय है। झुंझुनूं जिले के खेतड़ी-सिंघाना क्षेत्र में ताँबा निकाला जाता है। दूसरा स्रोत खो-दरीबा (अलवर जिला) है। भीलवाड़ा जिले में भी ताँबे का क्षेत्र है। सिरोही जिले में आबू रोड के समीप सोना, जस्ता व ताँबा पाए गए हैं। उदयपुर जिले के अंजली क्षेत्र में ताँबे के भण्डार मिले हैं।

खेतड़ी के समीप ताँबे के बड़े भण्डार हैं। इनका उपयोग करके कच्चा ताँबा गलाने की क्षमता का विकास किया जा रहा है। इससे उपोत्पत्ति (by-product) के रूप में सल्फ्यूरिक एसिड प्राप्त होगी और थोड़ी चाँदी व सोने की मात्रा भी उपलब्ध होगी। सल्फ्यूरिक एसिड प्राप्त होने से सुपर फॉस्फेट का उत्पादन भी चालू किया जा सकेगा।

राजस्थान में कच्चे ताँबे (copper-ore) का उत्पादन 1999-2000 मे 8.5 लाख टन तथा 2001-02 में 8.9 लाख टन अनुमानित है।

(ii) **सीसा व जस्ता**—उदयपुर से 40 किलोमीटर की दूरी पर जावर स्थान पर सीसे व जस्ते की खानें स्थित हैं। सीसे के डले गलाने के लिए बिहार भेज दिए जाते हैं, और जस्ते के डले जो पहले जापान भेज दिए जाते थे, अब देबारी (उदयपुर के पास) में जस्ता गलाने के संयंत्र में प्रयुक्त किए जाते हैं। इस कार्य के संचालन के लिए 'दी हिन्दुस्तान जिंक लिमिटेड', देबारी की स्थापना एक महत्त्वपूर्ण कदम माना जा सकता है। जस्ता गलाने की उपोत्पत्ति के रूप में सुपर फॉस्फेट एसिड व कैडमियम प्राप्त होते हैं। सल्फ्यूरिक एसिड का उपयोग सुपर फॉस्फेट के उत्पादन में किया जा सकता है। जैसा कि ऊपर कहा गया है,

---

1 Some Facts About Rajasthan, 2003, part 1, pp 26-27 आगे भी 2001-02 के अधिकांश आँकड़े इसी स्रोत से लिए गए हैं।

भीलवाड़ा जिले के रामपुरा-आगुचा क्षेत्र में जस्ते व सीसे के विपुल भण्डार मिले हैं जिससे चंदेरिया में एक जिंक स्मेल्टर संयंत्र लगाया जा रहा है।

2001-02 में राजस्थान में सीसे के डलों का उत्पादन 44 हजार टन तथा जस्ते के डलों का 398 हजार टन हुआ था। 2001-02 में चाँदी का उत्पादन 45406 किलोग्राम हुआ जो पिछले साल से अधिक था।

(iii) कच्चा लोहा—राजस्थान में थोड़ी मात्रा में कच्चा लोहा जयपुर, उदयपुर, झुंझुनूं, सीकर व अलवर जिलों में पाया जाता है। मुख्य भण्डार जयपुर व उदयपुर जिलों में स्थित हैं। 2000-01 में कच्चे लोहे का उत्पादन 43.6 हजार टन हुआ था जिसके घट कर 2001-02 में 29.5 हजार टन होने का अनुमान है।

***(iv)* मैंगनीज**—बांसवाड़ा जिले में घटिया किस्म की मैंगनीज पाई जाती है। राज्य में मैंगनीज का उत्पादन बहुत कम होता है।

***(v)* टंगस्टन (Tungsten)**—नागौर जिले में डेगाना के पास दो पहाड़ियों में टंगस्टन के भण्डार पाए जाते हैं। यहाँ पर टंगस्टन की किस्म भी काफी अच्छी बताई जाती है। टंगस्टन का उपयोग एलोय तथा स्पेशल स्टील के निर्माण में होता है। यह विद्युत के साज-सामान में भी प्रयुक्त किया जाता है। टंगस्टन रक्षा-विभाग को सप्लाई किया जाता है। भारत में टंगस्टन के उत्पादन का बड़ा अंश राजस्थान से ही प्राप्त होता है। मैंगनीज व टंगस्टन के उत्पादन के आँकड़े उपलब्ध नहीं हैं।

औद्योगिक व अधात्विक खनिज (Industrial and Non-Metallic Minerals)—इन खनिजों का वर्णन निम्न समूहों में विभाजित करके किया जा सकता है—

(अ) पृथक् करने के काम आने वाले खनिज, ताकि ताप का प्रभाव न पड़े (Insulants), ताप सहन करने में मदद देने वाले खनिज (refractories) **व चीनी मिट्टी के बर्तन बनाने के काम आने वाले खनिज** (ceramic minerals)। इस समूह में निम्न खनिज शामिल होते हैं—

(i) एसबेस्टस—एसबेस्टस का उपयोग एसबेस्टस सीमेंट, छत की चद्दरें, पाइप आदि बनाने में किया जाता है। 2001-02 में 14.8 हजार टन एसबेस्टस का उत्पादन होने का अनुमान है जबकि 2000-01 में 17.9 हजार टन का हुआ था। भारत का 89% एसबेस्टस राजस्थान में उत्पादित किया जाता है। इसके भण्डार उदयपुर, डूँगरपुर, भीलवाड़ा व अजमेर जिलों में हैं।

(ii) फैल्सपार (Felspar)—यह काँच, मिट्टी के बर्तन आदि उद्योगों में प्रयुक्त होता है। देश में फैल्सपार की कुल उत्पत्ति का लगभग 70% राजस्थान में उत्पन्न होता है। यह मुख्यतया अजमेर में पाया जाता है और थोड़ी मात्रा में सिरोही, उदयपुर, अलवर और पाली जिले में भी पाया जाता है। 2001-02 में इसका उत्पादन 155 हजार टन हुआ जबकि 2000-01 में 141 हजार टन हुआ था।

***(iii)* सिलिका रेत (Silica Sand)**—यह काँच उद्योग में कच्चे माल के रूप में काम में आती है। यह अधिकांशतः जयपुर और बूँदी जिलों में निकाली जाती है।

2001-02 में इसका उत्पादन 1.99 लाख टन हुआ जबकि 2000-01 में 2.07 लाख टन हुआ था ।

(iv) **क्वार्ट्ज**—यह चीनी मिट्टी के उद्योग व इलेक्ट्रोनिक उद्योगों में प्रयुक्त होता है । यह अलवर, सीकर, सिरोही व अलवर जिलों में मिलता है ।

(v) **मैग्नेसाइट**—यह रिफ्रेक्टरी ईंटों के निर्माण में व्यापक रूप से प्रयुक्त किया जाता है । यह थोड़ी मात्रा में काँच के उद्योगों में भी काम आता है । यह अजमेर जिले में भी पाया जाता है ।

(vi) **वरमीक्यूलाइट**—अजमेर जिले में एक खान से थोड़ी मात्रा में वरमीक्यूलाइट निकाला जाता है । इस पर अग्नि का प्रभाव नहीं होता । यह ताप व ध्वनि का अच्छा इन्स्यूलेटर होता है ।

(vii) **वोलस्टोनाइट**—यह एक नवीन खनिज है जिसके उपयोग बढ़ते जा रहे हैं । यह सिरैमिक उद्योग में काफी काम आता है । यह पेन्ट व कागज उद्योग में भी प्रयुक्त होता है । यह सिरोही जिले में मिलता है । **भारत का शत-प्रतिशत वोलस्टोनाइट का उत्पादन केवल राजस्थान में होता है ।**

(viii) **चायना क्ले व व्हाइट क्ले**—यह बर्तन बनाने व विद्युत इन्स्यूलेटर के रूप में काम आता है । यह सवाई माधोपुर, सीकर, अलवर, नागौर व जालौर जिलों में पाया जाता है ।

(ix) **फायरे क्ले**—यह फायर क्ले ईंट, ब्लॉक्स आदि बनाने के काम आती है । यह बीकानेर जिले में पाई जाती है ।

(x) **डोलोमाइट**—यह अजमेर, अलवर, जयपुर, जोधपुर, सीकर व उदयपुर जिलों से निकाला जाता है । यह चिप्स व पाउडर तथा चूना बनाने में भी काम आता है ।

(आ) इलेक्ट्रोनिक व आणविक खनिज—इस समूह में अभ्रक व बेरिल आते हैं ।

(i) **अभ्रक** (mica)—राजस्थान में अभ्रक की खानें भीलवाड़ा, टोंक, अजमेर, जयपुर व उदयपुर जिलों में पाई जाती हैं । अभ्रक विद्युत साज-सामग्री में प्रयुक्त होता है । यह रबर के टायरों के निर्माण में भी प्रयुक्त होता है ।

बिहार व आन्ध्र प्रदेश के बाद अभ्रक के उत्पादन में राजस्थान का तृतीय स्थान आता है । भारत का लगभग एक-चौथाई अभ्रक राजस्थान में उत्पन्न होता है । 2000-01 में अभ्रक का उत्पादन 169.7 टन तथा 2001-02 में 329.6 टन आंका गया है जो पिछले वर्ष की तुलना में लगभग दुगुना था ।

(ii) **आणविक खनिज**—आणविक खनिजों में भी राजस्थान की स्थिति उत्साह-वर्द्धक मानी जाती है । अजमेर व राजगढ़ की खानों में लिथियम की कुछ मात्रा मिली है । उदयपुर के समीप यूरेनियम की खोज की जा रही है । राजस्थान बेरिल का भी प्रमुख उत्पादक है । यह सूक्ष्म मात्रा में अभ्रक की खानों में मिलता है । यह अजमेर व जयपुर संभाग में पाया जाता है ।

(इ) कीमती पत्थर व अब्रेसिव्ज (Gem Stones and Abrasives)—

***(i)* पन्ना (Emerald)**—अजमेर व उदयपुर जिलों में कुछ स्थानों पर एमरल्ड मिलता है । यह हरे रंग का कीमती पत्थर होता है । पिछले वर्षों में इसका उत्पादन काफी घट गया है ।

***(ii)* गारनेट**—यह अजमेर, भीलवाड़ा व टोंक जिलों में पाया जाता है । इसकी दो किस्में होती हैं : एक तो अब्रेसिव और दूसरी जैम । राजस्थान में इसकी दोनों किस्में पाई जाती हैं । जैम गारनेट टोंक जिले में ज्यादा मिलता है ।

(ई) उर्वरक खनिज—इस समूह में जिप्सम, रॉक-फॉस्फेट व पाइराइट्स आते हैं ।

***(i)* जिप्सम**—राजस्थान मे जिप्सम के काफी भण्डार भरे पड़े हैं । देश में कुल उत्पादन का 93% राजस्थान के हिस्से मे आया है । जिप्सम की खानें बीकानेर, श्रीगंगानगर, चूरू, जैसलमेर, नागौर, बाड़मेर, जालौर व पाली जिलें मे पाई जाती हैं । पहले यह भवन-प्लास्टर मे ज्यादा प्रयुक्त होती थी, अब यह उर्वरक उद्योग का प्रमुख कच्चा माल मानी जाती है । यह सीमेंट उद्योग में भी प्रयुक्त होती है । देश मे गन्धक की कमी होने से जिप्सम आधारित सल्फ्यूरिक एसिड का निर्माण बहुत उपयोगी माना जा सकता है । 2000-01 में राजस्थान में 25 लाख टन जिप्सम का उत्पादन हुआ तथा 2001-02 के लिए लगभग 27.1 लाख टन का अनुमान लगाया गया है ।

***(ii)* रॉक-फॉस्फेट**—उदयपुर के समीप रॉक-फॉस्फेट के विशाल भण्डारों की खोज ने राजस्थान के खनिज-इतिहास मे एक नया अध्याय जोड़ दिया है । पहले यह जैसलमेर जिले मे बिरमेनिया स्थान पर ढूँढा गया था । **झामर-कोटड़ा के भण्डार बहुत प्रसिद्ध हो गए हैं** । अन्य छोटे-छोटे भण्डार भी पाए गए हैं । झामर-कोटड़ा क्षेत्र मे उत्पादन मार्च 1969 से प्रारम्भ हो गया था । रॉक-फॉस्फेट का उपयोग सुपर फॉस्फेट के उत्पादन में किया जा रहा है । 1969 मे राज्य मे लगभग 69 हजार टन रॉक-फॉस्फेट का उत्पादन एक महत्त्वपूर्ण घटना मानी गई है । इससे विदेशी विनिमय की काफी बचत हुई है । 2000-01 में रॉक-फॉस्फेट का उत्पादन 10.1 लाख टन हुआ था । 2001-02 के लिए उत्पादन का अनुमान 11.1 लाख टन है, जो पिछले वर्ष से थोड़ा ज्यादा है । रॉक-फॉस्फेट की बिक्री से राज्य सरकार को करोड़ों रुपये की आमदनी होती है । रॉक-फॉस्फेट के परिशोधन के लिए एक बड़ा संयंत्र लगाने की योजना है, जिसकी विस्तृत रिपोर्ट सोफरा माइन्स, फ्रांस द्वारा तैयार कराई गई है । झामर-कोटड़ा मे रॉक-फॉस्फेट के 68 करोड़ टन के भण्डार अनुमानित हैं ।

***(iii)* पाइराइट्स (Pyrites)**—सीकर जिले के सलादी-पुरा में पाइराइट्स की काफी मात्रा उपलब्ध हुई है । इससे गन्धक का अम्ल निकाला जा सकता है । गन्धक का अम्ल या तेजाब उर्वरक उद्योग के काम में आता है । उदयपुर के समीप रॉक-फॉस्फेट के भण्डारों व सलादीपुरा की पाइराइट्स का उपयोग करके राज्य में एक उर्वरक कॉम्पलैक्स या समूह स्थापित किया जा सकता है ।

(उ) रसायन उद्योग के खनिज—इस समूह में लाइम-स्टोन, फ्लोर्सपार व बेराइट्स आते हैं ।

(i) **लाइमस्टोन या चूना पत्थर—**सौभाग्य से राजस्थान को सीमेंट के उत्पादन के लिए लाइमस्टोन के विस्तृत भण्डार प्राप्त हैं । नौ सीमेन्ट के प्लाण्ट: लाखेरी, सवाई माधोपुर, चित्तौड़गढ़, दारौली (उदयपुर), निम्बाहेड़ा (चित्तौड़गढ़), मौडक (कोटा), बनास (सिरोही), ब्यावर व कोटा में चल रहे हैं । पिछले पाँच वर्षों में राज्य में सीमेट का उत्पादन काफी बढ़ा है । राज्य के विभिन्न भागों में लाइमस्टोन पाए जाने से सीमेन्ट के उद्योग का भविष्य उज्ज्वल हो गया है । जैसलमेर, उदयपुर, बाँसवाड़ा, चित्तौड़गढ़, भीलवाड़ा, सिरोही व पाली जिलों के विभिन्न क्षेत्रों में लाइमस्टोन की सकल मात्रा व श्रेणी निश्चित करने के लिए प्रोसपेक्टिंग का कार्य चल रहा है । जैसा कि प्रारम्भ में बताया जा चुका है जैसलमेर के सोनू क्षेत्र में स्टीलग्रेड लाइमस्टोन का 50 करोड़ टन का भण्डार मिला है । लाइमस्टोन का उत्पादन लाइमस्टोन (आयामी) (डाइमेन्सनल) व बर्निंग दो श्रेणियों के तहत अलग से दिखाया जाता है । 2001-02 में आयामी लाइमस्टोन का उत्पादन 21 6 लाख टन तथा बर्निंग किस्म के लाइमस्टोन का उत्पादन लगभग 29.1 लाख टन आंका गया है ।

(ii) **फ्लोर्सपार (Flourspar)—**डूँगरपुर जिले मे मांडो-की-पाल नामक स्थान पर फ्लोर्सपार के भण्डार पाए जाते हैं । इसका विकास पहले के वर्षों में राजस्थान औद्योगिक व खनिज विकास निगम के द्वारा किया गया था । यह फ्लोर्सपार स्टील मैटेलर्जी में व हाइड्रोक्लोरिक एसिड बनाने मे काम आता है । राज्य में 2000-01 में 4.8 हजार टन फ्लोराइट क्रूड का उत्पादन हुआ था । 2001-02 में 3.5 हजार टन का उत्पादन होने का अनुमान है ।

(iii) **बेराइट्स** (Barytes)—यह तेल के कुओं की ड्रिलिंग के दौरान घोल या कीचड़ बनाने के काम आता है । यह पेंट, लिथोपेन उद्योग तथा बेरियम रसायनों में प्रयुक्त होता है । यह कागज व रबर उद्योग में भी काम आता है । यह अलवर जिले में तथा नाथद्वारा के समीप मिलता है । 2000-2001 में इसका उत्पादन 6 हजार टन हुआ था । 2001-02 में इसके घटकर 3.8 हजार टन रहने का अनुमान है ।

(ऊ) छोटे खनिज (Minor Minerals)—

(i) **बेन्टोनाइट—**यह एक प्रकार की मिट्टी होती है । यह ड्रिलिंग मड तैयार करने व सौन्दर्य प्रसाधनों (cosmetics) के निर्माण में प्रयुक्त होता है । यह बाड़मेर व सवाई माधोपुर जिलों में पाया जाता है । देश का 15% बेन्टोनाइट राजस्थान में मिलता है ।

(ii) **मुलतानी मिट्टी** (Fuller's Earth)—बीकानेर व जोधपुर जिले में इसके भण्डार पाए जाते हैं । यह चिकनाहट को सोख लेती है और तेल से रंगीन पदार्थ हटाने में प्रयुक्त होती है ।

(iii) **संगमरमर, ग्रेनाइट व अन्य भवन-निर्माण के पत्थर—**मकराना का संगमरमर ताजमहल के निर्माण में प्रयुक्त किया गया था । नागौर, पाली, सिरोही, बूँदी, उदयपुर व जयपुर जिलों में संगमरमर की प्राप्ति के अन्य स्थान भी मिले हैं । 2000-01 में संगमरमर (ब्लॉक्स) का उत्पादन 40.6 लाख टन हुआ जिसके 2001-02 में 49.3 लाख टन होने

का अनुमान है। राजस्थान के 18 जिलों में ग्रेनाइट पत्थर मिलता है। अतः राज्य ग्रेनाइट की दृष्टि से काफी धनी है। जालौर जिले में गुलाबी रंग का ग्रेनाइट पाया जाता है। ग्रेनाइट के भण्डारों में प्रमुख क्षेत्र इस प्रकार हैं—झुंझुनूं, सीकर, जयपुर, अजमेर, दौसा, टोंक, सवाई माधोपुर, बाड़मेर, पाली, भीलवाड़ा, जालौर, सिरोही, अलवर व राजसमंद। राज्य के विभिन्न भागों में सैण्डस्टोन व लाइमस्टोन के भण्डार पाए जाते हैं।

(ए) विविध–

(i) घीया पत्थर, टेल्क व पाइरोपिलाइट—राजस्थान इनका प्रमुख उत्पादक क्षेत्र माना गया है। ये खनिज टैल्कम पाउडर, खिलौने आदि बनाने में प्रमुख माने जाते हैं। ये उदयपुर, जयपुर, सवाई माधोपुर, भीलवाड़ा व डूँगरपुर जिलों में पाए जाते हैं।

(ii) कैल्साइट—यह रसायन के रूप में कैल्सियम कार्बोनेट होता है। यह कागज, वस्त्र, चीनी मिट्टी उद्योग, पेन्ट इत्यादि में काम आता है। यह सीकर जिले में प्राप्त होता है। लेकिन कुछ मात्रा सिरोही, पाली, जयपुर व उदयपुर जिलों में भी पाई जाती है।

(iii) गेरू या ओकर्स (Ochres) (लाल और पीले)—ये खनिज पिगमेंट होते हैं। ये घुलते नहीं हैं और रंग बनाने, सीमेंट, रबड़, प्लास्टिक आदि उद्योगों में काम आते हैं। यह चित्तौड़गढ़ जिले में कई स्थानों पर मिलता है। यह कुछ अन्य जिलों में भी मिलता है।

(iv) नमक—राजस्थान में सांभर झील में काफी नमक उत्पन्न किया जाता है। डीडवाना, पचपदरा व लूनकरणसर भी नमक के उत्पादन के मुख्य क्षेत्र माने गए हैं।

खनिज ईंधन (Mineral Fuels)

(1) लिग्नाइट कोयला—राजस्थान में लिग्नाइट कोयला (भूरा कोयला) काफी मात्रा में पाया जाता है। इससे थर्मल बिजली पैदा की जा सकती है। राज्य में इसके भण्डार पलाना (बीकानेर) में 2.5 करोड़ टन, कपूरड़ी (बाड़मेर) में 6 करोड़ टन तथा मेड़ता रोड (नागौर) में 2.5 करोड़ टन पाए गए हैं।

लिग्नाइट आधारित ताप विद्युत गृह के लिए 2×250 मेगावाट बरसिंगसर परियोजना के लिए मैसर्स हिन्दुस्तान विद्युत कॉरपोरेशन के साथ 16 दिसम्बर, 1996 को विद्युत खरीदने का अनुबन्ध किया गया था।

बरसिंगसर में लिग्नाइट-आधारित ताप बिजलीघर का निर्माण कार्य तेजी से पूरा किया जाना चाहिए ताकि राज्य में विद्युत का अभाव दूर किया जा सके। बरसिंगसर में 6 करोड़ 20 लाख टन लिग्नाइट होने का अनुमान है। यहाँ 35 साल तक लिग्नाइट का खनन किया जा सकता है। अतः इस परियोजना पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए। इसके लिए आवश्यक जल की पूर्ति इन्दिरा गाँधी नहर से की जाएगी।

(2) पेट्रोलियम एवं प्राकृतिक गैस—राजस्थान में गैस के भण्डार जैसलमेर में घोटारू नामक स्थान पर 1983 में पाए गए थे। इनमें मिथेन व हीलियम गैस की मात्रा अधिक पाई जाती है। जुलाई 1990 में डांडेवाला (जैसलमेर क्षेत्र) में प्राकृतिक गैस के विशाल भण्डार मिले हैं, जिनसे एक बिजलीघर व कुछ गैस-आधारित उद्योग चलाए जा सकते हैं।

1984 में जैसलमेर मे 'सादेवाला' में खनिज तेल के भण्डार मिले हैं। अप्रैल 1992 में बीकानेर के निकट 'बाघेवाला' मे हैवी क्रूड ऑयल के भण्डार का पता चला है। फरवरी 2003 के प्रारम्भ में स्कॉटलैण्ड की फर्म कैरन एनर्जी (Cairn Energy) ने बाड़मेर जिले के गुढामलानी व कोसलू क्षेत्रों में उच्च कोटी के कच्चे तेल तथा ग्राम नगर से कच्चे तेल व गैस का पता लगाया है जिससे राज्य के विकास को बढावा मिलेगा। श्री गंगानगर जिले में भी कच्चे तेल का पता लगाया गया है। इनसे राज्य का राजस्व भी बढेगा।

राजस्थान में खनिज-आधारित उद्योग (Mineral-Based Industries in Rajasthan)—उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट होता है कि राजस्थान में खनिज पदार्थ विपुल मात्रा में पाए जाते हैं और राज्य अनेक खनिजों के उत्पादन में अग्रणी माना गया है। अत: राज्य में खनिज-आधारित उद्योग स्थापित करने के लिए सुदृढ़ नींव विद्यमान है। योजनाकाल में राज्य में कई प्रकार के खनिज-आधारित उद्योग स्थापित हुए हैं। इनमें से सबसे ज्यादा महत्त्वपूर्ण उद्योग इस प्रकार हैं : जस्ता स्मेल्टर, सुपर जस्ता स्मेल्टर, ताँबा स्मेल्टर, रॉक फॉस्फेट बेनिफियेशन संयंत्र, पोर्टलैण्ड सीमेंट के बड़े संयंत्र, सफेद सीमेंट के संयंत्र, मार्बल प्रोसेसिंग संयंत्र, ग्रेनाइट प्रोसेसिंग संयंत्र, सिरेमिक व इन्स्युलेटर इकाइयाँ तथा कोटा स्टोन प्रोसेसिंग संयंत्र, आदि। इसके अलावा अनेक इकाइयाँ पत्थर/खनिज तोड़ने, पीसने व पाउडर बनाने, कटाई चिराई व पॉलिशिंग का काम करती हैं। इसके अलावा राज्य में चूने के भट्टे, हाइड्रेटेड चूने के संयंत्र, ईंट-भट्टे, प्लास्टर ऑफ पेरिस की इकाइयाँ भी पाई जाती हैं। कुल मिलाकर राज्य में इस समय लगभग 5 हजार खनिज-आधारित लघु इकाइयाँ पंजीकृत हैं।

कुछ खनिज-आधारित संयंत्रों का उल्लेख नीचे किया जाता है—

(1) जस्ता एवं गलाई संयंत्र (Zinc Smelter Plant)—उदयपुर के समीप देबारी नामक स्थान पर 18 हजार टन की प्रारम्भिक क्षमता से एक जिंक स्मेल्टर प्लांट चालू किया गया था। ऊँची किस्म का जस्ता तैयार करने के साथ-साथ वह उपोत्पत्ति के रूप में केडमियम व गन्धक का तेजाब (सल्फ्यूरिक एसिड) भी तैयार करता है। सल्फ्यूरिक एसिड से सुपर फॉस्फेट तैयार किया जा सकता है।

जैसा कि पहले बताया जा चुका है, भीलवाड़ा जिले में रामपुरा-आगुचा में जिंक व सीसे के पर्याप्त भण्डार पाए जाने से भारत सरकार ने राजस्थान में जिंक स्मेल्टर संयंत्र लगाने की स्वीकृति दे दी है जिसे हिन्दुस्तान जिंक लि कार्यान्वित कर रहा है। यह चंदेरिया स्थान पर लगाया जा रहा है। इसमें खनिज-दोहन व स्मेल्टर संयंत्र पर लगभग 617 करोड़ रुपये की लागत का अनुमान है। इससे 4 2 करोड़ टन खनिज निकाला जाएगा, 2 हजार व्यक्तियों को प्रत्यक्ष रोजगार व 10 हजार व्यक्तियों को परोक्ष रोजगार उपलब्ध हो सकेगा।

(2) राज्य में सीमेंट के नौ बड़े कारखाने स्थापित किए जा चुके हैं। भविष्य में और नए कारखाने भी स्थापित किए जा रहे हैं। पिछले वर्षों में राज्य में काफी संख्या में सीमेन्ट के छोटे संयंत्र (mini-cement plants) भी लगाए गए हैं। राज्य में लाइमस्टोन की उपलब्धि के कारण सीमेंट उद्योग का भविष्य उज्ज्वल है। नई खनिज नीति लागू होने के पश्चात् 29 क्षेत्रों में 10 लाख टन प्रतिवर्ष या इससे अधिक क्षमता के सीमेंट प्लांट लगाने के लिए

खनन पट्टा या पूर्वेक्षण अनुज्ञा-पत्र स्वीकृत किए गए हैं, अथवा भारत सरकार को स्वीकृति के लिए भेजे गए हैं। पूर्व वर्षों की सरकारी सूचना के अनुसार इनमें से 13 प्रस्ताव खनन-पट्टों के लिए हैं जिन पर बड़े सीमेंट प्लान्ट स्थापित करने की पूरी सम्भावनाएँ हैं, तथा शेष 16 पूर्वेक्षण अनुज्ञा-पत्रों के लिए हैं जिन पर भी सीमेंट प्लांट स्थापित होने की आशा है।

जैसलमेर के खिंया-खींवसर क्षेत्र में तीन बड़े सीमेंट के कारखाने स्थापित करने के लिए स्थान अधिसूचित किए गए हैं। इस प्रकार जैसलमेर में अब पूर्वघोषित क्षेत्रों के साथ 5 बड़े सीमेंट के प्लांट स्थापित करने की योजना है।

(3) खेतड़ी का ताँबा गलाने का संयंत्र (Copper Smelter Plant)—खेतड़ी में ताँबा गलाने के संयंत्र की क्षमता 30 हजार टन है, जो भविष्य में बढ़ाई जा सकती है। यहाँ पर सल्फ्यूरिक एसिड प्राप्त होता है, जिसका उपयोग करने के लिए अन्य उद्योग स्थापित किए जा सकते हैं।

(4) जैसा कि पहले कहा जा चुका है, उदयपुर के समीप झामर-कोटड़ा क्षेत्र में प्राप्त रॉक-फॉस्फेट के भण्डारों का उपयोग करके सुपर-फॉस्फेट का उत्पादन किया जा सकता है। सीकर (सलादीपुरा) में पाइराइट्स के भण्डारों का उपयोग करके सल्फ्यूरिक एसिड उत्पन्न की जा सकती है जिसका उपयोग उर्वरक उद्योग में किया जा सकता है।

इस प्रकार राज्य में कई तरह से सुपर-फॉस्फेट के उत्पादन में वृद्धि होने से विकास को नया मोड़ मिल सकता है।

(5) कई वर्ष पूर्व राजस्थान औद्योगिक व खनिज विकास निगम ने डूँगरपुर में मांडो की पाल नामक स्थान पर फ्लोर्सपार बेनिफिशियेशन प्लांट प्रारम्भ किया था, जिससे रसायन उद्योगों को बढ़ावा मिला है।

(6) जालौर में एक ग्रेनाइट पॉलिशिंग फैक्ट्री राजस्थान औद्योगिक व खनिज विकास निगम के अधिकार में ली गई थी जिसका विकास किया गया है। राज्य में पिछले वर्षों में ग्रेनाइट प्रोसेसिंग के संयंत्र आबू रोड व अन्य स्थानों में भी लगाए गए हैं।

(8) **अन्य**—इसके अलावा हाईटेक प्रिसीजन फैक्ट्री, जोधपुर में ग्लास व ग्लास प्रोडक्ट्स, पर्फेक्ट पोटरी कम्पनी लिमिटेड, भरतपुर में फायर ब्रिक्स, स्टोनवेयर व पाइप, भूपाल माइनिंग वर्क्स, भीलवाड़ा में ब्रिक्स, माइका इन्सुलेटिंग ब्रिक्स तथा जयपुर ग्लास एण्ड पॉटरीज वर्क्स, जयपुर में क्राकरी बनाई जाती है।

एक उर्वरक का कारखाना गढ़ेपान (कोटा के पास) स्थापित किया जा रहा है।

बीकानेर में बरसिंगसर में लिग्नाइट के भण्डारों का वैज्ञानिक ढंग से विदोहन किया जाएगा जिससे पर्यावरण की कोई समस्या उत्पन्न नहीं होगी।

सूरतगढ़ के पास एक गैस का भण्डार मिला है जिसमें से वर्तमान में 5 मिलियन क्यूसेक फीट का ही उपयोग हो पा रहा है। यहाँ एक पेट्रोलियम कॉम्पलैक्स बनाने का प्रस्ताव है। इसके लिए योजना आयोग को एक मसौदा पेश किया गया है, जिसे उसने सिद्धान्ततः स्वीकार कर लिया है।

राज्य की अगस्त 1994 में घोषित नई खनिज नीति तथा जून 1994 व जून 1998 में घोषित नई औद्योगिक नीति में खनिज-आधारित उद्योगों के विकास के लिए कई प्रकार के कदम उठाए गए हैं, जिनका उल्लेख आगे किया जाएगा। उपरोक्त विवरण से स्पष्ट हो जाता है कि **राजस्थान में तांबा, सीसा, जस्ता एवं सम्बद्ध धातुओं का उत्पादन बढ़ाया जा सकता है।** भारत में इनका नितान्त अभाव है। अतः राज्य को इनके विकास पर विशेष रूप से ध्यान देना चाहिए और केन्द्र को इनमें अपना सक्रिय सहयोग देना चाहिए। विभिन्न स्रोतों से सुपर-फॉस्फेट का उत्पादन बढ़ने से उर्वरकों की सप्लाई भी बढ़ सकती है जिससे भविष्य में कृषिगत उत्पादन में वृद्धि होगी। लाइमस्टोन का उत्पादन बढ़ाकर सीमेंट व स्टील उद्योग को काफी लाभ पहुँचाया जा सकता है।

राज्य में निम्न खनिज-आधारित उद्योगों को प्रोत्साहन देने का प्रयास किया जा रहा है[1]—

	खनिज पदार्थ	उद्योग
1	ताँबा	वायर ड्राइंग, फाउण्ड्री
2	सीसा	सफेद सीसा व क्रोम सीसा, स्टोरेज बैटरीज
3	जस्ता	जस्ता ऑक्साइड, जस्ता सल्फेट
4	सीमेन्ट ग्रेड लाइमस्टोन	सीमेंट
5	रसायन ग्रेड लाइमस्टोन	कैल्सियम अमोनियम नाइट्रेट, कैल्सियम कार्बाइट आदि रसायन
6	रॉक फॉस्फेट	सिंगल सुपर फॉस्फेट व अन्य प्रकार के फॉस्फेट, फॉस्फोरिक एसिड, आदि।
7	चीनी मिट्टी (चाइना क्ले)	सिरेमिक
8	बाल क्ले	सिरेमिक
9	फायर क्ले	रिफ्रेक्टरीज
10	कैल्साइट	ग्लेज्ड टाइल्स
11	अभ्रक	वैट ग्राउण्ड, अभ्रक का पाउडर, आदि।
12	क्वार्ट्ज व सिलिका सैण्ड	बोतल, काँच के लैम्प व फ्लोरोसेंट ट्यूबें।
13	बेन्टोनाइट व फुलर्स अर्थ	पल्वराइजिंग इकाइयाँ, आदि।
14	सोपस्टोन	कीटनाशी दवाइयाँ, प्रसाधन की सामग्री, आदि।
15	जिप्सम	प्लास्टर ऑफ पेरिस, जिप्सम बोर्ड।
16	फ्लोर्सपार	हाइड्रोफ्लोरिक एसिड, आदि।
17	गारनेट	एब्रेसिव्स, कटाई व पॉलिशिंग
18	लिग्नाइट	तरल लिग्नाइट, ब्रिक्वेटिंग।
19	पोटाश	म्यूरेट ऑफ पोटाश
20	ग्रेनाइट तथा मार्बल	प्रोसेसिंग इकाइयाँ स्लेब व टाइलें बनाना।

1 Mineral Policy 1994 (Govt. of Raj.) p 17

राज्य में खनिज नीति का विकास—परिवहन व शक्ति के साधनों के विकास से राजस्थान में खनिज-आधारित उद्योगों के विकास की सम्भावनाएँ बढ़ रही हैं । **राज्य में खनिज विकास के लिए 1978 में एक खनिज नीति घोषित की गई थी** । इसमें खनिज पदार्थों की खोज हेतु सर्वेक्षण एवं अन्वेषण पर जोर दिया गया था । इसमें सड़कों के मास्टर प्लान बनाने, बिजली उपलब्ध कराने व खनन कार्य के लिए बैंकों, सहकारी संस्थाओं तथा राजस्थान वित्त निगम आदि के माध्यम से ऋण उपलब्ध कराने पर जोर दिया गया था । इसमें कहा गया था कि छोटे पट्टेधारियों को ऋण दिलाया जाएगा तथा **अप्रधान खनिजों—जैसे लाइमस्टोन, संगमरमर आदि के पट्टे अनुसूचित जाति व अनुसूचित जनजाति के व्यक्तियों को भी प्राथमिकता के आधार पर दिए जाएँगे ।**

राज्य में खनिजों के विकास के लिए नवम्बर 1979 में राजस्थान राज्य खनिज विकास निगम (RSMDC) स्थापित किया गया था । पहले यह कार्य राजस्थान औद्योगिक व खनन विकास निगम (RIMDC) के अन्तर्गत किया जाता था । रॉक-फॉस्फेट के खनन के लिए राजस्थान राज्य खान व खनन लिमिटेड कार्यरत है । **एम.वी. माथुर समिति ने खनन-विकास के लिए निम्न सुझाव दिए थे**[1]—

(i) खनन को उद्योग घोषित किया जाना चाहिए ताकि इसको भी राजकोषीय लाभ व प्रेरणाएँ मिल सकें ।

(ii) खनन व भूगर्भ संचालक को सभी खनन लीजहोल्ड क्षेत्रों का बड़े पैमाने पर **भूगर्भीय नक्शा** बनवाना चाहिए ।

(iii) रामगंज, मोडक व झालावाड़ क्षेत्रों में बड़े पैमाने पर **लाइमस्टोन की टूट-फूट व व्यर्थ अंश पड़े हैं, जिनसे पोजलाना** (puzzalana) **सीमेंट बन सकती है,** बशर्ते कि इस पर उत्पादन-शुल्क घटाया जाए । इससे रोजगार बढ़ेगा तथा सरकार को आमदनी प्राप्त होगी ।

(iv) बिहार सरकार की भाँति **अभ्रक को राजकीय व केन्द्रीय बिक्री कर से मुक्त रखा जाना चाहिए ।**

(v) **खनन की वैज्ञानिक विधियों का प्रयोग बढ़ाया जाना चाहिए ।**

(vi) खनन विभाग को खानों के पट्टे देने तथा रायल्टी इकट्ठा करने के अलावा **खनिज पदार्थों के भण्डारण, श्रेणीकरण आदि के बारे में विस्तृत सूचना रखनी चाहिए,** एवं

(vii) **भवन-निर्माण सामग्री का उपयोग करने के लिए निर्माण-उद्योग को प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए ।** इसके लिए भूमि-रूपान्तरण, अवाप्ति नियमों व वित्त आदि की व्यवस्था बढ़ाकर निर्माण-उद्योग को आगे बढ़ाना चाहिए । इससे राज्य में इन्फ्रास्ट्रक्चर भी मजबूत होगा ।

ये सुझाव काफी व्यावहारिक व उपयोगी माने गए हैं ।

---

1 प्रो. एम.वी माथुर समिति (आठवीं योजना में औद्योगिक विकास की व्यूहरचना पर उच्चाधिकार प्राप्त समिति) की रिपोर्ट जून 1989, पृष्ठ 36-37

भारत सरकार ने 18 फरवरी, 1992 से कोयला, लिग्नाइट व तेल को छोड़कर खनिजों और लघु खनिजों की रॉयल्टी में वृद्धि करने की घोषणा की थी, जिससे राज्य सरकार की रॉयल्टी की आय में वृद्धि होने का मार्ग प्रशस्त हुआ है।

पुरानी दरों पर रॉयल्टी 116 करोड़ रु. से बढ़कर नई दरों पर 331 करोड़ रु. होने का अनुमान है। डोलोमाइट, खनिज सोने, खान के ऊपर हीरे की बिक्री, बॉक्साइट, कैल्साइट, जिप्सम आदि पर रॉयल्टी में वृद्धि की गई है, जिससे राज्य सरकार की रॉयल्टी की आय बढ़ेगी। भविष्य में भी इसमें अपेक्षाकृत कम अवधि में संशोधन किया जाना चाहिए।

सितम्बर 1992 में पर्यावरण अधिनियम में केन्द्र द्वारा संशोधन की अधिसूचना जारी करने से राज्य में खनन-विकास पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ने की आशंका उत्पन्न हो गई थी क्योंकि इससे पहाड़ी व वन क्षेत्रों में खनन-कार्य के रुक जाने की स्थिति बन गई थी। इस सम्बन्ध में पर्यावरण-संरक्षण और विकास की आवश्य- कताओं के बीच उचित संतुलन स्थापित किया जाना चाहिए और इस सम्बन्ध में स्वयं राज्य सरकारों को निर्णय लेने का अधिकार दिया जाना चाहिए ताकि विकास का कार्य निर्बाध गति से आगे बढ़ सके। 1996-97 में उच्चतम न्यायालय के एक आदेश के अनुसार कई वन-क्षेत्रों में खनन-कार्य पर रोक लगा दिए जाने से राजस्थान में भी कई खानों पर काम बंद कर दिया गया था जिससे काफी खनन-श्रमिक बेरोजगार हो गए थे तथा खनन-उत्पादन व खनिज-आधारित उद्योगों को भारी धक्का पहुँचा और राज्य की खनन-रॉयल्टी से होने वाली आमदनी भी घटी। इस प्रकार के अचानक निर्णय से भारी आर्थिक क्षति होती है। राज्य सरकार के प्रयत्नों से कुछ बन्द खानों पर पुनः खनन-कार्य चालू किया गया, लेकिन भविष्य में वन-क्षेत्र में खनन-कार्य के सम्बन्ध में कोई स्पष्ट नीति निर्धारित की जानी चाहिए। पर्यावरण, खनन-क्रिया, रोजगार व विकास में परस्पर आवश्यक तालमेल बैठाया जाना चाहिए।

इसके अलावा केन्द्रीय सरकार खान ■ खनिज-पदार्थ नियमन व विकास अधिनियम 1957 में संशोधन करके लघु खनिजों (minor minerals) की परिभाषा को बदलना चाहती है ताकि मार्बल, ग्रेनाइट, सेण्डस्टोन व अन्य आयामी (dimensional) पत्थर लघु खनिजों की श्रेणी में न रहें। इससे इन खनिजों पर राज्य सरकारों का अधिकार नहीं रहेगा, जैसा कि बड़े खनिजों के सम्बन्ध में आज भी नहीं है। अतः इस प्रकार के संशोधन से राज्य सरकार पर विपरीत प्रभाव पड़ेगा और वह इन लघु खनिजों का उपयोग अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति व अन्य पिछड़ी जाति के लोगों को भी नहीं दे पाएगी, जिनका जीवन इन पर निर्भर करता है। अतः राज्य में खनिज-विकास को उचित प्रोत्साहन देने के लिए वन-क्षेत्रों में खनन-क्रिया पर पूर्ण प्रतिबन्ध नहीं लगाया जाना चाहिए। राज्य सरकार को इस सम्बन्ध में निर्णय करने का अधिकार दिया जाना चाहिए और मार्बल, ग्रेनाइट आदि को लघु खनिजों की श्रेणी में रखकर इनके विकास व उपयोग का अधिकार राज्य सरकार को ही मिलना चाहिए।

ग्रेनाइट खनन के सम्बन्ध में नई नीति, सितम्बर 1991—राज्य सरकार ने 25 सितम्बर, 1991 को एक अधिसूचना जारी करके ग्रेनाइट खनन के सम्बन्ध में नई नीति निर्धारित की थी जो निम्न प्रकार थी—

(1) खनिज ग्रेनाइट के खनन पट्टे ऐसे उद्यमियों को स्वीकृत किए जाएँगे जो खनन कार्य मशीनों से करेंगे और ग्रेनाइट के प्रोसेसिंग संयंत्र स्थापित करेंगे। ऐसे उद्यमकर्ताओं को प्राथमिकता दी जाएगी जो निर्यात के लिए प्रोसेसिंग संयंत्र लगाएँगे।

(2) खनन पट्टे ऐसे आवेदकों के पक्ष में स्वीकृत किए जाएँगे जिन्होंने पहले से प्रोसेसिंग यूनिट लगा रखी है, अथवा जो दो वर्ष की अवधि में प्रोसेसिंग यूनिट लगा लेंगे।

(3) खनन पट्टों के अन्तर्गत क्षेत्र की साइज 100 मीटर × 100 मीटर, अर्थात् 10,000 वर्गमीटर रखी गई है।

(4) उक्त माप के दो से अधिक प्लाट नियमानुसार स्वीकृत न करने की नीति अपनाई गई है।

(5) विशेष परिस्थितियों में दो से अधिक प्लाट स्वीकृत किए जा सकेंगे, बशर्ते कि आवेदक ने अन्य आयातित चिराई को मशीन एवं पालिशिंग मशीन स्थापित कर रखी है, अथवा उसकी तैयार हो गई है। ऐसी स्थिति में 5 प्लाट या 50,000 वर्गमीटर का क्षेत्र खनन पट्टे पर दिया जा सकेगा।

5 प्लाट या 500 मीटर लम्बाई (स्ट्राइक लैन्थ) वाले फेस का पट्टा दिया जा सकेगा। जून 1992 में यह सीमा 200 मीटर थी।

एक ही क्षेत्र के एक से अधिक आवेदन-पत्र होने पर लॉटरी से निपटारा किया जाएगा।

शुरू में 'लेटर ऑफ कमिटमेंट' दिया जाएगा और खनन-पट्टा संयंत्र स्थापित होने पर ही दिया जाएगा।

जून 1992 में इन नियमों को अधिक उदार बनाया गया जिसके अनुसार 20 प्लाट तक खनन-पट्टे स्वीकृत हो सकते हैं।

पुनः अक्टूबर 1994 में नई मार्बल नीति तथा जनवरी 1995 में नई ग्रेनाइट नीति घोषित की गई। नई नीति में प्लाट का आकार 1 हैक्टेयर से बढ़ाकर 2.25 हैक्टेयर किया गया तथा इन क्षेत्रों में विकास के लिए निजी क्षेत्र को अधिक प्रोत्साहन दिया गया।

खनिज नीति, अगस्त, 1994

राजस्थान सरकार ने काफी विचार-विमर्श के बाद अगस्त 1994 में नई खनिज नीति घोषित की। इस नीति के उद्देश्य नीचे दिए जाते हैं—

(1) आधुनिक तकनीक अपनाते हुए तीव्र गति से नये खनिज भण्डारों की खोज करना;

(2) खानों का उपयुक्त ढंग से यंत्रीकरण (mechanisa-tion) करके सुव्यवस्थित एवं वैज्ञानिक विधि से खनन-कार्य करना,
(3) राज्य में खनिज-आधारित-उद्योगों की स्थापना करना,
(4) खनिजों का निर्यात बढ़ाना,
(5) नियमों एवं प्रक्रियाओं का सरलीकरण करना ताकि खनिज पदार्थों का उत्पादन बढ़ सके,
(6) खनन एवं खनिज आधारित उद्योगों की आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु मानवीय संसाधनों का विकास करना, तथा
(7) खनन क्षेत्र में रोजगार के अवसरों में वृद्धि करना ताकि अधिक लोगों को काम पर लगाया जा सके।

पूर्व में, वर्ष 1977 में राज्य सरकार द्वारा प्रथम बार खनिज नीति की घोषणा की गई थी। तब से अब तक नये खनिज भण्डारों की जानकारी, राष्ट्रीय खनिज नीति एवं प्रचलित नियमों में व्यापक संशोधन तथा आधारभूत ढाँचे की उपलब्धता के साथ, अनेक उल्लेखनीय परिवर्तन हुए हैं। साथ ही प्रतिस्पर्धा तथा अन्तर्राष्ट्रीय दृष्टिकोण पर आधारित खुले बाजार की अर्थव्यवस्था की ओर बढ़ने के फलस्वरूप भी नई खनिज नीति की घोषणा आवश्यक हो गई थी। उपरोक्त उद्देश्यों की प्राप्ति के उपायों का नीति में विस्तृत रूप से समावेश किया गया है।

खनिज पदार्थों की खोज (Mineral Exploration)—खनिज पदार्थों की खोज हेतु सुदूर, आदिवासी तथा मरु क्षेत्रों को प्राथमिकता देते हुए आधुनिक तकनीक अपनाने तथा प्रोसपेक्टिंग में कार्यरत विभिन्न संस्थाओं में परस्पर सामंजस्य स्थापित करने पर बल दिया गया, एवं सर्वेक्षण कार्य हेतु द्विस्तरीय नीति निर्धारित की गई। एक उन खनिजों के लिए जो निर्यात योग्य हैं एवं जिन पर आधारित उद्योग अथवा प्रोसेसिंग इकाइयाँ शीघ्रता से लगाई जा सकती हैं, व दूसरे—ऐसे खनिजों के लिए जिनके खोज व खनन प्रारम्भ करने में तुलनात्मक रूप से अधिक समय लगता है, जैसे सोना, बेस या आधार मेटल्स, हीरा व अन्य बहुमूल्य रत्न, पोटाश आदि। दूसरी श्रेणी के खनिजों के लिए विदेशी निवेशकों (Foreign Investors) को आकर्षित करने के उद्देश्य से केन्द्र सरकार को 25 वर्ग किमी. से अधिक आकार के क्षेत्रों के भूगर्भीय सर्वेक्षण परमिट्स स्वीकृत करने की सिफारिश करने का राज्य सरकार ने निर्णय लिया।

खनन पट्टे स्वीकृत करने की नई नीति—राज्य में विद्युत ऊर्जा की कमी को देखते हुए बीकानेर जिले के पलाना, गुढ़ा, बरसिंगसर एवं बिथनोक तथा बाड़मेर जिले के कपूरड़ी व जालीपा क्षेत्रों के लिग्नाइट भण्डारों को ताप-बिजली के उत्पादन हेतु आरक्षित रखा गया है। बाड़मेर जिले के गिराल एवं नागौर जिले के कसनाऊ-इग्यार स्थित लिग्नाइट भण्डारों को औद्योगिक एवं घरेलू ईंधन के रूप में उपयोग के लिए आरक्षित रखा गया है। आशा है इससे लिग्नाइट आधारित ताप-विद्युत के उत्पादन की परियोजनाओं में पूँजी-निवेश बढ़ेगा।

जैसलमेर जिले के सोनू गाँव के समीप उपलब्ध इस्पात श्रेणी के लाइमस्टोन का खनन कार्य सार्वजनिक क्षेत्र में रखा गया, परन्तु सीमेन्ट श्रेणी के लाइमस्टोन के लिए राज्य की नीति पट्टाधारी द्वारा स्थापित सीमेन्ट संयंत्र में ही इसके उपयोग के लिए देने की रखी गई।

अब तक जिप्सम सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों के लिए ही आरक्षित रहा है। भविष्य में इसके खनन पट्टे निजी क्षेत्र में दिए जाने के लिए उपयुक्त नीति बनाने की बात कही गई। बेस मेटल्स एवं वोलस्टोनाइट को भी निजी उद्यमियों के लिए खोल दिया गया।

ईंट भट्टों में उपयोग में ली गई मिट्टी के लिए खनन पट्टों के स्थान पर कम से कम एक वर्ष तथा अधिकतम पाँच वर्ष की अवधि के लाइसेंस देने का निर्णय लिया गया। एवं लाइसेंस प्राप्त व्यक्ति को रायल्टी का भुगतान निर्धारित सूत्र के आधार पर करने की नीति अपनाई गई।

सुव्यवस्थित एवं वैज्ञानिक खनन

(1) **संगमरमर व ग्रेनाइट के खनन पट्टों के लिए वर्तमान में निर्धारित क्षेत्रों का आकार एक हैक्टेयर से बढ़ाकर 2.25 हैक्टेयर किया गया।** अन्य खनिजों के लिए भी निर्धारित न्यूनतम आकार की समीक्षा की जाकर आवश्यकतानुसार पुनर्निर्धारण करने की बात स्वीकार की गई ताकि लाभकारी खनन हेतु बड़ी बैंचें बनाई जा सकें।

(2) ग्रेनाइट के समान ही संगमरमर के पट्टे विभाग द्वारा नियत किए गए भूखण्डों पर देने का निर्णय लिया गया एवं आवेदन पत्र के साथ आवेदक को परियोजना का एक प्रारूप भी प्रस्तुत करना होगा। आवंटन में प्राथमिकता हेतु खानों के यंत्रीकरण एवं प्रोसेसिंग इकाइयों की स्थापना तथा निर्यात हेतु वांछित पूँजी निवेश की वित्तीय क्षमता को ध्यान में रखने की बात स्वीकार की गई।

(3) कोटा स्टोन एवं स्लेट स्टोन के नये पट्टे उन्हीं उद्यमियों को देने का निर्णय लिया गया जो आवश्यक मशीनरी लगा कर खनिज की अविभाज्य परतों का ब्लॉक्स के रूप में खनन करने को तैयार होंगे।

(4) खनन पट्टों के नवीनीकरण के समय यह देखने का निश्चय किया गया कि खान का विकास सुचारू रूप से किया गया है अथवा नहीं।

(5) अप्रधान या छोटे खनिजों के छोटे पट्टे जो एक दूसरे से सटे हुए हों, वे एक एकीकृत पट्टे के रूप में सम्मिलित किए जा सकेंगे, बशर्ते कि एकीकृत पट्टों का कुल क्षेत्रफल 5 हैक्टेयर से अधिक न हो।

(6) पट्टाधारकों को अवधि-ऋण (Term Loan) की सुविधा प्रदान करने के उद्देश्य से खनन पट्टों को वित्तीय संस्थाओं के पास बंधक रखने की अनुमति देने की घोषणा की गई।

(7) जिन खानों में खनन कार्य नहीं हो रहा है, उनकी जानकारी करने एवं यह प्रयास करने कि खनन पट्टे बिना खनन कार्य के व्यर्थ नहीं पड़े रहें, इस सम्बन्ध में पूरा ध्यान दिया जाएगा।

(8) विभाग में खनिजों की खोज तथा दोहन एवं खनिज-आधारित-उद्योगों के विकास हेतु एक पृथक् प्रकोष्ठ की स्थापना की जाएगी जो अन्य कार्यों के साथ खनन के तरीकों; खनिज के अपव्यय में कमी एवं खनिजों के वेस्ट अंश को उपयोगी बनाने के उपायों तथा छोटी खानों के लिए उपयोगी खनन-मशीनरी व उपकरणों के विकास जैसे विषयों का अध्ययन करेगा।

(9) खनिजों की खोज, खनन एवं खनिज-आधारित उद्योगों की स्थापना के लिए पाँच करोड़ रुपये से अधिक राशि का निवेश करने वाले निवेशकों को 'सिंगल खिड़की सेवा' (Single Window Service) व 'पथ-प्रदर्शन-सेवाएँ', प्रदान की जाएँगी।

खनिज आधारित उद्योग

(1) नई खनन-नीति में यह व्यवस्था की गई कि जो उद्यमी खनिज आधारित उद्योग स्थापित करेंगे उन्हें खनन पट्टे स्वीकृत करने में प्राथमिकता दी जाएगी।

(2) खानों से निकले कोटा स्टोन वेस्ट को यदि औद्योगिक इकाइयों में कच्चे पदार्थ के रूप में काम में लिया गया तो उस पर रायल्टी नहीं ली जाएगी।

(3) सिरेमिक एवं ग्लास उद्योग की उन इकाइयों के लिए जिनमें पूँजी निवेश 5 करोड़ रुपये से 25 करोड़ रुपये के बीच होता है, बिक्री-कर प्रोत्साहन/ आस्थगन स्कीम, 1989 के अन्तर्गत लाभ की अधिकतम अवधि 7 वर्ष से बढ़ा कर 9 वर्ष की गई, तथा जिन इकाइयों का पूँजी-निवेश 25 करोड़ रुपयों से 100 करोड़ रुपयों के बीच होता है, उनके लिए यह अवधि 9 वर्ष से बढ़ाकर 11 वर्ष कर दी गई। करदेयता की छूट भी 75% से बढ़ाकर 100% की गई। जून 1998 को नई बिक्री कर प्रोत्साहन/आस्थगन स्कीम में और संशोधन किए गए।

खनिज पदार्थों के निर्यात को प्रोत्साहन देने के लिए उपाय
(Export Promotion Measures)

(1) राज्य में समय-समय पर मेलों, प्रदर्शनियों एवं सेमीनारों का आयोजन करने पर बल दिया गया तथा देश व विदेश में आयोजित मेलों आदि में निर्यातकों एवं सरकारी कार्यकर्त्ताओं के भाग लेने की व्यवस्था की गई।

(2) निर्यातोन्मुख उद्योग लगाने वाले व्यक्तियों को खनन पट्टा आवंटन करने में प्राथमिकता देने का निर्णय लिया गया।

(3) विभागीय प्रयोगशाला उदयपुर एवं भारतीय खान ब्यूरो, परिष्करण (Beneficiation) प्रयोगशाला, अजमेर को परिष्करण एवं रासायनिक विश्लेषण हेतु और सुदृढ़ बनाने का प्रयास करने की बात स्वीकार की गई।

आधारभूत सुविधाएँ (Infrastructural facilities)—खानों को पक्की सड़कों से जोड़ने के लिए "अपना गाँव-अपना काम" तथा "जवाहर रोजगार योजना" के अन्तर्गत भी सड़कों का यथासम्भव निर्माण कराने पर बल दिया गया। कुछ सड़कों का निर्माण राजस्थान

राज्य पुल निर्माण निगम द्वारा कराने की बात स्वीकार की गई। परन्तु व्यय की गई राशि निगम द्वारा पथकर (टोल टैक्स) के रूप में वसूल करने की नीति अपनाई गई। जो सड़कें खानों के स्वामियों द्वारा प्रस्तावित होंगी, उन पर 50% व्यय राज्य सरकार द्वारा वहन करने की घोषणा की गई।

यह कहा गया कि पट्टाधारकों द्वारा खान श्रमिकों के लिए स्कूल व अस्पताल जैसी सुविधाओं के निर्माण पर किए जाने वाले व्यय का 50% राज्य सरकार स्वयं वहन करेगी।

जिन क्षेत्रों में खानों का सामूहिक आवंटन किया जाएगा वहाँ आधारभूत सुविधाएँ प्रदान करने की जिम्मेदारी राजस्थान राज्य खनिज विकास निगम को सौंपी जाएगी।

यह निर्णय लिया गया कि क्षतिपूर्ति के लिए किए जाने वाले वनारोपण हेतु प्रत्येक जिले में न्यूनतम 100 हैक्टेयर भूमि "भूमि-बैंक" के रूप में खान विभाग को आवंटित की जाएगी, जिस पर प्रति हैक्टेयर में कम से कम 400 पौधे पट्टाधारियों द्वारा लगाए जाएँगे।

राजस्थान लघु खनिज रियायत नियमों में संशोधन—सुव्यवस्थित एवं वैज्ञानिक खनन, यन्त्रीकरण, अवैध खनन पर नियंत्रण व कानूनी विवादों में कमी लाने के उद्देश्य से नियमों में निम्न महत्त्वपूर्ण संशोधन किए गए—

(1) खनन पट्टों की अवधि 10 वर्ष के स्थान पर 20 वर्ष तथा खदान-लाइसेंस (Quarry licence) की अवधि 1 वर्ष के स्थान पर पाँच वर्ष कर दी गई। खनन पट्टों का नवीकरण भी 20 वर्ष के लिए कर दिया गया।

(2) खनन पट्टों के लिए न्यूनतम निर्धारित क्षेत्र को 0 25 हैक्टेयर से बढ़ाकर एक हैक्टेयर कर दिया गया।

(3) यह कहा गया कि वार्षिक स्थिर लगान या किराये (Dead Rent) का पुन-निर्धारण, अब खनिज उत्पादन की मात्रा के आधार पर नहीं होगा। नये सूत्र के अनुसार संशोधित स्थिर किराया पूर्व स्थिर किराये का 1 4 गुणा होगा। परन्तु यह नियमों की द्वितीय अनुसूची में दी गई दरों के अनुसार आकलित राशि के 5 गुणा से अधिक नहीं होगा।

(4) नई नीति में कहा गया कि खनन पट्टा क्षेत्रों का आंशिक परित्याग (Surrender) स्वीकार किया जाएगा तथा वार्षिक स्थिर किराये की दर छोड़े गए क्षेत्र के अनुपात में कम की जाएगी।

(5) राज्य सरकार द्वारा घोषित प्रक्रिया के अनुसार खान धारक रायल्टी का स्वतः निर्धारण कर सकेंगे।

(6) खनन पट्टों की स्वीकृति, नवीनीकरण एवं अन्तरण के लिए प्राप्त आवेदन पत्रों के निर्धारित समय के पश्चात् स्वतः अस्वीकृत होने के प्रावधान को हटा दिया गया।

(7) यह निर्णय लिया गया कि जो क्षेत्र विभाग द्वारा आवंटन हेतु घोषित किए जाएँगे उनमें कतिपय खनिजों के लिए 'पहले आओ, पहले पाओ' (first come first served) के सिद्धान्त पर किए जा रहे आवंटन के स्थान पर अब आवेदन प्राप्ति हेतु घोषित प्रथम तिथि से 30 दिन के अन्दर प्राप्त सभी आवेदन पत्रों पर सर्वाधिक उपयुक्त आवेदन के चयन हेतु एक

साथ विचार किया जाएगा। आशा की गई कि इससे अधिक योग्य व अधिक समर्थ आवेदक के चुनाव में मदद मिलेगी।

(8) खनन नीति में यह घोषणा की गई कि जो खानें लम्बे समय तक बन्द रहेंगी, उन्हें निरस्त कर दिया जाएगा।

(9) खानधारकों से स्थिर किराये से अधिक रायल्टी की वसूली हेतु ठेके दिए जा सकेंगे।

(10) दस लाख वार्षिक से अधिक रायल्टी राशि के ठेकों के लिए प्रतिभूति राशि 2.50 लाख रुपया, अथवा बोली राशि की 12.5 प्रतिशत, जो भी अधिक हो, नियत की गई। ठेका राशि का मासिक किश्तों में भुगतान करने व जमा प्रतिभूति राशि को इस शर्त पर कि ठेकेदार द्वारा कोई चूक नहीं की गई है, ठेके की मासिक किश्त में समायोजित करने सम्बन्धी प्रावधान जोड़े गए।

(11) अवैध खनन (Unauthorised Mining) पर नियंत्रण की दृष्टि से नियमों में अधिक कठोर प्रावधान किए गए।

प्रक्रियाओं का सरलीकरण—प्रक्रिया व व्यवस्था को सरल व प्रभावी बनाने की दृष्टि से अनेक निर्णय लिए गए, जिनमें से कुछ इस प्रकार हैं—

(1) विभाग के वरिष्ठ भू वैज्ञानिक (senior geologist) को खोज कार्य का निरीक्षण करने के उद्देश्य से प्रॉस्पेक्टिंग लाइसेंस के स्वीकृति आदेशों की प्रति दी जाएगी तथा इस कार्य की समाप्ति पर प्राप्त रिपोर्ट भी सत्यापन हेतु उन्हें अविलम्ब भेज दी जाएगी।

(2) खनन पट्टों की स्वीकृति अथवा नवीनीकरण हेतु प्राप्त आवेदन पत्रों को प्राप्त होने के समय ही चैक किया जाएगा एवं यदि कोई कमी पाई गई तो उसे प्राप्ति-रसीद के साथ ही दी जाने वाली चैक लिस्ट में अंकित कर दिया जाएगा।

(3) यदि चरागाह भूमि का क्षेत्रफल खनन-पट्टे के लिए आवेदित भूमि के क्षेत्रफल के 5% से कम होता है तो आवेदन के समय राजस्व-विभाग के अनापत्ति प्रमाण पत्र (NOC) की जरूरत नहीं होगी। परन्तु यह शपथ-पत्र (affidavit) देना होगा कि चरागाह क्षेत्र में खनन कार्य तभी किया जाएगा जब इस हेतु राजस्व विभाग अथवा अन्य सक्षम अधिकारी से अनुमति प्राप्त कर ली जाएगी।

जिला कलेक्टर्स को 4 हैक्टेयर क्षेत्र तक की चरागाह भूमि के लिए अनापत्ति पत्र (NOC) देने का अधिकार दिया गया।

(4) खनन पट्टे की स्वीकृति, नवीनीकरण और अन्तरण हेतु प्राप्त आवेदन-पत्रों का काम निपटाने के लिए विभिन्न स्तरों पर समय सीमा निर्धारित की गई। यदि कोई अधिकारी, जिन्हें उक्त आवेदन पत्रों के निपटाने की शक्तियाँ राज्य सरकार द्वारा प्रदत्त की गई हैं, दी गई समय सीमा में किसी आवेदन पत्र का निपटान नहीं करेंगे, तो ये शक्तियाँ उस आवेदन पत्र हेतु समाप्त मानी जाएँगी व आवेदन पत्र उच्चतर अधिकारी द्वारा निपटाया जाएगा।

(5) खनन पट्टों के अन्तरण हेतु राजस्व अथवा वन विभाग का अनापत्ति प्रमाण-पत्र प्राप्त करना आवश्यक नहीं होगा तथा खनन पट्टों का अन्तरण वार्षिक स्थिर किराये की 20

प्रतिशत के बराबर राशि प्रीमियम के रूप में भुगतान करने पर निदेशक, खान, द्वारा स्वीकार किया जा सकेगा।

(6) जिला कलेक्टर्स, विभाग के खनन अभियन्ता/ सहायक खनन अभियन्ता से पत्र-प्राप्त होने के 30 दिनों में आवश्यक रूप से यह सूचना देंगे कि आवेदित क्षेत्र में खनन पट्टा स्वीकृत करने पर क्या उन्हें कोई आपत्ति है। सूचना प्राप्त नहीं होने पर जिलाधीश को मामले के निपटाने का अधिकार नहीं रहेगा एवं सम्बन्धित संभागीय आयुक्त (divisional commissioner) अगले 30 दिन की अवधि में अपना अन्तिम निर्णय सूचित करेंगे, अन्यथा यह मानते हुए कि, कोई आपत्ति नहीं है, खान विभाग द्वारा कार्यवाही की जाएगी।

(7) खनिज पदार्थ भेजने के लिए रवन्ना बुक्स सहायक खनन अभियन्ता/खनन अभियन्ता अथवा उनकी अनुपस्थिति में किसी अधिकृत व्यक्ति द्वारा ही जारी की जाएगी।

(8) बेहतर प्रशासन एवं खान सम्बन्धी दावों के शीघ्र निपटान के लिए राज्य को तीन क्षेत्रों में विभाजित कर इन क्षेत्रीय कार्यालयों को अतिरिक्त निदेशक (खान) के नियंत्रण में दिया जाएगा। वरिष्ठ खनन अभियन्ता, खनन अभियन्ताओं एवं सहायक खनन अभियंताओं द्वारा जारी आदेशों के विरुद्ध अपीलों की सुनवाई सम्बन्धित अतिरिक्त निदेशक करेंगे। इससे न केवल प्रशासन बेहतर होगा वरन् पट्टाधारियों को भी सुविधा होगी।

(9) खानों का निरीक्षण सहायक खनन अभियन्ता एवं उनसे ऊपर की श्रेणी के अधिकारी करेंगे।

(10) वन विभाग 60 दिन की अवधि में खनन अभियन्ता/सहायक खनन अभियन्ता को आवश्यक रूप से सूचित करेगा कि आवेदित क्षेत्र वन भूमि में पड़ता है अथवा नहीं। सूचना प्राप्त नहीं होने व राजस्व रिकार्ड के अनुसार क्षेत्र वन भूमि में नहीं होने पर खान विभाग द्वारा यह मान कर कार्यवाही कर ली जाएगी कि यह क्षेत्र वन भूमि से बाहर है।

खनन क्षेत्र में विशिष्ट श्रेणी के व्यक्तियों के लिए रोजगार के अवसर

(1) राजस्थान लघु खनिज रियायत नियम, 1986 में, अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति तथा समाज के अन्य कमजोर वर्ग के व्यक्तियों को कुछ खनिजों के लिए खान आवंटन में प्राथमिकता दिए जाने का प्रावधान रखा गया है। मार्बल तथा सजावटी पत्थरों के भी कुछ क्षेत्रों का आरक्षण ऐसे व्यक्तियों के लिए करने पर बल दिया गया।

(2) नई खनिज नीति को लागू करने पर राज्य के खनिज क्षेत्र में रोजगार 3.25 लाख व्यक्तियों से बढ़कर अगले दशक में 10 लाख व्यक्ति हो सकेगा।

खान विभाग एवं खनिज उद्यमियों के मध्य वार्ता- लाप—खनिज मंत्री की अध्यक्षता में एक खनिज परामर्शदात्री परिषद् की स्थापना करने की घोषणा की गई जिसमें खानों एवं खनिज-आधारित उद्योगों के विभिन्न संगठनों के प्रतिनिधि होंगे। परिषद् की एक कार्यकारिणी होगी जिसके अध्यक्ष खान सचिव होंगे।

नीति का क्रियान्वयन—यह कहा गया कि मुख्य सचिव की अध्यक्षता में गठित समिति खनिज परामर्श-दात्री परिषद् के खनिज नीति में प्रस्तावित उपायों के अनुपालन की देखभाल करेगी।

सारांश—उपर्युक्त विवरण से यह स्पष्ट होता है कि राज्य की नई खनिज नीति में यंत्रीकृत व वैज्ञानिक खनन को आगे बढ़ाने तथा खनिज-आधारित उद्योगों का विकास करने के लिए कई प्रकार के उपाय किए गए हैं ताकि खनन-क्षेत्र में रोजगार व आमदनी बढ़ सके और राज्य खनिजों का निर्यात बढ़ाकर विदेशी मुद्रा अर्जित करने में अधिक मदद दे सके। इन उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए खनन सर्वेक्षण व खोज में विदेशी निवेशकों को अपेक्षा- कृत बड़े भू-क्षेत्रों में काम करने की इजाजत दी गई, खनन-प्लाटों का आकार भी बढ़ाया गया, पट्टे देने व उनके नवीकरण की अवधि 10 वर्ष से बढ़ाकर 20 वर्ष की गई, प्रोसेसिंग संयंत्र लगाने वाले उद्यमकर्ताओं तथा अन्य अधिक सक्षम उद्यमकर्ताओं को वरीयता दी गई तथा सड़कों के निर्माण व खनन-श्रमिकों के कल्याण पर भी अधिक ध्यान केन्द्रित किया गया। अनुसूचित जाति व अनुसूचित जनजाति तथा अन्य पिछड़े वर्ग के लोगों के लिए खदानों (Quarry) के लाइसेंसों का प्रावधान किया गया। रायल्टी संग्रह की व्यवस्था में सुधार किया गया तथा अवैध खनन के लिए उचित सजा का प्रावधान किया गया।

नई खनन-नीति से यह आशा लगायी गयी थी कि यह राज्य में खनन-विदोहन, विकास व संरक्षण को आवश्यक प्रोत्साहन देगी। लेकिन इस नीति की सफलता के लिए आवश्यक है कि इसके सभी प्रावधानों को व्यवहार में शीघ्र लागू किया जाए, आवश्यक इन्फ्रास्ट्रक्चर का विकास किया जाए, पर्यावरण-सम्बन्धी निर्णयों में राज्य की भागीदारी बढ़ाई जाए तथा विभिन्न खनिज-पदार्थों व खनिज-आधारित उद्योगों के लिए जिलेवार व क्षेत्रवार विकास के समयबद्ध व पारदर्शी लक्ष्य निर्धारित किए जाएँ, ताकि आगामी वर्षों में खनन-क्षेत्र में रोजगार व आमदनी बढ़ सके और उन क्षेत्रों के गरीब लोगों को भी खनन-विकास के लाभों में हिस्सा लेने का सुअवसर मिल सके। खनन-विकास के क्षेत्र में युद्धस्तर पर काम करने की आवश्यकता है।

आशा है नई सरकार खनिज-विकास की दिशा में भरसक प्रयास करेगी ताकि यह क्षेत्र राज्य में रोजगार व आय बढ़ाने में उचित योगदान दे सके और खनिज-पदार्थों के निर्यातों में वृद्धि करके विदेशी मुद्रा के अर्जन में भी मदद दे सके। सरकार को बाड़मेर क्षेत्र के कच्चे तेल व गैस के भण्डारों से अपना रोयल्टी, बिक्री-कर व मुनाफे में उचित हिस्सा लेकर राजस्व-प्राप्ति को बढ़ाने का पूरा प्रयास करना चाहिए। इसके लिए भारत सरकार व केयर्न एनर्जी कम्पनी से वार्तालाप किया जाना चाहिए।

प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. खेतड़ी जाना जाता है—

(अ) कोयला खान (ब) ताम्र परियोजना

(स) जिंक स्मेल्टर प्लांट (द) संगमरमर पत्थर (ब)

2. राजस्थान राज्य खनन विकास निगम (RSMDC) प्रमुखतया किन खनिजों के उत्पादन व विपणन को देखता है ?
(अ) लाइमस्टोन, रोकफोस्फेट व जिप्सम
(ब) कच्चा लोहा लाइम स्टोन व लिग्नाइट
(स) अभ्रक लाइमस्टोन व जिप्सम
(द) ताँबा, अभ्रक व कोयला (अ)

3. घटिया रोकफोस्फेट के रूप में उपर्युक्त निगम (RSMDC) ने कौन-सा उर्वरक विपणन-हेतु बाजार में प्रस्तुत किया है ?
उत्तर . उदयफोश

4. निम्नांकित को सुमेल (match) कीजिए—

	खनिज		प्रदेश
(A)	जिप्सम	I	झामर कोटड़ा
(B)	तांबा	II	रामपुरा-आगूंचा
(C)	फॉस्फेट रॉक	III	खो-दरीबा
(D)	सीसा एवं जस्ता	IV	जामसर

	A	B	C	D
(अ)	III	II	IV	I
(ब)	II	III	IV	I
(स)	IV	III	I	II
(द)	I	IV	II	III

(स)

[RAS, 1998]

5. राजस्थान में सोने की खोज का कार्य जिस जिले में प्रगति पर है वह है—
(अ) उदयपुर (ब) कोटा
(स) झालावाड़ (द) बांसवाड़ा (द)

[RAS, 1998]

6. राज्य की खनिज नीति, 1994 का उद्देश्य छाँटिए—
(अ) नये खनिजों की खोज
(ब) यंत्रीकृत खनन को बढ़ावा
(स) खनिज-आधारित उद्योगों की स्थापना
(द) खनिजों का निर्यात बढ़ाना
(इ) सभी (इ)

7. वे खनिज छाँटिए जिनमें राजस्थान का समस्त भारत के उत्पादन में पूर्ण एकाधिकार है—
(अ) वोलस्टोनाइट (ब) जस्ता
(स) फ्लोराइट (द) जिप्सम (अ)

8. राजस्थान में विस्तृत रूप से प्राप्य अज्वलित ईंधन खनिज है—

(अ) मैंगनीज (ब) क्रोमाइट

(स) अभ्रक (द) बॉक्साइट (स)

[RAS. 1996]

9. प्राकृतिक गैस आधारित ऊर्जा परियोजना निम्न में से किस स्थान पर है ?

(अ) धौलपुर (ब) जालिपा

(स) भिवाड़ी (द) रामगढ़ (द)

[RAS, 1995]

10. राजस्थान में तांबे के विशाल भण्डार स्थित हैं—

(अ) डीडवाना क्षेत्र में (ब) बीकानेर क्षेत्र में

(स) उदयपुर क्षेत्र में (द) खेतड़ी क्षेत्र में (द)

[RAS, 1993]

अन्य प्रश्न

1. राजस्थान के खनिज पदार्थों का वर्णन कीजिए और बताइए कि वे राज्य की औद्योगिक प्रगति में किस प्रकार महत्त्वपूर्ण हैं ?

2. किन्हीं दो पर टिप्पणियाँ लिखिए—
   (i) राजस्थान के खनिज संसाधन
   (ii) राजस्थान में खनिज-आधारित उद्योगों की वर्तमान स्थिति
   (iii) राजस्थान में खनिज ईंधन की स्थिति व सम्भावनाएँ
   (iv) नई खनिज नीति, अगस्त, 1994

3. राजस्थान के खनिज विकास की प्रमुख विशेषताएँ बताइए तथा नवीन खनिज नीति 1994 की व्याख्या कीजिए।

4. राजस्थान में 'खनिज-आधारित उद्योगों के विकास' पर एक निबन्ध लिखिए।

5. राज्य की नई खनिज नीति, 1994 के मुख्य उद्देश्य लिखिए।

6

राज्य घरेलू उत्पत्ति
(State Domestic Product)

जिस प्रकार राष्ट्रीय स्तर पर राष्ट्रीय आय का अनुमान लगाया जाता है, उसी प्रकार एक राज्य के स्तर पर राज्य घरेलू उत्पत्ति का अनुमान लगाया जाता है। इसमें एक राज्य में एक वर्ष में विभिन्न आर्थिक क्षेत्रों से उत्पन्न होने वाली आय का अनुमान लगाना होता है। जैसे राजस्थान की घरेलू उत्पत्ति में राज्य में कृषि, पशु-पालन, वन, मछली, खनन, विनिर्माण (Manufacturing), निर्माण-कार्य (Construction), विद्युत, परिवहन, व्यापार, बैंकिंग प्रशासन, आदि क्षेत्रों से उत्पन्न होने वाली वार्षिक आय का अनुमान लगाया जाता है। यह कार्य काफी जटिल होता है और इसमें कई प्रकार की कठिनाइयाँ आती हैं। विभिन्न क्षेत्रों के लिए उत्पत्ति की मात्रा व उसकी कीमतों तथा कच्चे माल की मात्रा व उसकी कीमतों, आदि का हिसाब लगाना सरल काम नहीं होता। फिर भी **राज्य- घरेलू-उत्पत्ति का अनुमान लगाना आवश्यक होता है ताकि राज्य की आर्थिक प्रगति का अनुमान लगाया जा सके तथा उसकी तुलना अन्य राज्यों व समस्त भारत की आर्थिक प्रगति से की जा सके।** राज्य घरेलू उत्पत्ति के अनुमान प्रचलित मूल्यों व स्थिर मूल्यों दोनों पर ज्ञात किए जाते हैं। इसी प्रकार राज्य की प्रति व्यक्ति आय की गणना भी दोनों प्रकार के मूल्यों पर की जाती है। लम्बी अवधि के लिए राज्य घरेलू उत्पत्ति के स्थिर मूल्यों पर प्राप्त अनुमानों के आधार पर राज्य की अर्थव्यवस्था में होने वाले संरचनात्मक परिवर्तनों (Structural Changes) का पता लगाया जाता है। इसके लिए अर्थव्यवस्था को मोटे तौर पर तीन श्रेणियों में विभक्त किया जाता है—

***(i)* प्राथमिक क्षेत्र** (Primary Sector)—इसमें कृषि, पशु-पालन, वन, मछली-पालन व खनन को शामिल किया जाता है। कुछ लेखक खनन को द्वितीय क्षेत्र में शामिल करते हैं।

(ii) **द्वितीयक क्षेत्र** (Secondary Sector)—इसमें विनिर्माण (Manufacturing) (पंजीकृत व अपंजीकृत), निर्माण-कार्य (Construction), विद्युत, गैस तथा जल-पूर्ति को शामिल किया जाता है।

(iii) **तृतीयक या सेवा क्षेत्र** (Tertiary Sector)—इसमें शेष आर्थिक क्रियाएँ शामिल की जाती हैं, जैसे परिवहन के साधन—रेल, सड़क आदि, संग्रहण (storage), संचार, व्यापार, होटल, बैंकिंग, बीमा, वास्तविक सम्पदा (real estate) सार्वजनिक प्रशासन तथा अन्य सेवाएँ।

स्थिर मूल्यों पर इन तीनों क्षेत्रों के लिए उपलब्ध लम्बी अवधि के आय के आँकड़ों के आधार पर अर्थव्यवस्था के ढाँचे में होने वाले परिवर्तनों का अनुमान लगाया जाता है। इससे प्राथमिक, द्वितीयक व तृतीयक क्षेत्रों की बदलती हुई स्थिति का पता लग जाता है, जैसे पहले की तुलना में राज्य की कुल आय में प्राथमिक क्षेत्र का अंश कितना घटा, तथा अन्य क्षेत्रों का कितना बढ़ा, आदि-आदि। यही नहीं बल्कि एक क्षेत्र के उप-क्षेत्रों (sub-sectors) की बदलती हुई स्थिति का भी पता लगाया जा सकता है, जैसे तृतीयक क्षेत्र में परिवहन, बैंकिंग व बीमा, सार्वजनिक प्रशासन, आदि की सापेक्ष स्थिति में होने वाले परिवर्तनों की जानकारी भी हो जाती है।

अतः राज्य के स्तर पर घरेलू उत्पत्ति या आय की गणना करना बहुत लाभकारी होता है। आज के आर्थिक नियोजन के युग में यह और भी अधिक जरूरी हो गया है क्योंकि इन्हीं आँकड़ों का उपयोग करके योजना में हुई आर्थिक प्रगति का मूल्यांकन किया जाता है, कुछ सीमा तक राज्यों की आमदनी के आधार पर योजना आयोग द्वारा राज्यों में योजना-सहायता का आवंटन किया जाता है और वित्त आयोग द्वारा केन्द्रीय करों व शुल्कों का राज्यों में आवंटन किया जाता है।

राजस्थान में घरेलू उत्पत्ति के अनुमान—राजस्थान में राज्य घरेलू उत्पत्ति (S D.P.) के अनुमान प्रचलित भावों व स्थिर भावों पर 1954-55 से प्रारम्भ किए गए थे। ये 1956 में जारी किए गए थे। यह सिरीज 1959-60 तक जारी रहा था। बाद में इसका आधार-वर्ष बदलकर 1960-61 कर दिया गया और सशोधित सिरीज (revised series) 1978-79 तक प्रकाशित किया गया। इसके बाद 1979 में एक संशोधित सिरीज (revised series) 1970-71 के नये आधार-वर्ष पर जारी किया गया। फरवरी 1988 में केन्द्रीय सांख्यिकीय संगठन (C.S O.) ने राज्य घरेलू उत्पत्ति का एक नया सिरीज (new series) 1980-81 के आधार-वर्ष पर जारी किया। हाल में आधार-वर्ष पुनः बदलकर 1993-94 किया गया है। 1980-81 के भावों पर राज्य की घरेलू उत्पत्ति के आँकड़े 1960-61 से 1998-99 तक की लम्बी अवधि के लिए राज्य के आर्थिक एवं सांख्यिकी निदेशालय (DES), जयपुर ने उपलब्ध किए हैं, जिससे तृतीय योजना व बाद की योजनाओं के लिए राज्य की घरेलू उत्पत्ति व प्रति व्यक्ति आय के परिवर्तनों का तुलनात्मक अध्ययन सम्भव हो सका है। जैसा कि ऊपर बतलाया गया है। अब राज्य की घरेलू उत्पत्ति का आधार-वर्ष 1993-94 कर दिया गया है। DES द्वारा प्रकाशित आर्थिक समीक्षा 2003-2004 में

प्रचलित भावों व 1993-94 के भावों पर वर्ष 2001-02 के लिए राज्य की आय के प्रारम्भिक अनुमान (Provisional estimates), 2002-03 के लिए त्वरित अनुमान (quick estimates) तथा 2003-04 के लिए अग्रिम अनुमान (advance estimates) प्रस्तुत किए गए हैं। इनमें बाद में नई सूचना के आधार पर आवश्यक संशोधन किया जाएगा। राज्य की सकल घरेलू उत्पत्ति (gross state domestic product) में से मूल्य-ह्रास (depreciation) घटाने से शुद्ध राज्य घरेलू उत्पत्ति (NSDP) ज्ञात हो जाती है, जिसमें जनसंख्या का भाग देने से प्रति व्यक्ति आय ज्ञात होती है।

स्मरण रहे कि 1993 94 के स्थिर मूल्यों पर प्रति व्यक्ति आय का अध्ययन करने से आय के अनुमानों में से दोनों प्रभाव दूर हो जाते हैं, पहला कीमत-वृद्धि या महँगाई का प्रभाव तथा दूसरा जनसंख्या की वृद्धि का प्रभाव। अतः लक्ष्य यह होना चाहिए कि प्रति व्यक्ति आय, (स्थिर मूल्यों पर) बढ़ सके। इसके लिए एक तरफ स्थिर भावों पर शुद्ध राज्य घरेलू उत्पत्ति बढ़ानी होगी और दूसरी तरफ जनसंख्या की वृद्धि पर भी नियंत्रण करना होगा।

अब हम राज्य की घरेलू उत्पत्ति के परिवर्तनों का अध्ययन करने से पूर्व संक्षेप में इसकी गणना की विधियों का परिचय देंगे ताकि यह अवधारणा ठीक से स्पष्ट हो सके।

राज्य घरेलू उत्पत्ति के माप की विधि—राष्ट्रीय आय की भाँति राज्य की घरेलू उत्पत्ति या आय का अनुमान लगाने के लिए भी प्रायः उत्पत्ति-विधि एवं आय-विधि (Product-method and income-method) का उपयोग किया जाता है। कहीं-कहीं व्यय-विधि (expenditure method) भी काम में ली जाती है, जैसे निर्माण-कार्य (construction) से होने वाली आय का अनुमान लगाने के लिए। इनका स्पष्टीकरण नीचे किया जाता है—

(1) उत्पत्ति-विधि (Product Method)—इसे जोड़े गए मूल्य या 'वर्धित-मूल्य' (value-added) **की विधि या 'इन्वेन्टरी-विधि' भी कहते हैं।** इसमें सर्वप्रथम उस आर्थिक क्षेत्र की अन्तिम उत्पत्ति का बाजार मूल्य निकाला जाता है। फिर उसमें से उत्पादन में लगाए गए साधनों का कुल मूल्य घटाया जाता है (जैसे कच्चे माल का मूल्य, ईंधन-पावर आदि पर किया गया व्यय)। बाद में मूल्य-ह्रास घटाने से शुद्ध आय प्राप्त होती है, जो उस क्षेत्र का राज्य की घरेलू उत्पत्ति में योगदान मानी जाती है।

राजस्थान में राज्य की घरेलू उत्पत्ति का अनुमान लगाने के लिए उत्पत्ति-विधि का उपयोग निम्न क्षेत्रों के लिए किया गया है—कृषि, पशु-पालन, वन, मछली, उद्योग, खनन व पत्थर निकालना, पंजीकृत विनिर्माण-कार्य (registered manufacturing) (फैक्ट्री आदि में) इसके लिए उत्पत्ति व इन्पुट की मात्राओं व इनके मूल्यों के आँकड़ों की आवश्यकता होती है।

(2) आय-विधि (Income Method)—यह दो रूपों में प्रयुक्त होती है—

(i) **प्रत्यक्ष रूप में** (In the Direct Form)—यह उन आर्थिक क्षेत्रों में प्रयुक्त होती है जिनमें कर्मचारियों के भुगतान, ब्याज, लगान, किराया, लाभ, मूल्य-ह्रास आदि के आँकड़े विभिन्न उपक्रमों के वार्षिक लेखों (annual accounts) में मिल जाते हैं। उनमें उत्पादन के

विभिन्न साधनों की आय को जोड़कर उन क्षेत्रों का राज्य की आय में योगदान ज्ञात किया जाता है।

यह विधि निम्न क्षेत्रों में प्रयुक्त होती है—विद्युत (जहाँ राजस्थान राज्य विद्युत मण्डल व राजस्थान आणविक पावर प्रोजेक्ट (RAPP) जैसे सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों के वार्षिक लेखों से आवश्यक जानकारी मिलती है), जल-पूर्ति, रेल, संगठित सड़क परिवहन, बैंकिंग, बीमा, सार्वजनिक प्रशासन, स्थावर सम्पदा (real estate), आदि। इन क्षेत्रों में वार्षिक लेखों से उपलब्ध सामग्री का उपयोग करके आय के अनुमान तैयार किए जाते हैं।

***(ii)* परोक्ष रूप में** *(In Indirect Form)*—*इस विधि में सर्वेक्षण के आधार पर आय* का पता लगाया जाता है। पहले उस क्षेत्र की श्रम-शक्ति का पता लगाते हैं, फिर सेम्पल-सर्वेक्षण के आधार पर प्रति व्यक्ति औसत आय ज्ञात की जाती है और तत्पश्चात् इन दोनों को गुणा करके उस क्षेत्र का राज्य की आय में योगदान निकाला जाता है।

यह विधि गैर-पंजीकृत विनिर्माण क्षेत्र (कुटीर व ग्रामीण उद्योग आदि) असंगठित सड़क परिवहन, होटल, घरेलू सेवाओं आदि क्षेत्रों की आय का अनुमान लगाने में प्रयुक्त की जाती है। इनमें लगे व्यक्तियों की संख्या को क्रमश: इनकी प्रति व्यक्ति औसत आय (जो सेम्पल सर्वेक्षण से जानी जाती है) से गुणा किया जाता है।

इस प्रकार आय-विधि प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष दो रूपों में प्रयुक्त की जाती है।

(3) व्यय-विधि (Expenditure Method)—जैसा कि पहले कहा जा चुका है **निर्माण-कार्यों में आमदनी का अनुमान व्यय-विधि से लगाया जाता है।** निर्माण कार्य पर लगे माल जैसे सीमेन्ट, इस्पात, ईंट, पत्थर, इमारती लकड़ी व अन्य सामान का मूल्य ज्ञात किया जाता है। इन पर व्यय की राशि को काम में लेने के कारण यह व्यय-विधि कहलाती है। श्रम-गहन कच्चे निर्माण कार्यों के लिए सेम्पल सर्वेक्षण का उपयोग करके व्यय-विधि के द्वारा उनका राज्य की आय में योगदान निकाला जाता है।

उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट होता है कि राज्य की घरेलू उत्पत्ति को ज्ञात करने के लिए उत्पत्ति-विधि, आय-विधि व व्यय-विधि का मिला-जुला प्रयोग किया जाता है, लेकिन अधिकांश उपयोग प्रथम दो विधियों का ही किया जाता है।

राज्य की घरेलू उत्पत्ति या राज्य की आय में परिवर्तन

***(i)* प्रचलित मूल्यों पर शुद्ध राज्य घरेलू उत्पत्ति (NSDP) व प्रति व्यक्ति आय**—जैसा कि पहले बताया जा चुका है, राज्य में शुद्ध घरेलू उत्पत्ति के अनुमान 1954-55 से प्रकाशित किए गए हैं। हम पहले प्रचलित मूल्यों पर राज्य की शुद्ध घरेलू उत्पत्ति व प्रति व्यक्ति आय की प्रवृत्ति का वर्णन करते हैं, क्योंकि 1980-81 के मूल्यों पर नया सिरीज 1960-61 से प्राप्त हो पाया है, जिससे प्रचलित मूल्यों व स्थिर मूल्यों पर एक साथ तुलना इस वर्ष के बाद की अवधि के लिए सम्भव हो सकी है। **अब 1993-94 के आधार पर राज्य की घरेलू उत्पत्ति का नया सिरीज चालू हो जाने से स्थिर मूल्यों पर राज्य की आय का अध्ययन करने के लिए** 1993-94 का आधार-वर्ष काम में लेना होगा।

NSDP व प्रति व्यक्ति आय प्रचलित मूल्यों पर
(at Current Prices)

वर्ष	शुद्ध घरेलू उत्पत्ति (करोड़ रुपयों में)	प्रति व्यक्ति आय (रुपयों में)
1954-55	400	233
1960-61	559	284
1970-71	1637	645
1980-81	4126	1222
1990-91	18281	4191
2000-01	70211	12570
2001-02 (P)	78761	13738
2002-03 (Q)	75048	12753
2003-04 (A)	89075	14748

स्रोत: *Net State Domestic Product (By Industrial origin at Factor Cost)* of Rajashthan (1960-61 to 2001-02), Economic Review 2003-04, p.4 (DES, Jaipur)

तालिका के परिणाम—वैसे समय-समय पर विधि-सम्बन्धी परिवर्तनों व आँकड़ों में सुधार होने से प्रचलित मूल्यो पर भी राज्य की शुद्ध घरेलू उत्पत्ति की प्रवृत्ति के विवेचन में आवश्यक सावधानी बरतनी होती है। फिर भी योजनाकाल में राज्य की शुद्ध घरेलू उत्पत्ति में काफी वृद्धि हुई है।

2002-03 में प्रचलित भावों पर राज्य की शुद्ध घरेलू उत्पत्ति 75048 करोड़ रुपये तथा प्रति व्यक्ति आय 12753 रुपए रही। 2002-2003 में राज्य की शुद्ध घरेलू उत्पत्ति पिछले वर्ष की तुलना में लगभग 4.7% घटी तथा प्रति व्यक्ति आय 7.2% घटी। 2003-2004 के अग्रिम अनुमानो के आधार पर चालू कीमतो पर शुद्ध राज्य घरेलू उत्पत्ति में 2002-2003 की तुलना में 18.7% तथा प्रति व्यक्ति आय में 15.6% की वृद्धि अनुमानित है।

(*i*) स्थिर मूल्यों पर राज्य की शुद्ध घरेलू उत्पत्ति व प्रति व्यक्ति आय के परिवर्तन—जैसा कि पहले कहा जा चुका है अब राज्य की शुद्ध घरेलू उत्पत्ति के आँकड़े 1993-94 के स्थिर मूल्यों पर उपलब्ध किए जाने लगे हैं। पहले का आधार वर्ष 1980-81 हुआ करता था। निम्न तालिका में *1960-61* से *2003-04* तक के शुद्ध घरेलू उत्पत्ति के आँकड़े 1993-94 के भावों पर प्रस्तुत किए गए हैं।

NSDP व प्रति व्यक्ति आय (1960-61 से 2003-04 तक के आँकड़े

(1993-94 के भावों पर)

वर्ष	शुद्ध घरेलू उत्पत्ति (करोड़ रुपयों में)	प्रति व्यक्ति आय (रुपयों में)
1960-61	7606	3865
1970-71	11528	4538
1980-81	12738	3772
1990-91	28857	6615
2000-01	45267	8104
2001-02 (P)	49137	8571
2002-03 (Q)	44769	7608
2003-04 (A)	51767	8571

[स्रोत : पूर्वोद्धत संदर्भ]

तालिका के निष्कर्ष—तालिका से यह पता चलता है कि स्थिर किमतों (1993-94) पर 1960-61 में शुद्ध घरेलू उत्पत्ति 7606 करोड़ रुपये से बढ़कर 2000-01 में 45267 करोड़ रुपये हो गई । 2001-02 मे राज्य की शुद्ध घरेलू उत्पत्ति पिछले वर्ष की तुलना में बढ़ी तथा 2002-03 में 8 9% घटी । प्रति व्यक्ति आय 2002-03 मे 11.2% घटी तथा 2003-04 मे शुद्ध घरेलू उत्पत्ति व प्रति व्यक्ति आय दोनो में क्रमश: 15 6% व 12 7% की वृद्धि हुई है ।

इस प्रकार 2002-03 के शीघ्र अनुमानों (quick estimates) के आधार पर राज्य की शुद्ध घरेलू उत्पत्ति 44769 करोड़ रु. व प्रति व्यक्ति आय 7608 रुपए अनुमानित है । लेकिन 2003-04 के अग्रिम अनुमानों के आधार पर इनमें काफी वृद्धि के अनुमान प्रस्तुत किये गये हैं ।

योजनाकाल में राजस्थान व भारत की आय में तुलनात्मक परिवर्तन (1980-81) के भावों पर)—चूँकि 1993-94 का सिरीज अभी तक सम्पूर्ण योजनाकाल के लिए उपलब्ध नहीं है, इसलिए तुलना के लिए फिलहाल 1980-81 के आधार वर्ष का ही उपयोग किया गया है ।

वार्षिक चक्रवृद्धि दर (%) (1980-81 के मूल्यों पर)[1]

अवधि	शुद्ध राज्य घरेलू उत्पत्ति (राजस्थान) (NSDP)	शुद्ध राष्ट्रीय उत्पत्ति (भारत) (NNP)	प्रति व्यक्ति आय	
			राजस्थान	भारत
तृतीय योजना (1961-66)	14	−47	−10	−68
वार्षिक योजनाएँ (1966-69)	−08	37	−30	15
चतुर्थ योजना (1969-74)	71	33	38	10
पंचम योजना (1974-79)	52	50	2.2	2.7
वार्षिक योजना (1979-80)	−145	−60	−169	−82
छठी योजना (1980-85)	59	55	30	3.2
सातवीं योजना (1985-90)	70	58	45	36
(1990-92)	39	25	17	04
आठवीं योजना (1992-97)	70	66	48	46
दीर्घकालीन (1960-90)	4.2	40	16	1.7
नवीं योजना (1997-2002)*	43**	56	2.3	3.7

तालिका से स्पष्ट होता है कि योजनाकाल मे राजस्थान मे विकास की वार्षिक दर सर्वाधिक सातवीं व आठवीं योजना मे लगभग 7% रही। तृतीय योजना मे यह मात्र 1.4% रही थी। 1961-62 से 1989-90 तक के 28 वर्षों मे राज्य में विकास

---

1. भारत के लिए Economic Survey 2003-2004, p.S-4 तथा राजस्थान के लिए Draft Tenth Five Year Plan 2002-07 Vol. I, p.1.6 तथा Economic Review 2003-2004, p.4 (GOR).

* 1993-94 के मूल्यों पर,

** गणना अध्याय के अंत में परिशिष्ट में। (नवीनतम आँकड़ों के आधार पर)।

की दर लगभग 4.2% रही । भारत में भी सर्वाधिक विकास की वार्षिक दर आठवीं योजना में 6.7% प्राप्त की गई तथा प्रति व्यक्ति विकास की दर 4.6% भी इसी योजना में प्राप्त हुई थी । 1961-90 की अवधि में भारत में विकास की औसत दर 4% रही, जो राजस्थान से मामूली कम थी । लेकिन भारत में जनसंख्या की वृद्धि दर राजस्थान से कम होने के कारण उसकी प्रति व्यक्ति आय की दीर्घकालीन वृद्धि दर 1.7% रही । तृतीय योजना में भारत में विकास की दर -4.7% रही जिससे प्रति व्यक्ति विकास की दर में 6.8% की गिरावट आई थी ।(1980-81 के मूल्यों पर) ।

प्रत्येक योजना में वार्षिक चक्रवृद्धि दर निकालने के लिए योजना के प्रत्येक वर्ष के लिए पिछले वर्ष को तुलना में प्रतिशत परिवर्तन निकाले जाते हैं । फिर पाँच वर्ष के प्रतिशत परिवर्तनों का ज्यामितीय औसत (Geometric mean) लिया जाता है । इसकी विधि अध्याय के अन्त में परिशिष्ट में समझाई गई है । उसमें राजस्थान की नवीं पंचवर्षीय योजना की अवधि के लिए शुद्ध राज्य घरेलू उत्पत्ति (NSDP) के आंकड़ों का 1993-94 के मूल्यों पर उपयोग किया गया है । आय की वार्षिक वृद्धि-दर चक्रवृद्धि ब्याज का सूत्र लगाकर भी ज्ञात की जाती है, जिसके लिए आधार वर्ष व अन्तिम वर्ष की आय के आँकड़ों का उपयोग किया जाता है ।

राज्य की शुद्ध घरेलू उत्पत्ति व प्रति व्यक्ति आय के योजनावार परिवर्तनों का अर्थ सावधानीपूर्वक लगाना होगा, क्योंकि किसी भी योजनावधि में औसत वार्षिक वृद्धि दर उस योजना में किसी एक वर्ष की असामान्य वृद्धि या असामान्य गिरावट से अत्यधिक मात्रा में प्रभावित हो सकती है । उदाहरण के लिए, आठवीं योजना (1992 97) में औसत चक्र-वृद्धि दर (शुद्ध राज्य घरेलू उत्पत्ति) 7 0% रही। लेकिन इस योजनावधि मे पॉच मे से तीन वर्षो मे तो शुद्ध घरेलू उत्पत्ति मे पिछले वर्ष की तुलना मे तीव्र वृद्धि हुई थी। 1994-95 मे पिछले वर्ष की तुलना मे यह 18% (स्थिर मूल्यो पर) बढी थी। 1992-93 मे यह 15% तथा 1996-97 मे 14 8% बढी थी। इन्ही के फलस्वरूप आठवी योजना में विकास की चक्रवृद्धि दर 7.0% प्राप्त की जा सकी थी।

अत: योजनावार वार्षिक वृद्धि-दर का अर्थ लगाते समय यह ध्यान रखना होगा कि कहीं एक वर्ष की अत्यधिक या असाधारण वृद्धि इसको प्रभावित न करे । पाँचवीं, छठी व सातवीं योजनाओं में भी क्रमश: 1975-76 की 21 3%, 1983-84 की 22 8% तथा 1988-89 की 41 3% वृद्धियों ने सम्बद्ध योजनाओं की औसत वृद्धि-दरों को प्रभावित किया था । इसमें कोई सन्देह नहीं कि आधार वर्ष एवं अन्तिम वर्ष में परिवर्तन मात्र से आय में कोई भी वृद्धि की प्रवृत्ति दर्शाई जा सकती है । राजस्थान के आर्थिक विकास के अध्ययन में यह बात सदैव ध्यान में रखनी होगी ।

शुद्ध राज्य घरेलू उत्पत्ति के ढाँचे (Structure of NSDP) अथवा क्षेत्रवार अंशदान में परिवर्तन—निम्न तालिका में 1960-61 से 2003-04 तक की अवधि के लिए राज्य की शुद्ध घरेलू उत्पत्ति के ढाँचे के परिवर्तन की जानकारी के लिए आधार-वर्ष

1993-94 प्रयुक्त किया गया है । हम पहले बतला चुके हैं कि प्राथमिक क्षेत्र में कृषि व सहायक उद्योग, वन, मछली व खनन शामिल होते हैं । द्वितीयक क्षेत्र में विनिर्माण, विद्युत, गैस व जल-पूर्ति तथा निर्माण-कार्य शामिल होते हैं एवं तृतीयक क्षेत्र में परिवहन संग्रहण, व्यापार, बैंकिंग, बीमा, स्थावर सम्पदा व सार्वजनिक प्रशासन व अन्य सेवाएँ शामिल होती हैं ।

NSDP में प्रतिशत अंश[1]

(1960-61 से 2003-04 के लिए आधार वर्ष (1993-94)

वर्ष	प्राथमिक	द्वितीयक	तृतीयक
1960-61	52 7	19 2	28.1
1970-71	57 5	16 4	26.1
1980-81	47.8	19 5	32.7
1990-91	43 5	20 8	35 7
2000-01	28 4	25 7	45.9
2001-02 (P)	32 8	23.1	44.1
2002-03 (Q)	26 4	25 1	48 5
2003-04 (A)	32.8	21.6	45.6

योजनाकाल में शुद्ध राज्य घरेलू उत्पत्ति के ढाँचे में परिवर्तन—उपरोक्त तालिका से पता चलता है कि योजना-काल मे (NSDP) के क्षेत्रवार अंशदान में काफी परिवर्तन हुए हैं । प्राथमिक क्षेत्र का अंशदान 1960-61 मे 52 7% (1993-94 के भावो पर) से घटकर 2002-03 मे 26 4% पर आ गया । इस अवधि मे द्वितीयक क्षेत्र का अंश 19.2% से बढ़कर 25.1% हो गया, तथा तृतीयक क्षेत्र का 28 1% से बढ़कर 48 5% हो गया । इस प्रकार इस अवधि में तृतीयक क्षेत्र का योगदान 1/4 से बढ़कर लगभग आधा हो गया है । इससे सिद्ध होता है कि राज्य की आय में सेवा-क्षेत्र का योगदान तेजी से बढ़ा है । इस प्रकार प्राथमिक क्षेत्र का योगदान घटा है तथा तृतीयक क्षेत्र का बढा है । द्वितीयक क्षेत्र का योगदान घटता-बढ़ता रहा है और 2002-03 में 25% रहा है ।

1. NSDP 1960-61 to 2001-02, July 2002 & Economic Review 2003-04, July 2004, p 12

द्वितीयक क्षेत्र में विनिर्माण (manufacturing) की आय शामिल होती है । 1999-2000 में पंजीकृत व गैर-पंजीकृत विनिर्माण क्षेत्र का योगदान राज्य की घरेलू उत्पत्ति में 14.5% हुआ था, जिसमें पंजीकृत क्षेत्र का अंश 9% तथा गैर-पंजीकृत का 5.5% था । 2002-03 में इस क्षेत्र का योगदान 11.5% ही रहा, (1993-94 के मूल्यों पर) जिसमें पंजीकृत क्षेत्र का अंश 5.6% तथा गैर-पंजीकृत क्षेत्र का 5.9% रहा । इस प्रकार विनिर्माण क्षेत्र का योगदान आज भी थोड़ा है । समस्त भारत में यह लगभग 21% पाया जाता है । अतः राज्य को इसका योगदान बढ़ाने के लिए सभी प्रकार के उद्योगों का विकास करना चाहिए ।

तृतीयक क्षेत्र की सबसे बड़ी मद व्यापार, होटल तथा जलपान-गृह की होती है जिसमें पिछले 15 वर्षों में कुछ परिवर्तन आया है । 1999-2000 में इस मद से राज्य की आय (शुद्ध) में 14.2% का योगदान हुआ था, जो बढ़कर 2002-03 में 16% पर आ गया है । यह 1993-94 के मूल्यों के आधार पर है ।

राज्य की आय में सर्वाधिक वृद्धि-दर तृतीयक क्षेत्र में हुई है जिसमें व्यापार, होटल, बैंकिंग, बीमा, सार्वजनिक प्रशासन, आदि शामिल होते हैं । सच पूछा जाए तो प्राथमिक व द्वितीयक क्षेत्रों की वृद्धि दरों का विशेष महत्त्व होता है, क्योंकि उनका सम्बन्ध वस्तु-क्षेत्रों (commodity-sectors) से होता है । तृतीयक क्षेत्र में तो विभिन्न प्रकार की सेवाएँ आती हैं । योजनाकाल में राष्ट्रीय स्तर पर भी तृतीयक क्षेत्र में विकास-दर अन्य दोनों क्षेत्रों से अधिक रही है, जिससे आर्थिक विकास की दर के ऊँचा होने में मदद मिली है । लेकिन यह सीधे वस्तु-उत्पादन से सम्बन्ध नहीं रखती है, इसीलिए ऐसी विकास की दर पूर्ण संतोष नहीं दे सकती ।

राज्य की आय के क्षेत्रवार वितरण पर कृषिगत उत्पादन का अधिक प्रभाव पड़ता है । अच्छी फसल वाले वर्ष में प्राथमिक क्षेत्र का योगदान बढ़ जाता है और सूखे व अकाल के वर्षों में यह काफी घट जाता है । परिणाम-स्वरूप, खराब फसल वाले वर्षों में द्वितीयक व तृतीयक क्षेत्रों के अंश बढ़ जाते हैं ।

उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट हो जाता है कि राज्य की आय में विनिर्माण क्षेत्र (Manufacturing Sector) (जो द्वितीयक क्षेत्र का एक महत्त्वपूर्ण अंग होता है) का अंश बढ़ाने की बहुत आवश्यकता है। यह लगभग 12-13 प्रतिशत पर ठहरा हुआ है। औद्योगिक उत्पादन में वृद्धि करके इस अनुपात को बढ़ाया जाना चाहिए । प्रयत्न करने पर यह एक दशक में 20% तक पहुँचाया जा सकता है । राज्य में आर्थिक साधनों पर आधारित औद्योगिक इकाइयों के विकास के पर्याप्त अवसर विद्यमान हैं, जिनका उपयोग करके इस क्षेत्र का योगदान सकल व शुद्ध घरेलू उत्पाद में बढ़ाया जाना चाहिए । साथ में निर्माण-कार्यों को भी बढ़ाना चाहिए । इसके लिए भी राज्य में ईंट, पत्थर, सीमेन्ट व अन्य भवन निर्माण-कार्यों की आवश्यक सामग्री का उत्पादन बढ़ाया जा सकता है, जिससे रोजगार में भी वृद्धि की जा सकती है । राज्य में जवाहरात व आभूषणों का उत्पादन बढ़ाने के भी पर्याप्त अवसर विद्यमान हैं । गलीचों, हथकरघा व दस्तकारियों का उत्पादन बढ़ाकर रोजगार, आमदनी व निर्यात में काफी वृद्धि की जा सकती है ।

राजस्थान एवं भारत की प्रति व्यक्ति आय के बीच बढ़ता हुआ अन्तर—आगे की तालिका में 1960-61 से 2002-03 तक प्रति व्यक्ति आय के अन्तर 1993-94 के मूल्यों पर दिए गए हैं । इनके अध्ययन से पता चलता है कि प्रति व्यक्ति आय में राजस्थान व भारत के बीच का अन्तराल घटता-बढ़ता रहा है । 1960-61 से 1970-71 के बीच यह घट गया था, लेकिन 1970-71 से 1980-81 के बीच काफी बढ़ गया । पुन: यह 1980-81 से 1990-91 के बीच घटा । बाद के वर्षों में भी यह घटता-बढ़ता ही रहा है । इस प्रकार यह कहना गलत होगा कि **1980-81 से 2002-03 तक राजस्थान व भारत की प्रति व्यक्ति आय में अन्तराल निरन्तर बढ़ता गया है** । इस बात से इन्कार नहीं किया जा सकता कि दोनों के बीच प्रति व्यक्ति आय का अन्तराल आज भी बना हुआ है, जिसे यथासम्भव कम किया जाना चाहिए । 1970-71 में यह अन्तराल काफी कम हो गया था । जिन वर्षों में राजस्थान में सूखे के कारण कृषिगत उत्पादन को भारी क्षति पहुँचती है, उनमें प्रति व्यक्ति आय का अन्तराल सर्वाधिक हो जाता है । 2002-03 मे यह 3356 रुपये हो गया था, जो सर्वाधिक था । 2003-04 में भी यह अन्तराल काफी ऊँचा रहा है, जैसा कि निम्न तालिका में दर्शाया गया है ।

भारत व राजस्थान में प्रति व्यक्ति आय का अन्तराल[1]

(1960-61 से 2003-04 तक के लिए आधार-वर्ष 1993-94 लेने पर)

प्रति व्यक्ति आय (रु. में)			
वर्ष (1)	भारत (2)	राजस्थान (3)	अन्तराल (Gap) (4)
1960-61	4429	3865	564
1970-71	5002	4538	464
1980-81	5352	3772	1580
1990-91	7321	6615	706
2000-01	10313	8104	2209
2001-02 (P)	10774	8571	2203
2002-03 (Q)	10964	7608	3356 (H)
2003-04 (A)	11684	8571	3113

---

1. पूर्वोद्धृत स्रोत ।

उपर्युक्त तालिका मे चुने हुए वर्षों के लिए राजस्थान व भारत की प्रति व्यक्ति आय के आँकडे 1993-94 के स्थिर मूल्यों पर दिए गए हैं। साथ में उनका अन्तराल भी दिया गया है।

अन्य राज्यों से तुलना—निम्न तालिका में कुछ राज्यों के लिए सकल घरेलू उत्पाद (GSDP) व प्रति व्यक्ति GSDP में वार्षिक वृद्धि-दरें दर्शाई गई हैं। यहाँ आधार-वर्ष 1980-81 लिया गया है।[1]

(% में)

(1991-92 से 1997-98 तक) (आधार-वर्ष 1980-81)	सकल घरेलू उत्पत्ति की वृद्धि-दर	प्रति व्यक्ति GSDP की वृद्धि-दर
1 राजस्थान	6 54	3 96
2 बिहार	2 69	1 12
3 गुजरात	9 57	7 57
4 मध्य प्रदेश	6 17	3 87
5 पंजाब	4 71	2 80
6 तमिलनाडु	6 22	4 95
7 उत्तर प्रदेश	3 58	1 24
समस्त भारत	6 89	5 0 (लगभग)

तालिका से स्पष्ट होता है कि राजस्थान में सकल घरेलू उत्पत्ति में चक्रवृद्धि-दर 1991-92 से 1997-98 के 6 वर्षों में 6 5% वार्षिक रही, जो भारत के औसत 6 9% से कुछ कम थी। यह बिहार, पंजाब व उत्तर प्रदेश से ज्यादा थी। लेकिन इन आँकड़ों का उपयोग सावधानीपूर्वक किया जाना चाहिए, क्योंकि राजस्थान में सकल व शुद्ध घरेलू उत्पत्ति की वार्षिक वृद्धि-दर में काफी उतार-चढ़ाव आते रहते हैं, जैसे 1991-92 में यह 7 7% घटी, 1992-93 में 15% बढ़ी, 1993-94 में यह पुनः 8 2% घटी, 1994-95 में 18% बढ़ी तथा 1995-96 में 0 9% घटी। 1996-97 में यह पुनः 14 8% बढ़ गयी। इसलिए कुछ वर्षों की ऊँची वृद्धियाँ औसत वृद्धि-दर को बढ़ा देती हैं। फिर भी 1991-92 से 1997-98 की अवधि में राजस्थान की विकास-दर (6.54%) काफी ऊँची रही। यह गुजरात, महाराष्ट्र व पश्चिम बंगाल से कम थी, लेकिन अन्य कई राज्यों में ऊँची थी। 1980-81 से 1990-91 की अवधि में भी राजस्थान की विकास-दर 6.60% सालाना रही थी। अतः राजस्थान आँकड़ों की दृष्टि से उत्तम प्रगति वाला राज्य माना गया है। अन्य राज्यों में वृद्धि-दर में इतने उतार-चढ़ाव नहीं आते। अतः तुलना से परिणाम निकालने में हमें पर्याप्त सावधानी रखनी होगी।

---

1 Montek S Ahluwalia, **Economic Performance of States in Post-Reforms Period**, an article in EPW May 6 2000, p 1638

राजस्थान में सकल या शुद्ध घरेलू उत्पत्ति (NDP) में तेज गति से वृद्धि करने के लिए कुछ सुझाव—चूँकि शुद्ध घरेलू उत्पत्ति (सकल घरेलू उत्पत्ति—मूल्य-ह्रास) का उद्‌गम विभिन्न आर्थिक क्षेत्रों जैसे कृषि, पशु-पालन, खनन, विद्युत, उद्योग, परिवहन, व्यापार, सार्वजनिक प्रशासन आदि से होता है, इसलिए इसमें तीव्र गति से वृद्धि करने के लिए इन क्षेत्रों के विकास के प्रयास करने होंगे। इनका विवरण आगे दिया जा रहा है—

(1) **कृषि**—राजस्थान में कृषिगत उत्पादन में भारी मात्रा में वार्षिक उतार-चढ़ाव आते रहते हैं, जिन्हें कम करने के लिए सूखी खेती की पद्धतियों का व्यापक रूप से उपयोग करना होगा। फव्वारा सिंचाई व बूँद-बूँद सिंचाई से उत्पादन भी बढ़ेगा तथा पानी के उपयोग में भी किफायत होगी। राजस्थान में पशु-विकास, फल-विकास, वन-विकास, चारा-विकास, आदि पर एक साथ बल देना होगा। इसके लिए विश्व बैंक से कर्ज लेकर एक विस्तृत कृषि-विकास कार्यक्रम लागू किया जा रहा है, जिसे सफल बनाने की आवश्यकता है। इसकी सहायता से सोयाबीन, ईसबगोल, मेहंदी व तुम्बा (एक प्रकार का तिलहन) का उत्पादन बढ़ाया जा सकेगा। इससे लोगों को रोजगार मिलेगा तथा कृषिगत क्षेत्र से आमदनी भी बढ़ेगी। सम्पूर्ण कार्यक्रम को लागू करने से कृषिगत विकास को काफी गति मिलेगी। भूमि, वृक्ष, जल, नमी आदि सभी का सदुपयोग व संरक्षण किया जाना चाहिए, ताकि इनसे उत्पादन में पर्याप्त मात्रा में वृद्धि हो सके।

(2) **उद्योग, खनन व विद्युत**—हम पहले बतला चुके हैं कि राजस्थान में खनन विकास की काफी सम्भावनाएँ हैं और इन पर आधारित उद्योगों पर समुचित रूप से ध्यान देने से भी राज्य की शुद्ध घरेलू उत्पत्ति बढ़ाई जा सकती है। राज्य में सीमेंट उद्योग, मार्बल व ग्रेनाइट उद्योग, खाद्य-तेल व वनस्पति उद्योग, इलेक्ट्रॉनिक्स उद्योग, आदि का विकास करके आय बढ़ाई जा सकती है। रत्न, आभूषण, गलीचों, दस्तकारियों व हथकरघा उद्योग का विकास करके रोजगार, आय व निर्यात बढ़ाए जा सकते हैं। राज्य में पशु-धन आधारित, कृषिगत माल पर आधारित, खनिज-पदार्थ-आधारित तथा अन्य कई प्रकार के उद्योगों के विकास की काफी सम्भावनाएँ विद्यमान हैं, जिनका समुचित उपयोग किया जाना चाहिए, ताकि राज्य की शुद्ध घरेलू उत्पत्ति में पर्याप्त मात्रा में वृद्धि हो सके। **राज्य को तीव्र औद्योगीकरण के मार्ग पर ले जाने की नितान्त आवश्यकता है।** इसमें गुजरात व महाराष्ट्र राज्यों की भाँति औद्योगिक विकास की काफी सम्भावनाएँ हैं, जिनका पूरा-पूरा लाभ उठाने की आवश्यकता है। राज्य अपने परम्परागत ग्रामीण व कुटीर उद्योगों को पनपा कर भी अपनी आमदनी, रोजगार व निर्यातों में वृद्धि कर सकता है।

पर्यटन का विकास करके भी आमदनी बढ़ाई जा सकती है। राज्य में थर्मल पावर गैस आधारित विद्युत व आणविक विद्युत तथा मिनी जल-विद्युत परियोजनाओं को कार्यान्वित करके पावर-सप्लाई बढ़ाकर विकास के नए अवसर खोले जा सकते हैं।

(3) सेवा-क्षेत्र—शिक्षा, चिकित्सा, जल-पूर्ति, परिवहन (विशेषतया सड़कों तथा ब्रोडगेज रेल लाइनों), बैंकिंग आदि का विकास करके सामाजिक सेवाओं व आधारभूत सुविधाओं का विस्तार किया जा सकता है। इससे जीवन-स्तर में सुधार आने के साथ-साथ राज्य की शुद्ध घरेलू उत्पत्ति में भी वृद्धि होगी।

राजस्थान एक पिछड़ा हुआ राज्य अवश्य है, लेकिन यहाँ विभिन्न दिशाओं में आर्थिक विकास की पर्याप्त सम्भावनाएँ विद्यमान हैं, जिनका समुचित उपयोग करके आगे आने वाले वर्षों में राज्य की शुद्ध घरेलू उत्पत्ति में द्रुतगति से वृद्धि की जा सकती है। इसके लिए जिला-नियोजन अथवा विकेन्द्रित नियोजन के माध्यम से स्थानीय साधनों का उपयोग करके उत्पादक परियोजनाओं को संचालित करने की आवश्यकता है। राज्य को अकाल व सूखे की दशाओं पर नियंत्रण करने के लिए एक दीर्घकालीन, व्यावहारिक व ठोस कार्यक्रम तैयार करना चाहिए। इन्दिरा गाँधी नहर क्षेत्र में सरकार चारे व घास का उत्पादन बढ़ाने का प्रयास कर रही है। इस क्षेत्र में किए गए विनियोगों से सर्वाधिक लाभ प्राप्त करने की आवश्यकता है। इस दिशा में अधिक दीर्घकालीन व अधिक व्यापक दृष्टिकोण अपनाने की आवश्यकता है। इस प्रकार कोई कारण नहीं कि सुनियोजित व अधिक सक्रिय ढंग से आगे बढ़ने पर राज्य अपना आर्थिक विकास अधिक तेजी से न कर सके। जून 1994 में नई औद्योगिक नीति, (जून 1998 में संशोधित औद्योगिक नीति), अगस्त 1994 में नई खनिज नीति, दिसम्बर 1994 में नई सड़क नीति, जनवरी 2000 में नई जनसंख्या नीति, अप्रैल 2000 की नई सूचना-प्रौद्योगिकी (IT) नीति तथा निकट भविष्य में प्रस्तावित पर्यटन नीति व नई कृषिगत नीति को लागू करके राज्य आर्थिक विकास की गति को तेज करने में समर्थ हो सकता है। केन्द्र की भाँति राज्य सरकार भी विभिन्न क्षेत्रों में आर्थिक उदारता व आर्थिक सुधारों का समावेश करने का प्रयास कर रही है ताकि उत्पादन व उत्पादकता के मार्ग में आने वाली सभी बाधाओं को दूर करके तीव्र, न्यायपूर्ण व रोजगारोन्मुख आर्थिक विकास का मार्ग प्रशस्त किया जा सके।

कांग्रेस सरकार ने राज्य के योजना-बोर्ड का पुनर्गठन किया था तथा राज्य में एक आर्थिक विकास बोर्ड की स्थापना की थी लेकिन विशेष प्रगति नहीं हो पायी। जनवरी 2004 में राज्य में भारतीय जनता पार्टी की सरकार सत्तारूढ़ हुई है। इसने एक आर्थिक सुधार परिषद्, (An Economic and Reforms Council) का गठन किया है। सरकार विभिन्न क्षेत्रों में प्रगति के कार्यक्रम तैयार करने में संलग्न है। एक 'व्यय-सुधार-आयोग' का भी गठन किया गया है जो 31 दिसम्बर, 2004 के अन्त तक अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत करेगा। आशा है आगामी पाँच वर्षों में विद्युत का उत्पादन बढ़ने से कृषि, उद्योग, आदि सभी क्षेत्रों में विकास के नये अवसर उत्पन्न होंगे जिससे राज्य की आय बढ़ेगी। इसके लिए राज्य की पंचवर्षीय योजनाओं को रोजगारोन्मुख व विकासोन्मुख बनाया जाना चाहिए ताकि आय के बढ़ने से राज्य में खुशहाली बढ़ सके और लोगों का जीवन-स्तर ऊँचा हो सके।

परिशिष्ट

(अ) राजस्थान में 1997-98 से 2001-02 (नवीं योजना) की अवधि में शुद्ध राज्य घरेलू उत्पत्ति (NSDP) की औसत वृद्धि-दर ज्ञात करने की विधि (1993-94 के भावों पर)[1]–

वर्ष	पिछले वर्ष की तुलना में वृद्धि का प्रतिशत	सूचकांक	सूचकांक का लॉग लेने पर
1997-98	12 2	112.2	2.0500
1998-99	4 4	104.4	2.0187
1999-2000	0 3	100 3	2.0013
2000-01	(-) 2 8	97.2	1.9877
2001-02	8.5	108.5	2.0354
		लॉग का जोड़ =	10.0931

$$\text{लॉग का औसत} = \frac{10.0931}{5} = 2.0186$$

इसका antilog = 104.3

इसलिए विकास की वार्षिक दर (104.3 – 100) = 4 3% रही।

यहाँ परिवर्तन की वार्षिक दर निकालने के लिए वार्षिक प्रतिशत के परिवर्तनों का ज्यामितीय औसत (G.M.) लिया गया है। इसका ज्ञान मामूली अभ्यास से हो सकता है, जिसे अवश्य प्राप्त कर लेना चाहिए। इसके लिए log-table व anti-log table के उपयोग की जानकारी आवश्यक होती है।

प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. वर्ष 2002-03 में राजस्थान की शुद्ध राज्य घरेलू उत्पत्ति (NSDP) (1993-94 के भावों पर) कितनी रही ?

   (अ) 22917 करोड़ रु. (ब) 31307 करोड़ रु.

   (स) 44769 करोड़ रु (द) 41021 करोड़ रु (स)

---

1. वार्षिक वृद्धि-दर के आँकड़े, Economic Review 2003-04, (GOR) July 2004 से लिये गये हैं।

2. वर्ष 2002-03 में राजस्थान की प्रति व्यक्ति आय (1993-94 के मूल्यों पर) कितनी रही ?
   (अ) 8793 रु. (ब) 7608 रु.
   (स) 9993 रु. (द) 5232 रु. (ब)
3. राज्य की शुद्ध घरेलू उत्पाद के परिवर्तनों के सम्बन्ध में कौन-सा कथन ज्यादा उपयुक्त लगता है ?
   (अ) पाँच में से एक साल की अत्यधिक वृद्धि-दर पंचवर्षीय योजना की वृद्धि-दर को प्रभावित कर डालती है,
   (ब) प्राय: एक साल धनात्मक वृद्धि-दर व दूसरे साल ऋणात्मक वृद्धि-दर होती है,
   (स) वार्षिक वृद्धि-दर पर कृषिगत उत्पादन का सर्वाधिक प्रभाव पड़ता है,
   (द) राज्य की अर्थव्यवस्था अत्यधिक अस्थिर किस्म की है। (ब)
4. चालू कीमतों पर प्रति व्यक्ति शुद्ध-राज्य घरेलू उत्पत्ति 2001-02 में किस राज्य की सर्वाधिक थी ?
   (अ) पंजाब की (ब) हरियाणा की
   (स) गोआ की (द) महाराष्ट्र की (स)
5. राजस्थान को सकल-घरेलू-उत्पत्ति में तेजी से वृद्धि करने के लिए किस आर्थिक क्षेत्र पर सबसे ज्यादा बल देना चाहिए ?
   (अ) खनन (ब) औद्योगिक
   (स) पशु-धन (द) पर्यटन (ब)
6. राजस्थान में 1993-94 के भावों पर राज्य की शुद्ध घरेलू उत्पत्ति की सर्वाधिक राशि (लगभग 44769 करोड़ रु.) किस वर्ष रही ?
   (अ) 1996-97 (ब) 1997-98
   (स) 2002-03 (द) 1999-2000 (स)

अन्य प्रश्न

1. "राज्य घरेलू उत्पाद" से आप क्या समझते हैं ? राजस्थान में राज्य घरेलू उत्पाद की प्रवृत्तियाँ एवं संरचना समझाइए।
2. राजस्थान की अर्थव्यवस्था की धीमी प्रगति के लिए उत्तरदायी कारणों का उल्लेख कीजिए। उन्हें दूर करने के उपायों का सुझाव दीजिए।
3. योजनाकाल में राज्य की शुद्ध घरेलू उत्पत्ति व प्रति व्यक्ति आय में 1960-61 से हुई वास्तविक प्रगति की मुख्य प्रवृत्तियों पर प्रकाश डालिए। क्या यह प्रगति संतोषजनक रही है ?
4. राजस्थान में आय-ढाँचे (SDP-Structure) में योजनाकाल में किस प्रकार के परिवर्तन हुए हैं ? क्या ये परिवर्तन अनुकूल माने जा सकते हैं ?

5. संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए—
   (i) राज्य घरेलू उत्पत्ति की प्रवृत्तियाँ व संरचना।
   (ii) राज्य की आय में प्राथमिक क्षेत्र का योगदान।
   (iii) राज्य की आय में विनिर्माण क्षेत्र का योगदान।
   (iv) राज्य की आय में योजनावार वृद्धि की दरें।
   (v) राजस्थान की वर्तमान प्रति व्यक्ति आय (1993–94 के मूल्यों पर)।
6. राजस्थान में योजनावधि में विकास की दर समस्त देश की तुलना में नीची रही है। क्या आप इस मत से सहमत हैं ? राज्य में विकास की गति को तेज करने के कुछ व्यावहारिक सुझाव दीजिए।
7. राजस्थान की स्थिर मूल्यों पर प्रति व्यक्ति आय को बढ़ाने के उपायों का विवेचन करिए। इनके मार्ग में आने वाली बाधाओं को दूर करने के सुझाव दीजिए।
8. भारत व राजस्थान की प्रति व्यक्ति आय के अन्तराल की स्थिति को स्पष्ट करते हुए यह बतलाइए कि इस अन्तराल को कैसे कम किया जा सकता है ?
9. राज्य की 'प्रति व्यक्ति आय' पर एक संक्षिप्त निबन्ध लिखिए।
10. राजस्थान में 'शुद्ध राज्य घरेलू उत्पाद' में वृद्धि के लिए सुझाव दीजिए।

7

पर्यावरण प्रदूषण व सुस्थिर विकास की समस्याएँ (Environmental Pollution and Problems of Sustainable Development)

"गैर-टिकाऊ या असुस्थिर (Unsustainable), अनियन्त्रित व असंतुलित विकास परमाणु-सर्वनाश से भी कई गुना अधिक भयावह होता है"

—आचार्य महाप्रज्ञ

"जब मानव समाज का आर्थिक कल्याण अपनी सुस्थिरता (sustainability) के लिए न केवल टेक्नोलोजी के पर्यावरणीय-पुनर्गठन को चाहता है, बल्कि अर्थव्यवस्था के संचालन के लिए यह मानवीय मूल्यों व संस्थागत तथा कानूनी व्यवस्था का भी वैसा ही पुनर्गठन चाहता है; ऐसी स्थिति में परम्परागत अर्थशास्त्र को भी अपने फ्रेमवर्क व विश्लेषण की विधि में परिवर्तन करने होंगे।"

रामप्रसाद सेनगुप्ता, 'Ecology And Economics', 2002, पृ.234.

'निर्धनता प्रदूषण का सबसे बड़ा कारण है'

(Poverty is the biggest polluter)

–Indira Gandhi, Stockholm, UN Conference on Human Environment, 1972.

पिछले वर्षों में पर्यावरण व विकास के परस्पर सम्बन्ध पर बहुत बल दिया जाने लगा है। इन दोनों को एक-दूसरे का पूरक माना जाता है। 'जल, जमीन व जंगल' के संरक्षण का आन्दोलन देश के विभिन्न भागों में चलाया गया है। पर्यावरण में मुख्यतया जल, पेड़, पशु-पक्षी, जीव-जन्तु, वायु, भूमि आदि शामिल किए जाते हैं। विकास का सम्बन्ध प्रति व्यक्ति वास्तविक आय की वृद्धि से होता है। अत: यह स्वीकार किया जाने लगा है कि विकास की प्रक्रिया से पर्यावरण को किसी प्रकार की क्षति नहीं पहुँचनी चाहिए; बल्कि विकास इस प्रकार से किया जाना चाहिए कि पर्यावरण की सुरक्षा हो तथा इसमें निरन्तर अभिवृद्धि हो। यदि पर्यावरण को हानि पहुँचाकर विकास किया गया तो वह स्थायी व टिकाऊ नहीं होगा, बल्कि आगे चलकर समाज के लिए घातक व विनाशकारी सिद्ध होगा। इसलिए विकास के दौरान जल-प्रदूषण, वायु-प्रदूषण, मिट्टी के कटाव, मिट्टी की बढ़ती लवणता व क्षारीयता, मरुस्थलीकरण (Desertification), वृक्षों की अंधाधुंध कटाई (Deforestation), ध्वनि-प्रदूषण आदि से बचने का भरसक प्रयास किया जाना चाहिए, ताकि वर्तमान व भावी पीढ़ी दोनों के हितों की रक्षा की जा सके और लोगों के स्वास्थ्य व उत्पादकता पर पड़ने वाले कुप्रभावों से बचा जा सके।

सुस्थिर विकास क्या है ? (What is Sustainable Development ?)

पर्यावरण व विकास के परस्पर सम्बन्ध की चर्चा में पिछले वर्षों में सुस्थिर या सुदृढ़ या टिकाऊ विकास (Sustainable development) की अवधारणा का प्रादुर्भाव हुआ है।

इसका अर्थ तो सरल है, लेकिन इसे प्राप्त करना काफी कठिन है। वह विकास जो आगे जारी रह सके, सुस्थिर या टिकाऊ विकास कहलाता है।[1] इसके लिए विद्वानों ने अन्य कई प्रकार के शब्दों का प्रयोग किया है, जैसे संतुलित या सम्यक् विकास (balanced development), समताकारी विकास (equitable development), आदि। लेकिन इसके पीछे मुख्य विचार यह है कि वर्तमान पीढ़ी द्वारा आज के विकास के लिए आज के फल चखते समय यह ध्यान रखा जाए कि भावी पीढ़ियाँ पर्यावरण की गिरावट या पतन से हानि न उठाएँ। पर्यावरण व विकास पर विश्व आयोग ने अपनी रिपोर्ट (Our Common Future, 1987) में सुस्थिर व सुदृढ़ विकास का सामान्य सिद्धान्त यह बतलाया था कि **"वर्तमान पीढ़ी अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति इस प्रकार से करे ताकि उससे भावी पीढ़ियों की अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति की क्षमता पर विपरीत असर न पड़े।" (Current generations should meet their needs without compromising the ability of future generations to meet their own needs.)** अत: विकास में स्थिरता, दृढ़ता, समता व संतुलन तभी आते हैं **जब वर्तमान पीढ़ी व भावी पीढ़ी दोनों के हितों को ध्यान में रखते हुए प्राकृतिक साधनों का विदोहन, संरक्षण व विकास किया जाता है।** विश्व में लोगों की, विशेषतया निर्धन लोगों की आवश्यकताएँ कई प्रकार की होती हैं, लेकिन उनकी पूर्ति के लिए पर्यावरण की क्षमता तथा टेक्नोलॉजी की क्षमता सीमित होती है। इसलिए पर्यावरण व उपलब्ध टेक्नोलॉजी की सीमाओं को ध्यान में रखते हुए लोगों की आवश्यकताओं की पूर्ति करने का प्रयास करना सुस्थिर व सम्यक् विकास कहा जाता है। इसके लिए एक तरफ देश की उत्पादक क्षमता का विकास करना होता है तो दूसरी तरफ जनसंख्या की वृद्धि को पृथ्वी के प्राकृतिक साधनों के साथ संतुलन में रखना होता है। अत: **सुस्थिर विकास परिवर्तन की वह प्रक्रिया होती है जिसमें साधनों के उपयोग, विनियोग की दशा, टेक्नोलोजिकल प्रगति का रुख व संस्थागत परिवर्तन का रूप आदि सभी वर्तमान व भविष्य, अथवा आज और कल, के लिए मानवीय आवश्यकताओं की पूर्ति की सम्भावनाओं को बढ़ाने का प्रयास करते हैं।**[2] अत: सुस्थिर विकास की अवधारणा में प्राकृतिक साधनों का इस प्रकार से उपयोग किया जाता है ताकि भावी पीढ़ी के हितों की उपेक्षा न हो और मानवीय कल्याण को अधिकतम किया जा सके। सुस्थिरता (sustainability) दो प्रकार की हो सकती है—एक तो मजबूत और दूसरी कमजोर। **'मजबूत या सुदृढ़ सुस्थिरता'** में प्रत्येक परिसम्पत्ति को अलग से बनाए रखने की आवश्यकता समझी जाती है, क्योंकि विभिन्न प्रकार की परिसम्पत्तियाँ एक-दूसरे की पूरक मानी जाती हैं, न कि परस्पर प्रतिस्पर्धी। इसके विपरीत **'कमजोर या दुर्बल सुस्थिरता'** में परिसम्पत्तियों के कुल भण्डार का समग्र मौद्रिक मूल्य कायम रखने का प्रयास किया जाता है, क्योंकि विभिन्न परिसम्पत्तियों में प्रतिस्थापन का ऊँचा अंश माना

1 'Sustainable development is development that lasts,' World Development Report, 1992, p 34 इस रिपोर्ट में पर्यावरण के विभिन्न पहलुओं पर विस्तृत रूप से प्रकाश डाला गया है।

2 "Sustainable development is best understood as a process of change in which the use of resources, the direction of investments, the orientation of technological development and institutional change all enhance the potential to meet human needs both today and tomorrow" The Report of the World Commission on Environment and Development-**Sustainable Development : A Guide to our Common Future, 1987, p 3**

और दूसरी कमजोर। **'मजबूत या सुदृढ़ सुस्थिरता'** मे प्रत्येक परिसम्पत्ति को अलग से बनाए रखने की आवश्यकता समझी जाती है, क्योकि विभिन्न प्रकार की परिसम्पत्तियाँ एक–दूसरे की पूरक मानी जाती है, न कि परस्पर प्रतिस्पर्धी। इसके विपरीत **'कमजोर या दुर्बल सुस्थिरता'** मे परिसम्पत्तियो के कुल भण्डार का समग्र मौद्रिक मूल्य कायम रखने का प्रयास किया जाता है, क्योंकि विभिन्न परिसम्पत्तियो मे प्रतिस्थापन का ऊँचा अश माना जाता है। इस प्रकार 'मजबूत सुस्थिरता' में प्रत्येक प्राकृतिक साधन; जैसे जल, जंगल, जमीन, आदि की पूरी-पूरी रक्षा की जाती है, जबकि 'कमजोर सुस्थिरता' में प्राकृतिक साधनों के कुल भण्डार की रक्षा करने का ही प्रयास किया जाता है।[1]

सुस्थिर विकास के मार्ग मे कई प्रकार की बाधाएं हैं जो इस प्रकार हैं।[2]

(i) कई विकासशील देशो मे उत्पादकता नीची, विकास गतिहीन व बेरोजगारी ऊँची पायी जाती है।

(ii) 1 डालर प्रतिदिन से कम आमदनी पर जीने वाले लोगो की सख्या (1 2 अरब) घट रही है, लेकिन फिर भी यह एक चुनौती है और अधिक लोग कमजोर (fragile) भूक्षेत्रों में निवास कर रहे हैं।

(iii) आय की असमानता बढ़ रही है। सबसे अधिक धनी 20 देशो मे औसत आमदनी सबसे गरीब 20 देशो की औसत आमदनी से 37 गुनी है, जो अनुपात मे 1970 की दुगुनी है।

(iv) कई निर्धन देशों में नागरिक संघर्ष पाये जाते है जिनमे विद्वेष गहरे व लम्बी अवधि के होते हैं।

(v) पर्यावरण पर दबाव बढ़ रहे हैं। मछलियो का अधिक विदोहन किया जाता है, मिट्टियो का ह्रास हो रहा है, प्रवाल भित्ति (coral reefs) नष्ट की जा रही है, उष्ण कटिबन्ध के वनो का ह्रास हो रहा है और जल–प्रदूषण बढ रहा है।

(vi) इन समस्याओं के समाधान के लिए वित्तीय हस्तान्तरणों का अभाव पाया जाता है, हालाकि साधन तो उपलब्ध होते है।

इससे सिद्ध होता है कि सुस्थिर विकास की समस्या का हल काफी कठिन है।

पर्यावरण-प्रदूषण के विभिन्न रूप, कारण व उसके दुष्परिणाम· पर्यावरण प्रदूषण के कई रूप होते हैं, जैसे जल–प्रदूषण व जल का अभाव, वायु–प्रदूषण, मिट्टी का कटाव व उर्वरता का ह्रास, वृक्षो की कटाई, जैविक विविधता (biodiversity) (नाना प्रकार के जीव–जन्तु व पेड़–पौधो) का उत्तरोत्तर ह्रास तथा वायुमण्डल के परिवर्तन जैसे ग्रीन–हाउस गैसो के बढने से ग्रीन हाउस–उष्णीकरण या गर्माहट या तपन का बढना तथा ओजोन परत का क्षय होना (Ozone depletion), आदि। इनमे से कुछ प्रदूषण अन्तर्राष्ट्रीय, राष्ट्रीय व राज्यीय स्तरो के अलावा अन्य छोटे स्तरो जैसे जिला व ग्राम–स्तरो तक चल रहे हैं। लेकिन ग्रीनहाउस–उष्णीकरण (greenhouse warming) व ओजोन परत का क्षय (Ozone depletion) का विवरण अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रदूषण के अन्तर्गत किया जाता है, जबकि जल–प्रदूषण, ध्वनि–प्रदूषण, मिट्टी का कटाव व मिट्टी का क्षारीयकरण, वृक्षो की कटाई तथा जैविक–विविधता का निरन्तर ह्रास विभिन्न देशो व राज्यो मे पर्यावरण के विनाश को इगित करते है।

अन्तर्राष्ट्रीय–ऊर्जा–पहल (Initiative), बगलौर के पर्यावरण–विशेषज्ञ अमूल्य के एन रेड्डी (Amulya K N Reddy) ने ठीक ही कहा है कि " **कुछ स्थानीय पर्यावरणीय**

---

1 Economic Survey 1998-99, Chapter 11 **Special Topic Promoting Sustainable Development: Challenges For Environment Policy, p.156.** यह अध्याय काफी रोचक है। इसे ध्यान से पढ़ा जाना चाहिए।

2 **World Development Report 2003, p 183**

समस्याएँ होती हैं; जैसे असुरक्षित जल, लगातार जमा होता हुआ शहरी कूड़ा-कचरा, बिना साफ किया गया गंदा पानी (untreated sewage), व्यक्तिगत वाहन व्यवस्था के कारण प्रदूषित शहरी वायु अथवा लकडी की ईंधन वाले चूल्हों के धुएँ से प्रदूषित घर के अन्दर की वायु, आदि। इनके अलावा प्रादेशिक व राष्ट्रीय पर्यावरणीय समस्याएँ भी होती हैं; जैसे प्रदूषण फैलाने वाले उद्योग, एसिड वर्षा (औद्योगिक प्रक्रियाओं में ईंधन के जलने से वायु में सल्फर व नाइट्रोजन तत्वों तथा अन्य प्रदूषित तत्वों का सम्मिश्रण), नदी-प्रदूषण, वृक्षों का नाश, आदि। अंत में भूमण्डलीय (global) पर्यावरणीय समस्याएँ आती हैं; जैसे वायुमण्डल में ग्रीन हाउस गैसों का जमा होना।"[1] इस प्रकार पर्यावरणीय समस्याऐं स्थानीय राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय तीनो स्तरो पर देखी जा सकती हैं।

हमे इनको क्रमबद्ध ढग से हल करना होगा। सर्वप्रथम, हम स्थानीय समस्या को ले सकते है, तत्पश्चात् राष्ट्रीय समस्या को और अतत अन्तराष्ट्रीय समस्या को, हालाकि इस सम्बध मे कोई पक्का या अन्तिम नियम नहीं होता। चूँकि ये सभी हमारे दैनिक जीवन पर विपरीत प्रभाव डालते हैं इसलिए इनको किसी न किसी चरण मे तो हल करना ही होगा।

हम नीचे पर्यावरण–कुप्रबन्ध से उत्पन्न विभिन्न प्रकार के प्रदूषणो का विवेचन करते है–

पर्यावरण-प्रदूषण-अन्तर्राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में
(In global perspective)

(1) ग्रीनहाउस उष्णीकरण (Greenhouse warming)– वातावरण मे गैसो के सकेन्द्रण व सघनन के बढने से ग्रीनहाउस–उष्णीकरण (Warming) बढ रहा है। वातावरण मे ग्रीनहाउस गैसे (greenhouse gases) (GHGs) बढ़ रही हैं। इनमे से प्रमुख गैस–कार्बन डाइऑक्साइड पिछले तीस वर्षों मे 12% से अधिक बढ गई है। यह सब मानवीय क्रियाओ के फलस्वरूप हुआ है। भविष्य मे ग्रीनहाउस की गर्मी के बढ़ने की प्रक्रिया पर आर्थिक विकास की गति, उत्पादन की ऊर्जा–गहनता, वातावरण, समुद्र आदि की रसायन–क्रिया वगैरह का प्रभाव पडेगा। मिथेन गैस के स्रोत धान के खेत व पशुधन तथा प्राकृतिक नम जलवायु वाले प्रदेश होते है। नाइट्रस ऑक्साइड गैस विशेषतया समुद्र व मिट्टी से उत्पन्न होती है। कार्बन डाइऑक्साइड लकडी, कोयला पेट्रोल आदि ईंधनो के जलने से उत्पन्न होती है।

वातावरण मे ग्रीनहाउस गैसो मे कार्बन डाइऑक्साइड के दुगुना होने से तापक्रम 1 2° सैल्सियस बढता है। जल की भाप (Water Vapor) व समुद्र का भी ऊष्णीकरण पर प्रभाव पडता है। ग्रीनहाउस–उष्णीकरण से जलवायु मे परिवर्तन आता है। इससे तूफानो की सम्भावना व भीषणता पर भी असर पड़ता है। इस प्रकार ग्रीनहाउस –ऊष्णीकरण पर्यावरण को प्रभावित करता है।

भारत में ग्रीनहाउस गैस का प्रभाव- भारत मे कृषिगत क्षेत्र का विशेष महत्त्व होने से मिथेन गैस का योगदान उल्लेखनीय है। यह सिचित चावल की खेती व पशु–पालन से उत्पन्न होती है। कृषि से उत्पन्न होने के कारण इसको कम करने की तकनीकी सम्भावनाएँ कार्बन डाइऑक्साइड को नियत्रित करने की तुलना मे कम पाई जाती हैं। कृषिगत उत्पादन को बनाए रखते हुए मिथेन गैस को सीमित कर सकना काफी कठिन होता है। अत इससे होने वाली पर्यावरण की क्षति को कम करना सुगम नहीं होता।

(2) ओजोन की परत का क्षयशील होना (Ozone depletion)– वैज्ञानिको के अनुसार पृथ्वी की सतह से 25 से 35 किलोमीटर ऊपर एक ओजोन की परत होती है, जो घातक अल्ट्रावायलेट रेडियम विकिरण को रोकती है। 1985 मे एन्टार्टिका (Antarctica) पर

---

1 Amulya K N Reddy Environmental Action- First Act locally then globally; an article In Survey of the Environment 1995 (The Hindu) p 33

ओजोन मे कमी देखी गई थी। वायुमण्डल मे क्लोरीन का जमाव बढ़ने से ओजोन मे कमी आती है। क्लोरीन CFCs (क्लोरोफ्लोरोकार्बन्स) से उत्पन्न होती है। अनुमान है कि ओजोन परत का घटना कम से कम एक दशक तक जारी रहेगा। उसके बाद यह क्रम पलट सकता है। ओजोन परत के क्षय से लोगो के स्वास्थ्य को हानि हो सकती है। इससे सामुद्रिक प्रणाली की उत्पादकता घटती है। ओजोन के क्षय के फलस्वरूप सूर्य की अल्ट्रावायेलेट रेडियेशन, जो पृथ्वी की सतह पर प्राप्त होती है, उसमे वृद्धि हो जाती है। एन्टार्टिका में ओजोन के ह्रास की घटना के दौरान अल्ट्रावायलेट (uv) से जैविक क्षति बढ़ी है। ऐसा माना जाता है कि अल्ट्रावायलेट की वृद्धि के प्रभाव सर्वप्रथम दक्षिणी गोलार्द्ध मे प्रगट होगे।

ओजोन मे 10 प्रतिशत की कमी से चर्म–केन्सर (Skin Cancer) मे वृद्धि होती है जिसका प्रभाव प्रति वर्ष 3 लाख व्यक्तियो पर पड़ सकता है। इसके असर से प्रतिवर्ष 17 लाख व्यक्ति ऑखो की केटेरेक्ट की बीमारी से ग्रस्त हो सकते है। uv रेडियेशन के बढने से स्वास्थ्य को काफी हानि होने का भय रहता है। इससे पौधो पर भी विपरीत प्रभाव पड सकता है। सामुद्रिक उत्पादकता व परिवेश–व्यवस्था पर इसके प्रभावो के सम्बध मे अभी पूरी जानकारी नहीं हो पाई है।

इस प्रकार ग्रीनहाउस–ऊष्णीकरण (Greenhouse warming) व ओजोन के क्षयीकरण व ह्रास (Ozone depletion) ने स्वास्थ्य के लिए नए खतरे उत्पन्न कर दिए हैं, विशेषतया विकासशील देशो मे पर्यावरण को जो क्षति पहुँचने लगी है, वह वास्तव मे एक चिन्ता का विषय है।

(3) जैविक विविधता का ह्रास (Loss of Biodiversity)– नाना प्रकार के पेड – पौधो, पशु–पक्षियो तथा जीव–जन्तुओ से भरी परिवेश–व्यवस्था का कालान्तर मे निरन्तर ह्रास होता गया है। ये अपने प्राकृतिक परिवेश मे ही कायम रहते हैं और फलते–फूलते हैं। वहाँ से इनको हटाने का प्रयास करने से ये बडे पैमाने पर नष्ट होने लगते है और अन्त मे सदैव के लिए अनन्त मे विलीन हो जाते है। अब यह समझ मे आने लगा है कि इनमे से कुछ प्रमुख किस्मो या नस्लो (पशु–पक्षियो या पौधो) के नष्ट हो जाने से अन्य नस्लो पर भी प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। 'प्रमुख' किस्मो का परिवेश–प्रणाली पर गहरा असर पडता है। उदाहरण के लिए, चमगादड़ (bat) जैसे छोटे से पक्षी को ही लीजिए। 1970 के दशक मे मलेशिया मे एक लोकप्रिय फल– डूरिअन (durian) की पैदावार अचानक घटने लगी थी, जिससे 10 करोड डालर सालाना वाले इस उद्योग को भारी खतरा उत्पन्न हो गया था। इस फल के पेड बिल्कुल दुरुस्त थे। वे दीखने मे स्वस्थ थे, लेकिन इनमे अचानक कम फल लगने लगे। इसका रहस्य उस समय खुला जब यह पता चला कि इस पेड के फूल को जो चमगादड़ की एक किस्म द्वारा पराग दिया जाता था (pollinated) (जिससे फल लगने मे मदद मिलती थी), उनकी सख्या काफी घट गई थी। चमगादड़ो की सख्या दो कारणो से घट गई थी– (i) ये स्वय अपना भोजन मैंग्रोव (Mangrove) दलदली भूमि मे पेडो से लेती थी, जिनमे श्रिम्प (समुद्री–केकडा) का विकास करने से उसका मिलना कम हो गया था एव (ii) एक स्थानीय सीमेट की फैक्ट्री के कारण लाइमस्टोन की गुफाएँ ढहा दी गई, जहाँ चमगादड़ विश्राम किया करते थे। बाद मे सरक्षण के प्रयासो के अन्तर्गत लाइमस्टोन की पहाड़ी गुफाएँ बचाने के कारण सीमेट की फैक्ट्री बद कर दी गई। तत्पश्चात् डूरिअन फल उद्योग व चमगादड दोनो को पुनर्जीवन मिल गया और दोनो पुन पनपने लगे। इससे सिद्ध होता है कि पर्यावरण व परिवेश जगत मे एक छोटा–सा पक्षी (चमगादड़) और वह भी अधा, कितना लाभकारी हो सकता है और उसके नष्ट होने से करोडो डालर वार्षिक आमदनी वाला उद्योग भी खतरे मे पड सकता है।

फल उद्योग व चमगादड़ दोनों को पुनर्जीवन मिल गया और दोनों पुन: पनपने लगे। इससे सिद्ध होता है कि पर्यावरण व परिवेश जगत में एक छोटा सा पक्षी (चमगादड़) और वह भी अंधा, कितना लाभकारी हो सकता है और उसके नष्ट होने से करोड़ों डालर वार्षिक आमदनी वाला उद्योग भी खतरे में पड़ सकता है।

इसी प्रकार कहते हैं कि **दक्षिण अफ्रीका में हाथियों के खत्म हो जाने से तीन किस्म के हिरण भी नष्ट हो गए, क्योंकि हाथी अपने पैरों से नये पेड़-पौधों को कुचल कर उन्हे छोटे-छोटे घास में बदल देते थे, जिनमें हिरण पनप सकते थे। लेकिन हाथियों के नहीं रहने से पेड़-पौधे बड़े-बड़े व सघन होने लग गए जिनमें हिरणों का निवास करना भी कठिन हो गया।**[1] इस प्रकार यह माना गया है कि जैविक विविधता को नष्ट होने से बचाया जाना चाहिए। पेड़-पौधों व पशु-पक्षियों को अपने नैसर्गिक निवासों (natural habitats) में रहने व पनपने का अवसर दिया जाना चाहिए। इससे हमें भोजन, रेशे, दवा व औद्योगिक प्रक्रियाओं के लिए आवश्यक इन्पुट मिलेंगे। इससे इन्सान को पर्यावरण के भावी दबावों को झेलने की शक्ति भी मिलती है। यह हमारा पुनीत कर्तव्य भी है कि जो कुछ हमें प्रकृति से मिला है, उसे हम भावी पीढ़ी को विरासत में सौंपें। हमें जैविक विविधता को नष्ट होने से बचाना चाहिए, क्योंकि जब कोई किस्म या जाति या नस्ल (पौधे व पशु-पक्षी की) नष्ट हो जाती है तो पर्यावरणीय संतुलन मूल रूप से परिवर्तित हो जाता है। ऊष्ण प्रदेश के जंगलों में जैविक विविधता का विनाश अभूतपूर्व गति से हुआ है। हालांकि बड़े-बड़े भू-क्षेत्र संरक्षण के लिए सुनिश्चित किए गए हैं, फिर भी अपर्याप्त प्रबन्ध व कानूनों की अवहेलना होते रहने से अभी तक इस दिशा में पर्याप्त सफलता नहीं मिल पाई है।

भारत में जैव-विविधता की स्थिति—विश्व के भू-क्षेत्र के 2.4% अंश के साथ भारत विश्व की जैव-विविधता में 8% अंश रखता है। विश्व के 12 मेगा (विशाल) जैव-विविधता वाले केन्द्रों में भारत का भी स्थान आता है। **पौधों की विविधता की दृष्टि से भारत का विश्व में दसवाँ तथा एशिया में चौथा स्थान आता है।** भारत में 46 हजार किस्म के पौधे व लगभग 81 हजार किस्म के जानवर पाए जाते हैं; जिनमें से 1500 पौधों की किस्में, 79 स्तनधारी जीव (mammals), 44 पक्षी, 15 रेंगने वाले जानवर, 3 जलस्थल चर पशु (amphibians) व अनेक प्रकार के कीट-पतंग खतरे में आए माने जाते हैं (endangered)। इस प्रकार का जैविक खतरा वास्तव में हमारे लिए एक भारी चिन्ता का विषय है। पशुओं की अनधिकार शिकार (poaching) व उनके अवैध व्यापार पर रोक लगने से ही जैव-विविधता की रक्षा करना सम्भव हो सकता है।[2]

(4) जल-प्रदूषण (Water-pollution)—आज विश्व में जल-प्रदूषण की समस्या सबसे ज्यादा गम्भीर हो गई है। वर्तमान में बहुत से लोग नदियों व तालाबों का अशुद्ध पानी पीने को बाध्य हैं। नदियों का जल नाना प्रकार की गंदगी व मल-मूत्र के मिश्रण से निरन्तर

---

1 चमगादड़ व हाथियों के इस दृष्टान्त के लिए देखिए *World Development Report 1992* पृ 59, बॉक्स 2.3—प्रमुख नस्लें—बड़ी व छोटी। कहते हैं कि चीन में चिड़ियों को नष्ट करने से वे जीव तेजी से बढ़ गये जिनको चिड़िया खा जाती थीं। इससे उन जीवो के बढने से देश को काफी हानि होने लगी, जिससे पुन: चिड़ियों को बसाना व पनपाना पड़ा। इस प्रकार विभिन्न प्रकार के जीव जन्तुओं की परस्पर निर्भरता पर पूरा ध्यान दिया जाना चाहिए।

2. **Economic Survey 1998-99, (GOI), pp.157-158.**

दूषित होता जा रहा है। जब नदियाँ बड़े नगरों व औद्योगिक केन्द्रों के पास से गुजरती हैं तो उनमें प्रदूषण की मात्रा बढ़ जाती है, कारखानों से निकले रासायनिक तत्त्वों के नदियों के जल में घुल जाने से तथा पानी में सीसे, पारे व कैडमियम के घुल जाने से पेयजल से इन प्रदूषित तत्त्वों को निकालना बहुत कठिन हो जाता है। सतह के जल के दूषित हो जाने से भू-जल भी दूषित हो जाता है। भू-जल में भी भारी धातु मिश्रित रसायन व अन्य खतरनाक पदार्थ घुल-मिल जाते हैं। भू-जल के भण्डारों में नदियों की भाँति स्वयं को शुद्ध करने की क्षमता नहीं पाई जाती है। इसलिए एक बार प्रदूषित हो जाने पर उनको शुद्ध करना मुश्किल हो जाता है। सेप्टिक टैंक प्रणाली की जगह पाइप द्वारा गंदे पानी की प्रणाली लागू करने से भू-जल प्रदूषण का खतरा काफी कम हो जाता है। विकासशील देशों में ग्रामीण निर्धन लोग नदियों, झीलों व असुरक्षित छिछले कुओं का पानी काम में लेने के कारण कई प्रकार के रोगों के शिकार हो जाते हैं। भारत में प्रति वर्ष 15 लाख बच्चे पानी द्वारा उत्पन्न बीमारियों से, 5 वर्ष की आयु से पूर्व ही, मौत के मुँह में चले जाते हैं।[1]

जल-प्रदूषण के अलावा जल का अभाव भी एक गम्भीर समस्या मानी जाती है। पानी मनुष्यों व पशुओं के लिए पीने के लिए आवश्यक होता है। कृषि में सिंचाई के लिए, भवन-निर्माण के लिए, बाग-बगीचों में पानी देने के लिए तथा उद्योगों के लिए जल की आवश्यकता होती है। इन सभी कार्यों के लिए प्राय: जल की पर्याप्त सप्लाई नहीं हो पाती। राजस्थान के कुछ शुष्क भागों में स्त्रियों को दैनिक आवश्यकता की पूर्ति के लिए पानी लाने के लिए प्रतिदिन मीलों चलना पड़ता है। इससे जीवन की कठोरता व नीरसता का अनुमान लगाया जा सकता है। लगातार सूखा व अकाल पड़ने से भूजल का स्तर लगातार नीचे चलता जा रहा है। कुछ जगहों पर भूजल खारा निकलता है जो पीने के लायक नहीं होता। वर्ष 2000 के अकाल व सूखे की स्थिति ने गुजरात व राजस्थान में विशेषतया 'पानी के अकाल व अभाव' की दशा उत्पन्न कर दी है। इन राज्यों में अनेक गाँवों में पानी के लिए त्राहि-त्राहि मची है और हमारे विकास-कार्यक्रमों के खोखलेपन को उजागर किया है।

प्रदूषित जल पीने व उससे नहाने से टायफायड, हैजा, दस्त, राउण्ड वर्म, नारू (guinea-worm), सिस्टोसोमाइसिस (सिस्टोसोम कीड़े से उत्पन्न) आदि रोग हो जाया करते हैं। साथ में सफाई की अपर्याप्त व्यवस्था (inadequate sanitation) होने से ये बीमारियाँ और उग्र रूप धारण कर सकती हैं। शहरों व गाँवों में कूड़े के ढेर जमा होने व उनकी सफाई न होने से वे सड़ने लगते हैं, जिससे कई प्रकार की बीमारियों के उत्पन्न होने का भय हो जाता है। बड़े शहरों में गन्दी बस्तियों के बढ़ने से बीमारियाँ बढ़ती जा रही हैं। कुछ समय पूर्व सूरत में प्लेग की बीमारी के भय से लोगों का पलायन हुआ था और सरकार को स्थिति को सुधारने के लिए आवश्यक कदम उठाने पड़े थे। पेयजल में सुधार व सफाई की पर्याप्त व्यवस्था से अनेक व्यक्तियों को उपर्युक्त बीमारियों का शिकार होने से बचाया जा सकता है।

जल-प्रदूषण से मछली-उद्योग को भी क्षति पहुँचती है। गंदे पानी व रासायनिक पदार्थों के घोल से मछली भी दूषित हो जाती है और वह मानवीय उपभोग के लायक नहीं रहती। सामुद्रिक खाद्य-पदार्थ (sea food) भी गंदे पानी से प्रदूषित हो जाने से हैपाटाइटिस जैसी बीमारी या हैजे को उत्पन्न करते हैं।

भारत सरकार ने छ: बड़ी नदियों को प्रदूषित माना है। इनके नाम इस प्रकार हैं—**साबरमती, सुबरनरेखा, गोदावरी, कृष्णा, सिंध तथा गंगा व इसकी प्रमुख सहायक नदियाँ (प्रमुखतया यमुना, गोमती आदि)**। इनमें घरेलू गंदा पानी व औद्योगिक व्यर्थ पदार्थ

---

1. N.R. Krishnan, **Environmental Priorities for the Govenment, Business Line**, August 6, 2004, p 11.

भारी मात्रा में घुल मिल जाते हैं ।[1] विश्व विकास रिपोर्ट 1992 में कावेरी, गोदावरी, साबरमती, सुबरनरेखा (जमशेदपुर व रांची क्षेत्रों के लिए) तथा ताप्ती (बुरहानपुर व नेपानगर क्षेत्रों के लिए) नदियों के प्रदूषण की मात्रा के अनुमान दिए गए हैं जिससे पता चलता है कि इनमें घुले हुए ऑक्सीजन (dissolved oxygen) व मल मूत्र प्रदूषण (fecal coliform) के अंश किस सीमा तक पाए जाते हैं । उन आँकड़ों के अध्ययन से पता लगता है कि 1983-86 की अवधि में सुबरनरेखा नदी में जमशेदपुर व रांची क्षेत्रों में मल मूत्र के कारण प्रदूषण की मात्रा सर्वाधिक हो गई थी । लेकिन 1987-90 की अवधि में यह कम हुई है, हालांकि अब भी यह काफी ऊँची बनी हुई है ।

शहरों में जल प्रदूषण दिनोंदिन बढ़ता जा रहा है । प्राय. दूरदर्शन व रेडियो के माध्यम से कई शहरों व स्थानों के बारे में जल प्रदूषण की खबरें प्रसारित होती रहती हैं । दूषित जल को पीने के लिए लोग बाध्य होते हैं और उन्हें नाना प्रकार के असाध्य रोगों का शिकार होना पड़ता है । 1994 में जयपुर में सवाई मानसिंह अस्पताल की एक टीम द्वारा कीटाणुओं के प्रदूषण के अध्ययन से पता चला है कि **जयपुर का निवासी औसतन प्रत्येक दो मिनट मे 25 कीटाणु श्वास के जरिए अन्दर पहुँचा लेता है ।**[2] राजस्थान में जल-प्रदूषण के साथ साथ जलाभाव की समस्या भी काफी गम्भीर है । भूजल का स्तर उत्तरोत्तर नीचे जा रहा है जिससे जल की समस्या चुनौतीपूर्ण हो गयी है ।

(5) वायु-प्रदूषण (Air Pollution)—भारत में, विशेषतया ग्रामीण क्षेत्रों में, लकड़ी व गोबर जलाने से जो धुआँ होता है उससे घर के अन्दर वायु-प्रदूषण हो जाता है । घर के बाहर वायु-प्रदूषण ऊर्जा के उपयोग, वाहनों का धुआँ निकलने व औद्योगिक उत्पादन के कारण फैलता है । 1980 के दशक के प्रारम्भिक वर्षों में विश्व के प्रमुख नगरों जैसे बैंकाक, बीजिंग, कलकत्ता, नई दिल्ली व तेहरान में वायु-प्रदूषण विश्व स्वास्थ्य संगठन (WHO) के निर्देशों से कहीं अधिक पाया गया है । इससे निमोनिया व हृदय-रोग तथा श्वास-सम्बन्धी बीमारियाँ बढ़ी हैं । कमजोर स्वास्थ्य वाले लोग इनसे जल्दी प्रभावित होते हैं । वायु-प्रदूषण से पुरानी ब्रोन्काइटिस व इम्फीसीमा बीमारियाँ बढ़ी हैं जिनका असर श्वास नली के निचले भाग पर होने से फेफड़ों में इन्फेक्शन हो जाता है और अंत में हृदय गति रुक सकती है । भारत व नेपाल में अध्ययनों से पता चला है कि बायोमास के धुआँ (लकड़ी, गोबर आदि जलाने से उत्पन्न धुआँ) से श्वास नली की बीमारी बढ़ी है । गाड़ियों से धुआँ निकलने से वायु-प्रदूषण बढ़ा है । हाल की एक जाँच के बाद **मुम्बई शहर में पर्यावरण-प्रदूषण के कारण तीन वर्ष की उम्र से नीचे के बच्चों के रक्त में सीसे (lead) की मात्रा ज्यादा पायी गयी है ।** इसके परिणाम बच्चों के स्वास्थ्य के लिए काफी घातक माने गए हैं । एक और अध्ययन के अनुसार पर्यावरण प्रदूषण के कारण बच्चों में बुद्धि-भागफल (intelligence quotient) (IQ) सात वर्ष की आयु तक चार या अधिक बिन्दु गिरा है (बैंकाक के अध्ययन के अनुसार) तथा हाइपरटेन्सन से होने वाली मौतें बढ़ती जा रही हैं । सल्फर डाइऑक्साइड से भी प्रदूषण बढ़ रहा है । दिल्ली में वायु-प्रदूषण के कारण उच्च रक्त चाप, दमा व हृदय-रोग के मरीजों की संख्या में वृद्धि हुई है ।

---

1 Neena Vyas **Pollution-Challenge and Response,** an article in *Survey of the Environment* 1992 (The Hindu) p 173

2 Sunny Sebastian **Jaipur—On the road to decline,** in *Survey of the Environment* 1995, (The Hindu) p 129

भारत के प्रमुख शहरों में पिछले चालीस वर्षों में जिस रफ्तार से मोटरगाड़ियों, बसों, थ्री व्हीलर्स व टू व्हीलर्स आदि की संख्या बढ़ी है, उसके परिणामस्वरूप वाहनों से उत्पन्न होने वाला प्रदूषण बहुत बढ़ गया है। प्रतिदिन विभिन्न प्रकार की गैसों के उत्सर्जन का भार (emission load) (जैसे सस्पेन्डेड पर्टीक्यूलेट मैटर, सल्फर डाइऑक्साइड, ऑक्साइड ऑफ नाइट्रोजन, हाइड्रोकार्बन्स तथा कार्बन मोनोक्साइड) मार्च 1987 में कुछ नगरों के लिए निम्न तालिका में दिया गया है।[1]

		(प्रतिदिन टनों में) (गैस के उत्सर्जन का भार)
1	दिल्ली	872
2	मुम्बई	549
3	कलकत्ता	245
4	चेन्नई	1[illegible]
5	जयपुर	75
6	कानपुर	48

इस प्रकार दिल्ली में प्रतिदिन वाहनों से उत्पन्न प्रदूषण का भार (pollution load) 872 टन पाया गया है, जो सर्वाधिक है। यह जयपुर की तुलना में 12 गुना है, जिससे वहाँ के प्रतिदिन के वाहन-जन्य वायु-प्रदूषण का अनुमान लगाया जा सकता है।

(6) मिट्टी का कटाव व मिट्टियों को होने वाली अन्य प्रकार की क्षति—मिट्टी को तीन प्रकार से क्षति पहुँचती है, यथा मरुस्थलीकरण या रेगिस्तानीकरण (desertification), मिट्टी के कटाव (erosion) तथा क्षारीयकरण (salinization) अथवा पानी का जमाव या दलदल होने से क्षति (Waterlogging)। मरुस्थलीकरण से बालू आगे बढ़कर चरागाहों व कृषिगत भूमि को ढक लेती है। मिट्टी का कटाव हवा व पानी से होता रहता है जिससे मिट्टी की उपजाऊ परत आगे चली जाती है, जिससे प्रति हैक्टेयर पैदावार घट जाती है।

उष्ण प्रदेशों वाले विकासशील देशों में इस प्रकार का कटाव काफी क्षति पहुँचाता है। मिट्टी के कटाव से बाँधों, सिंचाई-प्रणालियों व नदी-परिवहन-व्यवस्था में मिट्टी इकट्ठी हो जाती है और मछली-पालन को क्षति पहुँचती है। वैसे मिट्टी के कटाव से कभी-कभी दूसरी जगह उपजाऊपन बढ़ जाता है, लेकिन जिस स्थान से मिट्टी की ऊपरी परत आगे चली जाती है, उस जगह तो हानि ही होती है। इसलिए इसका वितरणात्मक प्रभाव प्रतिकूल होता है। उदाहरण के लिए, नेपाल को इससे संतोष नहीं होगा कि इसकी मिट्टी के बह कर चले जाने से बंगला देश की कृषिगत भूमि ज्यादा उपजाऊ बन गई है।

अतः भू-संरक्षण के उपाय अपनाने जरूरी हो गए हैं। इसके लिए परिधि-खेती (contour cultivation) (पहाड़ी क्षेत्रों में), कृषि-वानिकी, खाद देना, आदि लाभकारी होते हैं। क्षारीयकरण व पानी का जमाव होने से सिंचित क्षेत्रों को काफी हानि हो रही है। यह चीन, मिस्र, भारत, मैक्सिको, पाकिस्तान आदि में विशेष रूप से देखने को मिलती है। विश्व में कृषिगत भूमि का लगभग एक-तिहाई भाग लवण की समस्या से ग्रस्त पाया जाता है। सिंचाई की खराब व्यवस्था के कारण सेम व क्षारीयता की समस्या उत्पन्न हुई है। नए भू-क्षेत्रों में

---

1 India Development Report 1997, Chapter 6, Environment : Can Neglect No Longer, an article by Vijay Laxmi, Jyoti Parikh and Kirit Parikh, p 98

यह समस्या बढ़ती जा रही है। इस प्रकार मिट्टी को मरुस्थलीकरण, कटाव व लवणता के कारण ह्रास का शिकार होना पड़ा है।

(7) वनों का वृक्षों की कटाई के कारण तीव्र गति से विनाश (Deforestation)—वृक्षों की अनियन्त्रित कटाई से पर्यावरण को भारी क्षति पहुँचती है। इस सम्बन्ध में ऊष्ण प्रदेशों में नम जंगलों की स्थिति ज्यादा चिंताजनक मानी गई है। वन सूखे प्रदेशों व शीतोष्ण प्रदेशों में भी पाए जाते हैं। वनों के कई प्रकार के सामाजिक व पर्यावरणीय कार्य होते हैं। वे जलवायु, जल-पूर्ति, मिट्टी, आदि को प्रभावित करते हैं। ऊष्ण प्रदेशों के नम जंगलों में वृक्षों की अव्यवस्थित कटाई से होने वाली क्षति को पुनः वृक्षारोपण से पूरा कर सकना कठिन होता है।

इनमें जैविक विविधता भी अधिक पाई जाती है। हालांकि ये पृथ्वी के 7% भाग में पाए जाते हैं, लेकिन, पेड़-पौधों व जीव-जन्तुओं की आधी नस्लें इनमें मिलती हैं। जंगलों को कृषि, निर्माण-सामग्री व ईंधन की लकड़ी के लिए साफ कर दिया गया है। विकासशील देशों में जलाने की लकड़ी के लिए ज्यादातर वनों का विनाश हुआ है। ऊष्ण प्रदेशों के नम वनों (tropical wet forests) को इमारती लकड़ी के लिए उजाड़ दिया गया है। खनन, तेल की खोज, सड़क व रेलों के निर्माण, बीमारियों पर नियंत्रण की आवश्यकता आदि के कारण वन-क्षेत्रों में लोग प्रविष्ट हुए हैं जिससे वनों को हानि हुई है। अतः भविष्य में वनों के संरक्षण व विकास पर ध्यान देना होगा। चेकोस्लोवाकिया, कांगो, कोलम्बिया, दक्षिण चिली, मेडागास्कर, ब्राजील आदि में वनों का विनाश किया गया है।

उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट होता है कि अभी तक **विकास की प्रक्रिया में पर्यावरण की सुरक्षा व इसके समुचित प्रबन्ध पर पर्याप्त ध्यान न देने से विश्व में जल-प्रदूषण, वायु-प्रदूषण, ध्वनि-प्रदूषण, मिट्टी व वनों के विनाश तथा ह्रास, जैविक विविधता के अन्तर्गत नाना प्रकार के पशु-पक्षियों, जीव-जन्तुओं व पेड़-पौधों का विलुप्त होना, ग्रीनहाउस ऊष्णीकरण व ओजोन की परत के ह्रास आदि के रूप में पर्यावरण-पतन की प्रक्रिया जारी है जिसे रोका जाना अत्यावश्यक है।**

पर्यावरण में गिरावट के कारण—पर्यावरण की चर्चा में सर्वप्रथम प्रश्न इसके कारणों को लेकर किया जाता है। सभी इस सम्बन्ध में एक मत हैं कि जनसंख्या की वृद्धि व निर्धनता पर्यावरण-असंतुलन के मुख्य कारण हैं।

(1) जनसंख्या, निर्धनता व पर्यावरण—वर्तमान में विश्व की जनसंख्या लगभग 5.8 अरब है और इसमें प्रतिवर्ष औसतन 1.5% की रफ्तार में वृद्धि हो रही है तथा एक पीढ़ी में 1990 से 2030 तक जनसंख्या में 3.7 अरब की वृद्धि की सम्भावना है। इस प्रकार जनसंख्या के बढ़ने से भोजन, ईंधन, पशुओं के लिए चारे व लोगों के लिए रोजगार की आवश्यकताएँ बढ़ती हैं जिससे उचित व्यवस्था के अभाव में वृक्षों की कटाई, मिट्टी के ह्रास, जल तथा वायु के प्रदूषण आदि की समस्याएँ अधिक उग्र होती जाती हैं।

(2) विकसित औद्योगिक देश सर्वाधिक प्रदूषण फैलाते हैं—विश्व में 25% लोग विश्व की 75% पर्यावरण-समस्या के लिए उत्तरदायी माने गए हैं। अमेरिका में ऊर्जा की सर्वाधिक खपत होती है। वहाँ प्रति व्यक्ति वायुमण्डल में कार्बन की छोड़ी जाने वाली मात्रा 5 टन मानी जाती है, जबकि भारत में यह मात्र 0.4 टन है, क्योंकि यहाँ ऊर्जा की खपत कम पाई जाती है। एक अमरीकी नागरिक एक औसत भारतीय से वायुमण्डल को 12 गुना

प्रदूषित करता है। अमरीका का रिकार्ड CFC (क्लोरोफ्लोरोकार्बन) की खपत में भी ऊँचा है। यहाँ 350 अरब मीट्रिक टन सी एफ सी पर्यावरण में छोड़ी जाती है, जबकि जापान में 100 अरब मीट्रिक टन तथा भारत में मात्र 0.7 अरब मीट्रिक टन छोड़ी जाती है।

(3) विकासशील देशों में औद्योगीकरण व शहरीकरण से प्रदूषण में वृद्धि—चीन व भारत जैसे देशों में औद्योगीकरण की प्रगति से तथा जनसंख्या की वृद्धि से प्रदूषण का विस्तार हो रहा है, और आगामी 30-40 वर्षों में कार्बन की निकासी विश्व में वर्तमान के 20 अरब टन के स्तर से बढ़कर 50 अरब टन तक जा सकती है।

(4) पर्यावरण के अनुकूल टेक्नोलोजी पर कम ध्यान तथा प्राकृतिक साधनों के संरक्षण के प्रयासों में कमी—विकसित तथा विकासशील देशों में टेक्नोलोजी पर्यावरण के अनुकूल न होने से भी पर्यावरण को होने वाली क्षति बढ़ी है। प्राकृतिक साधनों का उपयोग करते समय इनके संरक्षण व संवर्द्धन पर उचित ध्यान नहीं दिया जाता। उदाहरण के लिए, खनन-क्षेत्रों में से खनिज-पदार्थ निकाल कर उनको अनदेखा छोड़ देने से वे भू-क्षेत्र खाली व वीरान पड़े रह जाते हैं, जिससे वे पर्यावरण के ह्रास में योगदान देने लग जाते हैं। वृक्षों की कटाई के साथ-साथ नए वृक्ष लगाने पर पूरा ध्यान नहीं दिया जाता। झूम खेती (shifting cultivation) की पद्धति में जंगलों को साफ करके खेती कुछ वर्षों के लिए की जाती है। फिर उस भूमि को छोड़ दिया जाता है, जिससे पर्यावरण के विनाश को प्रोत्साहन मिलता है। **कहने का तात्पर्य यह है कि मनुष्य जितना प्रकृति से लेता है, अथवा लेना चाहता है, उतना वह प्रकृति को देता नहीं, अथवा दे नहीं पाता, अथवा देना नहीं चाहता। इससे मानव व प्रकृति के बीच एक संघर्ष छिड़ जाता है और इनमें परस्पर असंतुलन के फलस्वरूप पर्यावरण का पतन प्रारम्भ हो जाता है जो उत्तरोत्तर अधिक गम्भीर होता जाता है।**

(5) बड़े बाँधों पर अधिक बल देने से पर्यावरण को खतरा हो सकता है—जैसा कि गुजरात में नर्मदा नदी पर बन रहे सरदार सरोवर प्रोजेक्ट व उत्तर प्रदेश की टेहरी बाँध परियोजना के सम्बन्ध में कहा गया है। पर्यावरण-विशेषज्ञों का मानना है कि बड़े बाँधों से वन-क्षेत्र को हानि होती है, क्योंकि वृक्षों की कटाई करनी होती है और लोगों को अन्यत्र बसाने की व्यवस्था में कई प्रकार की कठिनाइयाँ आती हैं। हालांकि इस सम्बन्ध में लागत-लाभ अध्ययनों का महत्त्व स्वीकार किया गया है, फिर भी कुल मिलाकर यह माना जाने लगा है कि बड़ी नदी घाटी परियोजनाओं का चयन काफी सोच-विचार कर व स्थानीय लोगों को विश्वास में लेकर तथा उनकी पूर्ण सहमति से ही किया जाना चाहिए, ताकि आगे चलकर इनके क्रियान्वयन में बाधाएँ न आएँ। जून 1992 में ब्रेडफोर्ड मोर्स (Bradford Morse) की अध्यक्षता में नियुक्त विश्व बैंक के आयोग ने नर्मदा प्रोजेक्ट पर अपनी लगभग 350 पृष्ठों की रिपोर्ट में इस प्रोजेक्ट के प्रतिकूल पर्यावरणीय प्रभावों पर विस्तार से प्रकाश डाला है। आयोग के मतानुसार सरदार सरोवर प्रोजेक्ट से काफी गाँव पानी की डूब के क्षेत्र में आ जाएँगे, काफी लोग बेघरबार हो जाएँगे जिनको फिर से बसाने की गम्भीर समस्या हल करनी होगी। साथ में नहर व्यवस्था के कारण भूमि की क्षारीयता व दलदल होने की समस्या उत्पन्न हो जाएगी। आयोग की रिपोर्ट से भारत में पर्यावरणवेत्ताओं व पर्यावरण के पक्षधरों के मत की पुष्टि हुई है। बाद में भारत सरकार ने इस प्रोजेक्ट को अपने साधनों से पूरा करने का निश्चय किया है और विश्व बैंक से और सहायता न लेने की घोषणा की है ताकि हमारी स्वायत्तता बनी रह सके। हाल में गुजरात में भयंकर सूखे व अकाल के कारण पुनः यह प्रश्न सामने आया है कि आखिर यह समस्या उत्पन्न क्यों हुई? इस सम्बन्ध में यह

स्वीकार किया गया है कि पर्यावरणविदों के अनुसार यदि सरकार जल-संरक्षण के परम्परागत साधनों-छोटे-छोटे साधनों (कुएँ, बावड़ी, तालाब आदि) का उपयोग करती और उनका विकास करती तो सम्भवत: स्थिति इतनी नहीं बिगड़ती । अत: भविष्य में जल-संरक्षण के इन लघु साधनों के इस्तेमाल पर भी पर्याप्त ध्यान दिया जाना चाहिए ।

इस प्रकार पर्यावरण-प्रदूषण के लिए कई प्रकार के तत्त्व जिम्मेदार होते हैं । लोगों में पर्यावरण सम्बन्धी तथ्यों की ज्यादा से ज्यादा जानकारी होनी चाहिए ताकि वे इसकी रक्षा के लिए अपना आवश्यक योगदान दे सकें ।

पर्यावरण-कुप्रबन्ध व प्रदूषण के दुष्परिणाम[1] —हमने ऊपर पर्यावरण-प्रदूषण व पतन के कुछ दुष्परिणामों की ओर संकेत किया है । अग्र तालिका के रूप में विश्व में विभिन्न पर्यावरणीय समस्याओं के स्वास्थ्य व उत्पादकता पर पड़ने वाले दुष्प्रभावों का सारांश दिया गया है ।

उपर्युक्त विवेचन से पता चलता है कि विभिन्न प्रकार के पर्यावरणीय प्रदूषण स्वास्थ्य को हानि पहुँचाने के साथ-साथ अर्थव्यवस्था में विभिन्न प्रकार से उत्पादकता को भी घटाते हैं । अत: विकास व पर्यावरण पर एक साथ विचार करना जरूरी होता है । अब हम पर्यावरण-प्रदूषण के कुछ पहलुओं का विवेचन राष्ट्रीय व राज्यीय परिप्रेक्ष्य में करेंगे ।

	पर्यावरण की समस्या	स्वास्थ्य पर प्रभाव	उत्पादकता पर प्रभाव
1	जल-प्रदूषण व जल का अभाव	20 लाख से अधिक लोगों की मृत्यु व करोड़ों बीमारी के शिकार, जल की कमी से स्वास्थ्य को खतरे ।	मछली उत्पादन में गिरावट, आर्थिक क्रिया में अवरोध, ग्रामीण परिवारों के समय की बर्बादी, सार्वजनिक संस्थाओं द्वारा सुरक्षित जल उपलब्ध करने की लागतें, आदि ।
2	वायु-प्रदूषण	ग्रामीण क्षेत्रों में इन्डोर धुएँ के कारण महिलाओं व बच्चों के स्वास्थ्य में गिरावट, अकाल मृत्यु, कफ-खांसी आदि ।	वाहन व औद्योगिक क्रिया पर समय-समय पर रोक, वनों पर एसिड वर्षा का दुष्प्रभाव ।
3	ठोस व जोखिम पूर्ण व्यर्थ पदार्थ	सड़ते हुए कूड़े से बीमारी फैलना	भूतल जल-साधनों का प्रदूषण
4	मिट्टी का ह्रास (soil degradation)	सूखे की सम्भावना का बढ़ना तथा गरीब किसानों के पोषण में कमी	खेतों की उत्पादकता में गिरावट, जलाशयों में मिट्टी भर आना, नदियों में परिवहन-चैनल में बाधा, आदि ।
5	वनों की कटाई	स्थानीय बाढ़ से मृत्यु व बीमारियाँ	लकड़ी का अभाव होना, जलग्रहण स्थिरता में कमी (loss of watershed stability)
6	जैविक विविधता का ह्रास (loss of biodiversity)	नई दवाओं की उपलब्धि न होना	पर्यावरण-व्यवस्था में गिरावट व कई प्रकार के प्रकृतिक साधनों की कमी
7	वायुमण्डल के परिवर्तन	बीमारियों, ओजोन परत के घटने से चर्म-कैंसर व आँखों की केटेरेक्ट (मोतियाबिंद) की बीमारी	समुद्रिक खाद्य-पदार्थों की उपलब्धि में व कृषिगत उत्पादकता में प्रादेशिक परिवर्तन आदि ।

1 World Development Report, 1992, p 4, table 1, लेखक द्वारा अनूदित । World Development Report, 2003 में भी प्रावैगिक विश्व में सुस्थिर विकास की समस्याओं पर प्रकाश डाला गया है ।

भारत में पर्यावरण-प्रदूषण के कुछ पहलू—भारत में जनसंख्या 1951 में 36 करोड़ से बढ़कर 1991 में 84 करोड़ हो गई है। वर्ष 2000 में यह एक अरब के अंक को पार कर गई है। ग्रामीण क्षेत्रों व शहरी क्षेत्रों में आबादी के दबाव काफी तेजी से बढ़ते जा रहे हैं। 1961 में शहरी जनसंख्या 7.8 करोड़ थी जो बढ़कर 1991 में 21 76 करोड़ हो गई है। 1961 में यह कुल जनसंख्या का 18% थी जो 1991 में 25.72 प्रतिशत हो गई है। शहरों में आबादी के बढ़ने से पानी, सफाई, आवास, परिवहन, संचार, आदि प्रणालियों पर भारी दबाव पड़े हैं और पर्यावरण-प्रदूषण काफी बढ़ा है।

भारत में कुल भौगोलिक क्षेत्र 32.9 करोड़ हैक्टेयर आंका गया है जिसमें से 17.5 करोड़ हैक्टेयर क्षेत्र पतनोन्मुख (degraded) है। पतन का कारण जल व वायु-कटाव (लगभग 14 1 करोड़ हैक्टेयर में) तथा शेष 3 4 करोड़ हैक्टेयर का पतन जलमग्न क्षेत्र, मिट्टी के खारापन, झूमखेती, घाटियों, नदियों की तेज धाराओं व बाढ़ों, आदि के कारण हुआ है। वर्तमान में वन-क्षेत्र कुल भौगोलिक क्षेत्र के 23.3 प्रतिशत भाग में है, लेकिन वनाच्छादित या वनों से ढका क्षेत्र तो 19 3% ही है (जो 1988 की राष्ट्रीय वन नीति के मुताबिक 33% में होना चाहिए) और सघन वनों का क्षेत्र तो लगभग 11 2% में ही पाया जाता है।[1] शेष क्षेत्र में घटिया श्रेणी के वन ही पाए जाते हैं। वनों की कटाई से व्यर्थ भूमि की मात्रा बढ़ी है तथा मिट्टी का कटाव बढ़ा है। जैसा कि पहले बतलाया गया था, भारत की कई प्रमुख नदियाँ प्रदूषण की शिकार हैं। इनमें मैला पानी छोड़ा जाता है और औद्योगिक व्यर्थ-पदार्थ आदि डाल दिए जाते हैं, जिससे ये भारी मात्रा में प्रदूषित होती जा रही हैं।

ग्रामीण क्षेत्रों में महिलाओं को ईंधन व पानी की तलाश में कई मीलों का चक्कर लगाना पड़ता है। योजना आयोग के पूर्व सदस्य श्री एल.सी. जैन के अनुसार "एक अर्द्ध-शुष्क गाँव में एक महिला को वर्ष में 1400 किलोमीटर चलना पड़ता है, ताकि वह अपने लिए रोज की जलाने की लकड़ी इकट्ठी करके ला सके। यह दूरी दिल्ली से कलकत्ता तक की मानी गई है।"[2] पहाड़ी क्षेत्रों की स्थिति तो और भी बदतर होती है। इस प्रकार निर्धनता के कारण लोगों को कई प्रकार की दिक्कतों का सामना करना पड़ता है और लोग बेबस होकर पर्यावरण को क्षति पहुँचाते रहते हैं।

देश में सिंचाई की व्यवस्था में कमी रहने से मिट्टी में लवणता व क्षारीयता बढ़ी है। कीटनाशक दवाइयों के अविवेकपूर्ण उपयोग से खाद्यान्नों में टोक्सिक तत्त्व रहने से कैंसर व अन्य बीमारियों का प्रभाव बढ़ा है।

भारत में बड़े बाँधों के पर्यावरण पर दुष्प्रभावों की चर्चा हुई है तथा इस सम्बन्ध में आन्दोलन भी किए गए हैं। गुजरात में नर्मदा नदी पर सरदार सरोवर प्रोजेक्ट और उत्तर प्रदेश में गढ़वाल-हिमालय क्षेत्र में भागीरथी नदी पर टेहरी बाँध (260 5 मीटर ऊँचा) को लेकर

---

1 पूर्वोद्धृत, Economic Survey 1998-99, pp.156-157

2 L C. Jain, Decentralisation : In Touch with People, p 155 (Survey of Environment, The Hindu, 1992)

पर्यावरणीय समस्याएँ उठाई गई हैं। टेहरी परियोजना के सम्बन्ध में भूकम्प व बाढ़ की आशंकाएँ भी प्रकट की गई हैं। अप्रैल 1999 के प्रारम्भ में चमोली व रुद्रप्रयाग के कुछ भागों में भूकम्प के झटकों ने वहाँ काफी क्षति पहुँचायी है। इससे पूर्व उस प्रदेश में वर्षाऋतु में भूस्खलन से जानमाल की भारी तबाही हो चुकी थी। इस प्रकार प्राकृतिक असन्तुलनों से मानवीय खतरे काफी बढ़ते जा रहे हैं। टेहरी बाँध के विफल होने से बाढ़ का भय बतलाया गया है। अत: भविष्य में बड़े बाँधों के चयन में अधिक सावधानी व सतर्कता बरतनी होगी। जैसा कि पहले बतलाया गया है, जून 1992 में विश्व बैंक द्वारा नियुक्त ब्रैडफोर्ड मोर्स आयोग ने सरदार सरोवर प्रोजेक्ट के पर्यावरणीय कुप्रभावों की ओर ध्यान आकर्षित किया है। इस सम्बन्ध में प्रभावित लोगों को पुनः बसाने की समस्या बहुत जटिल होती है। सरदार सरोवर के निर्माण को लेकर बाबा आमटे, मेघा पाटकर व अरुंणधती राय (Arundhati Roy) आदि पर्यावरणविद् नर्मदा बचाओ आंदोलन में संलग्न रहे हैं। लेकिन अभी तक इस समस्या का कोई सर्वमान्य हल नहीं निकाला जा सका है।

चिपको आन्दोलन—कुछ वर्ष पूर्व भारत में मध्य-हिमालय में अलकनंदा के इर्द-गिर्द पहाड़ी प्रदेश (बद्रीनाथ मार्ग पर) में वृक्षों की कटाई से पर्यावरण व परिवेश को भारी क्षति होने लगी थी। पेड़ों को काटकर पहाड़ी के नीचे लुढ़काने से ऊपर की मिट्टी ढीली होने से बरसात में तेजी से आगे खिसकने लगी। इससे जुलाई 1970 में अलकनंदा में भयंकर बाढ़ भी आई थी। बाद में वहाँ के लोगों ने गोपेश्वर के समीप एक ग्राम स्वराज मण्डल की स्थापना करके एक आन्दोलन प्रारम्भ किया था, जिसे 'चिपको आन्दोलन' का नाम दिया गया था। इस आन्दोलन में लोग पेड़ों की कटाई को रोकने के लिए 'पेड़ों से चिपक जाते' थे और वन विभाग के कर्मचारियों और ठेकेदारों को पेड़ काटने से रोकते थे। यह आन्दोलन काफी कामयाब रहा और इसकी वजह से पेड़ों की कटाई जोशीमठ व अन्य आस-पास के स्थानों में काफी सीमा तक रुक गई थी। इस आन्दोलन से यह सबक मिलता है कि लोग अपने प्रयास से पर्यावरण को नष्ट होने से बचा सकते हैं, बशर्ते कि उन्हें पर्यावरण संरक्षण का महत्त्व समझ में आ जाए। इससे यह भी स्पष्ट होता है कि पर्यावरण के विनाश में ग्रामीण जनता की इतनी भागीदारी नहीं होती जितनी अन्य लोगों की होती है, हालांकि प्रायः कोशिश सम्पूर्ण दोष को ग्रामीण जनता के गले ही मढ़ने की होती रहती है। अतः चिपको जैसे लोकप्रिय व जनवादी आन्दोलन का पर्यावरण की रक्षा में महत्त्व स्वीकार किया जाना चाहिए। इस सम्बन्ध में प्रमुख पर्यावरणवादी श्री सुन्दरलाल बहुगुणा का योगदान अत्यन्त सराहनीय रहा है।

छठी योजना में पर्यावरण की सुरक्षा पर लगभग 40 करोड़ रु. व्यय किए गए और सातवीं योजना (1985-90) में इसके लिए 428 करोड़ रु. के व्यय की व्यवस्था की गई जिसमें 240 करोड़ रु. गंगा-कार्य-योजना (Ganga Action Plan) के लिए निर्धारित किए गए थे। गंगा-कार्य-योजना के अन्तर्गत एक केन्द्रीय गंगा प्राधिकरण की स्थापना की गई, जिसके अध्यक्ष प्रधानमंत्री बने। इसमें गंगा को प्रदूषण से बचाने के लिए वर्तमान में चालू मैले पानी के 'ट्रीटमेंट प्लान्ट्स' को आधुनिक बनाने का कार्य हाथ में लिया गया था तथा नये

प्लान्ट्स स्थापित करना भी आवश्यक माना गया था। इसमें यू.पी., बिहार व पश्चिम बंगाल राज्यों को *शामिल किया गया।* इसमें गंदे पानी (Sewage) का उपयोग ऊर्जा उत्पन्न करने व सुधरे पानी को सिंचाई के लिए घास-पात (Algae) के उत्पादन व मछली-उत्पादन में प्रयुक्त करने का कार्यक्रम रखा गया है। इसके अधिकांश काम पूरे हो गए और शेष 1995 तक पूरे होने का लक्ष्य था। इस पर 423 करोड़ रु व्यय होने का अनुमान है।

भारत सरकार ने अप्रैल 1993 में यमुना व गोमती नदियों के जल को प्रदूषण से मुक्त करने के लिए 421 करोड़ रु. की लागत की एक परियोजना को मंजूरी प्रदान की। इसमें यमुना का अंश 357 करोड़ रु तथा गोमती का 64 करोड़ रु. रखा गया। इसे पूरा करने में लगभग छः वर्ष का अनुमान लगाया गया। यह परियोजना हरियाणा, उत्तर प्रदेश व दिल्ली के 15 बड़े नगरों में कार्यान्वित की जानी है। इसका आधा खर्च भारत सरकार उठाएगी तथा शेष आधा खर्च तीन प्रदेश उठाएँगे। 'इसे गंगा एक्शन प्लान' का दूसरा चरण (Second Phase) माना गया है। इसमें भी म्यूनिसिपल व्यर्थ-जल को दूसरी तरफ प्रवाहित करना व रोकना, गंदे पानी के ट्रीटमेन्ट वर्क्स स्थापित करना, कम लागत पर साफ सफाई की व्यवस्था करना, नदी के घाटों को सुधारना, नदी के किनारे वृक्षारोपण करना व सुधरी हुई शवदाहशालाओं की व्यवस्था करने जैसे कार्य शामिल हैं। यमुना परियोजना से हरियाणा के यमुनानगर व जगाधरी, करनाल, पानीपत, सोनीपत, गुड़गाँव व फरीदाबाद में, उत्तर प्रदेश व संघीय प्रदेश दिल्ली के गाजियाबाद, नोएडा, वृन्दावन, मथुरा, आगरा, इटावा, सहारनपुर व मुजफ्फरनगर में प्रदूषण कम करने के वर्क्स स्थापित किए जाएँगे। गोमती नदी के लिए लखनऊ, सुल्तानपुर व जौनपुर नगर लिए गए हैं।

भारत में पर्यावरण की सुरक्षा पर भावी योजनाओं में विशेष ध्यान देने की आवश्यकता होगी ताकि लोगों को स्वच्छ पेयजल उपलब्ध हो सके, वृक्षारोपण के जरिए फलों, चारे, ईंधन की लकड़ी व इमारती लकड़ी की पैदावार बढ़ाई जा सके। सम्बन्धित क्षेत्रों की मिट्टी के कटाव से रक्षा करनी होगी और शहरों व गाँवों की साफ-सफाई (Sanitation) पर ज्यादा ध्यान देना होगा। यथासम्भव नगर-नियोजन को सुधार कर लोगों के लिए आवास, पानी-बिजली व परिवहन की सुविधाएँ बढ़ानी होंगी। जनसंख्या-नियंत्रण व आर्थिक विकास के जरिए निर्धनता-उन्मूलन पर अधिक ध्यान देने से पर्यावरण को सुधारने में भी मदद मिलेगी।

ग्रामीण औद्योगीकरण पर अधिक बल देने से नगरों व महानगरों में गंदी बस्तियों का फैलाव रुकेगा और पर्यावरण अधिक साफ-सुथरा हो सकेगा। जनसंख्या का गाँवों से शहरों की ओर पलायन रुकेगा।

अतः भावी योजनाओं में विकेन्द्रित नियोजन को अपना कर जनता की भागीदारी बढ़ाई जानी चाहिए और स्थानीय स्तर पर विभिन्न विकास-कार्यक्रमों को लागू करके लोगों की मूलभूत आवश्यकताओं को पूरा किया जाना चाहिए ताकि वे पर्यावरण को क्षति पहुँचाने का प्रयास न करें।

राजस्थान में पर्यावरण-प्रदूषण के कुछ पहलू[1] —राजस्थान में जल-प्रदूषण से भी ज्यादा गंभीर समस्या जलाभाव की है। देश के सतही जल-साधनों का केवल 1% अंश ही राजस्थान में पाया जाता है, जो क्षेत्रफल व जनसंख्या के क्रमश: लगभग 10.4% व 5.2% अनुपातों को देखते हुए बहुत कम है। कई क्षेत्रों में भूतल का जल खारा होता है। पिछले **वर्षों में राज्य में भूतल के जल-साधनों का भी लगभग 85% अंश प्रयुक्त किया जाने लगा है। राज्य में हवा के कारण मिट्टी का कटाव होता रहता है।** राज्य के निम्न 11 जिलों में मरुस्थल पाया जाता है—श्रीगंगानगर, चूरू, बीकानेर, जैसलमेर, बाड़मेर, जोधपुर, जालौर, झुंझुनूं, पाली, सीकर व नागौर। पश्चिमी राजस्थान में अधिकांश भू-क्षेत्र ह्रास (Degradation) के शिकार हैं। इस प्रदेश में वर्षा का औसत 300 मिलीमीटर वार्षिक पाया जाता है, जो बहुत नीचा है। मिट्टी कम उपजाऊ होती है। तेज हवाओं व ऊँचे तापमान के कारण नमी की उपलब्धि पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। इस प्रदेश में पानी की कमी है और सीमित जल के लिए मनुष्य व पशु में स्पर्धा की स्थिति पाई जाती है। अत्यधिक चराई से भूमि को काफी हानि हुई है। राज्य में चारे की माँग व पूर्ति में असंतुलन पाया जाता है। सूखे के वर्ष में चारे की सप्लाई उसकी माँग से बहुत कम पाई जाती है। कभी-कभी यह माँग की तुलना में चौथाई पाई गई है जिससे चारे की खरीद अन्य राज्यों से करनी पड़ती है।

1997-98 में राज्य में सिंचित क्षेत्र कुल कृषित क्षेत्र का केवल 30% है। इस प्रकार लगभग 70% कृषित क्षेत्र वर्षा पर आश्रित रहता है।

इन्दिरा नहर के सिंचित क्षेत्र में 'सेम' की समस्या—इन्दिरा गाँधी नहर में कई स्थानों पर भारी रिसाव हो रहा है जिससे आस-पास के गाँव और चक वीरान होने लगे हैं तथा रिसाव (सेम) से उपजाऊ भूमि हजारों हैक्टेयर क्षेत्र में नष्ट होकर दलदली बनती जा रही है। उपजाऊ भूमि पर सेम का पानी व जहरीला घास उत्पन्न हो गया है। रिसाव से नष्ट होने वाले क्षेत्र का दायरा निरन्तर बढ़ता जा रहा है। इस क्षेत्र में भूमि के नीचे जिप्सम की कठोर परत पाई जाती है तथा किसान पानी अधिक मात्रा में देते हैं, जिससे सेम की समस्या अधिक गम्भीर होती जा रही है।

पाली व आस-पास के क्षेत्रों में वस्त्रों की छपाई-रंगाई की इकाइयों से जल-प्रदूषण बढ़ा है। अन्य औद्योगिक क्षेत्रों में भी जल-प्रदूषण की समस्या बढ़ी है। **राजस्थान का जल-बजट (water-budget) लड़खड़ा रहा है। वर्षा के जल, सतही जल व भूतल के जल से राज्य की जल की कुल आवश्यकता की पूर्ति करना कठिन होता जा रहा है जिससे वर्ष 2000 में जल-संकट और तीव्र हो गया है।** भूतल के जल का अधिक मात्रा में प्रयोग करने से भविष्य में जल का अभाव अधिक गम्भीर हो सकता है।

पिछले वर्षों में आरक्षित वनों (reserve forests) पशु-पक्षियों के शरण-स्थलों में खनन-कार्यों के बढ़ने से पर्यावरण को हानि पहुँची है। अलवर जिले में सरिस्का क्षेत्र में मार्बल, लाइमस्टोन, सोपस्टोन, बॉक्साइट, ग्रेनाइट आदि के खनन (अधिकृत व अनधिकृत)

---

1 J Venkateswarlu, **Deserts : Taming the arids**, *Survey of Environment* (The Hindu) 1991, pp 162-163

से पर्यावरण को क्षति पहुँची है । इससे इस क्षेत्र में मिट्टी को क्षति पहुँची है और श्रमिक वनों से ईंधन व चारे की प्राप्ति के लिए इनको क्षति पहुँचाते हैं । राज्य में करौली के वनों में गैर-कानूनी ढंग से खनन किया जा रहा है । राजस्थान में वन-भूमि पर पशुओं का दबाव बहुत बढ़ गया है । राज्य में पशुओं की संख्या मनुष्यों से अधिक पाई जाती है । बकरी घास की अन्तिम पत्ती तक का सफाया कर देती है ।

अतः राजस्थान में पानी की कमी, मिट्टी का कटाव, वृक्षों की कटाई, खनन-क्रिया से वन-क्षेत्रों को क्षति, सिंचाई से 'सेम' की समस्या व दलदली भूमि का उत्पन्न होना (विशेषतया इन्दिरा गाँधी नहर परियोजना के सिंचित क्षेत्र में) आदि समस्याएँ पर्यावरण की कठिनाइयों को स्पष्ट रूप से प्रगट करती हैं ।

राज्य सरकार ने जापान की आर्थिक सहायता का प्रयोग करके अरावली प्रदेश को हरा-भरा करने का प्रयास किया है । राज्य में अरावली क्षेत्र पर्यावरण-असंतुलन व गिरावट का एक ज्वलंत उदाहरण है । इन्दिरा गाँधी नहर परियोजना के चारों तरफ वन लगाने व रेगिस्तानी टीलों के स्थिरीकरण का कार्यक्रम प्रारम्भ करने की योजना बनाई गई है । इन दोनों परियोजनाओं में जापान के ओवरसीज इकोनोमिक कोपरेशन फण्ड (OECF) की वित्तीय सहायता का उपयोग किया गया है ।

राजस्थान में 'जल, जमीन व जंगल' के संरक्षण हेतु, एक स्वैच्छिक संस्था-तरुण भगत सिंह की देखरेख में 'जोहड़' (Johad) की व्यवस्था चालू की गई है, जिससे काफी लाभ हुआ है । जोहड़ सूखाग्रस्त क्षेत्रों के लिए 'चेक-बाँध' (check dams) होते हैं । इससे इन क्षेत्रों का जल-स्तर ऊँचा हुआ है, सिंचाई की सम्भावना बढ़ी है, प्रति बीघा आमदनी बढ़ी है और अलवर, जयपुर, दौसा व सवाई माधोपुर जिलों की कुछ तहसीलों में किसानों को आर्थिक लाभ हुआ है । इसके परिणाम गोपालपुरा में व थानागाजी तथा रायगढ़ तहसीलों के गाँवों में अच्छे प्राप्त हुए हैं ।[1]

राजस्थान की कृषि-आधारित अर्थव्यवस्था में पशु-पालन के विकास की पर्याप्त सम्भावनाएँ हैं । भविष्य में खनन-क्रिया के वैज्ञानिक संचालन पर जोर दिया जाना चाहिए और जोधपुर स्थित काजरी के अध्ययनों व अनुसंधानों का उपयोग करके वृक्षारोपण व कृषिगत विकास पर ध्यान देना चाहिए । राज्य की अर्थव्यवस्था को पर्यावरण की दृष्टि से अधिक सुदृढ़ करने की आवश्यकता है । इसके लिए ठोस कार्यक्रमों के चयन पर बल दिया जाना चाहिए ।

विभिन्न प्रकार के पर्यावरण-प्रदूषणों को कम करने के उपाय—पर्यावरण-प्रदूषण के विभिन्न रूपों को नियंत्रित करने के लिए कई प्रकार के उपाय काम में लेने होंगे जिन पर संक्षेप में नीचे प्रकाश डाला जाता है ।

(1) कारों व अन्य वाहनों से उत्पन्न वायु-प्रदूषण को कम करने के लिए सार्वजनिक परिवहन व्यवस्था (public transport) विकसित की जानी चाहिए । इसके अलावा

---

1 **Sustainable Development : Leading by example**, an article in Survey of Environment, 1995, by Sunny Sebastian, pp 203-205

ऐसे वाहनों का उपयोग बढ़ाया जाना चाहिए जिनमें ऊर्जा की खपत कम हो, शहरों में ट्रैफिक नियंत्रण योजना को कार्यकुशल बनाया जाना चाहिए और यथासम्भव विद्युत चालित वाहनों का उपयोग बढ़ाया जाना चाहिए।

(2) ग्रामीण क्षेत्रों में वायु-प्रदूषण को कम करने के लिए निर्धूम चूल्हों का विस्तार, घरों में हवा की उचित व्यवस्था, खाना पकाने के लिए यथासम्भव प्रेशर कूकर जैसी सस्ती विधियों के उपयोग को प्रोत्साहन देना तथा गर्भवती महिलाओं को खाना बनाने के काम में कम समय लगाने की सलाह देना लाभकारी हो सकता है।

(3) उद्योगों को वायु-उत्सर्जन व व्यर्थ-जल की निकासी के मानकों का पालन करना चाहिए, इनके लिए आवश्यक ट्रीटमेन्ट-संयंत्र लगाना चाहिए, उन पर आवश्यकतानुसार प्रदूषण कर भी लगाया जा सकता है और उद्योगों का गंदा जल जल के अन्य स्रोतों में सीधे नहीं डालने दिया जाना चाहिए। शहरों व कस्बों में सुलभ शौचालयों का विस्तार किया जाना चाहिए और लोगों में स्वच्छता की पर्याप्त जानकारी कराई जानी चाहिए। भारत में औद्योगिक प्रदूषण को रोकने के लिए सरकार ने औद्योगिक इकाइयों को प्रदूषण-नियंत्रण-उपकरण लगाने के लिए राजकोषीय प्रेरणाएँ (कर-सम्बन्धी रियायतें, सब्सिडी, आदि) प्रदान की हैं। इसके लिए आयात-शुल्कों की छूटें व उदार शर्तों पर कर्ज दिए गए हैं। प्रदूषण-नियंत्रण की शर्तें न मानने वाली इकाइयों के विरुद्ध कानूनी कार्रवाई की जाती है। विश्व बैंक की सहायता से एक 'औद्योगिक-प्रदूषण-नियंत्रण-परियोजना' संचालित की जा रही है। इसके माध्यम से लघु इकाइयों के समूहों को 'कॉमन व्यर्थ पदार्थ ट्रीटमेंट संयंत्र' (Common effluent treatment plants) (CETPs) लगाने के लिए तकनीकी व वित्तीय सहायता प्रदान की जाती है। 29 किस्म के उद्योगों के लिए पर्यावरण-सम्बन्धी क्लीयरेन्स लेना आवश्यक बना दिया गया है। राज्य सरकारें विशिष्ट श्रेणी के थर्मल पावर प्रोजेक्टों के लिए पर्यावरण-सम्बन्धी क्लीयरेन्स देने के लिए अधिकृत की गई हैं। राष्ट्रीय पर्यावरण ट्रिब्यूनल अधिनियम के तहत पर्यावरण-सम्बन्धी क्षति के लिए पीड़ित व्यक्तियों को राहत पहुँचाने व हर्जाना देने की व्यवस्था की गई है।[1]

(4) शहरों के कचरे व व्यर्थ पदार्थों का उपयोग करने की विधियाँ प्रयुक्त की जानी चाहिए जिससे कुछ सस्ती वस्तुएँ उत्पन्न की जा सकेंगी और लोगों को रोजगार भी दिया जा सकेगा। व्यर्थ पदार्थों को उठाने वालों के लिए दस्तानों, जूतों व अन्य सामग्री की व्यवस्था करनी चाहिए तथा उन स्थलों को दुर्गन्ध से मुक्त रखने का भरसक प्रयास किया जाना चाहिए।

(5) वनों के संरक्षण व विस्तार की व्यवस्था की जानी चाहिए, चराई व वृक्षों की कटाई को नियंत्रित व नियमित किया जाना चाहिए। दीर्घकाल में ग्रामीण जनता के लिए सस्ती ईंधन की व्यवस्था करने से ही वनों की रक्षा करना सम्भव हो सकता है।

(6) जैविक विविधता (biodiversity) की रक्षा करने के लिए लोगों में आवश्यक चेतना उत्पन्न की जानी चाहिए, वन्यजीवन रक्षा अधिनियम को कड़ाई से लागू

---

1 Economic Survey 1998-99, p 159

करना चाहिए और राष्ट्रीय पार्कों व वन्यजीव-अभयारण्यों का विकास किया जाना चाहिए ताकि अनेक प्रकार के पौधों, पशुओं व जीव-जन्तुओं की रक्षा की जा सके।

जून 1992 में ब्राजील में पृथ्वी शिखर सम्मेलन—ब्राजील की राजधानी रियो दे जेनिरियो में पृथ्वी सम्मेलन 3 जून से 14 जून, 1992 तक आयोजित किया गया था। पर्यावरण जैसे महत्त्वपूर्ण विषय पर आयोजित यह पहला बड़े पैमाने पर आयोजित विश्व स्तरीय सम्मेलन था, जिसमें 178 देशों ने भाग लिया तथा इसमें करीब 100 देशों के राज्याध्यक्ष, प्रधानमंत्री, राष्ट्रपति आदि ने भाग लिया था।

सम्मेलन ने विश्व के विभिन्न देशों का ध्यान पर्यावरण संरक्षण की ओर आकर्षित किया था और उनको यह एहसास कराया था कि यदि पर्यावरण की सुरक्षा नहीं की गई तो आने वाले वर्षों में अनेक प्रकार की गंभीर समस्याओं का सामना करना पड़ सकता है। सम्मेलन में भारत के तत्कालीन प्रधानमंत्री श्री पी वी नरसिम्हाराव ने **पर्यावरण-संरक्षण-कोष की स्थापना** का महत्त्वपूर्ण सुझाव दिया था। इसके अनुसार दुनिया के देशों को अपने सकल राष्ट्रीय उत्पाद (GNP) का 0 7% इस कोष में देना चाहिए। हालांकि इस सम्बन्ध में कोई अन्तिम फैसला नहीं हो सका, फिर भी यह सुझाव व्यावहारिक व लाभकारी माना गया है। औद्योगिक देशों द्वारा प्रदूषण में अधिक योगदान देने के कारण उनके द्वारा इसको रोकने पर व्यय भी अधिक करना चाहिए। भारत के तत्कालीन केन्द्रीय पर्यावरण राज्यमंत्री श्री कमलनाथ के कारण भी पृथ्वी सम्मेलन में भारत की भूमिका काफी प्रभावशाली रही। तत्कालीन अमरीकी राष्ट्रपति जार्ज बुश ने भी चीनी कहावत का उदाहरण देते हुए कहा कि **'यदि हमने पृथ्वी को लूटा, तो पृथ्वी हमें लूटेगी' (If we plunder earth, earth would plunder us)**।

पृथ्वी सम्मेलन में कुल मिलाकर सभी पर्यावरणीय मुद्दों पर आम सहमति नजर आई थी। जापान व यूरोपीय देशों ने अपनी तरफ से ग्रीन हाउस गैसों के निर्गम (emission) को कम करने, जैविक विविधता का संरक्षण करने तथा प्रदूषण को खत्म करने के लिए धनराशि उपलब्ध कराने की पेशकश की थी। पहले अमेरिका ने वांछित सहयोग नहीं दिया, लेकिन बाद में उसे भी पृथ्वी पर पर्यावरण के पतन को रोकने के प्रयासों में अपनी सहमति प्रगट करनी पड़ी।

आशा है कि ब्राजील में पृथ्वी शिखर सम्मेलन में तैयार किए गए जैविक विविधता, संरक्षण,व वन-संरक्षण के दस्तावेज तथा एजेण्डा-21 आगे चलकर पर्यावरण-संरक्षण को आवश्यक आधार प्रदान कर पाएँगे। इसमें कोई संदेह नहीं कि भारतीय संस्कृति जो धर्म व अध्यात्म पर आधारित है और जिसमें सदैव प्रकृति की पूजा पर बल दिया गया है, औद्योगिक देशों की उपभोक्तावादी, भोगवादी व भौतिकवादी संस्कृति को यह सबक सिखा पाएगी कि वह जल, थल, नभ व सम्पूर्ण वायुमण्डल को स्वच्छ रखने को प्राथमिकता दे। लेकिन साथ में इसे अपने यहाँ भी इन उच्च आदर्शों के पालन पर अधिक ध्यान देना होगा ताकि भारत में सभी प्रकार के प्रदूषणों में कमी की जा सके। डॉ. रजनी जोशी, एसोसिएट प्रोफेसर, स्कूल ऑफ बायो-मेडिकल इंजीनियरिंग, आई. आई टी., मुम्बई का मत है कि भारत में 'यज्ञ' की परम्परा पर्यावरण को शुद्ध करने में मदद

देती है । यज्ञ में केसर, कस्तूरी, चंदन, इलायची आदि, घी, दूध, गेहूँ, चावल, जौ, आदि, चीनी, किशमिश, शहद, छुआरा, आदि का हवन-सामग्री के रूप में प्रयोग करने से जो अत्यंत सुगंधित वायुमण्डल बनता है उससे पर्यावरण को शुद्ध करने में मदद मिलती है । यज्ञ की यह प्रक्रिया पर्यावरण-मैत्रीपूर्ण होती है । भारत में इसका महत्व उजागर किया गया है । इस विषय पर अधिक वैज्ञानिक विचार-विमर्श किया जाना चाहिए ।[1] अब विकास व पर्यावरण पर एक साथ ध्यान देने से ही टिकाऊ विकास का लक्ष्य प्राप्त करना सम्भव हो सकता है ।

विकास व पर्यावरण एक-दूसरे के पूरक हैं, न कि परस्पर प्रतिस्पर्धी । हमें इन दोनों के समन्वित विकास की योजना बनानी चाहिए । **हमें पर्यावरण-मैत्रीपूर्ण विकास तथा विकास-मैत्रीपूर्ण पर्यावरण को अपना आदर्श बनाना चाहिए । हमें अन्तर्राष्ट्रीय रूप में सोचना चाहिए तथा स्थानीय रूप में काम करना चाहिए (we must think globally and act locally)** । पर्यावरण को सुरक्षा अन्तर्राष्ट्रीय, राष्ट्रीय व राज्यीय स्तरों पर की जानी चाहिए । प्रत्येक नागरिक का यह पुनीत कर्त्तव्य है कि वह पर्यावरण की सुरक्षा व विकास में अपना योगदान दे । जल, जमीन व जंगल की रक्षा से ही सारे जहाँ की रक्षा हो पाएगी ।

प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. निम्न में से राजस्थान में सर्वाधिक प्रदूषित दो क्षेत्रों के नाम हैं—
   (अ) पाली व जोधपुर (ब) कोटा व बाराँ
   (स) जयपुर व दौसा (द) उदयपुर व बाँसवाड़ा (ब)

2. सुस्थिर विकास का अर्थ है—
   (अ) विकास में उतार-चढ़ाव न आए,
   (ब) विकास की दर स्थिर बनी रही,
   (स) विकास में वर्तमान पीढ़ी व भावी पीढ़ी दोनों के हितों का ध्यान रखा जाए
   (द) विकास में निर्धन-वर्ग के हितों की रक्षा की जाए (स)

3. जैव-विविधता का ह्रास क्यों होता है—
   (अ) वृक्षों की अंधाधुंध कटाई की जाती है
   (ब) पशुओं का अनधिकार शिकार
   (स) उनका अवैध व्यापार
   (द) सभी (द)

4. पर्यावरणीय पतन का कारण छाँटिए—
   (अ) निर्धनता (ब) जनसंख्या की वृद्धि

---

1 Economic Times, June 5, 2000, p 3, Holy Smoke, Awanish Mishra

(स) औद्योगीकरण (द) शहरीकरण

(ए) सभी (ए)

5. भारत के गाँवों में किस प्रकार के प्रदूषण के नियन्त्रण को सर्वाधिक महत्व दिया जाना चाहिए ?

(अ) जल-प्रदूषण (ब) वायु-प्रदूषण

(स) ध्वनि-प्रदूषण (द) मिट्टी-प्रदूषण (अ)

अन्य प्रश्न

1. (अ) "यदि आर्थिक विकास उन्नत जीवन स्तर के लिए आवश्यक है तो पर्यावरणीय संतुलन उसके अस्तित्व के लिए आवश्यक है।" इस कथन की राज्य के आर्थिक विकास के संदर्भ में विवेचना कीजिए। (5 पृष्ठों में)

   (ब) पर्यावरण-प्रदूषण की अवधारणा का अर्थ बताइए। (100 शब्दों में)

2. पर्यावरण प्रदूषण क्या है ? इसके रूप, कारण और प्रभावों की संक्षिप्त विवेचना कीजिए।
3. पर्यावरण-प्रदूषण का आशय स्पष्ट कीजिए। इसके विभिन्न रूपों का परिचय दीजिए या "पर्यावरण के चार दुश्मन जल, थल, वायु व ध्वनि प्रदूषण" को समझाइए।
4. सुस्थिर या टिकाऊ विकास का अर्थ लिखिए। 'विकास व पर्यावरण एक ही सिक्के के दो पहलू हैं।' समझाकर लिखिए।
5. संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए—
   - (i) पर्यावरण-प्रदूषण-अन्तर्राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में,
   - (ii) पर्यावरण-प्रदूषण,
   - (iii) राजस्थान में पर्यावरण-प्रदूषण;
   - (iv) गंगा-कार्य-योजना चरण I व II,
   - (v) ओजोन परत का ह्रास,
   - (vi) पर्यावरण प्रदूषण-विभिन्न रूप, कारण एवं परिणाम,
   - (vii) ग्रीन हाउस उष्णीकरण या गरमाहट (Greenhouse warming),
   - (viii) जल-प्रदूषण,
   - (ix) वायु-प्रदूषण.
6. (अ) पर्यावरण प्रदूषण एवं स्थायी विकास की समस्याओं को अन्तर्राष्ट्रीय, राष्ट्रीय एवं राज्य के संदर्भ में स्पष्ट कीजिये।

   (ब) सुस्थिर विकास की अवधारणा क्या है ?

   सुस्थिर विकास का अर्थ बताइए।

8

कृषि
(Agriculture)

राजस्थान की अर्थव्यवस्था में कृषि का महत्वपूर्ण स्थान है । 2000-01 में कृषि का अंश राज्य की शुद्ध राज्य घरेलू उत्पत्ति (NSDP) में लगभग 24.6% तथा 2001-02 में 29% रहा (1993-94 के मूल्यों पर) ।[1] राज्य के कृषिगत उत्पादन में प्रतिवर्ष काफी उतार-चढाव आते रहते हैं । स्थिर भावों पर कृषि का योगदान राज्य की शुद्ध घरेलू उत्पत्ति में प्रति वर्ष काफी घटता-बढ़ता रहता है । राज्य की कृषिगत अर्थव्यवस्था मूलतः अस्थिर (Unstable) किस्म की है और इस पर अकालों की काली छाया निरन्तर पड़ती रहती है ।

(अ) भूमि का उपयोग—अगली तालिका में 1951-52 व 2001-02 के वर्षों में राजस्थान में भूमि के उपयोग का परिवर्तन दर्शाया गया है ।

अग्र तालिका से पता चलता है कि राजस्थान में 2001-02 में कुल रिपोर्टिंग क्षेत्रफल 3 426 करोड़ हैक्टेयर भूमि था । शुद्ध कृषित क्षेत्र (net area sown) इसका 48 9% था जो 1951-52 में केवल 27 प्रतिशत ही रहा था । यह 1951-52 में 93 लाख हैक्टेयर से बढ़कर 2001-02 में 167 7 लाख हैक्टेयर हो गया । इस प्रकार योजनाकाल में राज्य में नई भूमि पर खेती का काफी विस्तार किया गया । एक से अधिक बार जोता गया क्षेत्र 1951-52 में 4.4 लाख हैक्टेयर था, जो 2001-02 में 40.3 लाख हैक्टेयर हो गया । इस प्रकार सिंचाई के साधनों का विकास होने से राज्य में गहन कृषि का भी कुछ सीमा तक विकास किया गया है । परिणामस्वरूप कुल कृषित क्षेत्र (total cropped area) जो 1951-52 में कुल रिपोर्टिंग क्षेत्र का 28 4% था, वह 2001-02 मे 60.7% हो गया । यह 1997-98 में लगभग 65.2% व 1998-99 में 62.5% रहा था । राज्य में आज भी वनों का क्षेत्रफल कुल रिपोर्टिंग क्षेत्र का 7.7% मात्र है । कृषि-योग्य व्यर्थ भूमि (Culturable Wasteland) व परती भूमि (Fallow land) (मद 4 + मद 5) का अंश लगभग 25 9% है ।

---

1 Economic Review 2003-04, Govt. of Rajasthan, table on NSDP at 1993 94, prices

भविष्य में इसमें से कुछ क्षेत्र कृषि में और लाया जा सकता है । अतः राज्य में विस्तृत व गहन दोनों प्रकार की कृषि के विकास की भावी सम्भावनाएँ कुछ सीमा तक विद्यमान हैं ।

राजस्थान में भूमि का उपयोग[1]

वर्गीकरण	(लाख हैक्टे. में) 1951-52)	रिपोर्टिंग क्षेत्र का प्रतिशत	(लाख हैक्ट. में) (2001-02)	रिपोर्टिंग क्षेत्र का प्रतिशत
1. रिपोर्टिंग क्षेत्रफल	342.8	100.0	342.6	100.0
2. वन	11.6	3.4	26.5	7.7
3. कृषि के लिए अप्राप्य *	89.8	26.2	59.8	17.5
4. कृषि योग्य व्यर्थ भूमि	90.0	26.3	47.3	13 8
5. परती भूमि **	58.3	17.0	41.4	12.1
6. शुद्ध कृषिगत भूमि	93.1	27.1	167.7	48.9
7. एक से अधिक बार जोता गया क्षेत्र	4.4	1.3	40.3	11.8
8. सकल कृषिगत क्षेत्र	97.5	28.4	208.0	60.7

* इसमें निम्नांकित क्षेत्र शामिल किए गए हैं—वर्ष 2001-02 के लिए (i) गैर-कृषिगत उपयोगो मे लगाई भूमि 5 1% (ii) बंजर व अकृष्य भूमि 7 4% (iii) स्थायी चरागाह व अन्य चराई की भूमि (5%) तथा (iv) विविध पेड़ों व कुजों की भूमि नगण्य (0 04%) । इन चारो का जोड 17 5% आता है ।

** परती भूमि में चालू परती भूमि (Current fallow) एक वर्ष के लिए परती छोडी जाती है का अश 5 3% तथा अन्य परती भूमि (एक से पाँच वर्ष तक परती भूमि) का अश भी लगभग [illegible] 8% था । इस प्रकार कुल परती भूमि का अश 14 2% रहा ।

2001-02 में शुद्ध कृषिगत क्षेत्रफल 1.68 करोड़ हैक्टेयर रहा, जो कुल रिपोर्टिंग क्षेत्रफल का 48 9% था । इसी वर्ष सकल कृषित क्षेत्रफल (gross cropped area) 2.08 करोड़ हैक्टेयर था, जो कुल रिपोर्टिंग क्षेत्रफल का लगभग 60 7% था । सकल कृषित क्षेत्र की मात्रा में निरन्तर उतार-चढ़ाव आते रहते हैं । सूखे के वर्षो मे यह घट जाता है । 1998-99 में सकल कृषित क्षेत्र 2.14 करोड़ हैक्टेयर था, जो कुल रिपोर्टिंग क्षेत्र का 62 5% रहा था ।

इस प्रकार फसल-गहनता (Cropping-intensity) 1951-52 में 1.047 से बढ़कर 2001-02 में 1.240 हो गई । फसल-गहनता निकालने के लिए सकल कृषित क्षेत्र में शुद्ध कृषित क्षेत्र का भाग दिया जाता है । भविष्य में इसमे वृद्धि के लिए एक से अधिक बार जोती गई भूमि का विस्तार करना होगा ।

---

1 Some Facts About Rajasthan 2003, June 2003, pp.12-13 (2001-02 के आँकडों के लिए) ।

निम्न तालिका से स्पष्ट होता है कि राज्य में आज भी कार्यशील जोतों का वितरण काफी असमान बना हुआ है। एक हैक्टेयर तक की जोतें लगभग 30% हैं, लेकिन इनमें कुल क्षेत्रफल का केवल 3 7% भाग ही समाया हुआ है। इसके विपरीत 10 हैक्टेयर से ऊपर की जोतें लगभग 9 1% हैं, जबकि इनमें 42.8% क्षेत्रफल समाया हुआ है। 1970-71 में राजस्थान में कार्यशील जोतों का औसत आकार 5 46 हैक्टेयर था, जो समस्त भारत के औसत आकार 2 28 हैक्टेयर का 2 5 गुना था, एवं सभी राज्यों की तुलना में यह सर्वाधिक था। 1995-96 में राजस्थान में जोतों का औसत आकार घटकर 3.96 हैक्टेयर पर आ गया, तथा इसी वर्ष भू-जोतों की कुल संख्या लगभग 53 64 लाख रही, जिनके अन्तर्गत कुल क्षेत्रफल लगभग 2 करोड़ 12 लाख 50 हजार हैक्टेयर समाया हुआ था।

राजस्थान में 1995-96 में कार्यशील जोतों का विवरण[1]

जोतों की किस्में	जोतों की संख्या (लाख में)	कुल का प्रतिशत	समाया हुआ क्षेत्रफल (लाख हैक्टेयर में)	कुल का प्रतिशत
1 सीमांत जोतें (1 हैक्टेयर तक)	16.1	30.0	7.8	3.7
2. लघु जोतें (1-2 हैक्टेयर)	10.8	20.2	15.6	7.4
3 लघु-मध्यम जोते (2-4 हैक्टेयर)	11.2	20.8	31.8	15.0
4 मध्यम जोतें (4-10 हैक्टेयर)	10.6	19.8	66.2	31.1
5 बड़ी जोते (10 हैक्टेयर से ज्यादा)	4 9	9.1	91.0	42 8
कुल	53.6	100.0	212.5	100.0

शुष्क प्रदेश में सिंचाई का महत्त्व—राजस्थान के शुष्क प्रदेश (arid region) में पानी की सुविधा का महत्त्व इस बात से स्पष्ट हो जाता है कि बीकानेर व गंगानगर जिले में मुख्य अन्तर यही है कि गंगानगर जिले को गंगनहर से सिंचाई की सुविधा मिली हुई है। 2001-02 में गंगानगर जिले मे शुद्ध कृषित क्षेत्रफल 6.98 लाख हैक्टेयर (कुल रिपोर्टिंग क्षेत्रफल 10.93 लाख हैक्टेयर का 63 86% था, जबकि बीकानेर जिले में शुद्ध कृषित क्षेत्रफल मात्र 14.8 लाख हैक्टेयर (कुल रिपोर्टिंग क्षेत्रफल 30.3 लाख हैक्टेयर का 48.8% ही था।[2] इस प्रकार गंगानगर जिले में शुद्ध कृषित क्षेत्रफल आनुपातिक दृष्टि से सिंचाई की सुविधाओं के कारण बीकानेर जिले से काफी ज्यादा पाया जाता है। गंगानगर जिले में लगभग 25 किस्म की फसलें बोई जाती हैं, जबकि बीकानेर में केवल 5 या 6 तरह की ही बोई जाती हैं। पशु-पालन भी गंगानगर जिले में ज्यादा उन्नत हो पाया है। वहाँ कपास, गन्ना, तिलहन, गेहूँ, चावल आदि की फसलें उत्पन्न की जाती हैं।

---

1 Some Facts About Rajasthan 2003, part I, p 10

2 Agriculatural Statistics, Rajasthan 2001-02, DES (हनुमानगढ जिले को अलग करके), January 2004, pp 4-5

(आ) सिंचित क्षेत्र—राजस्थान में नहरों, तालाबों व कुओं आदि साधनों की सहायता से सिंचाई की जाती है । विभिन्न स्रोतों के अनुसार सकल सिंचित क्षेत्र (Gross irrigated area) 1951–52 में 11.7 लाख हैक्टेयर था, जो 2002-03 में 52.7 लाख हैक्टेयर हो गया । 2001-02 में यह लगभग 67.4 लाख हैक्टेयर रहा था । विभिन्न स्रोतों द्वारा सिंचित क्षेत्रफल निम्न तालिका में दिखाया गया है ।

तालिका से यह पता चलता है कि 2002-03 में नहरों की सिंचाई 1951-52 की तुलना में 9 गुना हो गई । लेकिन राज्य में आज भी सिंचाई के साधनों में कुओं व ट्यूबवैल का सर्वाधिक स्थान है, जो 2000-01 में लगभग 41.2 लाख हैक्टेयर रहा । (अन्य साधनों सहित) ।

1951-52 में सकल सिंचित क्षेत्रफल सकल कृषित क्षेत्रफल का 12% था जो बढकर 1970-71 में 14.7% तथा 1990-91 में लगभग 24%, 1999-2000 मे 35.9% तथा 2000-2001 मे लगभग 31.9% हो गया। इस प्रकार योजनाकाल मे राज्य मे सिंचाई के साधनो का काफी विस्तार हुआ है और सकल सिचित क्षेत्रफल **सकल कृषित क्षेत्रफल का 12% से बढकर 2000-01 में 32% हो गया, जो प्रतिशत की दृष्टि से लगभग तिगुना है।**

विभिन्न साधनों द्वारा सिंचित क्षेत्र[1]

	(सकल सिंचित क्षेत्र)		(लाख हैक्टेयर में)	
वर्ष	नहरे	तालाब	कुए/नलकूप व अन्य साधन	योग
1951–52	2 2	0.8	7.0	10 0
2002–03	13.5	0.08	39.2	52.7

राज्य मे अधिक मात्रा मे सिंचित फसलों में गन्ना, कपास, जौ व गेहूँ का स्थान आता है और ज्वार, बाजरा व मूंगफली का स्थान काफी कम सिंचित फसलों में आता है । राज्य में सिंचाई के विकास की काफी सम्भावनाएँ विद्यमान हैं । इसके लिए सिंचाई के क्षेत्र में भारी मात्रा में पूँजी लगाने की आवश्यकता है । 2001-02 में खाद्यान्नों की फसलों में 32.3 लाख हैक्टेयर में सिंचाई की गई, जो कुल सिंचित क्षेत्रफल 67.4 लाख हैक्टेयर का लगभग 47.9% था । अत: राज्य में लगभग आधी सिंचाई की सुविधा खाद्यान्नों की फसलों को प्राप्त है ।

पिछले वर्षों में राज्य में शुद्ध सिंचित क्षेत्रफल (Net Irrigated Area) बढ़ा है । 2001-02 में शुद्ध सिंचित क्षेत्रफल 54.2 लाख हैक्टेयर तथा सकल सिंचित क्षेत्रफल 67.4 लाख हैक्टेयर रहा । इसका अर्थ यह हुआ कि लगभग 13 2 लाख हैक्टेयर भूमि में एक से अधिक बार सिंचाई की गई थी ।

---

1. Economic Review 2003-04, GOR, p 48 (2002-03 के आँकड़ों के लिए)

स्मरण रहे कि $\frac{\text{सकल सिंचित क्षेत्रफल}}{\text{शुद्ध सिंचित क्षेत्रफल}}$ = सिंचाई की गहनता (irrigation intensity) कहलाती है । यह 2001-02 के लिए $\frac{52.7}{43.7}$ = 1.206 रही है । इसको भविष्य में और बढ़ाने की आवश्यकता है । इसके लिए एक से अधिक बार के सिंचित क्षेत्र को बढ़ाना होगा ताकि सकल सिंचित क्षेत्रफल बढ़ सके ।

राजस्थान में फसलों का ढाँचा या प्रारूप (Cropping Pattern in Rajasthan)– राजस्थान मे खाद्यान्नो की फसलो मे अनाज में बाजरा, ज्वार, गेहूँ, मक्का, जौ, मोटे अनाज व चावल एव दालो मे चना तुर अन्य रबी की दाले व अन्य खरीफ की दालें शामिल हैं एव गैर–खाद्यान्नो की फसलो मे तिलहन मे राई व सरसो, अलसी, मूगफली व अरण्डी एव अन्य मे कपास, तम्बाकू, सन, गन्ना, हल्दी, धनिया, मिर्च, आलू, अदरक अफीम व ग्वार शामिल हैं।

निम्न तालिका में प्रथम योजना की अवधि की औसत स्थिति (Average Position) तथा 2001-02 वर्ष के लिए राजस्थान में फसलों के ढाँचों का विवरण दिया गया है ।[1]

(क्षेत्रफल लाख हैक्टेयर में)

प्रथम योजना (औसत)		प्रतिशत	2001-02	प्रतिशत
फसलें	क्षेत्रफल		क्षेत्रफल	
1. अनाज	65.6	56.0	93.8	45.0
2 दालें	24 6	21.0	33.6	16.2
3. खाद्यान्न (1 + 2)	90.2	77.0	127.4	61.2
4. तिलहन	7.2	6.2	31.1	15.0
5. कपास	1.9	1.7	5.1	2.4
6. गन्ना, ग्वार, चारा, फल, सब्जी व अन्य मसालें	17.7	15.1	44 4	21.3
कुल कृषित क्षेत्र	117.0	100.0	208.0	100.0

तालिका से पता चलता है कि राजस्थान मे प्रथम योजना काल से अब तक फसलो के ढाँचे मे काफी परिवर्तन हुआ है। इस सम्बन्ध मे प्रमुख निष्कर्ष इस प्रकार हैं–

(1) अनाज की फसलों का क्षेत्रफल प्रथम योजना में 56% से घटकर 2001-02 लगभग 45% रह गया है । 2001-02 में दालों का क्षेत्रफल 12% के समीप रहा जिससे खाद्यान्नों का क्षेत्रफल 77% से घटकर लगभग 61% रह गया है । मोटे तौर पर खाद्यान्नों के अन्तर्गत क्षेत्रफल कुल कृषित क्षेत्रफल का योजना के प्रारम्भ में लगभग 3/4 था, जो 2001-02 में घटकर लगभग 61% रह गया । 1998-99 में यह 63% रहा था क्योंकि दालों का क्षेत्रफल 22% रहा था ।

1 राजस्थान मे कृषि विकास प्रगति: 1990-91, पृ 7-8 तथा Some Facts About Rajasthan 2003, p 13

दालो के क्षेत्रफल मे कमी का मुख्य कारण इनका बारानी क्षेत्रो मे बोया जाना है, जो पूर्णत वर्षा पर निर्भर करता है। इनमे प्रति हैक्टेयर उत्पादन भी नीचा होता है जो इनके क्षेत्रफल मे कमी का प्रमुख कारण है। इनके क्षेत्रफल मे वृद्धि के लिए ऐसी किस्मों का विकास करना आवश्यक है जो सूखे से प्रभावित हुए बिना पर्याप्त उत्पादन दे सके।

(2) राज्य में तिलहनों का क्षेत्रफल प्रथम योजना के 6 2% से बढ़कर 2001-02 में लगभग 15% हो गया है । तिलहनों में यह वृद्धि मुख्यतः राई व सरसों के क्षेत्रफल में हुई है । राज्य में खरीफ के अन्तर्गत सोयाबीन की खेती भी की जाने लगी है । पिछले दशक मे इसका क्षेत्रफल काफी बढा है ।

(3) मोटे अनाजो व दालो के क्षेत्रफल की कमी को कपास, ग्वार, चारा, फल-सब्जी व मसालो के क्षेत्र मे वृद्धि करके पूरा किया गया है।

इससे स्पष्ट होता है कि 2001-02 में 61% क्षेत्रफल खाद्यान्नों की फसलों (अनाज व दालों) के अन्तर्गत था और शेष 39% गैर-खाद्यान्नों की फसलों के अन्तर्गत था । 2001-02 में कुल कृषिगत क्षेत्र के 45% भाग पर अनाज बोया गया और लगभग 16% भाग पर दालें बोई गईं । इस प्रकार लगभग 61% क्षेत्रफल खाद्यान्नों की फसलों के अन्तर्गत रहा । स्मरण रहे कि राज्य के लगभग 1/4 कृषित क्षेत्रफल में अकेले बाजरे की खेती की जाती है । (2001-02 में कुल कृषित क्षेत्रफल लगभग 2.08 करोड़ हैक्टेयर रहा, जिसके लगभग 51.3 लाख हैक्टेयर में बाजरे की खेती की गई) । राज्य में तिलहन, गन्ना व कपास की पैदावार होने से इनसे सम्बन्धित उद्योगो (तेल उद्योग, चीनी व गुड़ उद्योग, सूती वस्त्र उद्योग) का विकास किया जा सकता है । मसालों में लाल मिर्च, जीरा, धनिया व हल्दी के उत्पादन का भी काफी महत्त्व है । इनके उत्पादन से कृषकों को अच्छी आय होती है । राज्य में ग्वार, तम्बाकू, अफीम आदि की भी पैदावार होती है ।

प्रमुख फसलें (Major Crops)[1]– राजस्थान मे फसलो के अन्तर्गत क्षेत्रफल मे ज्यादा महत्त्वपूर्ण स्थान बाजरा, गेहूँ, मक्का, जौ, ज्वार, दाल, तिल, मूगफली व कपास का आता है। लेकिन क्षेत्रफल में प्रतिवर्ष मौसमी परिवर्तनो के कारण काफी उतार-चढाव आते रहते हैं। राजस्थान मे प्रति हैक्टेयर उपज बहुत कम होती है। प्रमुख फसलो का संक्षिप्त विवरण नीचे दिया जाता है–

(1) गेहूँ—राजस्थान गेहूँ का उत्पादन करने की दृष्टि से भारत में पाँचवाँ सबसे बड़ा राज्य है । राज्य में गेहूँ की पैदावार का जिलेवार औसत लेने पर पता चलता है कि गंगानगर, जयपुर, अलवर, कोटा व सवाईमाधोपुर जिलों में गेहूँ का उत्पादन अधिक होता है । सबसे ज्यादा गेहूँ का उत्पादन गंगानगर जिले में होता है । गेहूँ रबी की फसल है । 2002-03 में गेहूँ का उत्पादन 48.8 लाख टन हुआ जिसके 2003-04 में 61.8 लाख टन होने का अनुमान है । 2002-03 में अखिल भारतीय गेहूँ के उत्पादन (6 5 करोड़ टन) का 7.5% अंश राजस्थान में हुआ था ।

---

1 Economic Review 2003-04, (GOR) pp 41-43, and Agricultural Statistics of Rajasthan 2001-02, relevant tables

राज्य में गेहूँ की सोना-कल्याण, मैक्सिन, सोना, कोहिनूर आदि विकसित किस्में बोई जाती हैं, जो कम सिंचाई के क्षेत्रों में भी काफी फसल देती हैं ।

(2) चना—उत्तर प्रदेश के बाद चना उत्पादन करने में राजस्थान का स्थान आता है । इसके प्रमुख जिले गंगानगर, अलवर, कोटा, जयपुर व सवाईमाधोपुर हैं । सबसे ज्यादा चने का उत्पादन गंगानगर जिले में होता है । राज्य का आधे से ज्यादा चना इन्हीं जिलों में उत्पन्न किया जाता है । राज्य में चने का उत्पादन घटता-बढ़ता रहता है । 2002-03 में चने का उत्पादन 3.41 लाख टन हुआ जिसके 2003-04 में 10.75 लाख टन रहने का अनुमान है । 2002-03 में राज्य में चने के उत्पादन का समस्त भारत से अनुपात 8.3% रहा था । यह रबी की दालों की श्रेणी में आता है । दालों के उत्पादन में चने का स्थान काफी ऊँचा है ।

(3) बाजरा—बाजरे के उत्पादन में राजस्थान का भारत में प्रथम स्थान आता है । देश में कुल बाजरे के उत्पादन का लगभग 1/3 अंश राजस्थान में होता है । जयपुर, नागौर, अलवर, चूरू व सवाईमाधोपुर जिलों में राज्य का अधिकांश बाजरा उत्पन्न होता है । जयपुर जिले में बाजरे का काफी उत्पादन होता है । राज्य में बाजरे का उत्पादन काफी घटता-बढ़ता रहता है । बाजरे का उत्पादन 2002-03 में 7.2 लाख टन हुआ था, जिसके बढ़कर 2003-2004 में 66.5 लाख टन होने का अनुमान है (829% वृद्धि) ।

(4) जौ (Barley)—उत्तर प्रदेश के बाद राजस्थान का स्थान जौ उत्पन्न करने वाले राज्यों में आता है । देश का चौथाया जौ राजेस्थान में पैदा होता है । यह ज्यादातर जयपुर, उदयपुर, भीलवाड़ा, अलवर व अजमेर जिलों में उत्पन्न होता है । आजकल नई किस्मों का प्रचलन भी हो गया हैं; जैसे ज्योति, आर.एस—6 आदि । 2002-03 में जौ का उत्पादन 4 47 लाख टन हुआ जिसके बढ़कर 2003-2004 में 6.90 लाख टन होने का अनुमान है ।

(5) मक्का (Maize)—देश में कुल मक्का की पैदावार का 1/8 अंश राजस्थान में होता है । यह राज्य मे उदयपुर, चित्तौड़गढ़, भीलवाड़ा व बाँसवाड़ में ज्यादा मात्रा में पैदा की जाती है । 2002-03 में राज्य में मक्का का उत्पादन 8.7 लाख टन हुआ, जिसके 2003-2004 में बढ़कर 20.7 लाख टन रहने का अनुमान है ।

(6) सरसों, राई व तिल—राज्य मे तिलहनों का उत्पादन उत्तर प्रदेश के बाद सबसे ज्यादा होता है । पहले सरसों अलवर, भरतपुर, जयपुर तथा गंगानगर जिलों में पैदा होती थी । अब कृषि-विस्तार कार्यक्रमों के फलस्वरूप यह जालौर, सिरोही, उदयपुर, चित्तौड़गढ़, कोटा व बूँदी जिलों में भी होने लगी है । 2002-03 में राई व सरसों (rape and mustard) का उत्पादन 11.8 लाख टन हुआ जिसके 2003-2004 में 26.6 लाख टन के स्तर पर रहने का अनुमान है । **2002-03 में राजस्थान में राई व सरसों का उत्पादन समस्त देश के उत्पादन का लगभग 30% था और भारत में इसका स्थान प्रथम रहा ।** इस प्रकार राज्य में पिछले वर्षों मे सरसों व राई का उत्पादन बढ़ा है । तिल के उत्पादन में राज्य का स्थान उत्तर प्रदेश व मध्य प्रदेश के बाद आता है । पाली जिले में भी काफी तिल पैदा होता है । राज्य में अलसी, अरण्डी, तारामीरा, सोयाबीन आदि का भी उत्पादन होता है । 2001-02 में राज्य में सोयाबीन का उत्पादन 7.16 लाख टन हुआ था । राज्य में तिलहन

Oilseeds) का उत्पादन हाल के वर्षों में काफी बढ़ा है । 2002-03 में तिलहन का उत्पादन 17.6 लाख टन हुआ जिसके 2003-2004 में 39.4 लाख टन होने का अनुमान है ।[1] इस प्रकार राज्य तिलहन के उत्पादन में अग्रणी राज्य हो गया है । राज्य में ज्यादा पैदावार रबी के तिलहनों की होती है । रबी के तिलहनों में राई-सरसों, तारामीरा व अलसी (linseed) आते हैं तथा खरीफ के तिलहनों में मूंगफली, तिल, सोयाबीन व अरण्डी के बीज आते हैं । 2002-03 में खरीफ के तिलहनों के उत्पादन का अनुमान 4.4 लाख टन तथा रबी के तिलहनों के उत्पादन का अनुपात 13.2 लाख टन लगाया गया है । (कुल 17.6 लाख टन) । तिलहन में टेक्नोलोजी मिशन के अन्तर्गत भारत सरकार से विशेष सहायता मिली है ।

(7) गन्ना—राजस्थान में गन्ने का उत्पादन अधिक नहीं होता है । गन्ने का सबसे ज्यादा उत्पादन बूँदी जिले में होता है । अन्य जिले उदयपुर, चित्तौड़गढ़ व गंगानगर हैं । 2002-03 में गन्ने का उत्पादन 4.2 लाख टन हुआ । 2003-04 में इसके 3.3 लाख टन रहने की सम्भावना है । गन्ने के उत्पादन में सर्वोच्च स्थान उत्तर प्रदेश का आता है, जहाँ देश की पैदावार का 40% गन्ना होता है । राजस्थान का अंश भारत के कुल उत्पादन में 1/2% से भी कम (लगभग 0.4%) आता है ।

(8) कपास—कपास की बुवाई का काम मई-जून के महीनों में किया जाता है । पौधे उग जाने के बाद चार-पाँच बार सिंचाई की आवश्यकता होती है । सितम्बर-अक्टूबर तक इन पौधों में कपास के फूल निकल आते हैं । इन फूलों से कपास के लिए सस्ते मजदूरों की आवश्यकता होती है ।

2002-03 में कपास का उत्पादन 2.52 लाख गाँठें हुआ जिसके 2003-04 में घटकर 5.32 लाख गाँठें रहने का अनुमान है । इसका सर्वाधिक उत्पादन गंगानगर जिले में होता है । यह मुख्यतः तीन प्रकार की होती है । देशी कपास मुख्यतः उदयपुर, चित्तौड़गढ़ और बाँसवाड़ा में बोई जाती है । अमेरिकन कपास मुख्यतः गंगानगर जिले में बोई जाती है । इस कपास का रेशा लम्बा होता है और यह अच्छे किस्म के सूती कपड़े बनाने में काम आती है । तीसरे प्रकार की मालवी कपास होती है जिसे कोटा, बूँदी, झालावाड़ और टोंक जिलों में बोया जाता है । कपास का सबसे अधिक उत्पादन गंगानगर जिले में होता है, जहाँ नहरी सिंचाई की सुविधाएँ पाई जाती हैं ।

(9) विविध प्रकार की फसलें—राज्य की अन्य पैदावारों में ग्वार, धनिया (Coriander), सूखी लाल मिर्च, आलू, तम्बाकू, मैथी, जीरा (Cumin) आदि आते हैं ।

खाद्यान्नों का उत्पादन—राजस्थान में खाद्यान्नों के उत्पादन में भारी उतार-चढ़ाव आते रहते हैं । राज्य में 1950-51 में खाद्यान्नों का उत्पादन 30 लाख टन हुआ था जो बढ़कर 1960-61 में 45.5 लाख टन तथा 1965-66 में घटकर 38.4 लाख टन हो गया था । 1970-71 में यह 88.4 लाख टन तक पहुँच गया, जो 1974-75 में घटकर 49.8

1. Economic Review 2003-04 (Govt. of Raj.) p 42.

लाख टन पर आ गया था । उसके बाद के वर्षों में खाद्यान्नों के उत्पादन में भारी उतार-चढ़ाव आते रहे हैं । निम्न तालिका से स्पष्ट होता है कि 1983-84 में खाद्यान्नों का उत्पादन पहली बार 1 करोड़ टन की सीमा को पार कर गया था, जो बाद में इससे नीचे घूमता रहा और 1987-88 के अभूतपूर्व सूखे व अकाल के कारण लगभग 48 लाख टन पर आ गया था । 1990-91 में यह 1 करोड़ 9 3 लाख टन रहा । निम्न तालिका में 1990-91 से 2003-2004 तक की अवधि के लिए खाद्यान्नों का वार्षिक उत्पादन दिया गया है जिससे इसके उतार-चढ़ावो का पता चलता है । 2001-02 के लिए खाद्यान्नों का उत्पादन 140 लाख टन आंका गया था जो 2002-03 में घटकर लगभग 75 3 लाख टन पर आ गया 2003-04 में खाद्यान्नों के उत्पादन का अनुमान 189 लाख टन आंका गया है । इस प्रकार राजस्थान में खाद्यान्नों का उत्पादन बहुत अस्थिर रहता है । सूखी खेती की विधियों को अपना कर इसमें स्थिरता लाने की आवश्यकता है ।

1990-91 से 2003-2004 तक खाद्यान्नों के उत्पादन में उतार-चढ़ाव[1]

वर्ष	(लाख टनों में)
1990-91	109.3
1991-92	79.8
1992-93	114.8
1993-94	70.5
1994-95	117.1
1995-96	95.7
1996-97	128.2
1997-98	140.5
1998-99	129.3
1999-2000	106.9
2000-2001	100 4
2001-2002 (सं. अंतिम)	140 0
2002-2003 (अन्तिम)	75.3
2003-2004 (संभावित)	189.0

उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट होता है कि राजस्थान में योजनाकाल में खाद्यान्नों का उत्पादन बढ़ता गया है, लेकिन इसमें वार्षिक उतार-चढ़ावों की भरमार रही है । यह मुख्यतया वर्षा की मात्रा व वितरण की अनिश्चितता के कारण हुआ है । 1994-95 में खाद्यान्नों का उत्पादन 117 लाख टन रहा, जो पिछले वर्ष की तुलना में 50% से भी अधिक था । 1995-96 में यह घटा और बाद में बढ़ा तथा 1997-98 में 140 लाख टन आंका गया । 1998-99 से 2000-01 के वर्षों में यह घटा तथा 2001-02 में यह 140 लाख टन रहा । खरीफ के

1. Economic Review 2003-04, (GOR) p 41 (for 2001-02 to 2003-04)

अनाजों में बाजरा, मक्का व ज्वार की प्रमुखता होती है और रबी में गेहूँ की । लेकिन खरीफ में चावल व छोटे अनाज तथा रबी में जौ-चना भी बोए जाते हैं । राज्य में 2001-02 में खाद्यान्नों के 140 लाख टन के अन्तिम उत्पादन में खरीफ की मात्रा 63.9 लाख टन व रबी की 76.1 लाख टन आंकी गई है । लेकिन 2003-04 के खाद्यानों के सम्भावित उत्पादन में खरीफ का उत्पादन 109 लाख टन व रबी का 80 लाख टन (कुल 189 लाख टन अनुमानित है ।

हम अगले अध्याय में राज्य के कृषिगत विकास की मुख्य प्रवृत्तियों का उल्लेख करेंगे । वहाँ पर राजस्थान में हरित क्रान्ति के प्रभावों का विवरण भी दिया जाएगा ।

प्रश्न

1. राष्ट्रीय सरसों अनुसंधान केन्द्र स्थित है—
   (अ) नागौर में (ब) अलवर में
   (स) जयपुर में (द) सेवर में **(द)**
   (सेवर, भरतपुर)
2. राजस्थान में सर्वाधिक सरसों का उत्पादन करने वाला जिला है—
   (अ) अलवर (ब) भरतपुर
   (स) जयपुर (द) गंगानगर **(द)**
3. राजस्थान में निम्न में से किस जिले में सबसे अधिक गेहूँ उत्पादित होता है ?
   (अ) जयपुर (ब) दौसा
   (स) कोटा (द) गंगानगर **(द)**
4. राजस्थान में सर्वाधिक जीरा उत्पादक जिला है—
   (अ) दौसा (ब) जयपुर
   (स) जालौर (द) नागौर **(स)**
5. राजस्थान में सर्वाधिक जीरा उत्पादन करने वाला जिला है—
   (अ) गंगानगर (ब) बूँदी
   (स) जालौर (द) कोटा **(स)**
6. राजस्थान में 1993-94 की कीमतों पर सन् 2001-02 में अनुमानित शुद्ध राज्य घरेलू उत्पाद में कृषि (पशु-पालन सहित) का हिस्सा रहा—
   (अ) 40 प्रतिशत (ब) 29.0 प्रतिशत
   (स) 45 प्रतिशत (द) 42.0 प्रतिशत **(ब)**
7. 2001-02 में राज्य में सकल कृषित क्षेत्रफल कुल रिपोर्टिंग क्षेत्रफल का लगभग कितना अंश रहा—
   (अ) 50% (ब) 33%
   (स) 61% (द) 25%
   (ए) 2/5 **(स)**

8. पिछले 25 वर्षों में राज्य में फसलों के प्रारूप में मुख्य परिवर्तन क्या आया है ?
   (अ) खाद्यान्नों के अन्तर्गत क्षेत्रफल सकल कृषित क्षेत्रफल के अनुपात में घटा है,
   (ब) तिलहनों के अन्तर्गत क्षेत्रफल का अनुपात बढ़ा है,
   (स) कपास में भी थोड़ा बढ़ा है,
   (द) सभी। (द)

9. राजस्थान में खाद्यान्नों का सर्वाधिक उत्पादन वर्ष 2001-02 तक किस स्तर तक पहुँच चुका है ?
   (अ) 140 लाख टन (ब) 120 लाख टन
   (स) 118 लाख टन (द) 150 लाख टन (अ)

10. राज्य में सकल सिंचित क्षेत्रफल 2001-02 में किस स्तर पर रहा ?
   (अ) 58 लाख है (ब) 63.6 लाख है
   (स) 67.4 लाख है (द) 67.4 लाख है (द)
   (2002-03 में 52.7 लाख हैक्टेयर)

अन्य प्रश्न

1. राजस्थान में भूमि का उपयोग किस प्रकार से किया गया है ? इसके प्रारूप में योजनावधि में किस दिशा में परिवर्तन हुए हैं ? क्या ये परिवर्तन अनुकूल दिशा में हुए हैं ?
2. राजस्थान में फसलों का वर्तमान प्रारूप क्या है ? अनाज, दालों, तिलहन आदि मुख्य फसलों के क्षेत्रफल में हुए परिवर्तन स्पष्ट कीजिए ?
3. राजस्थान में मुख्य फसलें कौन-कौन सी हैं ? उनके उत्पादन की मुख्य प्रवृत्तियों का विवेचन कीजिए।
4. राजस्थान में भूमि उपयोग, फसल-प्रारूप तथा मुख्य कृषि-उपजों का उल्लेख कीजिए।
5. संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए—
   (i) राजस्थान में तिलहन की पैदावार
   (ii) राज्य में सकल कृषित क्षेत्रफल
   (iii) राजस्थान की मुख्य खाद्यान्न फसलें
   (iv) राजस्थान की प्रमुख खाद्य व अखाद्य फसलें
   (v) राजस्थान में फसलों का प्रारूप

9

योजनाकाल में राज्य का कृषिगत विकास

(Agricultural Development In the State During the Plan Period)

आर्थिक विकास की प्रक्रिया में कृषिगत विकास का विशेष महत्त्व होता है ताकि बढ़ती जनसंख्या के लिए खाद्यान्नों की पूर्ति बढ़ाई जा सके, उद्योगों के लिए कृषिगत कच्चे माल की व्यवस्था की जा सके तथा ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार के अवसर बढ़ाए जा सकें। इससे गाँवों में निर्धनता कम करने में भी मदद मिलती है तथा जीवन-स्तर में सुधार के अवसर उत्पन्न होते हैं। सच पूछा जाए तो कृषिगत विकास ही आर्थिक विकास का मुख्य आधार होता है।

राजस्थान प्रमुख रूप से एक कृषि-प्रधान राज्य है। यहाँ कृषिगत कार्य जलवायु की बहुत जटिल दशाओं में किया जाता है। वैसे तो समस्त भारत में कृषि मानसून का जुआ मानी गई है, लेकिन यह कथन राजस्थान पर विशेष रूप में लागू होता है। यहाँ पानी का नितान्त अभाव है। जैसा कि पहले बतलाया जा चुका है, राजस्थान में भारत के कुल सतही जल-साधनों (surface water resources) का 1% अंश ही पाया जाता है, जबकि क्षेत्रफल 10.4% एवं जनसंख्या 5.5% पाई जाती है। राज्य में जनसंख्या की वृद्धि-दर भी समस्त भारत की तुलना में ऊँची है। यह 1971-81 में 33%, 1981-91 में 28.4% तथा 1991-2001 में 28.37% रही है। राज्य में खाद्यान्नों के उत्पादन की वृद्धि-दर जनसंख्या की वृद्धि से नीची रही है, जो भविष्य के लिए एक गम्भीर चुनौती व चेतावनी बन गई है।

हम नीचे योजनाकाल मे विशेषतया पिछले 30 वर्षों की अवधि (1973-74 से 2002-2003 की अवधि) मे राजस्थान के कृषिगत विकास के विभिन्न पहलुओ पर प्रकाश डालते हैं जिससे इस क्षेत्र में बदलती हुई परिस्थितियों की जानकारी हो सकेगी तथा साथ में भावी कार्यक्रमों की रूपरेखा का भी अनुमान लगाया जा सकेगा।

पंचवर्षीय योजनाओ में सार्वजनिक व्यय में कृषि व सहायक कार्यक्रमों पर व्यय की स्थिति- राजस्थान की विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओ मे कृषि व सहायक कार्यक्रम पर व्यय का अश (कुल सार्वजनिक व्यय मे) निम्न प्रकार रहा–

योजना	%	योजना	%
प्रथम योजना	6.6	छठी योजना *	10.2
द्वितीय योजना	11.0	सातवीं योजना	11.9
तृतीय योजना	11.3	1990–91	13.6
तीन वार्षिक योजनाएँ (1966–69)	10.4	1991–92	15.5
चतुर्थ योजना	8.2	आठवीं योजना (1992–97)	15.9
पंचम योजना	9.3	नवीं योजना (1997–2002)	14.7
1979–80	17.6	2002–03	12.3
		2003–04	9.9

* इसमें व आगे की योजनाओं मे कृषि व सम्बद्ध सेवाओं के अलावा ग्रामीण विकास व स्पेशल क्षेत्रीय कार्यक्रमो का व्यय भी शामिल है।

तालिका से स्पष्ट होता है कि हाल की योजनाओं में कृषि व सहायक क्रियाओं पर व्यय का अंश नवीं पंचवर्षीय योजना में 14.7% तथा 2003–04 में लगभग 10% व्यय हुआ है।

उपर्युक्त व्यय के अलावा सिंचाई व विद्युत आदि पर व्यय का लाभ भी कृषिगत क्षेत्र को प्राप्त होता है।

विभिन्न पचवर्षीय योजनाओ मे कृषिगत उत्पादन बढाने के लिए जिन बातो पर बल दिया गया वे निम्नाकित है[1]–

प्रथम योजना– कृषिगत क्षेत्रफल तथा सिचाई का विकास,

द्वितीय योजना- आवश्यक इन्पुटो के उपयोग व सिचाई पर बल,

तृतीय योजना- गहन कृषि–विकास कार्यक्रम व शीघ्र प्रतिफल देने वाले निवेशो पर बल,

1996-99– सिचाई को प्राथमिकता,

चतुर्थ योजना- अधिक उपज देने वाली किस्मो के अन्तर्गत क्षेत्रफल बढाना तथा उर्वरको का उपयोग बढाना;

पाँचवीं योजना- समन्वित क्षेत्र–दृष्टिकोण, कृषिगत इन्पुटो का नियोजन, खेतो पर विकास, उन्नत फसल प्रबन्ध–विधियाँ अपनाना (ट्रेनिग व विजिट (T & V के द्वारा)

छठी योजना- नई टेक्नोलॉजी को कृषिगत विस्तार कार्यक्रम के माध्यम से कमजोर वर्गो तक पहुँचाना,

1. Draft. Ninth Five Year Plan, 1997–2002, p.7.3 and Budget Study 2004-05 (July 2004), p 50. (for 2002-03, and 2003-04)

सातवीं योजना- तिलहन के टेक्नोलोजी मिशन के माध्यम से खाद्य–तेलो में आत्म–निर्भरता प्राप्त करना और इसके लिए तिहलन की उत्पादन–क्षमता का अत्यधिक विस्तार करना,

आठवीं योजना– जल के उपयोग मे किफायत की विधियाँ अपनाकर स्प्रिंकलर,, ड्रिप, आदि के द्वारा जल का कार्यकुशल उपयोग करना, तिलहन का उत्पादन बढाना आदि।

इन प्रयासो से राज्य में योजनाकाल मे कृषिगत उत्पादन मे नई गति प्राप्त की जा सकी है।

अब हम योजनाकाल मे कृषिगत क्षेत्र की प्रगति के विभिन्न पहलुओ पर प्रकाश डालते हैं।

(1) राज्य में भूमि का उपयोग—प्रथम योजना में औसत रूप से (पाँच वर्षों का औसत) शुद्ध जोता-बोया क्षेत्र (net area sown) 106.2 लाख हैक्टेयर रहा था, जो 2001-02 में 167.7 लाख हैक्टेयर हो गया । इस अवधि मे यह कुल रिपोर्टिंग क्षेत्रफल के 31% से बढ़कर 48.9% हो गया ।[1]

इस प्रकार राज्य में शुद्ध कृषित क्षेत्रफल के अनुपात में काफी वृद्धि हुई है । उपर्युक्त अवधि में सकल कृषित क्षेत्रफल 113.2 लाख हैक्टेयर से बढ़कर 208 लाख हैक्टेयर हो गया था । इस प्रकार एक से अधिक बार बोए गए क्षेत्र में 7 लाख हैक्टेयर से 40.3 लाख हैक्टेयर तक वृद्धि हुई है । अतः उपर्युक्त अवधि में फसल-गहनता (cropping intensity) 1.066 से बढ़कर 1 240 हो गई है । भविष्य में एक से अधिक बार कृषित क्षेत्रफल को बढ़ाकर फसल-गहनता बढ़ाई जा सकती है और वस्तुतः बढ़ाई जानी चाहिए ।

2001–02 में एक से अधिक बार जोता-बोया गया क्षेत्र 40.3 लाख हैक्टेयर रहा, जबकि 2000–01 में यह 33.7 लाख हैक्टेयर रहा था । सिंचाई के साधनों का विकास करके इसमें वृद्धि करना सम्भव हो सकता है । आँकड़ों के अध्ययन से पता चलता है कि 1973–74 के बाद सकल कृषित क्षेत्रफल में बहुत थोड़ी वृद्धि हुई । यह 1973–74 में 178.8 लाख हैक्टेयर से बढ़कर 2001–02 मे 208.0 लाख हैक्टेयर पर ही आ पाया है,* जिससे 28 वर्षों में इसमें 29.2 लाख हैक्टेयर की ही वृद्धि हुई है, जो कम है । इसलिए भविष्य में सिंचाई के साधनों का विकास करके सकल कृषित क्षेत्रफल को बढ़ाने का प्रयास करना होगा ।

(2) सिंचाई का विकास—राज्य में शुद्ध सिंचित क्षेत्र-फल 1951–52 में 10 लाख हैक्टेयर था जो बढ़कर 1970–71 मे 21.4 लाख हैक्टेयर, 1980–81 में 29.8 लाख हैक्टेयर तथा 2001–02 मे 54 2 लाख हैक्टेयर हो गया (1951–52 की तुलना मे 5.4 गुना) । इसी अवधि में कुल सिंचित क्षेत्रफल 11.7 लाख हैक्टेयर से बढ़कर लगभग 67.4 लाख हैक्टेयर हो गया (लगभग 5 8 गुना) । कुल सिंचित क्षेत्रफल मे एक से अधिक बार सिंचित क्षेत्रफल शामिल किया जाता है । दूसरे शब्दों में, इसमे फम्लों के अनुसार सिंचित क्षेत्रफल

---

1 Growth of Agriculture in Rajasthan (A Graphical Presentation), Directorate of Agriculture, Jaipur, November, 1991, p 6 & Agricultural Statistics of Rajasthan, 2001-02 DES, Jaipur, Jan 2004, p 5

* Agriculture Statistics of Rajasthan 1973-74 to 2001-02, DES, October, 2003, p Table 1

का योग निकाला जाता है । राज्य में प्रथम योजना के प्रारम्भ में शुद्ध सिंचित क्षेत्रफल शुद्ध कृषित क्षेत्रफल का 10.8% हुआ करता था जो 2001-02 में 32.3% हो गया । 2001-02 में शुद्ध सिंचित क्षेत्रफल लगभग 54.2 लाख हैक्टेयर था, जबकि शुद्ध कृषित क्षेत्रफल 167.7 लाख हैक्टेयर था ।

फसलों के अनुसार सकल सिंचित क्षेत्रफल[1]—राज्य में गेहूँ, जौ, चना, कपास, मक्का व सरसों आदि फसलों को सिंचाई की अधिक सुविधा मिली हुई है । द्वितीय योजना में औसत रूप से 17 लाख हैक्टेयर भूमि में विभिन्न फसलों को सिंचाई की सुविधा प्राप्त हुई थी, जो बढ़कर 2001-02 में 67.4 लाख हैक्टेयर तक पहुँच गई । 2001-02 में राज्य में कुल सिंचित क्षेत्रफल का लगभग 34% गेहूँ के अन्तर्गत पाया गया था (कुल सिंचित क्षेत्रफल 67.4 लाख हैक्टेयर जिसमें से गेहूँ के अन्तर्गत 22.6 लाख हैक्टेयर सिंचि[त] क्षेत्रफल) । योजना-काल में सरकारी प्रयासों के फलस्वरूप राई व सरसों के सिंचि[त] क्षेत्रफल में वृद्धि हुई है । छठी योजनाकाल में राई व सरसों में सिंचित क्षेत्रफल केवल 4.25 लाख हैक्टेयर (कुल सिंचित क्षेत्रफल का 11% था) जो 2001-02 में 15.[0] लाख हैक्टेयर (कुल सिंचित क्षेत्रफल का 22.3% हो गया । राज्य में तिलहन के उत्पादन को बढ़ाने में इससे काफी मदद मिली है ।

राज्य में सिंचाई के विकास के सम्बन्ध में अन्य उल्लेखनीय तथ्य निम्नांकित हैं-

(i) योजनाकाल में तालाबो व नहरो के विकास पर काफी धनराशि व्यय करने के बाद भी 2001-02 में इनके द्वारा सकल सिंचित क्षेत्रफल क्रमशः 109 हजार हैक्टेयर व 21.[5] लाख हैक्टेयर रहा, जबकि कुओ, नलकूपों व अन्य स्रोतों द्वारा सिंचित क्षेत्रफल 44.5 लाख हैक्टेयर रहा । इस प्रकार आज भी राज्य में कुओं की सिंचाई (नलकूपों सहित) का स्थान ऊँचा (लगभग 66% या 2/3) है । जैसा कि पहले बतलाया जा चुका है 2001-02 मे कुल सिंचित क्षेत्रफल 67 4 लाख हैक्टेयर रहा है ।

(ii) पॉचवी व छठी योजनाओ की अवधि मे भू-जल का तेजी से विकास किया गया है। फिर भी इसके विकास के लिए सतह जल (surface water) की तुलना में सार्वजनिक विनियोग की कमी रही है।

(iii) सतह-जल के विकास मे किए गए विनियोगो से पूरे लाभ नहीं प्राप्त किए जा सके हैं, अथवा काफी विलम्ब के बाद लाभ मिलने शुरू हुए हैं- जैसे सोम-कमला-अम्बा बाँध (डूँगरपुर जिला) की प्रारम्भिक लागत का अनुमान 2 करोड़ रुपये लगाया गया था, जिस पर 90 करोड रुपये से अधिक की राशि व्यय करने के बाद सिंचाई के लाभ काफी विलम्ब से (1992-93 से) मिलना चालू हुआ।

(iv) सिचाई की विभिन्न परियोजनाएँ प्रारम्भ कर दी गईं, लेकिन उनके लिए अपर्याप्त धनराशि का आवटन किए जाने से आगे चलकर उनकी लागतें काफी बढ गई। वृहद् एवं मध्यम परियोजनाओं के माध्यम से सिंचाई के सृजन की लागत प्रथम योजना में 2644 रुपये प्रति हैक्टेयर से बढकर सातवीं योजना मे 28255 रुपये प्रति हैक्टेयर (10 गुने

1. Agricultural Statistics of Rajasthan, 2001-02, January 2004, Various tables.

से अधिक) हो गई। अत. भविष्य मे नई परियोजनाएँ काफी सोच–विचार कर प्रारम्भ की जानी चाहिए तथा वे कम लागत वाली होनी चाहिए एव उनके लिए धन की पर्याप्त व्यवस्था भी होनी चाहिए।

(२) विभिन्न जिलों में सिंचाई व जल-विकास पर किए गए विनियोगों में काफी अन्तर रहा है जिससे कृषिगत विकास में जिलेवार असमानता बढ़ी है । 2001–02 में एक तरफ गंगानगर जिले में सकल सिंचित क्षेत्र सकल कृषिगत क्षेत्रफल का लगभग 82.5% अंश रहा कोटा व बूंदी जिलों में भी यह क्रमश: 57% व 58.8% रहा, अलवर जिले में 58.7%, भरतपुर जिले में 52 7% रहा, लेकिन बाड़मेर व जोधपुर जिलों में यह क्रमश: 9% व 14% ही रहा तथा जैसलमेर व चूरू जिलों में (क्रमश: 20% व 4.7%) रहा । इस प्रकार राज्य के जिलों में सिंचित क्षेत्रफल के अनुपात में काफी अन्तर पाया जाता है ।[1]

(3) राज्य में फसलों के प्रारूप में परिवर्तन (Changes in Cropping Pattern)—जैसा कि पिछले अध्याय में बतलाया गया है, राज्य में अनाज व दालों की फसलों के क्षेत्रफल में योजनाकाल में कमी आई है । प्रथम योजनाकाल में (औसत रूप से) अनाजों (cereals) के अन्तर्गत क्षेत्रफल 56% पाया गया था जो 2001–02 में घटकर 45% पर आ गया तथा दालों में.यह 21% से घटकर 16.2% पर आ गया । यह मोटे अनाजों में विशेष रूप से घटा है । राज्य में तिलहनों के क्षेत्रफल में काफी वृद्धि हुई है । यह प्रथम योजना में 6% से बढ़कर 2001–02 में 15% तक पहुँच गया । तिलहनों में यह वृद्धि राई व सरसों में विशेष रूप से हुई है । सोयाबीन के अन्तर्गत भी क्षेत्रफल काफी बढ़ाया गया है ।

(4) कृषिगत पैदावार में वृद्धि[2]—

(i) अनाज (cereals) का उत्पादन—1952–53 में अनाज (Cereals) का उत्पादन लगभग 29 लाख टन हुआ था जो बढ़कर 2001–02 में 125.8 लाख टन हो गया व 2002–03 में इसके 70.5 लाख टन रहने का अनुमान लगाया गया है । इस प्रकार

योजनाकाल मे राज्य मे अनाज का उत्पादन काफी बढा है। इसमे मानसून के अनुसार भारी परिवर्तन आते रहते हैं। राज्य के बाडमेर, डूँगरपुर, अजमेर, टोंक, पाली, जैसलमेर, जोधपुर, चूरू व झुंझुनूं जिलों में प्रति व्यक्ति अनाज का उत्पादन घट जाने से उत्तम वर्षों में भी इनमे अनाज की कमी रहती है। इन्हीं जिलो मे जनसंख्या में तेज गति से वृद्धि होने से अनाज की कमी ज्यादा मात्रा मे पाई जाती है।

(ii) दालों (Pulses) का उत्पादन—दालें ज्यादातर वर्षा पर आश्रित क्षेत्रों की सीमान्त भूमियों पर उगाई जाती है । 1952–53 में इनका उत्पादन लगभग 5 लाख टन हुआ था जो 2001–02 में 14.3 लाख टन रहा तथा 2002–03 में 4.8 लाख टन अनुमानित है। दालो के वार्षिक उत्पादन मे भी उतार–चढाव आते रहते हैं। उत्तम मानसून के वर्षों मे दालो के अन्तर्गत क्षेत्रफल काफी बढ जाता है और मिट्टी मे नमी बढ जाने से पैदावार बढ जाती है।

1. Agriculture Statistics of Raj. 2001-02, table, 1 (DES).
2. Economic Review 2003-04, (GOR), pp. 41-42.

(iii) खाद्यान्नों का उत्पादन—अनाज व दालों के उत्पादन को शामिल करने पर खाद्यान्नों का उत्पादन 1952-53 में लगभग 34 लाख टन से बढ़कर 2001-02 में 140 लाख टन हो गया । 2002-03 मे 75.3 लाख टन के उत्पादन का अनुमान लगाया गया है । पहले बतलाया जा चुका है कि राज्य में खाद्यान्नों का उत्पादन काफी अस्थिर किस्म का पाया जाता है । उत्तम मानसून के वर्षों में यह काफी ऊँचा हो जाता है और घटिया मानसून के वर्षों में यह काफी नीचे आ जाता है । सिंचित क्षेत्रों में खाद्यान्नों का उत्पादन बढ़ा है । इसी वजह से गेहूँ के उत्पादन में विशेष प्रगति हुई है । यह 1973-74 में 17.9 लाख टन से बढ़कर 2002-03 में 48.8 लाख टन हो गया । 2003-2004 मे 61.8 लाख टन के उत्पादन की आशा है । वर्षा पर आश्रित क्षेत्रो में मोटे अनाजों का उत्पादन जैसे—ज्वार, मक्का व बाजरे का उत्पादन काफी घटता-बढ़ता रहता है । 2002-03 में बाजरे का उत्पादन मात्र 7.2 लाख टन हुआ था जिसके 2003-04 में 66 5 लाख टन रहने का अनुमान लगाया गया है । इससे स्पष्ट होता है कि बाजरे के वार्षिक उत्पादन में भारी उतार-चढ़ाव आते रहते हैं ।

(iv) कपास का उत्पादन—राज्य में कपास की खेती लगभग 5 लाख हैक्टेयर में की जाती है । इसके 90% क्षेत्र में सिंचाई की जाती है । यह ज्यादातर गंगानगर जिले में उगाई जाती है । कपास का 80% क्षेत्र इसी जिले मे पाया जाता है । कपास का उत्पादन 1952-53 मे 1 03 लाख गाँठे रहा था जो 2001-02 मे 2 8 लाख गाँठें हो गया । 2002-03 में यह 2 5 लाख गाँठें रहा तथा 2003-04 के लिए सम्भावित उत्पादन 5.3 लाख गाँठे आंका गया है ।

(v) तिलहन का उत्पादन— राजस्थान तिलहन के उत्पादन मे एक अग्रगामी राज्य के रूप मे उभरा है। देश के कुल तिलहन उत्पादन का 12% राजस्थान मे होने लगा है। राई व सरसो के उत्पादन मे इसका लगभग 1/3 अश हो गया है, जो देश मे प्रथम स्थान पर आ गया है।

1952-53 में तिलहन का उत्पादन केवल 1.34 लाख टन ही हो पाया था जो बढ़कर 2001-02 मे 31.3 लाख टन पर पहुँच गया । 2002-03 मे इसका उत्पादन 17.6 लाख टन व 2003-04 मे 39 4 लाख टन आँका गया है ।

पिछले कुछ वर्षों में तिलहन के उत्पादन की यह वृद्धि काफी तेज रही है । विशेष वृद्धि सरसों व सोयाबीन के उत्पादन में प्रगट हुई है । सोयाबीन की खेती कोटा, बूँदी, चित्तौड़गढ़ व झालावाड़ जिलो मे की जाती है । इसके अन्तर्गत क्षेत्रफल 1983-84 मे केवल 23 हजार हैक्टेयर था, जो 2001-02 में 6.56 लाख हैक्टेयर हो गया । यह एक गैर-परम्परागत व नई फसल है । भविष्य में इसका क्षेत्रफल और बढ़ने की सम्भावना है ।

(vi) गन्ने का उत्पादन—राज्य मे गन्ने का उत्पादन 1952-53 में 4.1 लाख टन हुआ था जो बढ़कर 2001-02 में 4.3 लाख टन हो गया । 2002-03 में इसके 4.2 लाख टन रहने की सम्भावना है । इस प्रकार राज्य में गन्ने के उत्पादन में भी भारी उतार-चढ़ाव आते रहते हैं । गन्ने का सर्वाधिक उत्पादन 1983-84 में 14.8 लाख टन हुआ था । इस प्रकार बाद के वर्षों में इसके उत्पदान में गिरावट आई है ।

राज्य में गन्ने का क्षेत्र 1977–78 में लगभग 61 हजार हैक्टेयर था, जो घटकर 2001–02 में 9 हजार हैक्टेयर पर आ गया है । यह एक चिन्ता का विषय है । **राजस्थान में धनिये का उत्पादन देश के कुल उत्पादन का 40% होता है ।** इसके अन्तर्गत क्षेत्रफल बढ़ा है । यह ज्यादातर कोटा व झालावाड़ जिलों में पैदा होता है । राज्य की अन्य व्यापारिक फसलों में ईसबगोल, जीरे, लाल मिर्च, मेंहदी, ग्वार आदि का स्थान आता है । ये नकद फसलें हैं, इसलिए इन पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है ।

राज्य मे माल्टा/कीनू, अनार, बेर आदि फलो का उत्पादन भी किया जाता है। फलो के विकास पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए।

निम्नांकित तालिका से पता चलता है कि राजस्थान मे उर्वरको का उपयोग द्वितीय योजनाकाल मे औसत रूप से 1 3 हजार टन था जो सातवीं योजना की अवधि मे बढकर 2 55 लाख टन हो गया। उसके बाद मे भी उर्वरको की खपत तेजी से बढती जा रही है। प्रति हैक्टेयर उर्वरको का उपयोग द्वितीय योजना मे लगभग 0 1 किलोग्राम (1/10 किलोग्राम) से बढकर सातवीं योजना मे 15 किलोग्राम तक हो गया। 2000-01 मे प्रति हैक्टेयर उर्वरको की खपत लगभग 29 8 किलोग्राम रही।

राजस्थान मे कृषिगत इन्पुटों के उपयोग मे वृद्धि तथा 1966-67 से हरित क्रान्ति का प्रभाव[1]

(i) उर्वरकों का उपयोग- राज्य मे उर्वरको के उपयोग मे उत्तरोत्तर वृद्धि होती रही है जो निम्न तालिका से स्पष्ट हो जाती है–

अवधि (वार्षिक)	उर्वरको की खपत (हजार टन मे)	प्रति हैक्टेयर खपत (किलोग्राम में)
द्वितीय योजना (1956-61)	1 3	0 1
पाचवी योजना (1974-79)	96 4	5 7
1979-80	147 2	9 0
छठी योजना (1980-85)	171 0	9 4
सातवी योजना (1985-90)	254 8	15 0
1990-91	372 3	19 1
1991-92	441 0	24 4
1992-93	490 5	24 3
1993-94	502 4	26 1
1994-95	602	29 5
1995-96	642 6	33 1
1996-97	701 2	33 8
1997-98	787 6	35 3
1999-2000	817	39 5
2000-2001	664	29 8

(Tata SOI, 2002-03, p 140)

1. Draft Ninth Five Year Plan, 1997–2002, Vol. 1. p 7.6 and Economic Review 2003-04, table 10

2001-02 में उर्वरकों का वितरण लगभग 7.9 लाख टन हुआ तथा 2002-03 में यह 5.5 लाख टन रहा है । इसके अलावा राज्य में जैविक खाद के उपयोग को भी बढ़ाया गया है । इसमें शहरी खाद व ग्रामीण खाद शामिल होती है ।

(ii) अधिक उपज देने वाली किस्मों के बीजों का तथा अन्य सुधरे हुए बीजों का वितरण-

औसत वार्षिक	खरीफ व रबी को मिलाकर (वितरण)	
	अधिक उपज देने वाली किस्मों के बीज (HYV) (हजार क्विंटल मे)*	अन्य सुधरी किस्मों के बीज (हजार क्विंटल में)
द्वितीय योजना (1956-61)	–	–
तृतीय योजना	–	–
1968-69	25 1	–
चतुर्थ योजना (1969-74)	26 8	–
पचम योजना (1974-79)	48 1	8 1
छठी योजना (1980-85)	126 0	30 1
1990-91	152 7	66 9
1991-92	143 9	66.5
1992-93	148 0	72 6
1993-94	181 3	84 5
1994-95	199 2	97.6
1995-96	223 0	121.3
1996-97	264 8	137 4
1997-98	274 5	153.9
1998-99	277 7	146 2
1999-2000	374 3	168 2
2000-2001	328.1	161 9

योजनाकाल में 1966-67 से हरित क्रान्ति या कृषिगत विकास की नई व्यूहरचना के दौरान अधिक उपज देने वाली किस्मों के बीजों व अन्य किस्म के बीजों का उपयोग बढ़ाया गया है । इससे उत्पादन में वृद्धि हुई है । 2001-02 में अधिक उपज देने वाली किस्मों के बीजों की खपत लगभग 3.45 लाख क्विंटल व अन्य सुधरी किस्मों के बीजों की खपत 1.72 लाख क्विंटल हो गई थी । 2002-03 में इनकी खपत क्रमश: 3.32 लाख टन व 1.59 लाख टन रही है ।

---

* धान, ज्वार, बाजरा, मक्का व गेहूँ सहित,

स्रोत: Agriculture Statistics of Rajasthan, 25 years, DES p 65 & Economic Review 2003-04, p 43

(iii) **पौध-संरक्षण रसायनों की खपत में वृद्धि**—राज्य में तकनीकी ग्रेड के रसायनों की खपत बढ़ाई गई है ताकि विभिन्न फसलों, सब्जियों व फलों को विभिन्न प्रकार के रोगों से बचाया जा सके। द्वितीय योजना में इनकी वार्षिक खपत 129 टन, तृतीय योजना में 229 टन तथा छठी योजना में 2004 टन रही। नवीं योजना में इनकी खपत का स्तर 3000 टन प्रति वर्ष रहा है।

(iv) **अधिक उपज देने वाली किस्मों (HYV) के अन्तर्गत क्षेत्र**[1]—1966 में हरित क्रान्ति की शुरुआत के बाद राजस्थान में भी अधिक उपज देने वाली फसलों के उपयोग में निरन्तर वृद्धि हुई है। 1966-69 की अवधि में ज्वार, बाजरा, मक्का, धान व गेहूँ के कुल कृषित क्षेत्रफल के केवल 2% भाग पर इन फसलों की उन्नत किस्मों की बुआई की गई थी। बाद में हुई प्रगति निम्न तालिका में दर्शाई गई है। अधिक उपज देने वाली किस्मों (HYV) के अन्तर्गत उपर्युक्त पाँच फसलों में कुल कृषित क्षेत्रफल का प्रतिशत इस प्रकार रहा—

पाँच फसलों में कुल कृषित क्षेत्रफल का प्रतिशत अंश

चतुर्थ योजना	88
पंचम योजना	170
छठी योजना	283
सातवीं योजना	319

तालिका से स्पष्ट होता है कि राजस्थान में भी अधिक उपज देने वाली किस्मों के अन्तर्गत ज्वार, बाजरा, मक्का, धान व गेहूँ का क्षेत्रफल बढ़ा है, जो सातवीं योजना में इन फसलों के कुल क्षेत्रफल का 32% तक हो गया था। इससे उनके उत्पादन पर अनुकूल प्रभाव पड़ा है।

इनमें गेहूँ रबी की फसल है और शेष चार खरीफ की फसलें हैं।

राज्य में उत्पादन बढ़ाने के लिए गेहूँ के मिनिकिट वितरित किए गए हैं। अकाल व सूखे से ग्रस्त लघु व सीमान्त किसानों को राहत पहुँचाने के उद्देश्य से अकाल सहायता कार्यक्रम के तहत उनको बीज व उर्वरकों के मिनिकिट्स निःशुल्क बाँटे गए हैं। बीज मिनिकिट्स बाँटने में राजफेड ने सहयोग दिया है। उर्वरक मिनिकिट्स में यूरिया के 25-25 किलोग्राम के मिनिकिट्स बनाए गए हैं। अनुसूचित जाति व अनुसूचित जनजाति के कृषकों के खेतों पर मक्का, बाजरा व ज्वार के सघन प्रदर्शन आयोजित किए गए हैं। इनसे उत्पादन को प्रोत्साहन मिला है।

राज्य में कृषिगत उत्पादन बढ़ाने के विभिन्न कार्यक्रम

(1) राष्ट्रीय दलहन विकास परियोजना (National Pulses Development Project) (NPDP)—राजस्थान में रबी की दलहन फसलों में चना, मसूर व मटर आते हैं

---

1 राजस्थान में कृषि विकास प्रगति : 1990-91, कृषि विभाग, जयपुर, पृ. 19.

तथा खरीफ में मोठ, उड़द, मूँग, चंवला व अरहर मुख्य हैं । मोठ कुल दलहनी क्षेत्र के 40% क्षेत्र में बोया जाता है । यह कम वर्षा वाले क्षेत्रों में भी हो सकता है । दलहन का उत्पादन बढ़ाने के लिए 1974-75 से एक केन्द्र-चालित दलहन विकास योजना कार्यशील थी, जिसे 1986-87 से राष्ट्रीय दलहन विकास परियोजना में शामिल कर लिया गया था । इस परियोजना के अन्तर्गत केन्द्रीय सरकार ने 12 जिले चने के विकास के लिए, ▪ जिले मूँग के लिए तथा 3 जिले उड़द के लिए चुने थे । राज्य ने 6 जिले चने के लिए, 2 मूँग के लिए, 4 उड़द के लिए तथा 8 मोठ के लिए चुने थे । इस प्रकार राज्य सरकार ने विभिन्न दालों के विकास के लिए 20 जिले चुने थे ।

राष्ट्रीय दलहन विकास परियोजना के अन्तर्गत कृषकों को सब्सिडी देकर दलहन का उत्पादन बढ़ाने के लिए प्रोत्साहित किया गया है जैसे मिनिकिट वितरण, ब्लॉक-प्रदर्शन, प्रशिक्षण, पौध-संरक्षण, उपचार (दवाइयाँ), प्रमाणित बीज वितरण, पौध-संरक्षण यंत्र आदि के लिए सब्सिडी दी जाती है, जिसमें ज्यादातर केन्द्र का अंश 75% व राज्य का 25% है । आशा है इस कार्यक्रम से खरीफ व रबी की दालों का उत्पादन बढ़ेगा ।

(2) राष्ट्रीय तिलहन विकास परियोजना (National Oilseeds Development Project) (NODP)—राज्य में खरीफ के तिलहनों में तिल, मूंगफली, सोयाबीन व अरण्डी का स्थान है, तथा रबी के तिलहनों में राई-सरसों, तारामीरा व अलसी का स्थान है । तिलहनों का उत्पादन बढ़ाने के लिए 1984-85 व 1985-86 में केन्द्र-चालित योजना में केन्द्र का अंश शत-प्रतिशत था तथा 1986-87 से केन्द्र व राज्य का 50 : 50 अंश रहा था ।

1987-88 में तिलहन का उत्पादन बढ़ाने के लिए एक अतिरिक्त कार्यक्रम 'तिलहन-उत्पादन-थ्रस्ट-कार्यक्रम' (Oil-seeds Production Thrust Programme) (OPTP) चालू किया गया, जिसमें केन्द्र का अंश शत-प्रतिशत रखा गया । ये दोनों योजनाएँ 1989-90 तक लागू रहीं । इसके बाद 1990-91 से दोनों को मिलाकर एक तिलहन उत्पादन कार्यक्रम (Oilseeds Production Programme) (OPP) लागू किया गया जिसका 75% व्यय केन्द्र द्वारा तथा 25% राज्य सरकार द्वारा वहन किया जाता है ।

इस कार्यक्रम के अन्तर्गत काश्तकारों को मिनि- किट्स, वृहद् प्रदर्शन, उन्नत कृषि यंत्र, पौध संरक्षण यंत्र व दवाइयों तथा जिप्सम के उपयोग पर सब्सिडी दी जाती है। इसके लिए सरकार ने 24 जिले चुने हैं तथा राज्य सरकार ने 2 जिले—डूँगरपुर व चूरू चुने हैं । **राज्य में कोटा, बूँदी, झालावाड़ व चित्तौड़गढ़ जिलों में सोयाबीन की खेती को काफी लोकप्रिय बनाया गया है, जिससे इसके अन्तर्गत क्षेत्रफल व उत्पादन दोनों में वृद्धि हुई है ।**

इसी प्रकार सरसों का उत्पादन भी बढ़ाया गया है । इसके लिए समय पर बुवाई, पौध-संरक्षण, जीवाणु खाद (organic manures) का उपयोग आदि पर बल दिया गया है । सरसों, मूँगफली व सोयाबीन की फसलों में बुवाई से पूर्व जिप्सम का 250 किलो प्रति हैक्टेयर की दर से उपयोग करने पर उत्पादन बढ़ा है । इसके लिए सरकार सब्सिडी (अनुदान) देती है । तिलहन का उत्पादन बढ़ाने के लिए कृषकों को स्प्रिंक्लर सैट अनुदान

पर उपलब्ध किए जा रहे हैं। इनसे पानी की किफायत होती है और अधिक क्षेत्र में सिंचाई की जा सकती है। सरसों की फसल में चेपा लगने पर वह घुल जाता है, जिससे उत्पादन पर अनुकूल प्रभाव आता है।

तिलहन का उत्पादन वृहत् प्रदर्शन व मिनिकिट वितरण के कारण भी बढ़ा है।

(3) विशेष खाद्यान्न उत्पादन योजना (Special Food Production Programme) (SFPP)—देश में खाद्यान्नों का उत्पादन बढ़ाने के लिए योजना आयोग ने सातवीं योजना के मध्यावधि मूल्यांकन के समय एक विशेष खाद्यान्न उत्पादन कार्यक्रम अपनाया था, जिसके अन्तर्गत 14 राज्यों के 169 जिलों में गेहूँ, चना, मक्का, चावल व अरहर का उत्पादन बढ़ाने के प्रयास किए गए। 1988-89 व 1989-90 में इस कार्यक्रम का शत-प्रतिशत व्यय भारत सरकार के द्वारा किया गया था।

राजस्थान में यह कार्यक्रम शुरू में 14 जिलों में गेहूँ, चना व मक्का की फसलों पर लागू किया गया। यह कार्यक्रम 1990-91 के लिए भी जारी रखा गया और इस बार इसमें बाजरा भी शामिल किया गया। 1990-91 में इस कार्यक्रम में गेहूँ के लिए 14 जिले, चने के लिए 8 जिले, मक्का के लिए 7 जिले तथा बाजरा के लिए 8 जिले चुने गए थे।

इस कार्यक्रम के अन्तर्गत विभिन्न प्रकार की इन्पुटों (जैसे प्रमाणित बीज, पौध-संरक्षण दवाइयों व यंत्रों तथा सुधरे हुए व फार्म यंत्रों), प्रदर्शनों आदि के लिए अनुदान दिए जाते हैं ताकि इसमें शामिल फसलों की पैदावार बढ़ सके। इस कार्यक्रम पर अधिक धनराशि व्यय की गई है। सामान्यतया विभिन्न फसलों के लिए जो धनराशि व्यय हेतु निश्चित की गई थी, उससे कम राशि ही व्यय हो पाई है। फिर भी इस कार्यक्रम की सहायता से गेहूँ, चना, मक्का व बाजरे का उत्पादन चुने हुए जिलों में बढ़ाने में मदद मिली है।

राज्य में प्रमुख फसलों में उत्पादकता की प्रवृत्तियाँ (भारतीय संदर्भ में)[1]

राजस्थान में विभिन्न फसलों की प्रति हैक्टेयर पैदावार में वृद्धि हुई है जिसे समस्त भारत की तुलना में निम्न तालिका में दर्शाया गया है।

(प्रति हैक्टेयर किलोग्राम में)

फसल	राजस्थान		भारत	
	1970-71	2001-02	1970-71	2001-02
1. गेहूँ	1320	2793	1307	2761
2. राई व सरसों	972	1084	594	1001
3. कपास (लिंट)	184	281	106	186
4. गन्ना (टन प्रति हैक्टेयर)	32.8	47.7	48	67

तालिका से स्पष्ट होता है कि राजस्थान में प्रति हैक्टेयर उपज 1970-71 से 2001-02 की अवधि में गेहूँ, राई व सरसों, कपास व गन्ने सभी में बढ़ी है।

1. Economic Survey 2003-04, p S 18 (for India) and Agricultural Statistics of Rajasthan 2001-02, pp 66-68, table 9

है । 2001-2002 में राजस्थान में प्रति हैक्टेयर उपज की तुलना समस्त भारत से करने पर पता चलता है कि यह गन्ने में काफी नीची है । लेकिन 2001-2002 में राजस्थान में कपास में उत्पादकता का स्तर भारत से ऊँचा पाया गया है । गेहूँ में राजस्थान का स्तर समस्त भारत के उत्पादकता के स्तरों के लगभग समान रहा है । 2001-2002 में राजस्थान में गेहूँ का उत्पादन लगभग 28 क्विंटल प्रति हैक्टेयर रहा, जबकि भारत में यह 27.6 क्विंटल रहा था ।

राजस्थान में प्रमुख फसलों के क्षेत्रफल, उत्पादन व उत्पादकता के सूचनांक— राज्य में कृषिगत विकास के अध्ययन में फसलों के क्षेत्रफल, उत्पादन व उत्पादकता के सूचनांकों का भी प्रयोग करना उचित होगा । आजकल आधार वर्ष 1979-80 से 1981-82 = 100 मानकर विभिन्न वर्षों के लिए फसलवार सूचनांक तैयार किए जाते हैं, जो आगे की तालिका में दर्शाए गए हैं ।

तालिका के निष्कर्ष

(1) 1973-74 से 2001-02 की 29 वर्षों की अवधि में गन्ने के अन्तर्गत क्षेत्रफल काफी घटा है, लेकिन तिलहन के क्षेत्रफल में अत्यधिक वृद्धि हुई है । सभी फसलों के अन्तर्गत क्षेत्रफल का सूचनांक 1973-74 में 109.7 से बढ़कर 2001-02 में 112.1 हो गया है । अतः इसमें वृद्धि हुई है ।

(2) गन्ने के उत्पादन का सूचनांक 1973-74 मे 155.3 से घटकर 2001-02 में 34.5 पर आ गया । तिलहन के उत्पादन का सूचनांक 1973-74 में 76.1 से बढ़कर 2001-02 में 555.3 पर आ गया था । इस प्रकार इन वर्षों में तिलहन के उत्पादन में काफी वृद्धि हुई है । अनाज, दालों व खाद्यान्न-फसलों के उत्पादन-सूचनांकों में वृद्धि हुई है ।

(3) 1973-74 से 2001-02 की अवधि में विभिन्न फसलों की उत्पादकता का सूचनांक बढ़ता गया । इसी अवधि में सभी फसलों के लिए यह 98.6 से बढ़कर 192.6 पर पहुँच गया ।

चूँकि राज्य में मानसून के फलस्वरूप क्षेत्रफल व उत्पादन में प्रति वर्ष काफी उतार-चढ़ाव आते रहते हैं, इसलिए आँकड़ों की तुलना करते समय आवश्यक सावधानी बरतनी चाहिए ।

इस प्रकार राजस्थान के कृषिगत विकास के अध्ययन से हमें पता चलता है कि यहाँ मानसून के फलस्वरूप कृषिगत उत्पादन काफी अस्थिर रहता है, लेकिन पिछले वर्षों में विशेष कार्यक्रम अपनाकर अनाजों, दालों व तिलहनों का उत्पादन बढ़ाने के प्रयास किए गए हैं । फिर भी राज्य में सिंचाई का अभाव पाया जाता है तथा राज्य में उर्वरकों की खपत भी अपेक्षाकृत कम होती है । फार्म-यंत्रों में आधुनिकीकरण की आवश्यकता है तथा जल-साधनों के सदुपयोग पर अधिक ध्यान दिया जाना चाहिए । राज्य में क्षारयुक्त मिट्टियों की समस्या उग्र रूप धारण करती जा रही है तथा कृषिगत उत्पादन, फलों के उत्पादन, वानिकी, चरागाह व पशु-पालन के विकास में अधिक समन्वय व तालमेल बैठाने की जरूरत है । राज्य सरकार कृषिगत विकास के लिए कई उपाय कर रही है ताकि उत्पादन बढ़ सके ।

सूचनांक : क्षेत्रफल, उत्पादन व उत्पादकता

(1979–80 से 1981–82 का औसत = 100)।

	फसलें	क्षेत्रफल			उत्पादन			उत्पादकता		
		1973-74	1990-91	2001-02	1973-74	1990-91	2001-02	1973-74	1990-91	2001-02
1.	अनाज	112.1	99.1	103.7	100.9	177.9	244.7	98.2	185.3	223.6
2.	दालें	108.6	110.9	101.1	105.8	146.1	121.5	142.7	125.1	150.8
3	खाद्यान्न फसलें (Foodgrain Crops)	111.2	102.3	103.0	102.0	168.4	208.0	91.6	166.2	207.9
4	तिलहन	103.9	246.0	207.7	76.1	507.0	555.3	83.7	157.9	192.4
5.	कपास	80.2	120.8	135.6	69.4	212.3	64.9	86.6	175.7	47.9
6.	गन्ना	120.1	68.2	27.1	155.3	96.0	34.5	126.9	140.8	127.4
7.	सभी फसलों (All Crops)	109.7	114.4	112.1	100.0	211.4	244.7	98.6	165.1	192.6

[स्रोत : Agricultural Statistics of Rajasthan 1973-74 to 2001–02, October 2003, DES, Various tables, pp 102–119

राजस्थान में कृषिगत उत्पादन का विस्तार करने के लिए जोधपुर, बाड़मेर, बीकानेर, चूरू व जैसलमेर में **तुम्बा** की खेती, श्रीगंगानगर, बीकानेर, झालावाड़ व बांसवाड़ा में **सूरज-मुखी** की खेती, उदयपुर व डूंगरपुर में **कुसुम** (Safflower) की खेती तथा पाली, जालौर, अजमेर, सिरोही, भीलवाड़ा, उदयपुर, राजसमन्द, सीकर व हनुमानगढ़ में अरण्डी (Castor seed) की खेती को बढ़ावा देने का प्रयास किया गया है। **सोयाबीन की खेती को** सवाई माधोपुर, उदयपुर, टोंक, बाँसवाड़ा व भीलवाड़ा जिलों में तथा बूँदी, कोटा, भीलवाड़ा, चित्तौड़गढ़ जिलों में **राजमा** की खेती एवं उदयपुर तथा कोटा सम्भागों में **काबुली चने** की खेती को भी प्रोत्साहित किया गया है। **नवीं योजना में होहोबा (Hohoba) की खेती को लोकप्रिय बनाया जाएगा। इसका तेल हवाई जहाजों, दवाइयों व सौंदर्य-प्रसाधनों, आदि में काम आता है।**

पिछले वर्षों में कृषिगत विकास के कार्यक्रम व दिशाएँ

1994-95 में कृषिगत विकास की दिशाएँ—कृषि विकास परियोजना के अन्तर्गत 1994-95 वर्ष के लिए 87 26 करोड़ रु का प्रावधान किया गया था। इसमें निम्न कार्यक्रमों पर जोर दिया गया था—क्षारीय व लवणीय भूमि में सुधार, जल का समुचित उपयोग, चारा विकास कार्यक्रम, उन्नत बीजों आदि की तकनीक के बारे में प्रचार-प्रसार, श्रव्य-दृश्य साधनों का उपयोग, कम्प्यूटर उपयोग, ग्रामीण सड़कों का निर्माण, फल-विकास, भूजल-विभाग, पशुपालन, महिला किसान प्रशिक्षण, आदि। जलग्रहण विकास (Watershed Development) के लिए समन्वित जलग्रहण विकास परियोजना व राष्ट्रीय जलग्रहण विकास कार्यक्रम पर धनराशि बढ़ाई गई थी। केन्द्र-प्रवर्तित-योजनाओं के अन्तर्गत 1994-95 के लिए धनराशि में काफी वृद्धि की गई तथा उसमें 25 करोड़ रु. उर्वरक अनुदान के शामिल किए गए थे।

1995-96 के लिए कृषिगत विकास के कार्य- क्रम—27 मार्च, 1995 को मुख्य-मंत्री ने अपने बजट-भाषण में कृषिगत विकास के लिए निम्न कार्यक्रम प्रस्तुत किए थे—

(1) 1995-96 में **20 हजार फव्वारा** लगाने के लिए किसानों को 10 करोड़ रु की सहायता देने का लक्ष्य रखा गया। कुओं से सिंचाई में होने वाली पानी की छीजत को कम करने के लिए पाइप लाइनें बिछाने हेतु दो करोड़ रु. का प्रावधान किया गया था।

(2) 1994-95 में **इन्दिरा गाँधी नहर परियोजना क्षेत्र में पानी के कुशल उपयोग** के लिए डिग्गी निर्माण व पम्प सेट एवं फव्वारा सिंचाई के लिए सहायता की योजना चालू की गई। 1995-96 में इस योजना को गंगानगर व हनुमानगढ़ जिलों में भाखड़ा गंगनहर क्षेत्र में लागू करने का लक्ष्य रखा गया। इसके लिए अनुदान की व्यवस्था की गई।

(3) फल विकास की एक विशेष योजना के अन्तर्गत 15 हजार रुपये प्रति हैक्टेयर अनुदान राशि निर्धारित की गई।

(4) **1995-96 में सिंचाई व बाढ़-नियंत्रण पर 286.50 करोड़ रु.** व्यय करने का प्रावधान किया गया जो पिछले वर्ष से लगभग 52 करोड़ रु. अधिक था।

(5) सरकार ने इन्दिरा गाँधी सिंचित विकास परि- योजना के अन्तर्गत वृक्षारोपण, पक्के खालों के निर्माण, सड़क व नई डिग्गियों के निर्माण, टिब्बा स्थिरीकरण, आदि पर बल दिया। इसी प्रकार चम्बल परियोजना व माही बजाज सागर परियोजना के अन्तर्गत विकास-कार्य कराने पर जोर दिया गया।

1996-97 में कृषिगत विकास के कार्यक्रम

(1) 1996-97 वर्ष के लिए 20 हजार फव्वारा सैट लगाने, सिंचाई के लिए 25 लाख मीटर पाइप लाइन बिछाने और 50 हजार कुओं के सुधार का लक्ष्य रखा गया। गंग, भाखड़ा व इन्दिरा गाँधी नहर परियोजना क्षेत्र में 500 डिग्गियों का निर्माण कराने के कार्यक्रम रखे गए।

(2) 40 लाख फलदार पौधों के वितरण का कार्यक्रम रखा गया तथा गोपाल-योजना की तरह 'उद्यान-सखा' योजना लागू की गई।

(3) 1500 हैक्टेयर क्षेत्र में ड्रिप सिंचाई का लक्ष्य रखा गया। यह 1995-96 के लक्ष्य से तिगुना था। इसके लिए प्रति हैक्टेयर 15 हजार रुपये का अनुदान देने का लक्ष्य रखा गया। जलग्रहण-विकास व भू-संरक्षण विकास पर 1996-97 में 125 करोड़ रु. के व्यय का प्रावधान किया गया, जबकि 1995-96 में यह 90 करोड़ रु. का था।

(4) शीत-गृह, कृषि पैकेजिंग, ग्रेडिंग, आदि में पूँजी लगाने वाली नई इकाइयों को अनुदान देने पर बल दिया गया। यह 20% तथा एक इकाई को अधिकतम 15 लाख रु. तक देने का लक्ष्य रखा गया।

(5) यह कहा गया कि खालों के निर्माण के लिए दिए गए ऋणों का भुगतान किसानों की ओर से सरकार करने का प्रयास करेगी ताकि कृषकों को राहत मिल सके। ये राजस्थान भूमि विकास बैंक के माध्यम से दिए गए थे। भारत सरकार व नाबार्ड ने इनका भुगतान करना स्वीकार नहीं किया।

1997-98 के बजट में कृषिगत विकास के प्रस्तावित कार्यक्रम

(1) 1997-98 में बूँद-बूँद सिंचाई की पद्धति से 1500 हैक्टेयर क्षेत्र तथा फव्वारा-सिंचाई से 50 हजार हैक्टेयर भूमि तथा 21 हजार किसानों को लाभान्वित करने का लक्ष्य रखा गया। सिंचाई की पाइप लाइन डालने के लिए किसानों को 40 करोड़ रु. का अनुदान देने का निश्चय किया गया।

(2) 145 'किसान-सखा' प्रशिक्षित करने के लिए 1.5 करोड़ रु. का प्रावधान किया गया।

(3) प्रामाणिक बीजों के लिए गाँवों में खुदरा बीज-बिक्री-केन्द्र खोलने तथा समस्याग्रस्त भूमि को कृषि योग्य बनाने का कार्यक्रम प्रस्तावित किया गया।

(4) बारानी क्षेत्रों में जलग्रहण विकास कार्यक्रम पर 1997-98 में 115 करोड़ रु. व्यय करने का लक्ष्य रखा गया।

(5) किन्नू, संतरों व मसालों आदि का निर्यात बढ़ाने पर बल दिया गया।

(6) राज्य भण्डारण निगम की अतिरिक्त क्षमता का निर्माण करने का कार्यक्रम रखा गया।

1999-2000 के बजट में कृषिगत विकास की दिशाएँ

(1) वर्ष 1999-2000 मे 2 करोड हैक्टेयर क्षेत्र मे खरीफ व रबी की फसले बोकर 126 लाख टन खाद्यान्न व 36 लाख टन तिलहन का उत्पादन करने का लक्ष्य निर्धारित किया गया।

(2) इन लक्ष्यो को प्राप्त करने के लिए 20 लाख टन रासायनिक उर्वरक व 4 लाख क्विंटल प्रमाणित व उन्नत बीज उपलब्ध कराने का लक्ष्य रख गया।

(3) कृषि व सम्बद्ध सेवाओ पर 1999-2000 मे 278 करोड़ 34 लाख रु. के व्यय का प्रावधान किया गया।

(4) 20 हजार नये फव्वारा सेट्स लगाने हेतु अनुदान देने का लक्ष्य रखा गया।

(5) गाँवो मे कचरे का उपयोग करके कम्पोस्ट खाद तैयार करवाने के लिए 'निर्मल ग्राम योजना' प्रारम्भ करने पर बल दिया गया तथा इसके लिए 1 42 करोड रु के व्यय का प्रावधान किया गया।

(6) जल ग्रहण योजनाओं पर 128 करोड रु व्यय करने का प्रस्ताव किया गया।

2000-2001 के बजट में कृषिगत विकास के कार्यक्रम[1]

कृषि-विभाग की विभिन्न गतिविधियों के लिए वर्ष 2000-2001 में 129.10 करोड़ रुपए के व्यय का प्रावधान किया गया है। जलग्रहण योजनाओं पर 56.65 करोड रुपए व्यय करने का प्रस्ताव है। बूँद-बूँद सिंचाई का कार्यक्रम 1600 हैक्टेयर में लागू किया जाएगा। मसाले व सब्जी की फसलों का नए क्षेत्र में विस्तार किया जाएगा। ग्रामीण विकास व पचायती राज—कार्यक्रमो को अधिक सुदृढ किया जाएगा।

'राजीव गाँधी पारम्परिक जल स्रोत संधारण कार्य-क्रम' नामक योजना सम्पूर्ण राज्य में लागू की जाएगी। पहाडी क्षेत्रों में पिछडी जातियों व अल्पसंख्यक लोगों के विकास हेतु 'मगरा क्षेत्रीय विकास कार्यक्रम' लागू किया जाएगा। इंदिरा गाँधी नहर परियोजना क्षेत्र में सिंचाई का विस्तार किया जाएगा। इस परियोजना के अंतर्गत मार्च 2000 के अंत तक 12.78 लाख हैक्टेयर में सिंचाई दी जा सकेगी।

2001-2002 के बजट में कृषिगत विकास के कार्यक्रम:-

कृषि की विभिन्न गतिविधियो के लिए 2001-02 मे 420 करोड 35 लाख रुपयो का प्रावधान किया गया था। 100 करोड रु. की लागत से जलग्रहण विकास व भू—सरक्षण कार्य सम्पन्न करने के लक्ष्य रखे गये थे। खाद्यान्नो के उत्पादन का लक्ष्य 125 लाख टन व तिलहन का 40 लाख टन रखा गया था।

2002-2003 के बजट में कृषि, पशुपालन व वन विकास के कार्यक्रम सुनिश्चित किये गये। कृषिगत विकास के लिए 411 41 करोड रु का तथा पशुपालन के लिए 116 23 करोड रु का व्यय प्रस्तावित किया गया। खाद्यान्नो के उत्पादन का लक्ष्य 127 लाख टन व तिलहन का 40 लाख टन रखा गया। बूँद-बूँद सिंचाई, फव्वारा सिंचाई आदि के कार्यक्रमों को लागू करने पर जोर दिया गया। क्षारीय भूमि सुधार, तिलहन व दलहन उत्पादन के लिए किसानों को 98 हजार टन जिप्सम उपलब्ध कराने का लक्ष्य रखा गया।

2003-2004 के बजट में कृषिगत विकास पर 408 करोड़ 25 लाख रुपये का प्रावधान किया गया है। खाद्यान्न के उत्पादन का लक्ष्य 114 लाख टन व तिलहन का 37 लाख टन रखा गया है। कृषको को प्रमाणित व उन्नत बीज तथा रासायनिक खाद उपलब्ध कराई जायगी। किसानो व खेतिहर मजदूरो के लिए कार्य करते समय या घर लौटते समय दुर्घटनाग्रस्त होने पर तथा मृत्यु होने पर क्रमश 15 हजार रु व 30 हजार रु की सहायता देय होगी। जलग्रहण व भू—सग्रहण कार्यक्रमो पर धनराशि व्यय करने तथा बागवानी विकास करने के प्रयास तेज किये जायेगे।

---

1 वित्तमंत्री का बजट भाषण 5 मार्च, 2003, पृ 29–31.

राज्य में कृषिगत विकास के सम्बंध में मुख्य निष्कर्ष– राजस्थान मे कृषिगत विकास के उपर्युक्त विवरण से यह स्पष्ट होता है कि राज्य से कृषिगत क्षेत्र का काफी विस्तार हुआ है, सिचाई की सुविधाएँ बढ़ी हैं एव कृषिगत विकास की नई व्यूहरचना को लागू किया गया है। राज्य मे उन्नत बीज, रासायनिक खाद, सिचाई, कीटनाशक दवाई, आदि इन्पुटो का उपयोग बढा कर प्रति हैक्टेयर उपज मे वृद्धि की जानी चाहिए। अकाल व सूखे की स्थिति का मुकाबला करने के लिए भी सिचाई का विस्तार किया जाना चाहिए।

कृषकों की आय बढ़ाने के लिए कृषि के साथ-साथ पशु-धन के विकास पर भी समुचित रूप से ध्यान दिया जाना चाहिए। राजस्थान मे पशु–धन विकास के लिए पर्याप्त अवसर व सुविधाएँ विद्यमान हैं। इस प्रकार **राज्य हरित क्रान्ति** (green revolution) के साथ–साथ श्वेत क्रान्ति (white revolution) करने की स्थिति मे भी आ गया है। इस सम्बध मे दूध का उत्पादन व सग्रह बढाने के लिए राज्य मे ऑपरेशन फ्लड के कार्यक्रमो का सचालन किया गया है। **राजस्थान में भारत के कुल दूध-उत्पादन का 10% होता है। 1989-90 में 42 लाख टन दूध का उत्पादन हुआ था, जिसके बढकर 1996-97 में 54.5 लाख टन होने का अनुमान है।** बस्सी मे गौवश–सवर्द्धन का प्रयास जारी है। दूध उत्पादको की सहकारी समितियाँ स्थापित की गई हैं। पशु–चिकित्सा मे सुधार हुआ है। इस विषय पर आगे चलकर एक स्वतत्र अध्याय मे सविस्तार चर्चा की गई है।

तीसरी क्रान्ति नीली क्रान्ति (Blue Revolution) मछली के उत्पादन से सम्बध रखती है। 1995-96 मे 12,400 टन मछली का उत्पादन हुआ था। मछली–सीड–उत्पादन मे वृद्धि जारी है। फिश–सीड–उत्पादन भीमपुरा, चादलाई सिलीसेढ (अलवर), पाचनपुरा व कासिमपुरा मे किया जा रहा है। राणाप्रताप सागर, जयसमद व कडाना बाँध मे यत्रीकृत नावें चालू की गई हैं तथा इन्दिरा गाँधी नहर कमाड क्षेत्र मे मछली का उत्पादन बढाया जा सकता है।

भूरी क्रान्ति (Brown Revolution) के अन्तर्गत खाद्य-परिष्करण (फूड-प्रोसेसिंग) का विकास कार्य किया जा रहा है। रीजेन्सी फूड प्रोडक्ट्स लिमिटेड (शाहजहाँपुर) द्वारा टमाटर की खेती व टमाटर पेस्ट व कन्सन्ट्रेट तैयार करने का कार्यक्रम रखा गया था। इमामी फूड (शाहजहाँपुर) नमकीन खाद्य–पदार्थ, ब्रेक–फास्ट, फूड, आदि के लिए स्थापित किया गया है। इस प्रकार राज्य मे पजाब के पेप्सी कोला की भाति भूरी क्रान्ति का दौर भी प्रारम्भ किया जा रहा है।

भविष्य मे हरित, श्वेत, नीली व भूरी क्रान्तियो को अधिक कामयाब बनाने की आवश्यकता है।

आशा है कि भविष्य मे सिचाई की बढती हुई सुविधाओ के फलस्वरूप राज्य की कृषिगत अर्थव्यवस्था को अधिक स्थिरता प्रदान की जा सकेगी। राज्य मे आधुनिक कृषि की ओर अग्रसर होने के लिए पर्याप्त अवसर उत्पन्न हो रहे है। विभिन्न कृषिगत साधनो की सप्लाई बढाकर एव सस्थागत व भूमि–सुधार लागू करके कृषि के क्षेत्र मे समुचित विकास का मार्ग प्रशस्त किया जाना चाहिए। राज्य मे घटिया मिट्टी व जल–साधनो की समस्या है। **सूखी खेती की विधियों का प्रयोग करके राज्य में कृषि का विकास किया जाना चाहिए।** विद्वानो का मत है कि राज्य मे कृषिगत अनुसधान पर स्थानीय आवश्यकताओं के अनुसार अधिक ध्यान दिया जाना चाहिए। दालो, तिलहन आदि का उत्पादन बढाया जाना चाहिए। राज्य के चरागाहो को बढ़ाकर मरुभमि मे पशु–धन का विकास किया जाना चाहिए। जोधपुर मे 'काजरी' (CAZRI) (Central And Zone Research Institute) सूखे प्रदेशो की विभिन्न कृषिगत समस्याओ के अध्ययन मे कार्यरत है। **काजरी का पुनर्गठन 1959 में किया गया था। इसके उद्देश्य इस प्रकार हैं- (1) शुष्क व अर्द्ध-शुष्क प्रदेशों के लिए पेड-पौधों, चरागाह, भूमि की नमी, जल सम्बंधी अध्ययन करना, (2) सतह व भूजल के उपयोग का अध्ययन करना (3) पर्यावरण की प्रकृति का अध्ययन करना (4) प्राकृतिक वनस्पति का अध्ययन**

करना तथा (5) जल के श्रेष्ठ उपयोग की व्यवस्था करना। इन्दिरा गाँधी नहर परियोजना के पूरा हो जाने से जैसलमेर जिले में भी कृषिगत पैदावार तेजी से बढ़ेगी। अत: राज्य में कृषिगत उत्पादन बढ़ाया जाना चाहिए। सिंचाई के साधनों का विकास करके कृषिगत उत्पादन के उतार-चढ़ाव कम किए जा सकते हैं। सिंचाई की विभिन्न परि-योजनाओं का विवरण आगे चलकर एक स्वतन्त्र अध्याय में दिया जाएगा।

राज्य सरकार की प्रस्तावित कृषिगत नीति (Proposed Agricultural Strategy) के सम्बन्ध में सुझाव—राजस्थान देश में मसालों व दालों के उत्पादन में दूसरा सबसे बड़ा राज्य है। यहाँ देश के गेहूँ व कपास के कुल उत्पादन का लगभग 10% उत्पन्न किया जाता है और खाद्य-तेल के उत्पादन का लगभग 20 प्रतिशत उत्पादित किया जाता है।

समता के साथ सुस्थिर व टिकाऊ कृषिगत विकास करने के लिए सीमान्त कृषकों को सुरक्षा प्रदान की जानी चाहिए, अतिरिक्त श्रम-शक्ति को गैर-कृषि क्षेत्र में ले जाना चाहिए और कृषि का विकास अनुकूल जलवायु के क्षेत्रों में बढ़ाया जाना चाहिए।

राज्य की भावी कृषिगत नीति की अन्य बातें इस प्रकार होनी चाहिए—

(1) वृहद् व मध्यम सिंचाई की परियोजनाओं के लिए विनियोग पर कृषकों को 50% सब्सिडी दी जानी चाहिए। एक कृषक को 50 हजार रु. तक की सब्सिडी दी जानी चाहिए, ताकि वह फसल-गहनता 200 से 300 प्रतिशत तक प्राप्त कर सके।

(2) जहाँ जल-विकास 100% से अधिक हो चुका है वहाँ नये कुए खोदने पर प्रतिबन्ध लगाया जाना चाहिए।

(3) नई नीति में कुकरमुत्ता (mushroom), शतावरी (asparagus) व फल-सब्जियों के विकास पर अधिक ध्यान केन्द्रित किया जाना चाहिए। यह पर्यटन-उद्योग के विकास के लिए भी जरूरी है।

(4) मरु विकास कार्यक्रम के अन्तर्गत टिब्बा-स्थिरीकरण पर बल दिया जाना चाहिए ताकि रेगिस्तान का फैलाव रुक सके। मरु क्षेत्रों में वन-विकास का कार्य बड़े पैमाने पर किया जाना आवश्यक है।

(5) विश्व बैंक की मदद से अजमेर, भीलवाड़ा, उदयपुर व जोधपुर जिलों में एकीकृत जलग्रहण-विकास-कार्यक्रम (integrated watershed development programme) संचालित किया जाना चाहिए। इस कार्य को सुदृढ़ किया जाना चाहिए।

(6) कृषिगत विकास का जल, मिट्टी, वर्षा व तापक्रम के साथ तालमेल बैठाया जाना चाहिए और पैदावार-मिश्रण (product-mix) उसी के अनुकूल बनाया जाना चाहिए।

(7) फाउन्डेशन बीज के उत्पादन के निजीकरण के उत्साहवर्धक परिणाम सामने आये हैं। तिलहन के बेहतर मूल्य देने से सरसों व राई का उत्पादन काफी बढ़ा है। अत: इन गतिविधियों को आगे भी जारी रखा जाना चाहिए।

(8) इन्दिरा गाँधी नहर परियोजना ने भाखड़ा प्रणाली के साथ 20 लाख हैक्टेयर से ऊपर क्षेत्र की कायापलट कर दी है तथा दक्षिण-पूर्व प्रदेश में चम्बल प्रणाली से 2.75 लाख हैक्टेयर में सिंचाई की जा रही है। इन क्षेत्रों में ज्यादा पानी का उपयोग करने वाली

फसलें उत्पन्न की जाती हैं तथा असिंचित क्षेत्रो में कम पानी का उपयोग करने वाली फसले, जैसे बाजरा, मसाले, गुवार, मोठ, आदि उत्पन्न की जाती हैं । राज्य में पश्चिमी प्रदेश में सरकार को पशु-पालन व पशु-विकास को प्रोत्साहन देना चाहिए ।

2004-05 के बजट में मुख्यमंत्री श्रीमती वसुन्धरा राजे ने कृषिगत विकास के लिए निम्न बातों पर बल दिया है—[1] (i) फसल-पद्धति में परिवर्तन किया जाना चाहिए, (ii) कृषि-निर्यात क्षेत्र विकसित किये जाने चाहिएँ; (iii) राष्ट्रीय कृषि बीमा योजना को वर्तमान में 6 फसलों के अलावा 14 और फसलों पर लागू किया जायगा; (iv) कृषक की दुर्घटना में मृत्यु होने पर 50 हजार रु व दो अंगों की क्षति होने पर 25 हजार रु. की सहायता दी जायगी; (v) कृषकों को 2004-05 में 30% अधिक कर्ज दिया जायगा, (vi) किसान क्रेडिट कार्ड समस्त पात्र किसानो को विभिन्न बैंको द्वारा उपलब्ध कराये जायेगे; (vii) 'नई सदी नया सहकार' योजना के तहत दवा के पौधों, फल-सब्जी व ऑर्गेनिक कृषि को सहकारी समितियों के मार्फत बढ़ावा दिया जायगा ।

आशा है इन नीतियों व कार्यक्रमो को लागू करने से राज्य के कृषको को लाभ होगा एवं राज्य का कृषिगत विकास होगा ।

प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. 'सेवण' घास निम्न में से किस जिले मे विस्तृत रूप मे पाई जाती है ?
   (अ) बाड़मेर (ब) बीकानेर (स) जैसलमेर (द) जोधपुर (स)
2. श्वेत क्रान्ति का सम्बन्ध है—
   (अ) खाद्यान्न प्रसंस्करण (ब) ऊन उत्पादन
   (स) दूध उत्पादन (द) बकरी के बालों का उत्पादन (स)
3. राजस्थान में 'भूरी क्रान्ति' का सम्बन्ध है—
   (अ) खाद्यान्न प्रसंस्करण (food processing)
   (ब) भैंस दुग्ध उत्पादन (स) ऊन उत्पादन
   (द) बकरी के बालों का उत्पादन ( )
4. राज्य में सकल कृषित क्षेत्र कुल रिपोर्टिंग क्षेत्र का 2001-02 मे कितना अंश हो गया है ?
   (अ) 60.7% (ब) 65.5% (स) 70% (द) 56.1% (अ)
5. राज्य में 2001-02 में एक से अधिक बार जोता-बोया गया क्षेत्र लगभग कितना हो गया ?
   (अ) 50 लाख हैक्टेयर (ब) 40 लाख हैक्टेयर
   (स) 70 लाख हैक्टेयर (द) 60 लाख हैक्टेयर (ब)
6. राजस्थान में वर्तमान मे 2001-02 मे सकल सिंचित क्षेत्रफल छाँटिए—

1. श्रीमती वसुन्धरा राजे का परिवर्तित बजट-भाषण 2004-05, 12 जुलाई, 2004

(अ) 67.4 लाख हैक्टेयर (ब) 61.8 लाख हैक्टेयर
(स) 63.6 लाख हैक्टेयर (द) 58 लाख हैक्टेयर (अ)

7. राज्य में योजनाकाल में (1973–74) से 2003–04 तक) किस फसल की पैदावार (अनुपात में) सबसे ज्यादा बढ़ी है ?
(अ) गेहूँ (ब) सरसों व राई
(स) तिलहन (द) बाजरा (ब)

8. वर्तमान में राज्य में प्रति हैक्टेयर उर्वरकों की खपत है—
(अ) 29.8 किलोग्राम (ब) 25 किलोग्राम
(स) 39 किलोग्राम (द) 20 किलोग्राम (अ)

9. राज्य में कृषिगत विकास के लिए क्या किया जाना चाहिए ?
(अ) सूखी खेती की पद्धति अपनानी चाहिए,
(ब) मिश्रित खेती अपनानी चाहिए,
(स) फव्वारा सिंचाई को बढ़ावा देना चाहिए,
(द) लघु व सीमान्त किसानों को प्रोत्साहन देना चाहिए ।
(ए) सभी (ए)

अन्य प्रश्न

1. 1956 से अब तक राज्य मे कृषि विकास की विवेचना कीजिए । राज्य में कृषि विकास में राज्य सरकार की क्या भूमिका रही है ?
2. राजस्थान की अर्थव्यवस्था मे कृषि का योगदान स्पष्ट कीजिए । समझाइए कि राजस्थान हरित क्रान्ति की ओर अग्रसर हो रहा है ।
3. राजस्थान में अपनाई गई कृषि व्यूहरचना की विवेचना करें एवं इसकी उपलब्धियों का मूल्यांकन करे ।
4. योजनाकाल के लगभग पाँच दशकों में राजस्थान में कृषिगत विकास की मुख्य प्रवृत्तियो का विवेचन कीजिए ।
5. राजस्थान मे खाद्यान्नो व तिलहन का उत्पादन बढ़ाने के विशेष कार्यक्रमों का उल्लेख कीजिए तथा उनका महत्त्व समझाइए ।
6. संक्षिप्त टिप्पणी कीजिए—
(*i*) राजस्थान में सिंचाई का विकास,
(*ii*) राजस्थान में खाद्यान्नों के उत्पादन की प्रवृत्ति,
(*iii*) राज्य में इन्पुटों के उपयोग में वृद्धि की प्रवृत्तियाँ,
(*iv*) राज्य में तिलहन का उत्पादन ।
7. योजनाकाल में राजस्थान में कृषि विकास की समीक्षा कीजिए ।
8. राजस्थान की अर्थव्यवस्था मे कृषि का योगदान निर्धारित कीजिये । राज्य में कृषि विकास की समस्याओ का वर्णन कीजिये । **(Raj. I year, 2004)**

10

भूमि सुधार
(Land Reforms)

भूमि सुधारों का स्थान संस्थागत सुधारों (institutional reforms) के अन्तर्गत आता है। इनके द्वारा भूमि-सम्बन्धों (land relations) में परिवर्तन किया जाता है जिससे भूस्वामी, काश्तकार व सरकार के भूधारण-अधिकारों (land tenurial rights) में परिवर्तन होता है। **भूमि-सुधारों के अन्तर्गत निम्न सुधार शामिल किए जाते हैं—मध्यस्थ-वर्ग या बिचौलियों की समाप्ति, काश्तकारी-सुधार (tenancy reforms) जैसे काश्तकारों के लगान में कमी, भूधारण की सुरक्षा, भूमि का मालिक बनने के अधिकार, चकबंदी, सहकारी कृषि, भूमि पर सीमा-निर्धारण करके अतिरिक्त भूमि का भूमिहीनों में वितरण, आदि।** इन कार्यक्रमों को लागू करने के बाद भूमि-व्यवस्था अधिक कार्यकुशल व न्यायसंगत बनती है। इसीलिए यह माना जाता है कि भूमि-सुधारों से उत्पादन बढ़ता है, सामाजिक न्याय व समानता की दिशा में प्रगति होती है एवं निर्धनता-उन्मूलन में सहायता मिलती है। भूमि-सुधारों के बाद कृषि में तकनीकी परिवर्तन की प्रगति तेज हो सकती है तथा इनके अभाव में तकनीकी परिवर्तन भी अपना पूरा प्रभाव नहीं दिखा पाते हैं। अतः कृषिगत विकास में भूमि-सुधारों की भूमिका सर्वोपरि मानी गई है।

राजस्थान के निर्माण के समय भूधारण प्रणालियाँ

(1) जागीरदारी प्रथा—मार्च 1949 में राजस्थान के निर्माण के समय राज्य के बड़े क्षेत्र में भू-राजस्व की वसूली के अधिकार जागीरदारों को मिले हुए थे। **जागीरदारी प्रथा राज्य के कुल क्षेत्र के लगभग साठ प्रतिशत भाग में फैली हुई थी।** जागीरदार भूमि को जोतने वाले व राज्य के बीच उसी प्रकार से मध्यस्थ होता था, जैसे पार्ट-ए राज्य में जमींदार हुआ करता था। काश्तकार (tenant) के लिए तो जागीरदार भूमि के 'स्वामी' के रूप में आचरण करता था। जागीरदार राज्य को जो भेंट (tribute) देता था, उसका उस लगान (rent) से कोई सीधा सम्बन्ध नहीं होता था, जो वह काश्तकारों से वसूल किया करता था।

जागीरदार द्वारा राज्य को किए जाने वाले भुगतान सैकड़ों वर्ष पूर्व जागीरें मिलने के समय जागीर की अनुमानित आमदनी पर आधारित होते थे। लेकिन कालान्तर में जागीरों की वास्तविक आमदनी अनुमानित आमदनी से कई गुना हो गई थी। फिर भी 'भेंट' की राशि जागीर प्राप्त होने के समय निर्धारित राशि जितनी ही बनी रही। अधिकांश जागीर क्षेत्रों में जहाँ बन्दोबस्त नहीं हुआ था, जागीरदार उपज के अंश के रूप में लगान वसूल किया करते थे। यह 1/2 से 1/8 तक पाया गया था। युद्ध के कारण कृषिगत उपज के मूल्यों में काफी वृद्धि हो जाने से काश्तकार ऊँचे लगानों का विरोध करने लगे। वे ऊपर का बड़ा अंश लगान के रूप में भरने को तैयार नहीं थे। जागीर क्षेत्रों के अधिकांश काश्तकारों को भूधारण की सुरक्षा, निर्धारित लगान व उचित लगान, आदि की कोई जानकारी नहीं थी। इनमें से ज्यादातर काश्तकार **'स्वैच्छिक काश्तकार' (Tenants-at-will)** हुआ करते थे जिन्हें भूस्वामी अपनी इच्छा से कभी भी भूमि से बेदखल (eject) कर सकते थे और भूमि के लिए अत्यधिक प्रतिस्पर्द्धा, ऊँचे लगान व कृषि में गिरावट की दशाएँ उत्पन्न हो गई थीं।

बहुत वर्ष पूर्व डॉ दूलसिंह ने जागीर क्षेत्रों की कुल लाग-बागों अथवा उपकरों (Cesses) की सूची तैयार की थी। उनमें 29 तरह की लाग-बागों में से चार भूमि व पशु-धन पर आधारित थीं। तीन स्पष्टतः अनिवार्य या जबरन श्रम से सम्बद्ध थीं तथा शेष बाईस सामाजिक शोषण पर आधारित थी एवं इनमें कई तरह की लाग-बागें शामिल थी, जैसे 'माताजी की भेंट', 'बाईजी का हाथ खर्च' व ये जन्म से मृत्यु तथा त्यौहार व उत्सव आदि सभी अवसरों से जुड़ी रही हैं जिनमें जागीरदार या स्वयं कृषक भाग लेते रहे हैं।

(2) जमींदारी व बिस्वेदारी प्रथा—बिचौलियों की दूसरी प्रथा में जमींदार या बिस्वेदार हुआ करते थे। **यह 4870 गाँवों में फैली हुई थी जिसमें 8 जिले शामिल थे। इनमें मुख्यतः अलवर, भरतपुर, श्रीगंगानगर व कोटा जिले थे। जमींदार व बिस्वेदार राज्य को निर्धारित भू-राजस्व देते थे, लेकिन उनको ज्यादातर काश्तकारों से मिलने वाले नकद लगान की राशि निर्धारित नहीं होती थी। वे अपनी इच्छा के मुताबिक लगान लेने को स्वतंत्र थे और इनके काश्तकार भी 'स्वैच्छिक काश्तकार' माने जाते थे जिन्हें कभी भी बेदखल किया जा सकता था।**

(3) रैयतवाड़ी प्रथा—रैयतवाड़ी क्षेत्रों में मुख्य काश्तकार अपनी मर्जी के मुताबिक वस्तु रूप में या नकद लगान लेने को स्वतंत्र था और वह उप-काश्तकार को अपनी इच्छानुसार बेदखल कर सकता था।

राजस्थान में शामिल होने वाले राज्यों में काश्तकारी कानून—राजस्थान में शामिल होने वाले राज्यों में जैसलमेर, शाहपुरा व किशनगढ़ राज्यों को छोड़कर शेष में काश्तकारी कानून हुआ करते थे। लेकिन वे ज्यादातर प्रथाओं पर आधारित होते थे। उस समय काश्तकारों की श्रेणियों व उनके अधिकारों के सम्बन्ध में काफी अन्तर पाए जाते थे। एक ही राज्य में खालसा क्षेत्र में काश्तकारों के अधिकार जागीर क्षेत्रों के काश्तकारों से भिन्न हुआ करते थे। काश्तकारों के हस्तान्तरण के अधिकारों में काफी अन्तर पाए जाते थे। बीकानेर राज्य में नजराना या प्रीमियम चुकाने के बाद भी भूमि के हस्तान्तरण का अधिकार राज्य सरकार की स्वीकृति पर निर्भर किया करता था।

अधिकांश क्षेत्रों में कोई सर्वेक्षण व बन्दोबस्त नहीं हुए थे तथा भूमि के रिकार्ड नहीं पाए गए थे। इस प्रकार **मार्च 1949 में राजस्थान के निर्माण के समय भूधारण की प्रणालियाँ किसान के शोषण पर आधारित थीं।** मध्यस्थ-वर्ग की विशाल संख्या के कारण काश्तकारों की दशा काफी दयनीय हो गई थी। इन परिस्थितियों में कृषक तथा कृषि का विकास सम्भव नहीं था।

राजस्थान में भूमि-सुधारों व काश्तकारी विधान की वर्तमान स्थिति की चर्चा करने से पूर्व उन अन्तरिम वैधानिक उपायों का उल्लेख करना उचित होगा जो सरकार ने प्रयुक्त किए थे।

अन्तरिम वैधानिक उपाय (Interim Legislative Measures)

(1) काश्तकारों की सुरक्षा का अध्यादेश, 1949 (The Protection of Tenants Ordinance, 1949)—काश्तकारों की बेदखली से रक्षा करने के लिए 1949 में एक अध्यादेश जारी किया गया था। सम्पूर्ण राजस्थान में काश्तकारों ने इस अध्यादेश का लाभ उठाया और इससे बेदखली से सुरक्षा प्राप्त हुई। बाद में इसकी महत्त्वपूर्ण व्यवस्थाएँ राजस्थान काश्तकारी अधिनियम, 1955 में शामिल कर ली गई।

(2) उपज-लगान-नियमन-अधिनियम, 1951 (The Produce Rents Regulating Act, 1951)—इसके अनुसार अधिकतम लगान सकल उपज का $\frac{1}{3}$ अंश निर्धारित किया गया था। इसमें बाद में संशोधन भी किए गए थे। अन्त में राजस्थान काश्तकारी अधिनियम 1955 के लागू होने पर इसकी महत्त्वपूर्ण व्यवस्थाएँ उसमें शामिल कर ली गई।

(3) कृषिगत लगान नियंत्रण अधिनियम, 1952 (The Agricultural Rents Control Act, 1952)—इस अधिनियम के अनुसार एक जोत पर अधिकतम लगान की मात्रा भू-राजस्व के दुगुने तक निर्धारित कर दी गई। इसमें उपज-लगानों (Produce-rents) को नकद-लगानों (Cash Rents) में परिवर्तित करने की भी व्यवस्था की गई थी। बाद में इसका स्थान 1954 के अधिनियम ने ले लिया था। साथ में इसकी मुख्य धाराओं को भी राजस्थान काश्तकारी अधिनियम 1955 में शामिल कर लिया गया था।

इस प्रकार प्रारम्भिक वर्षों में अन्तरिम वैधानिक उपायों के द्वारा काश्तकारों के हितों की रक्षा करने का प्रयास किया गया था। लेकिन जागीरदारी व अन्य मध्यस्थ भूधारण प्रणालियों का उन्मूलन करने की आवश्यकता बराबर बनी रही।

अब हम जागीरदारी प्रथा व अन्य मध्यस्थ भूधारण-प्रणालियों के उन्मूलन का विवेचन करेंगे—

(1) जागीरदारी प्रथा का अन्त—जैसा कि पहले कहा जा चुका है, राजस्थान बनने के समय राज्य के [illegible] प्रतिशत भाग पर जागीर-प्रथा कायम थी जो लगभग 17 हजार गाँवों में फैली हुई थी। यह जोधपुर राज्य के 82% क्षेत्र और जयपुर राज्य के 65%

क्षेत्र में फैली हुई थी ।[1] जागीरदार एक मध्यस्थ होता था जो काश्तकार से कुल उपज का एक बड़ा भाग लेता था और 'बेगार' व 'लाग-बाग' ऊपर से लिया करता था । जागीर क्षेत्रों में बेदखली का बोलबाला था । **जागीरदार भूमि का क्रय-विक्रय तो नहीं कर सकते थे, लेकिन दीवानी और फौजदारी अधिकारों व अपने राजनीतिक प्रभाव व प्रभुत्व के कारण वे प्रजा पर काफी अत्याचार किया करते थे ।** उनके द्वारा ली जाने वाली कई प्रकार की लाग-बागों का संकेत अध्याय के प्रारम्भ में दिया जा चुका है ।

राज्य विधानसभा ने राजस्थान भूमि-सुधार व जागीर पुनर्ग्रहण अधिनियम, 1952 (The Rajasthan Land Reforms and Resumption of Jagirs Act, 1952) **पास कर दिया था ।** सर्वप्रथम, जून 1954 में सीकर व खेतड़ी की सबसे बड़ी जागीरों का पुनर्ग्रहण किया गया । कुछ छोटे जागीरदारों ने 'स्टे आर्डर' लाकर लगभग दो वर्ष तक इसे लागू होने से रोक दिया । तत्पश्चात् स्वर्गीय श्री नेहरू और स्वर्गीय श्री गोविन्द वल्लभ पन्त के प्रयत्नों से फैसला किया गया और जागीरदारों को मुआवजा व पुनर्वास अनुदान देने के लिए दरें निर्धारित की गई । **मुआवजा आधार वर्ष की विशुद्ध आय** (Net Income) **का सात गुना रखा गया ।** यह 2.5 प्रतिशत वार्षिक ब्याज पर 15 समान किस्तों में चुकाना निश्चित किया गया । जिन जागीरदारों की कुल आय 5000 रुपये से अधिक नहीं थी, उनको विशुद्ध आय के पाँच से ग्यारह गुने तक पुनर्वास अनुदान (Rehabilitation grant) देने का निश्चय किया गया । अन्य जागीरदारों को विशुद्ध आय के दुगुने से चार गुने तक पुनर्वास अनुदान देने का निश्चय किया गया ।

धार्मिक जागीरों के पुनर्ग्रहण का कार्य कुछ देर से आरम्भ हुआ । 1 नवम्बर, 1959 से 5000 रुपये से ऊपर की आय वाली ऐसी जागीरों और अगस्त 1960 से 1000 रुपये से ऊपर की आय की जागीरों का पुनर्ग्रहण किया गया । अतः राज्य में धार्मिक व गैर-धार्मिक सभी जागीरों के पुनर्ग्रहण का कार्य सम्पन्न किया जा चुका है । **पुनर्ग्रहण की प्रत्यक्ष लागत 1971 तक लगभग 51.3 करोड़ रुपये आंकी गई थी ।** इनमें मुआवजा व पुनर्वास अनुदान, इन पर ब्याज, स्थायी वार्षिक जागीर-स्थापना व पेंशन शामिल हैं । इनके अतिरिक्त भी राज्य को कुछ व्यय करना पड़ा है । जागीर अधिनियम में कई बार संशोधन किए गए हैं ।

(2) जमींदारी व बिस्वेदारी प्रथा का अन्त—राजस्थान जमींदारी व बिस्वेदारी उन्मूलन अधिनियम 1 नवम्बर, 1959 से लागू किया गया । यह प्रथा राज्य के लगभग 5 हजार गाँवों में फैली हुई थी । जमींदार व बिस्वेदार भी किसानों का आर्थिक शोषण किया करते थे ।

राजस्थान जमींदारी व बिस्वेदारी उन्मूलन अधिनियम 1 नवम्बर, 1959 से लागू किया गया था । जमींदारों व बिस्वेदारों को खुदकाश्त में भूमि प्रदान की गई थी । मुआवजे की राशि शुद्ध आय का सात गुना निर्धारित की गई थी । इसके अलावा पुनर्वास अनुदान की भी व्यवस्था की गई जो 25 रुपये तक के भू-राजस्व पर शुद्ध आय का बीस गुना हो सकती थी,

---

1 Land Reforms in Rajasthan, Directorate of Public Relations, Govt of Raj , p 3

और 3500 रुपये से अधिक के वार्षिक भू-राजस्व पर कोई पुनर्वास अनुदान नहीं दिया गया था।

जमींदार व बिस्वेदार के काश्तकार "खातेदार काश्तकार" (Khatedar tenants) बना दिए गए और उन्हें सरकार को वही लगान देने को कहा गया जो वे जमींदार या बिस्वेदार को दिया करते थे। लेकिन अब यह भू-राजस्व के दुगुने से अधिक नहीं हो सकता था।

इस प्रकार राज्य में जागीरदारी व अन्य मध्यस्थ भूधारण प्रणालियों का उन्मूलन कर दिया गया।

राजस्थान काश्तकारी अधिनियम, 1955 (Rajasthan Tenancy Act, 1955)— यह भारत के सबसे अधिक प्रगतिशील काश्तकारी अधिनियमों में गिना जाता है। इसके माध्यम से राज्य में भूमि-सुधारों की व्यापक रूप से व्यवस्था की गई है। यह 15 अक्टूबर, 1955 से लागू किया गया था। इसमें कई बार संशोधन किए गए ताकि यह प्रभावी ढंग से लागू किया जा सके।

इसकी मुख्य बातें आगे दी जाती हैं—

(1) इसमें केवल तीन प्रकार के काश्तकार रखे गए हैं, यथा, खातेदार काश्तकार, खुदकाश्त के काश्तकार तथा गैर-खातेदार काश्तकार। इस अधिनियम की धारा 15 काफी क्रान्तिकारी मानी जाती है। इस धारा के अन्तर्गत प्रत्येक व्यक्ति जो अधिनियम के लागू होने के समय भूमि पर काश्तकार था (उप-काश्तकार या खुदकाश्त के काश्तकार को छोड़कर) वह खातेदार काश्तकार बना दिया गया। लेकिन चरागाह की भूमि पर खातेदारी अधिकार नहीं दिए गए। धारा 15 के प्रभाव क्षेत्र से गंग नहर, भाखड़ा, चम्बल व जवाई परियोजना क्षेत्रों को बाहर रखा गया था, क्योंकि सरकार को सिंचाई परियोजनाओं पर भारी धनराशि व्यय करनी होती है। 1958 में धारा 15-क जोड़कर राजस्थान नहर क्षेत्र की समस्त भूमि भी अस्थायी रूप से पट्टे पर दी हुई मान ली गई और इस पर खातेदारी अधिकार प्राप्त नहीं हो सकता था। इससे कानूनी विवाद उत्पन्न हो गया था।[1]

काश्तकारों को गाँव की आबादी में रिहायशी मकान बनाने के लिए निःशुल्क जगह देने का भी प्रावधान किया गया। काश्तकारों के लिए भू-स्वामियों से लिखित लीज प्राप्त करने की व्यवस्था भी की गई, नजराना व बेगार लेना रोक दिया गया।

(2) खातेदार काश्तकारों को बिक्री या भेंट के माध्यम से अपनी भूमि के हस्तान्तरण के अधिकार दिए गए। लेकिन यदि कोई खातेदार ऐसे व्यक्ति को भूमि का हस्तान्तरण करना चाहे जिसके पास पहले से 30 एकड़ सिंचित भूमि है, या 90 एकड़ असिंचित भूमि है, तो उसे सरकार से स्वीकृति लेनी होगी। इससे भूमि की भावी जोतों पर सीमा लगाने में मदद मिली है।

(3) खुदकाश्त के काश्तकार या एक उप-काश्तकार जिसे धारा 19 के तहत खातेदारी अधिकार मिले हैं, वह भी सरकार या भूमि बंधक बैंक या सहकारी समिति से कर्ज के लिए भूमि को गिरवी रख सकता है।

---

1 राजस्थान का किसान और कानून, मूँगालाल सुरेका, राज. पत्रिका, 27 नवम्बर, 1992 में प्रकाशित लेख।

(4) खातेदारी काश्तकारों को एक साथ पाँच वर्ष तक की अवधि के लिए भूमि को किराए पर देने के अधिकार दिए गए हैं। लेकिन दुबारा किराए पर देने के लिए दो साल का अन्तराल रखना जरूरी होगा, ताकि भूमि लगातार किराए पर न उठाई जा सके।

(5) बन्दोबस्त के द्वारा काश्तकारों से लगान नकद रूप में निर्धारित किए गए हैं। उप-काश्तकारों को भी लगान नकद देने पड़ते हैं। लेकिन उनसे निर्धारित लगान के दुगुने से अधिक लगान नहीं लिया जा सकता है।

(6) वस्तु रूप में प्राप्त अधिकतम लगान की राशि कुल उपज के 1/6 से अधिक नहीं हो सकती।

(7) लगान की बकाया राशि न चुकाने पर काश्तकार को बेदखल किया जा सकता है, अथवा भूमि को गैर-कानूनी हस्तान्तरण करने या उसे गैर-कानूनी ढंग से किराए पर दूसरों को उठाने या अन्य हानिकारक कार्य करने या शर्त को तोड़ने पर उसे बेदखल किया जा सकता है।

राजस्थान काश्तकारी अधिनियम, 1955 को कई बार संशोधित किया गया। ये संशोधन योजना आयोग के सुझाव पर किए गए ताकि उप-काश्तकार व खुदकाश्तकार भी खातेदारी के अधिकार प्राप्त कर सकें, जिन्हें वे पहले धारा 19 के अन्तर्गत मिले अधिकारों का उपयोग करके प्राप्त नहीं कर पाए थे।

इस प्रकार राजस्थान काश्तकारी अधिनियम एक व्यापक कानून माना गया है। इसमें काश्तकारों की विभिन्न श्रेणियाँ रखी गई हैं। इसमें काश्तकारों को अधिकार देने, जोतों के हस्तान्तरण व विभाजन, लगान को निश्चित करने और इसको वसूल करने के ढंग को निर्धारित करने की व्यवस्था की गई है। इसमें उन दशाओं को बतलाया गया है, जिनमें काश्तकारों को बेदखल किया जा सकता है और झगड़ों को निपटाने के लिए अदालतों की स्थापना की गई है।

राजस्थान काश्तकारी कानून, 1955 के अनुसार, लगान की राशि मालगुजारी या भू-राजस्व के 1.5 गुने से तीन गुने तक निर्धारित की गई (जहाँ लगान नकद दिया जाना था)। भूमि की खुदकाश्त के लिए आवश्यकता हो तो काश्तकार बेदखल किया जा सकता था, बशर्ते कि काश्तकार के पास एक निश्चित सीमा से अधिक भूमि हो। गैर-पुनर्ग्रहण वाले क्षेत्रों (Non-Resumable Areas) में काश्तकारों को स्वामित्व के अधिकार या खातेदारी अधिकार दिए जा सकते हैं। भू-स्वामी को दिया जाने वाला मुआवजा सिंचित भूमि के लगान का 20 गुना तथा असिंचित भूमि का 15 गुना निश्चित किया गया।

राजस्थान काश्तकारी अधिनियम की उपलब्धियाँ (Achievements of the Rajasthan Tenancy Act, 1955)—इस अधिनियम के फलस्वरूप काश्तकारी कानूनों में काफी समानता स्थापित हो सकी है। इसने काश्तकारों के अधिकारों व दायित्वों की अवधारणा में क्रान्ति उत्पन्न कर दी है। राजस्थान राज्य को इस बात का श्रेय दिया जा सकता है कि इसने एक झटके में ही काश्तकारों को खातेदारी अधिकार प्रदान कर दिए जिससे अधिकांश काश्तकारों की स्थिति काफी सुदृढ़ हो गई। इसमें प्रगति की भावना थी

जिसने राजस्थान को काश्तकारी कानून के सम्बन्ध में एक अग्रणी राज्य (front-line state in tenancy reforms) बना दिया। इस अधिनियम के अन्तर्गत मिलने वाले खातेदारी अधिकारों ने काश्तकारों को भूमि का मालिक बना दिया। इस अधिनियम की धारा 15 व धारा 19 के अन्तर्गत काफी काश्तकारों को खातेदारी के अधिकार प्राप्त हो गए। इस अधिनियम ने काश्तकार को भू-स्वामी के द्वारा की जा सकने वाली गैर-कानूनी बेदखली और अन्यायपूर्ण व अनुचित व्यवहार से रक्षा की। जब तक काश्तकार लगान देता जाता है तब तक उसको बेदखल नहीं किया जा सकता। इन गुणों के बावजूद भी इस नियम में कई प्रकार की जटिलताएँ थीं। इसीलिए समय-समय पर इसमें संशोधन किए गए। इस अधिनियम की धारा 88 के अनुसार, एक काश्तकार या उप-काश्तकार अदालत में दावा करके अपने अधिकारों की माँग कर सकता है और इस माँग के लिए कोई अन्तिम अवधि तय नहीं की गई है। इससे उत्पन्न अनिश्चितता के कारण निरन्तर मुकदमेबाजी होती रहती है, जो उचित नहीं है।

आरम्भ से लेकर जून 1967 तक धारा 15 के अन्तर्गत 5,37,642 काश्तकारों को लगभग 44 5 लाख एकड़ भूमि पर तथा धारा 19 के अन्तर्गत 1,99,505 काश्तकारों को 9 44 लाख एकड़ भूमि पर राज्य के विभिन्न जिलों में खातेदारी अधिकार प्राप्त हो गए थे।[1]

राजस्थान में भू-जोतों पर सीमा-निर्धारण (Land Ceilings in Rajasthan)—वर्तमान जोतों पर सीमा-निर्धारण के प्रश्न की जाँच के लिए नवम्बर, 1953 में एक समिति नियुक्त की गई थी, जिसकी रिपोर्ट फरवरी, 1958 में प्रकाशित हुई। इस रिपोर्ट के आधार पर राज्य विधानसभा में राजस्थान काश्तकारी (छठा संशोधन) बिल अक्टूबर, 1958 में पेश किया गया जो प्रवर समिति को सौंप दिया गया। इस बिल में एक सारणी दी गई थी, जिसमें राज्य की विभिन्न तहसीलों के लिए भूमि पर अधिकतम सीमा लगाने का सुझाव दिया गया था। यह कहा गया था कि इस क्षेत्र में प्रतिवर्ष 2,400 रुपये की विशुद्ध आय (Net Income) होनी चाहिए। प्रवर समिति ने सारणी को हटा दिया और 30 'स्टैण्डर्ड एकड़' पर सीमा लगाने का सुझाव दिया। एक 'स्टैण्डर्ड एकड़' में प्रतिवर्ष 10 मन गेहूँ, अथवा इसके बराबर, मूल्य की कृषिगत उपज निर्धारित की गई थी।

राजस्थान काश्तकारी (संशोधन) अधिनियम, 1960 में लागू किया गया। लेकिन सीमा-निर्धारण के लिए आवश्यक नियम दिसम्बर, 1963 में प्रकाशित किए गए। 1950 का संशोधित अधिनियम और 1963 के नियम अप्रैल, 1966 से लागू किए गए। इससे स्पष्ट होता है कि सीमा निर्धारण के कार्य में काफी विलम्ब हुआ। राज्य सरकार इसे कई अवस्थाओं में लागू करना चाहती थी। सबसे पहले 150 साधारण एकड़ व अधिक की जोतों के स्वामियों से सूचना देने के लिए कहा गया। इसे अदालतों में चुनौती दी गई और 'स्टे आर्डर' लाए गए। बाद में यह अधिनियम संविधान की नवीं अनुसूची में शामिल कर दिया गया, जिससे आशा की गई कि अब इसे लागू करना सम्भव हो सकेगा।

---

1 भूमि सुधार सम्बन्धित एकत्रित एवं संकलित सारणियाँ, राजस्व (भूमि सुधार) विभाग, सचिवालय, जयपुर, 1968, पृ 1 व 2

वास्तव में सीमा-निर्धारण का कार्य बहुत जटिल माना गया है। राजस्थान सरकार ने **27 फरवरी, 1973 को एक नया विधेयक पारित करके भूमि की सीमा 5 सदस्यों के एक परिवार के लिए 18 से 175 एकड़ के बीच निर्धारित कर दी थी।** जिस भूमि पर वर्ष में दो फसलें बोई जाती हैं और सिंचाई निश्चित रूप से होती है, उस पर 18 एकड़ पर सीमा लगाई गई, एक फसल वाली सिंचित भूमि पर 27 एकड़ पर तथा असिंचित भूमियों पर विभिन्न किस्म की भूमियों के अनुसार क्रमशः 48, 54, 125 तथा 175 एकड़ पर सीमा लगाई गई। इस प्रकार भूमि के उपजाऊपन, सिंचाई की सुविधा व फसलों की किस्म के अनुसार राज्य के विभिन्न भागों के लिए भूमि की अलग-अलग सीमाएँ निर्धारित की गई। विधेयक को राष्ट्रपति की स्वीकृति 28 मार्च, 1973 को मिली थी।

राजस्थान में वर्तमान सीलिंग (हैक्टेयर में) नीचे दी जाती है—

सिंचित भूमि पर	असिंचित भूमि पर
7 28–10 93	21 85–70 82

इस प्रकार सिंचित व असिंचित भूमि के अनुसार सीलिंग के स्तर अलग-अलग निर्धारित किए गए।

सीमा निर्धारण में गन्ने के खेतों, कुशल प्रबन्ध वाले फार्मों तथा विशिष्ट फार्मों को छूट दी गई। 31 जनवरी, 1995 के अन्त तक सीलिंग कानूनों के तहत 2.43 लाख **हैक्टेयर भूमि सरप्लस घोषित की गई, जिसमें से 2.25 लाख हैक्टेयर भूमि राज्य सरकार ने अपने अधिकार में ले ली तथा 1.79 लाख हैक्टेयर भूमि वितरित कर दी। जनवरी 1995 के अन्त तक 77 हजार व्यक्तियों को लाभान्वित किया गया था। इस प्रकार जनवरी 1995 के अन्त में सरप्लस घोषित भूमि का 92.5% अंश सरकार ने अपने अधिकार में ले लिया था और वितरित भूमि का अनुपात सरकार द्वारा प्राप्त भूमि से लगभग 79.6% था। जनवरी 1995 तक राजस्थान में वितरित भूमि 1.79 लाख हैक्टेयर थी, जो समस्त भारत में कुल वितरित भूमि (20.7 लाख हैक्टेयर) का 8.6% थी।** पश्चिम बंगाल में जनवरी 1995 के अन्त तक 3.84 लाख हैक्टेयर भूमि वितरित की गई, जो राज्यों में सर्वाधिक थी। सरप्लस-भूमि-वितरण की दृष्टि से कुछ अग्रणी राज्य क्रमवार इस प्रकार रहे—

आंध्र प्रदेश (2.25 लाख हैक्टेयर), महाराष्ट्र (2.23 लाख हैक्टेयर), असम (1.99 लाख हैक्टेयर), जम्मू-कश्मीर (1.82 लाख हैक्टेयर) व राजस्थान (1.79 लाख हैक्टेयर)।[1] इस

---

1 India's Agricultural Sector, A Compendium of Statistics, September 1995, CMIE, Bombay, p 4, table 4

राज्य की नवीं पंचवर्षीय योजना (1997-2002) के ड्राफ्ट के अनुसार 30 जून, 1997 तक 6 I लाख एकड़ भूमि अतिरिक्त घोषित की गई, इसमें से 5 65 लाख एकड़ भूमि का अधिग्रहण किया गया तथा 4.55 लाख एकड़ (1 84 लाख हैक्टेयर) भूमि 79 हजार लाभ प्राप्तकर्ताओं में वितरित की गई। (एक हैक्टेयर = 2 47 एकड़ के हिसाब से इन आंकड़ों को हैक्टेयर में बदला जा सकता है।)

प्रकार प्राप्त सूचना के अनुसार राजस्थान का सरप्लस भूमि के वितरण में छठा स्थान रहा। राज्य में काफी भूमि अनुसूचित जाति व अनुसूचित जनजाति के व्यक्तियों में वितरित की गई है।

राजस्थान में भूमि-सुधारों का क्रियान्वयन व प्रगति—हम नीचे राजस्थान में भूमि-सुधारों व काश्तकारी अधिनियम के क्रियान्वयन का विवरण देते हैं।

भूमि-सुधार सम्बन्धी कानूनों ने तो काश्तकार की स्थिति में क्रान्तिकारी परिवर्तन उत्पन्न किए हैं। लेकिन कानूनों को लागू करने के सम्बन्ध में गम्भीर कमियाँ रह गई हैं। राजस्थान में काश्तकारों को खातेदारी अधिकार मिलने से वे भूमि के मालिक जैसे हो गए हैं। जागीरदारों ने खुदकाश्त के अन्तर्गत कुछ भूमि रख ली है, लेकिन उसकी मात्रा पहले के कुल जागीर क्षेत्रों की मात्रा की तुलना में कम पाई गई है।

जागीरदारों ने बिक्री, उपहार अथवा अन्य रूपों में काफी भूमि का हस्तान्तरण किया है। ऐसा जागीर पुनर्ग्रहण अधिनियम लागू होने से पूर्व किया गया था।

जागीरों के समाप्त करने से जागीरदारों के जीवन पर भी प्रभाव पड़ा है। मध्यम श्रेणी के ठिकाने तो ऋणग्रस्त थे। उनके ठिकानेदार कोई भी उपयोगी काम करना अपनी प्रतिष्ठा के खिलाफ समझते थे। इससे उनका मानसिक व नैतिक पतन हो गया था। अधिकांश जागीरदार भूमि-सुधारों के बाद खेती में लग गए। इस तरह उनकी आर्थिक स्थिति में सुधार हुआ है।

राजस्थान काश्तकारी कानून, 1955 के लागू होने के समय 10 प्रतिशत काश्तकारों को खातेदारी काश्तकारों के समान अधिकार प्राप्त थे, लेकिन अब सभी को खातेदारी अधिकार प्राप्त हो गए हैं। यह स्थिति बहुत संतोषप्रद है। अब राज्य में गैर-खातेदारी काश्तकारों की संख्या अधिक नहीं है।

उप-काश्तकारों (Sub-tenants) के सम्बन्ध में आवश्यक सूचना का अभाव पाया जाता है। लेकिन प्रमुख काश्तकार (tenant-in-chief) इनसे 'नौकरनामा' लिखाकर काश्त करवाते हैं और इनका शोषण करते हैं। इस प्रकार उपकाश्तकार आज भी प्रमुख काश्तकारों की दया पर आश्रित हैं। प्रमुख काश्तकार इनसे उपज के रूप में ऊँचा लगान लेते हैं और उन्हें जब चाहे बेदखल कर देते हैं। फसल बटाई अनुचित रूप में आज भी प्रचलित है। **इस प्रकार अब प्रमुख काश्तकार उन शोषण के तरीकों का उपयोग उप-काश्तकारों पर करने लग गए हैं, जिनका उपयोग पहले स्वयं भू-स्वामी उन पर किया करते थे।** यह एक अत्यन्त निराशाजनक व निन्दनीय स्थिति है। इसको दूर करने का समुचित उपाय होना चाहिए, तभी भूमि को जोतने वाला सच्चा भू-स्वामी हो सकेगा।

राजस्थान काश्तकारी अधिनियम 1955 समस्त भूमि के स्वामी के रूप में सरकार को ही मानता है। किसान अपनी भूमि का स्वामी नहीं माना गया है। अपनी भूमि का स्वामी नहीं होने के कारण उसकी भूमि में छिपे खनिजों, तेल व गैस इत्यादि आज भी सरकारी स्वामित्व में ही आते हैं। जालोर, सिरोही, उदयपुर आदि स्थानों पर निकलने वाले ग्रेनाइट तथा अन्य कई स्थानों पर निकलने वाले मार्बल-पत्थर पर किसान का अधिकार न होकर सरकार का ही माना जाता है। **इस प्रकार सही मायने में अभी तक किसान अपनी भूमि का मालिक नहीं माना जाता।**

श्री अमीर राजा, तत्कालीन संयुक्त सचिव, योजना आयोग ने राजस्थान में भूमि सुधारों के क्रियान्वयन पर अपनी रिपोर्ट में कहा था कि मध्यस्थों की समाप्ति से सम्बन्धित कार्यों जैसे खुदकाश्त के आवंटन के लिए आवेदन-पत्रों का अन्तिम निबटारा करने, दावों (Claims) को तैयार करने तथा मुआवजे देने में बड़ी धीमी प्रगति रही है। इस बात की नवीनतम सूचना प्राप्त नहीं है कि जागीरदारों व मध्यस्थों के पास खुदकाश्त में कितनी भूमि मौजूद है, कितनी भूमि पर काश्तकारों ने खातेदारी-अधिकार ग्रहण किए हैं और कितनी शेष किस्म की है। सरकार ने कृषि के साथ-साथ वृक्षारोपण को बढ़ावा देने के लिए काश्तकारों को अधिक सीमा तक अधिकार दिए हैं ताकि वे अधिक संख्या में वृक्ष लगाने में रुचि ले सकें। किसान अपनी जोत की भूमि के 1/50 हिस्से में भवन व अपनी आवश्यकता के अनुसार निर्माण कार्य कर सकता है। कृषिगत भूमि को आवासीय व वाणिज्यिक कार्यों में बदलने के लिए नियम भी बनाए गए हैं।

फसल-बटाई प्रथा जारी (Crop-sharing system continuing)

सरकारी स्पष्टीकरणों से ऐसा प्रतीत होता है कि उप-काश्तकारी व फसल बटाई को रोकना सदैव संभव नहीं हो पाता है, क्योंकि कुछ परिस्थितियों में भू-स्वामी स्वयं बीमारी व अन्य कारणों से भूमि को जोतने की स्थिति में नहीं होता है और कभी-कभी दूसरों से बैल की जोड़ी, श्रम व अन्य साधन लेने के लिए उनकी साझेदारी स्वीकार करनी होती है। अतः आवश्यक दशाओं में इन्हें कृषिगत उत्पादन के हित में स्वीकार करने का समर्थन किया गया है।

लालबहादुर शास्त्री राष्ट्रीय प्रशासन अकादमी, मसूरी ने भारत सरकार के ग्रामीण विकास मंत्रालय के निर्देश पर भारत में भूमि-सुधारों पर 1989-90 के लिए एक अध्ययन करवाया था, जिसमें राजस्थान के सम्बन्ध में निम्न निष्कर्ष प्रस्तुत किए गए थे—

(1) राज्य में फसल-बटाई के रूप में अनौपचारिक काश्तकारी प्रथा (informal tenancy system) जारी है। सिंचित क्षेत्रों में इसका प्रभाव अधिक है। कानून में तो उचित लगान कुल उपज का 1/6 रखा गया है, लेकिन व्यवहार में बटाईदार कुल उपज का 1/2 भाग लगान में दे रहे हैं। 1975 तक वास्तविक खातेदार काश्तकार या उप-काश्तकार का नाम "खसरा-गिरदावरी" में देने का प्रावधान था, लेकिन अब इसे हटा दिया गया है, जिससे उप-काश्तकारों को उनके अधिकारों से वंचित होना पड़ा है।

ऐसा माना जाता है कि राज्य में अनौपचारिक काश्तकारी, लगान की लूट व शोषण-मूलक बटाई प्रथा आज भी कायम है।

(2) अलवर, भीलवाड़ा, कोटा व उदयपुर जिलों में से प्रत्येक में एक-एक गाँव के अध्ययन से पता चलता है कि अतिरिक्त घोषित भूमि में से केवल 7.6% भूमि ही आवंटित की गई है।

इन्हीं जिलों में से प्रत्येक में से चार-चार गाँवों के अध्ययन से पता चला है कि सीलिंग से ऊपर अतिरिक्त घोषित अधिकांश भूमि बंजर, अनुत्पादक व अकृषि योग्य पाई गई है। गाँव (बहदनवाड़ा) में पहाड़ी भूमि देकर एक भू-स्वामी ने इसका मुआवजा

उपजाऊ भूमि के बराबर वसूल कर लिया, जिससे वह स्वयं तो लाभ में रहा, लेकिन सरकारी खजाने पर अनावश्यक रूप से भार डाल दिया।[1]

इस प्रकार राजस्थान में काश्तकारी व सीलिंग कानूनों को लागू करने की दृष्टि से प्रगति बहुत धीमी रही है।

राजस्थान में सीलिंग कानून की काफी अवहेलना की गई है। जब 3 नवम्बर, 1969 को अनूपगढ़ में भूमि की नीलामी चालू हुई थी तो किसान आन्दोलन प्रारम्भ हो गया था। सरकार नीलामी से वित्तीय साधन जुटाना चाहती थी, लेकिन इससे भूमिहीनों को भूमि नहीं मिल सकती थी। इस स्थिति में राजनीतिक दलों ने संघर्ष चालू कर दिया था। बाद में सरकार ने नहरी क्षेत्रों में नीलामी बन्द कर दी और भूमिहीनों को निश्चित भावों पर भूमि देने का निर्णय किया। 3 एकड़ से नीचे की भूमि पर खुशहाली कर (betterment levy) समाप्त कर दिया गया, कपास पर उपकर नहीं लिया गया और भू-राजस्व की वृद्धि नहीं की गई।

राज्य में कार्यशील जोतों का वितरण[2]

राजस्थान में 1970-71 व 1995-96 की कृषिगत संगणनाओं (Agricultural censuses) के अनुसार कार्यशील जोतों का वितरण निम्न तालिका में दर्शाया गया है।

1995-96 में राजस्थान में कार्यशील जोतों की कुल संख्या 53.64 लाख थी और उनमें कुल क्षेत्रफल 2.12 करोड़ हैक्टेयर समाया हुआ था। इस प्रकार राज्य में जोत का औसत आकार 3.96 हैक्टेयर था। 1970-71 में यह 5.45 हैक्टेयर था (जो समस्त भारत की कार्यशील जोत का 2.5 गुणा था)। **इस प्रकार राज्य में जोत का औसत आकार समस्त भारत के औसत आकार से काफी ऊँचा पाया जाता है, लेकिन यह निरन्तर घटता जा रहा है।**

	जोतों की श्रेणी	1970-71		1995-96	
		जोतों का प्रतिशत	क्षेत्रफल का प्रतिशत	जोतों का प्रतिशत	क्षेत्रफल का प्रतिशत
(i)	सीमान्त (एक हैक्टेयर)	25.2	2.3	30.0	3.7
(ii)	लघु (1-2 हैक्टेयर)	18.5	4.9	20.2	7.4
(iii)	अर्द्ध-मध्यम (2-4 हैक्टेयर)	20.7	11.0	20.8	15.0
(iv)	मध्यम (4-10 हैक्टेयर)	21.5	24.7	19.8	31.1
(v)	वृहद् (10 हैक्टेयर व अधिक)	14.0	57.1	9.1	42.8
	योग (लगभग)	100.0	100.0	100.0	100.0

1 Mainstream, July 14, 1990, pp 18-19 & pp 23-24, इस विषय पर यह एक नवीन अध्ययन पर आधारित रिपोर्ट मानी गई है।

2 Some Facts About Rajasthan 2003, part I, p. 10 (1995-96 के लिए)

तालिका के मुख्य निष्कर्ष—

(1) 1995-96 में भी राज्य में कार्यशील जोतों का वितरण काफी असमान रहा, क्योंकि 2 हैक्टेयर तक की जोतें लगभग 50% (आधी) थीं और उनमें कुल कृषित क्षेत्रफल का 11.1% (लगभग 1/10 अंश) समाया हुआ था। इसके विपरीत आधी जोतें 2 हैक्टेयर से अधिक थीं और उनमें कुल कृषिगत क्षेत्रफल का लगभग 89% (9/10 अंश) समाया हुआ था। इस प्रकार वर्ष 1995-96 में भी जोतों का वितरण काफी असमान था। यह भी ध्यान देने की बात है कि 10 हैक्टेयर व अधिक की वृहद् जोतें (large holdings) संख्या में तो लगभग 9.1% (1/10) थीं, लेकिन उनमें 43% (2/5 से कुछ अधिक) कृषित क्षेत्र समाया हुआ था। इससे आज भी बड़ी जोतों के अन्तर्गत अधिक कृषित भूमि समाई हुई है। इसके विपरीत एक हैक्टेयर तक की सीमान्त जोतें 30% थीं, लेकिन उनमें कृषित भूमि का अंश केवल 3.7% ही था। इस प्रकार सीमान्त जोतों के अन्तर्गत कृषित भूमि का अंश बहुत कम है।

(2) 1970-71 से 1995-96 के 25 वर्षों में कुल जोतों में सीमान्त जोतों का अंश 25.2% से बढ़कर 30% हो गया और इनमें क्षेत्रफल का अंश 2.3% से बढ़कर 3.7% हो गया। इसके विपरीत बड़ी जोतों का अंश 14% से घटकर 9% पर आ गया तथा इनके अन्तर्गत कृषित क्षेत्रफल में भी 57% से 43% तक हो गया (14% बिन्दु की गिरावट आई)। **अतः योजनाकाल की इस अवधि में कुछ क्षेत्रफल बड़ी जोतों के अन्दर से निकलकर अन्य श्रेणियों जैसे सीमान्त, लघु, अर्द्ध-मध्यम व मध्यम की ओर अवश्य गया है।**

इस प्रकार भूमि के वितरण की असमानता के बने रहने के बावजूद कुछ सीमा तक क्षेत्रफल अन्य भू-जोतों की ओर भी अन्तरित हुआ है।

(3) 1995-96 में कार्यशील जोतों के वितरण का जिनी-अनुपात (gini-ratio) 0 5736 रहा, जबकि 1985-86 में यह 0 5793 रहा था। इससे पता चलता है कि जोतों के वितरण की असमानता पिछले दशक में लगभग समान ही बनी हुई है। इसका स्तर आज भी ऊँचा बना हुआ है। **इससे भूमि के वितरण की असमानता का अनुमान लगाया जा सकता है।** स्मरण रहे कि यहाँ हमने कार्यशील जोतों के वितरण का उल्लेख किया है, लेकिन स्वामित्व के अनुसार जोतों (ownership holdings) का वितरण इससे भी थोड़ा ज्यादा असमान होता है। स्वामित्व के अनुसार जोतों के वितरण में यह देखा जाता है कि मालिकाना हक (ownership) के अनुसार जोतों का वितरण कैसा पाया जाता है। इससे भूमि का स्वामित्व के अनुसार वितरण सामने आ पाता है।

यदि स्वामित्व के रूप के अनुसार कार्यशील जोतों का वितरण देखा जाए तो 1995-96 में 37.7 लाख व्यक्तिगत-धारकों के पास 138.7 लाख हैक्टेयर भूमि थी, 15.8 लाख संयुक्त-धारकों के पास 72.4 लाख हैक्टेयर भूमि थी तथा 0 2 लाख संस्थागत-धारकों के पास 1.4 लाख हैक्टेयर भूमि थी। इस प्रकार व्यक्तिगत-धारकों (individual holders) के पास सर्वाधिक भूमि थी।[1]

1 Agricultural Statistics of Rajasthan, DES, Feb 1999, p 9

राष्ट्रीय सेम्पल सर्वेक्षण (NSS) के अध्ययनों के आधार पर 1961-62 से 1982 के बीच स्वामित्व की जोतों के वितरण में परिवर्तन निम्न प्रकार से हुआ। 20 हैक्टेयर से अधिक की बड़ी जोतों की संख्या 3.6% से घटकर 1.4% हो गई तथा इनके अन्तर्गत क्षेत्रफल 26% से घटकर 14% हो गया। 10 से 20 हैक्टेयर की जोतों में भी परिवर्तन की इसी प्रकार की प्रवृत्ति पाई गई। अन्य श्रेणियों जैसे 1-2 हैक्टेयर, 2-4 हैक्टेयर तथा 4-10 हैक्टेयर में क्षेत्रफल की दृष्टि से स्थिति में सुधार हुआ। **इससे स्पष्ट होता है कि भूमि-सुधारों के फलस्वरूप बड़े तथा बहुत बड़े भूस्वामी कृषकों का प्रभुत्व काफी सीमा तक घटा है।**[1] अत: स्वामित्व की जोतों के वितरण में भी अनुकूल परिवर्तन आया है। लेकिन इस सम्बन्ध में नवीनतम स्थिति जानने के लिए अधिक गहन व ताजा सर्वेक्षण करने की आवश्यकता है।

(4) राजस्थान में 2 हैक्टेयर से अधिक आकार की कार्यशील जोतों में लगभग 89% क्षेत्रफल होने के कारण यहाँ सीमा-निर्धारण से ऊपर अतिरिक्त भूमि के मिलने की सम्भावना अधिक प्रतीत होती है। राज्य में भूमि का इतना अभाव नहीं है जितना अन्य राज्यों में पाया जाता है।

भूमि-सुधारों की समस्याएँ—उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट होता है कि राज्य में भूमि सुधारों के लिए कई कानून बनाए गए हैं और राजस्थान काश्तकारी अधिनियम, 1955 को इस दृष्टि से काफी महत्त्वपूर्ण माना गया है। लेकिन अन्य राज्यों की भाँति यहाँ भी भूमि-सुधारों के क्रियान्वयन में कुछ कमियाँ पाई गई हैं, जैसे भूमि का वितरण आज भी काफी असमान बना हुआ है। सीलिंग से अतिरिक्त भूमि जितनी प्राप्त होनी चाहिए थी उतनी प्राप्त नहीं हुई है और राज्य में उप-काश्तकारी प्रथा व फसल-बटाई जैसी शोषणमूलक प्रथा आज भी कायम है। इसके अलावा सहकारी खेती की दिशा में प्रगति नगण्य रही है। मंदिरों की जमीनों पर किसानों का कब्जा चाहे कितने ही सालों से क्यों न रहा हो, फिर भी उन पर किसानों को खातेदारी अधिकार नहीं मिल पाते। इस प्रकार किसान को कानून से पूरी मदद नहीं मिल पाई है।[2]

राज्य में सीलिंग कानून को प्रभावपूर्ण ढंग से लागू नहीं किया गया है जिससे वास्तव में अतिरिक्त घोषित की गई भूमि की मात्रा काफी कम निकली है। इसके लिए अग्र कारण उत्तरदायी माने जा सकते हैं—

(1) भूस्वामियों ने काफी भूमि बेच दी है, या अपने सम्बन्धियों में वितरित कर दी है, अथवा अन्य किसी तरह जैसे बेनामी रूप में हस्तान्तरित कर दी है, जिससे अतिरिक्त भूमि कम मात्रा में मिल पाई है।

(2) भूमि-सुधार राज्यों का विषय है और विधान-सभाओं में भूस्वामी वर्ग का अधिक राजनीतिक प्रभाव होने के कारण भूमि-सुधारों के क्रियान्वयन पर विपरीत प्रभाव पड़ता है।

---

1. V S Vyas & Vidya Sagar, Land Reforms and Agricultural Development in Rajasthan in Land Reforms in India (Vol 2)—**Rajasthan—Feudalism and Change**, edited by B N Yugandhar & P S Datta, 1995, pp 36-53
2. मोहनसिंह राघव, **किसान और कानून [2]** राज पत्रिका, 25 मई 2000.

(3) तृतीय योजना के बाद समस्त देश में भूमि-सुधारों पर धीरे-धीरे जोर कम होता गया है। कृषिगत विकास के लिए तकनीकी परिवर्तनों व इन्पुटों की सप्लाई बढ़ाने पर अधिक ध्यान केन्द्रित किया गया है। इससे भी भूमि सुधार कार्यक्रम पर विपरीत प्रभाव पड़ा है।

(4) भूमि सम्बन्धी रिकार्ड को नवीनतम रूप में तैयार करने की दिशा में भी वांछनीय प्रगति नहीं हो पाई है।

भूमि सुधारों को भारतीय संविधान की नवीं अनुसूची में शामिल करने से स्थिति काफी बदल गई है। अब भूमि सुधार कानूनों को अदालतों में चुनौती नहीं दी जा सकती और इनको लागू करने में भी अपेक्षाकृत अधिक आसानी हो गई है।

आवश्यक सुझाव

(1) रोजगार के अवसरों में वृद्धि—सरकार भूमि-सुधारों को लागू करना चाहती है। लेकिन इसके मार्ग में आने वाली व्यावहारिक कठिनाइयों का काफी बड़ा जाल बिछ गया है। **वर्तमान सामाजिक-राजनीतिक व कानूनी ढाँचों के अन्तर्गत भूमि का कोई विशेष पुनर्वितरण सम्भव नहीं प्रतीत होता।** ऐसी स्थिति में कुछ विद्वानों का सुझाव है कि निर्धन लोगों की आर्थिक दशा सुधारने के लिए वैकल्पिक उपाय ढूंढे जाने चाहिएँ, **जिससे उनको रोजगार मिले तथा आमदनी बढ़ाने के अधिक अवसर प्राप्त हो सकें।** भूमि के पुनर्वितरण से इनकी समस्या का पूरा समाधान निकाल सकना सम्भव नहीं प्रतीत होता। राज्य में खेतिहर श्रमिकों की संख्या में तेजी से वृद्धि हुई है। यह 1981 में 4.8 लाख से बढ़कर 1991 में 13.9 लाख हो गई है। इनमें ग्रामीण क्षेत्रों में 12.9 लाख व शहरी क्षेत्रों में 1 लाख खेतिहर श्रमिक पाए जाते हैं। खेतिहर मजदूरों की संख्या की अत्यधिक वृद्धि एक गम्भीर समस्या है। इनके लिए कुटीर उद्योगों में रोजगार के अवसर बढ़ाने की नितान्त आवश्यकता है।

(2) निर्धनों के लिए कल्याण-कार्य—भारत में भूमि-सुधारों का उद्देश्य कभी ठीक से परिभाषित नहीं किया गया है। इसके अलावा गाँवों में शक्ति-सन्तुलन निर्धन व भूमिहीनों के पक्ष में नहीं है। इसलिए बार-बार भूमि-सुधारों को लागू करने पर जोर देने का विशेष अर्थ नहीं निकलता। अतः निर्धन लोगों के कल्याण के लिए अन्य वैकल्पिक प्रयास करने जरूरी हैं; जैसे उनके लिए शिक्षा, चिकित्सा व पेयजल की पूर्ति बढ़ाना, आदि। उनके लिए रोजगार की व्यवस्था की जानी चाहिए। सरकार ने नियमित रोजगार अथवा स्वरोजगार प्रदान करने के लिए कई योजनाएँ बनाई हैं। इनमें कम्पोजिट लोन स्कीम, महिलाओं के लिए गृह-उद्योग, दस्तकारों के लिए रोजगार, शिक्षितों के लिए स्वरोजगार, अनुसूचित जाति के लोगों के लिए पैकेज कार्यक्रम, शहरी गरीब लोगों के लिए स्वरोजगार के कार्यक्रम, आदि शामिल हैं। इनको प्रभावपूर्ण ढंग से लागू करने से निर्धन वर्ग की आय बढ़ेगी तथा वे निर्धनता की रेखा से ऊपर आ सकेंगे।

(3) दैनिक न्यूनतम मजदूरी में वृद्धि—राज्य में खेतिहर मजदूरों व अन्य मजदूरों के लिए दैनिक न्यूनतम मजदूरी की दर समय-समय पर पुनः निर्धारित की गई है।

भारतीय जनता पार्टी की नई सरकार ने 1 अप्रैल, 2004 से दैनिक न्यूनतम मजदूरी की दरों में 13 रु. की वृद्धि की है । ये अकुशल श्रेणी के श्रमिकों के लिए 60 रु. से बढ़ाकर 73 रु. अर्द्धकुशल श्रमिकों के लिए 64 रु. से बढ़ाकर 77 रु. तथा कुशल श्रमिकों के लिए 68 रु. से बढ़ाकर 81 रु. की गयी हैं ।* यह परिवर्तन महँगाई के कारण करना जरूरी हो गया था । दैनिक न्यूनतम मजदूरी में समय-समय पर संशोधन किया जाता है ।

(4) भूमि-सुधारों में काश्तकारी सुधारों पर अधिक ध्यान केन्द्रित करने की आवश्यकता है ताकि काश्तकारों से उचित लगान लिया जाए तथा उन्हें भूमि से बेदखल नहीं किया जाए ।

(5) भूमि-सुधारों में चकबंदी पर भी पर्याप्त मात्रा में ध्यान दिया जाना चाहिए ताकि कृषिगत उत्पादन बढ़ सके ।

(6) राजस्थान में वृक्षारोपण, चरागाह विकास व पशु-पालन पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है ताकि भूमि का सदुपयोग हो सके और लोगों की आमदनी बढ़ सके ।

(7) भूमि-सुधारों को कार्यान्वित करने के लिए ग्रामीण निर्धन वर्ग के राजनीतिक संगठन (Political organisation) की नितान्त आवश्यकता है ताकि वे अपने अधिकारों के लिए आवश्यक राजनीतिक संघर्ष कर सकें ।

(8) अन्य राज्यों की भाँति राजस्थान में भी बीहड़ भूमि (जो पानी से होने वाली कटाई के कारण कृत्रिम नालों व गहरी घाटियों में बदल गई है और जिस पर आसानी से खेती नहीं की जा सकती) को भूमिहीन श्रमिकों में आवंटित करने के लिए कोई प्रभावशाली योजना होनी चाहिए, अन्यथा उसके अन्य वर्गों में आवंटित होने का खतरा बना रहता है ।

(9) भूमि सुधार कार्यक्रम में लघु व सीमान्त कृषकों को सहायता पहुँचाने का भरसक प्रयास किया जाना चाहिए ।

(10) भविष्य में भूमि-सुधारों का एक सुनिश्चित, पारदर्शी व समयबद्ध कार्यक्रम तैयार किया जाना चाहिए और सम्बन्धित व्यक्तियों में उसका आवश्यक प्रचार-प्रसार किया जाना चाहिए ।

(11) भूमि-सुधारों के साथ-साथ साख, संग्रहण, विपणन, विस्तार, अनुसंधान, आदि का भी तेजी से विकास किया जाना चाहिए ताकि ग्रामीण विकास द्रुतगति से हो सके । कृषि में पूँजी-निर्माण की गति तेज की जानी चाहिए ।

उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट होता है कि भूमि-सुधार-कार्यक्रम को लागू करना काफी जटिल माना गया है । इसलिए इस दिशा मे चुने हुए कार्यक्रमों को समयबद्ध रूप में लागू करना उचित होगा जिसके लिए पर्याप्त मात्रा में "राजनीतिक इच्छाशक्ति" (Political will) की आवश्यकता मानी गई है । अब राज्य मे पंचायती राज संस्थाओं की स्थापना से

---

* राजस्थान पत्रिका 21 जुलाई, 2004, पृ 20

ग्रामीण विकास के नये अवसर खुले हैं। इसलिए भूमि-सुधारों पर बदली हुई परिस्थितियों में पुनः विचार किया जाना चाहिए। प्रमुख राजनीतिक दलों को इसे अपने एजेण्डा में शामिल करना चाहिए। वामपंथी दल इस दिशा में अधिक सक्रिय भूमिका निभा सकते हैं, क्योंकि भारतीय कम्यूनिस्ट पार्टी (मार्क्सवादी) (CPI(M)) ने पश्चिम बंगाल में भूमि-सुधारों को लागू करने में विशेष रूप से सफलता हासिल की है। पश्चिम बंगाल में ग्रामीण क्षेत्रों में भूमिहीनों में भूमि-वितरण के कार्यक्रम को सभी क्षेत्रों में सराहा गया है।

प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. राजस्थान में अब तक भूमि-सुधारों के किस कार्यक्रम को अधिक सफलता मिली है ?
   (अ) मध्यस्थ-वर्ग की समाप्ति
   (ब) सीलिंग-कानून को लागू करना
   (स) चकबंदी
   (द) सहकारी संयुक्त खेती (अ)
2. राज्य में सिंचित भूमि पर सीलिंग की मात्रा है—
   (अ) 7.28 – 10 93 हैक्टेयर
   (ब) 10 हैक्टेयर
   (स) 21 85 – 70 82 हैक्टेयर
   (द) 30 हैक्टेयर (अ)
3. भविष्य में भूमिहीनों को लाभ पहुँचाने का उपाय है—
   (अ) अतिरिक्त भूमि का वितरण
   (ब) रोजगार देना
   (स) ग्रामीण क्षेत्रों में परिसम्पत्तियों का निर्माण करना
   (द) सभी (द)
4. राजस्थान में भावी भूमि-सुधार-नीति में किस बात पर अधिक बल दिया जाना चाहिए ?
   (अ) सीमा-निर्धारण करके अतिरिक्त भूमि का भूमिहीनों में वितरण
   (ब) चकबंदी
   (स) सहकारी संयुक्त व सेवा समितियों की स्थापना
   (द) व्यर्थ भूखण्डों का तेजी से विकास (Waste land development)
   (ए) लघु व सीमान्त कृषकों को वित्तीय व तकनीकी सहायता (ए)

अन्य प्रश्न

1. भूमि सुधार से आप क्या समझते हैं ? स्वाधीनता के पश्चात् राजस्थान में भूमि-सुधार नीति का आलोचनात्मक विवेचन कीजिए ।
2. स्वतंत्रता के बाद राजस्थान में भूमि सुधार नीति की आलोचनात्मक व्याख्या कीजिए ।
3. "राजस्थान काश्तकारी अधिनियम, 1955 राज्य में भूमि-सुधारों की दिशा में एक महत्त्वपूर्ण कदम है ।" समीक्षा कीजिए ।
4. संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए—
   (i) राजस्थान में भूमि-सुधार
   (ii) आपके राज्य में भूमि-सुधार
5. राजस्थान सरकार ने 1948 के पश्चात् जो प्रमुख भूमि-सुधार किए हैं, उनकी विशेषताएँ संक्षेप में लिखिए और बतलाइए कि उनसे कृषक का आर्थिक स्तर कितना उन्नत हुआ है ?
6. राजस्थान में जागीरदारी व अन्य भूधारण प्रणालियों के उन्मूलन का विवेचन कीजिए । इस दिशा में हुई प्रगति का मूल्यांकन कीजिए ।
7. राजस्थान में भूजोतों पर सीमा-निर्धारण का विवरण दीजिए । इस दिशा में हुई प्रगति का संक्षिप्त लेखा-जोखा प्रस्तुत कीजिए ।
8. संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए—
   (i) राजस्थान में भूमि का वितरण,
   (ii) फसल बटाई प्रथा,
   (iii) राजस्थान में भूमि-सुधार ।
9. राजस्थान में भूमि सुधारों की उपलब्धियों और विफलताओं की विवेचना कीजिए ।
10. राजस्थान में भूमि सुधार के लिए किए गए विभिन्न प्रयासों को स्पष्ट कीजिए । इस दिशा में राज्य को कहाँ तक सफलता मिली है ? समझाइए ।

(Raj. Iyear, 2004)

11

राजस्थान में अकाल व सूखा
(Famines and Droughts in Rajasthan)

राजस्थान के लिए अकाल व अभाव बहुत जाने-पहचाने शब्द हैं । यहाँ के ग्रामीण जीवन से इनका चोली-दामन का सम्बन्ध रहा है । राज्य के कई जिले प्रायः अकाल से प्रभावित होते रहते हैं । सरकार अकाल राहत कार्य खोलती है तथा लोगों को भूख-प्यास से मरने नहीं देती । पशुओं के लिए भी यथासम्भव पानी व चारे की व्यवस्था करने की कोशिश की जाती है । कभी-कभी अकाल भयकर रूप धारण कर लेता है और स्थिति का मुकाबला करने के लिए केन्द्र व राज्य सरकार दोनो को भारी प्रयास करना होता है । कृषिगत वर्ष 1987-88 (जुलाई-जून) का अकाल सबसे ज्यादा भीषण किस्म का था । इसने सभी 27 जिलों को अपनी गिरफ्त मे ले लिया था । इससे राज्य के 36252 गाँवों मे लगभग 3 करोड़ 17 लाख जनसख्या व करोड़ो पशु प्रभावित हुए थे । राज्य में वर्ष 1984-85 से लगातार अकाल पड़ते रहे हैं । 1990-91 से 1999-2000 की अवधि में राज्य केवल 1990-91 व 1994-95 मे ही अकाल की विभीषिका से मुक्त रहा, अन्यथा प्रति वर्ष अकाल राज्य में पैर पसारे रहा है, और राज्य के विभिन्न जिलों मे काफी गाँवों में लोग व पशु इसकी गिरफ्त में रहे हैं । वर्ष 1999-2000 का अकाल अपनी भीषणता व विकरालता के कारण मीडिया में काफी चर्चित रहा है । राज्य के 32 जिलों में से 26 जिलों के लगभग 23406 गाँवों में लगभग 2.6 करोड़ लोग व लगभग 3.5 करोड़ पशु इससे बुरी तरह प्रभावित हुए थे और जून 2000 में राज्य में पानी के अकाल, चारे के अकाल व अन्न के अकाल की व्यापक रूप से गूँज सुनायी दे रही थी । 1999-2000 में सरकार ने भू-राजस्व का निलम्बन (Suspension) लगभग 2.28 करोड़ रुपये का किया था । **2000-2001 की अवधि में राजस्थान तीसरे वर्ष अकाल की चपेट में रहा । इससे 31 जिलों की 3.30 करोड़ आबादी व 30583 गाँव प्रभावित हुए थे ।**[1] 2001-2002 में अकाल से 18 जिलों के 7964 गाँव प्रभावित हुए, प्रभावित जनसंख्या 69.7 लाख आँकी गई थी । 2002-2003 का अकाल व सूखा 'मेक्रो-ड्रॉउट' कहा गया है, क्योंकि इस वृहत् अकाल का प्रभाव पंजाब, हरियाणा, मध्य प्रदेश, पश्चिमी उत्तर प्रदेश, कर्नाटक, आंध्र प्रदेश, तमिलनाडु आदि प्रदेशों

---

1 Economic Review 2003-2004, **Govt of Raj., table on Loss Due to Famine/ Scarcity Condition in Raj.** table-9

तक फैल गया था । 2002-2003 के अकाल से 32 जिलों के 40990 गाँव प्रभावित हुए तथा राज्य की 4.48 करोड़ जनसंख्या अकाल की गिरफ्त में आ गयी, जैसा पहले कभी नहीं देखा गया था ।

2003-04 में भी अकाल से 3 जिले प्रभावित हुए थे । अकालग्रस्त गाँवों की संख्या 649 रही थी । 2004-05 में जून-जुलाई में राज्य में सूखे व अकाल की चिंताजनक स्थिति उत्पन्न होने लगी थी, लेकिन अगस्त, 2004 में बरसात होने से लोगों को कुछ राहत मिली है । देखना है कि आगे क्या स्थिति बनती है । राज्य सरकार ने केन्द्र से काफी मात्रा में वित्तीय सहायता व गेहूँ की माँग की है ।

अकाल के क्षेत्र/जिले

सर्वप्रथम, हमें यह जानना चाहिए कि राजस्थान में अकाल के कौन से क्षेत्र प्रमुख हैं । वैसे विभिन्न वर्षों में अकाल से प्रभावित होने वाले जिलों की संख्या एक-सी नहीं होती है, फिर भी राजस्थान का दक्षिण भाग तो प्रायः अकाल की चपेट में आता ही रहता है । अकाल के सम्बन्ध में निम्न दोहा काफी मशहूर माना जाता है । इसमें अकाल के प्रदेशों का स्पष्ट उल्लेख मिलता है ।[1]

"पग पूंगल, धड़ कोटड़े, बाहु बाड़मेर
जाये लादे जोधपुर, ठावो जैसलमेर ॥"

इसका अर्थ यह है कि अकाल के पैर पूंगल (बीकानेर) में, धड़ कोटड़ा (मारवाड़) में, भुजाएँ बाड़मेर (मालानी) में स्थायी रूप से माने गए हैं । लेकिन तलाश करने पर यह जोधपुर में भी मिल जाता है एवं जैसलमेर में तो इसका खास ठिकाना (ठायो) है ही ।

राष्ट्रीय कृषि आयोग ने राजस्थान के निम्न 11 जिलों को मरुस्थलीय जिले माना है । इनमें राज्य के क्षेत्रफल का 61% तथा जनसंख्या का 40% भाग शामिल है । राज्य में कुल व्यर्थ भूमि (total wastelands) का लगभग 2/3 अंश इन्हीं ग्यारह जिलों में पाया जाता है । व्यर्थ भूमि में (परती भूमि को छोड़कर) बंजर व अकृषित भूमि (जिसे अकृषियोग्य व्यर्थ भूमि कहते हैं) तथा कृषियोग्य व्यर्थ भूमि (Culturable wastelands) दोनों शामिल माने जाते हैं । इन ग्यारह जिलों में 1985-86 में कुल व्यर्थ भूमि 58 6 लाख हैक्टेयर थी, जो उनके कुल रिपोर्टिंग क्षेत्र 208 लाख हैक्टेयर का 28% थी । इससे इन क्षेत्रों में व्यर्थ पड़ी भूमि के आकार का पता चलता है । इन ग्यारह जिलों की लगभग दो लाख नौ हजार वर्ग किलोमीटर भूमि में प्रायः अकाल एक अनचाहे मेहमान की तरह जमकर बैठा रहता है । ये 11 जिले इस प्रकार हैं—जैसलमेर, बाड़मेर, बीकानेर, जोधपुर, श्रीगंगानगर, नागौर, चूरू, पाली, जालौर, सीकर व झुंझुनूं ।* इन जिलों की मरुभूमि अकाल जैसे दानव के पंजों में जकड़ी हुई है । इन क्षेत्रों में वर्षा कम व अनियमित होती है । बहते जल व भूमि के नीचे जल की कमी पाई जाती है । पानी के भाप बनकर उड़ जाने की रफ्तार तेज होती है । ग्रीष्म ऋतु में प्रायः धूल भरी आँधियाँ चलती हैं एवं बालू मिट्टी का हवा से कटाव होता रहता है । दुनिया के अन्य भागों के मरुस्थलों की तुलना में राजस्थान के मरुस्थल में

---

1 सईद अहमद खाँ का लेख, मुकाबला कोई आसान नहीं, राजस्थान पत्रिका, अकाल राहत परिशिष्ट, 24 अप्रैल, 1986, पृ 4

* हनुमानगढ़ को शामिल करने पर अब इनकी संख्या 12 हो गई है ।

जनसंख्या का घनत्व अधिक पाया जाता है, जिससे यहाँ पर अकाल की समस्या का अधिक जटिल होना स्वाभाविक है।

पिछले दो दशकों में अकाल/अभाव की स्थिति से हुई क्षति[1]

यह कहना गलत न होगा कि राजस्थान में प्रतिवर्ष किसी न किसी जगह अकाल व अभाव की स्थिति अवश्य पाई जाती है। यही नहीं बल्कि 1968-69 से 1999-2000 तक के कुल 32 वर्षों में से 12 वर्षों में राज्य में अकाल व अभाव की दशाएँ 26 व अधिक जिलों में पाई गई थीं। ये दशाएँ 1986-87 में व 1987-88 में 27 जिलों में तथा 1991-92 में 30 जिलों में तथा 1995-96 में 29 जिलों में व्याप्त थीं। जैसा कि पहले बतलाया जा चुका है। ये 1999-2000 में 26 जिलों में व्याप्त रही हैं। इस प्रकार राज्य के विभिन्न जिलों में अकाल की काली छाया निरन्तर मंडराती रहती है, जिससे काफी जनसंख्या व पशुधन पर दुष्प्रभाव पड़ता है और सरकार को राहत कार्यों पर काफी धनराशि व्यय करनी पड़ती है एवं भू-राजस्व की वसूली में भी ढील देनी पड़ती है। अकाल के कारण 1987-88 में 7.54 करोड़ रु. की भू-राजस्व की राशि निलम्बित करनी पड़ी थी। 1993-94 में भू-राजस्व की निलम्बित राशि [illegible] करोड़ रु. 1995-96 में [illegible] करोड़ रु., 1997-98 में 2.79 करोड़ रु. 1999-2000 में 2.28 करोड़ रु., 2000-01 में 3.10 करोड़ रु. तथा 2002-03 में 4.29 करोड़ रु. आँकी गई थी।

1956-57 से 1989-90 तक के कुल 34 वर्षों में राज्य ने अकाल राहत कार्यों पर लगभग 1799 करोड़ रुपये व्यय किए, जिनमें अकेले सातवीं योजना की कुल अवधि (1985-90) में 1236 करोड़ रुपये व्यय किए गए थे। अकाल राहत कार्यों पर वर्ष 1987-88 में 622 करोड़ रुपये व्यय किए गए, जो वार्षिक योजना में सार्वजनिक परिव्यय की कुल राशि से भी अधिक थे। नवम्बर 1992 के मूल्यों पर राहत-व्यय की यह राशि 998.6 करोड़ रु. आंकी गई है।[2] इससे राज्य पर अकाल के कारण पड़ने वाले अत्यधिक वित्तीय भार का अनुमान लगाया जा सकता है।

पिछले वर्षों में पानी का अकाल विशेष रूप से सामने आया है। इससे जन-जीवन व पशुधन दोनों पर कुप्रभाव पड़ा है। सरकार अनाज के अभाव को तो अपेक्षाकृत आसानी से दूर कर सकती है, लेकिन पानी का अभाव इतनी आसानी से दूर नहीं किया जा सकता। राज्य में पिछले वर्षों से अकाल ने **'त्रिकाल' (Triple Famine) का रूप धारण कर लिया है, जिसमें भोजन, चारे व पानी तीनों का गम्भीर संकट एक साथ खड़ा हो जाता है।**

अकाल, सूखे व अभाव की समस्या के कारण—निरन्तर पड़ने वाले अकाल प्रकृति व पुरुष के बीच निरन्तर चलने वाले कठिन संघर्ष की दशा को सूचित करते हैं। इसके लिए प्राकृतिक कारण प्रमुख होते हैं। लेकिन साथ में आर्थिक, सामाजिक व राजनीतिक परिस्थितियों को भी काफी सीमा तक उत्तरदायी ठहराया जा सकता है। इन पर आगे प्रकाश डाला जाता है—

---

1. Economic Review 2003-2004, Raj. पूर्वोद्धृत।
2. Memorandum to the Tenth Finance Commission, Govt. of Raj., p 95

(1) प्राकृतिक कारण—

(अ) धरातल की बनावट, जलवायु वगैरह—दूर-दूर तक फैला मरुस्थल या मरु-प्रदेश जहाँ ग्रीष्म ऋतु में तपती धरती, तपता आसमान, तपते इन्सान व तपते पशु सब कठोर नियति के जाल में फंसे होते हैं, जिससे छुटकारा पाना दुष्कर होता है, क्योंकि 11 मरुस्थलीय जिलों में सर्वत्र बालू के टीले पाए जाते हैं तथा धरती के नीचे व इसकी सतह पर जल का नितान्त अभाव होता है। हम पहले बतला चुके हैं कि इन ग्यारह जिलों की दो लाख नौ हजार वर्ग किलोमीटर भूमि प्रायः इस मरु दानव के पंजों में बुरी तरह जकड़ी रहती है।

इन क्षेत्रों में हवा से मिट्टी का कटाव निरन्तर होता रहता है जिससे रेगिस्तान सुनिश्चित गति से आगे बढ़ता जा रहा है। आगे चलकर इससे अन्य राज्यों की उपजाऊ धरती को भी खतरा उत्पन्न हो सकता है।

(आ) वर्षा की कमी, अनियमितता व अनि- श्चितता—अकाल व सूखे की स्थिति का प्रधान कारण मानसून का विफल होना माना गया है। राजस्थान के उपर्युक्त 11 मरुस्थलीय जिलों में साल भर में सामान्यतया वर्षा पचास सेंटीमीटर से अधिक नहीं होती। जैसलमेर में औसतन 16 सेमी. वर्षा ही हो पाती है। पिछले 100 वर्षों में वहाँ केवल 25 वर्ष ही बारिश हुई, जिससे इस इलाके में वर्षा के अभाव का अनुमान लगाया जा सकता है। **अतः आवश्यकता के अनुसार वर्षा का न होना, कभी-कभी वर्षा का बिल्कुल न होना तथा कभी देर से होना, ये सब अकाल व सूखे की स्थितियों को जन्म देते हैं।** अभाव की ये स्थितियाँ कभी-कभी नियंत्रण से बाहर होने लगती हैं। तब लोग-बाग अपने मवेशियों को लेकर निकटवर्ती राज्यों में चारे व पानी की तलाश में पलायन या निष्क्रमण करने लगते हैं। अकाल से पशुधन की भारी हानि होती है। कभी-कभी निकटवर्ती राज्यों में भी अभाव व सूखे के कारण उनमें पशुओं के प्रवेश से कोई लाभ नहीं होता, बल्कि पड़ौसी राज्य इसका विरोध भी करते हैं। उनकी स्वयं की कठिनाइयाँ भी दिनोंदिन बढ़ती जा रही हैं।

(2) आर्थिक कारण—

आर्थिक विकास के अभाव से भी अकाल व सूखे की समस्या अधिक जटिल होती गई है। मरुप्रदेश या मरु जैसे प्रदेश में इन्फ्रास्ट्रक्चर का पर्याप्त विकास नहीं हो पाया है। जनसंख्या के बढ़ने से आर्थिक साधनों पर दबाव बढ़ा है। लोगों के लिए रोटी-रोजी की समस्या काफी गम्भीर हो गई है। परम्परागत कुटीर व ग्रामीण उद्योगों का ह्रास हुआ है तथा सिंचाई के साधनों के अभाव में कृषि को उन्नत करने में बाधा पहुँचती है। बालू मिट्टी उपजाऊ नहीं होती है। जोधपुर की सेंट्रल एरिड जोन रिसर्च इन्स्टीट्यूट (काजरी) की एक ताजा रिपोर्ट के अनुसार, चारे की कमी का कारण बढ़ती हुई पशु-संख्या है। 1972-77 की अवधि में पशुओं की संख्या 44.5 लाख बढ़ी थी, जिससे प्रति पशु चराई की भूमि घट गई थी। जनसंख्या का दबाव बढ़ने के कारण अधिक भूमि पर खेती की जाने लगी है जिससे सन्तुलित चारे के अभाव में इसके दाम बढ़ जाते हैं। फलस्वरूप दुग्ध व दुग्ध पदार्थों के दाम

बढ़ाने पड़ते हैं। मरुस्थलीय प्रदेशों में कृषिगत उत्पादकता भी नीची पाई जाती है जिससे कृषकों की आमदनी कम होती है। सहायक धन्धों के अभाव में आमदनी बढ़ा सकना भी सुगम नहीं होता। अतः बेरोजगारी व अल्प-रोजगार की समस्या भी काफी तीव्र हो गई है। लघु कृषकों, भूमिहीन किसानों व ग्रामीण काश्तकारों के श्रम का पूरा उपयोग नहीं हो पाता जिससे अकाल के समय इनकी आर्थिक हालत बड़ी दयनीय हो जाती है। सरकार राहत कार्य चलाकर इन लोगों को लाभ पहुँचाने का प्रयास करती है।

(3) सामाजिक कारण—

जलाने की लकड़ी के अभाव की समस्या काफी जटिल रूप धारण कर चुकी है। लोगों ने अंधाधुंध पेड़ काट डाले हैं व अनियंत्रित चराई ने मिट्टी के कटाव की समस्या को तीव्र कर दिया है। कृषिगत भूमि, वन, जल, आदि का परस्पर सन्तुलन बिगड़ जाने से परिवेश-असंतुलन (ecological im-balance) की समस्या उत्पन्न हो गई है। इसके लिए उचित जल व भूमि-प्रबन्ध की आवश्यकता है।

(4) राजनीतिक कारण—

अकाल व सूखे की समस्या का सम्बन्ध राजनीतिक कारणों से भी माना गया है। विभिन्न योजनाओं की अवधि में सरकार ने स्थायी व उत्पादक राहत कार्यों की बजाय अस्थायी राहत कार्यों पर ध्यान दिया जिससे उत्पादक सामुदायिक परिसम्पत्तियों (productive community as-sets) का निर्माण तेजी से नहीं हो पाया है। फलस्वरूप राहत कार्यों पर किया गया व्यय दीर्घकालीन दृष्टि से पर्याप्त प्रतिफल नहीं दे पाया है और अकाल को रोकने की दृष्टि से उनकी उपयोगिता सीमित रही है। यदि प्रारम्भ से ही सुनियोजित तरीके से अकालों से लड़ने का प्रयास किया जाता तो इन 'अनचाहे मेहमान' को अपने घर वापस भेजना सम्भव हो सकता था। लेकिन प्रशासनिक कमियों के कारण यह जमकर बैठा हुआ है और जाने का नाम तक नहीं लेता।

इस प्रकार अकाल व सूखे की समस्या प्राकृतिक, आर्थिक, सामाजिक व राजनीतिक कारणों की देन है। राज्य सरकार के पास वित्तीय साधनों की कमी रही है जिससे वह राज्य को अकाल के दानव से मुक्त नहीं करा सकी है। फिर भी कई प्रकार के राहत कार्यक्रम चलाकर सरकार लोगों को भूख-प्यास से मरने नहीं देती और अकाल से जूझने के लिए सदैव कृत-संकल्प रहती है, जैसा कि निम्न विवरण से स्पष्ट हो जाएगा—

राजस्थान में अकाल व सूखे की समस्या के हल के लिए सरकारी नीति— राजस्थान में अकाल की समस्या एक अल्पकालीन समस्या नहीं है, बल्कि एक दीर्घकालीन समस्या है। अतः इस समस्या का स्थायी हल तो दीर्घकाल में ही सम्भव हो सकता है। फिर भी राज्य सरकार ने इसके हल के लिए भूतकाल में कई प्रयास किए हैं और वर्तमान में भी ये प्रयास जारी हैं। आगामी वर्षों में भी इस समस्या के लिए निरन्तर प्रयास जारी रखने होंगे।

(i) **अल्पकालीन नीति—**

अकाल राहत-कार्य—अकाल की समस्या को हल करने के सम्बन्ध में सरकार की मुख्य नीति राहत कार्य (relief works) चालू करने की रही है। इसके लिए केन्द्र से वित्तीय सहायता देने की माँग की जाती है। वित्तीय साधनों के आधार पर भू-संरक्षण, सड़क-निर्माण, पाठशाला व औषधालय-निर्माण, सिंचाई के लिए कुओं के निर्माण, तालाबों व अन्य सिंचाई के साधनों के निर्माण व उनकी मरम्मत तथा रख-रखाव एवं जल की सप्लाई बढ़ाने के प्रयास किए जाते हैं ताकि लोगों को पेयजल उपलब्ध किया जा सके तथा पशुओं को भी पीने का पानी मिल सके। इसके अलावा चारे की उपलब्धि बढ़ाने जैसे अनेक प्रकार के कार्यक्रम चलाए जाते हैं ताकि लोगों को रोजगार व आमदनी मिल सके एवं साथ में उत्पादक सामुदायिक परिसम्पत्तियों का निर्माण किया जा सके।

राज्य में कुछ वर्षों के अकाल-राहत कार्यों का संक्षिप्त परिचय

अकाल राहत कार्य (1985-86 के अकाल के सन्दर्भ में)[1]—जैसा कि पहले बतलाया जा चुका है, 1985-86 का अकाल काफी भीषण किस्म का रहा था और इसने उस समय के 27 जिलों में से 26 जिलों को प्रभावित किया था। इससे राज्य के 26859 गाँवों की 2 करोड़ 20 लाख जनसंख्या व 3 करोड़ से अधिक पशु प्रभावित हुए थे। अकाल के समय पीने के पानी, पशुओं के लिए चारे व मनुष्यों के लिए अन्न का नितान्त अभाव हो गया था।

राज्य सरकार ने अक्टूबर 1985 से 15 जुलाई, 1986 तक विभिन्न प्रकार के अकाल राहत कार्य संचालित किए थे जिससे लोगों के लिए रोजगार व आमदनी की व्यवस्था की जा सकी थी, तथा कई स्थानों में टैंकरों, बैलगाड़ियों, ऊँटगाड़ियों आदि की सहायता से पीने का पानी पहुँचाया गया था एवं पशुओं के लिए चारे व पानी की सुविधा बढ़ाई गई थी। जैसलमेर जिले में दिसम्बर, 1985 से मार्च, 1986 तक के चार महीनों में 1.2 लाख क्विंटल घास कटवाकर सूखाग्रस्त जिलों को भेजी गई थी और उससे राज्य सरकार को करीब 2 करोड़ रुपये की नकद आय हुई थी। जैसलमेर के उत्तरी-पश्चिमी भाग में भारत-पाकिस्तान सीमा पर 125 किलोमीटर लम्बी व 25-30 किलोमीटर चौड़ी भूमि की पट्टी पर 'सेवण' घास ईश्वर का वरदान मानी जाती है। यह 45° सेल्सियस तक के तापमान में उग व पनप सकती है। इस पट्टी पर 50 से 80 लाख क्विंटल घास पाई जाती है। यह पशुओं के लिए पौष्टिक आहार का काम देती है। सरकार को जैसलमेर के इस घास के खजाने का विस्तार करना चाहिए। लाखों श्रमिकों को अकाल-राहत कार्यों में रोजगार दिया गया था।

1985-86 में अकाल-राहत कार्यों की दो विशेषताएँ रहीं—

(1) मजदूरी का भुगतान अनाज के रूप में किया गया था, भारत सरकार से जो सहायता मिली उसे सामग्री के अंश के रूप में व्यय किया गया।

---

1 मुख्यमंत्री का बजट भाषण 1986-87, मार्च 1986, पृ. 6-9

1985-86 में अकाल राहत पर कुल व्यय लगभग 88.9 करोड़ रुपयों का हुआ था तथा भू-राजस्व की वसूली 5.6 करोड़ रुपयों तक की रोक दी गई थी।

(2) दूसरी विशेषता यह थी कि स्थायी महत्त्व एवं उत्पादक किस्म के कार्यों को प्राथमिकता दी गई ताकि सिंचाई, भू-संरक्षण, वन एवं सड़क-निर्माण के कार्यों का भली-भाँति विस्तार किया जा सके।

निर्माण-कार्यों में सर्वाधिक राशि का सिंचाई कार्यों पर व्यय करने का प्रावधान था। दूसरा स्थान सड़क निर्माण कार्यों को दिया गया था। उसके बाद भू-संरक्षण, वनों के विस्तार आदि का स्थान आया था।

स्मरण रहे कि अधिकांश राहत कार्य राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम (NREP) के अन्तर्गत किए गए थे। रोजगार देने में भूमिहीन श्रमिकों, लघु एवं सीमान्त कृषकों तथा अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के लोगों को प्राथमिकता दी गई थी।

पंचायती राज संस्थाओं के माध्यम से भी व्यापक निर्माण कार्य हाथ में लिए गए थे। इसके लिए उनको विभिन्न विभागों जैसे शिक्षा व जनजाति विकास आदि से एवं भूमिहीन श्रमिक रोजगार गारंटी योजना के अन्तर्गत धनराशि उपलब्ध कराई गई ताकि पाठशाला-भवनों आदि का निर्माण कराया जा सके। अन्य कार्य पटवार घर, पंचायत घर, औषधालय भवन, पंचायत की दुकानें, पेयजल कुओं का निर्माण, सामुदायिक भवनों का निर्माण तथा तालाबों की मरम्मत व गहरा कराने आदि के कार्य भी सम्मिलित थे।

ये कार्य सामान्य ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम व अकाल राहत कार्यों के अतिरिक्त थे।

1986-87 के भीषण अकाल से सम्बन्धित राहत-कार्य

1986-87 के भीषण-अकाल का दुष्प्रभाव 31936 गाँवों, 2.53 करोड़ लोगों व 3.27 करोड़ पशुओं पर पड़ा था।

अकाल-राहत कार्य निम्न विभागों द्वारा चलाए गए थे—(i) राहत विभाग, *(ii)* राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम के तहत, *(iii)* सार्वजनिक निर्माण विभाग, *(iv)* सिंचाई विभाग, *(v)* वन-विभाग, *(vi)* पंचायत समितियों के माध्यम से।

राहत कार्यों में कुओं के निर्माण, भवन-निर्माण, सिंचाई के कार्य, सड़क-निर्माण, भू-संरक्षण आदि शामिल थे। जून 1987 में 14.73 लाख लोगों को राहत कार्यों पर रोजगार उपलब्ध कराया गया था। भारत सरकार ने राजस्थान को राहत सहायता के बतौर 2 लाख टन गेहूँ आवंटित किया था।

अगस्त 1987 में राज्य सरकार ने अकाल से निपटने के लिए निम्न उपाय घोषित किए थे—

(1) राहत कार्यों पर तत्काल मजदूरों की संख्या 7 लाख बढ़ाने की घोषणा की गई थी। (2) असिंचित क्षेत्रों में लगान व सहकारी कर्जों की वसूलियाँ तुरन्त स्थगित करने का फैसला किया गया था। जिन गाँवों में लगातार चार साल से अकाल पड़ रहा था, वहाँ एक साल का लगान माफ करने की कार्यवाही का निर्णय किया गया था। अल्पावधि के सहकारी कर्जों को मध्यावधि कर्जों में परिवर्तित किया गया था। (3) राठी, थारपारकर

कांकरेज आदि उन्नत नस्ल की गायों को बचाने के लिए एक विशेष कार्यक्रम लागू किया गया था। इसके अनुसार ऐसी गायों को विशेष रूप से श्रीगंगानगर के केम्पों में रखा गया जहाँ इन्हें चारा, पानी, दवाइयाँ आदि उपलब्ध हो सकें और साथ में उनका दूध बिक सके। स्वयंसेवी संस्थाओं का भी व्यापक रूप से सहयोग लिया गया था। इन्होंने चारे का वितरण करने में मदद की थी। चारे के परिवहन के लिए राज्य सरकार ने सब्सिडी प्रदान की थी। (4) एक सौ ट्यूब-वैल जो उस समय उपयोग में नहीं आ रहे थे, उनका विद्युतीकरण करके घास उगाने का काम करने का निर्णय किया गया था। (5) सूरतगढ़ व जैतसर कृषि-फार्मों में चारा उगाने की व्यवस्था की गई थी। (6) पीने के पानी के लिए जयपुर, जोधपुर, उदयपुर, आबू, पाली, राजसमन्द, भरतपुर, अजमेर, ब्यावर, किशनगढ़ आदि शहरों में हैण्ड-पम्प व ट्यूब-वैल खुदवाने का कार्य प्रारम्भ किया गया था। (7) सार्वजनिक वितरण की दुकानों की संख्या बढ़ाई गई थी। आदिवासी क्षेत्रों में भ्रमणशील दुकानें खोली गई थीं। (8) पंजाब व हरियाणा से चारा खरीदने की व्यवस्था की गई थी। (9) अभावग्रस्त क्षेत्रों में चारा पहुँचाने के लिए केन्द्र जो अनुदान देता है, उसे 30 रुपये प्रति क्विंटल से बढ़ाकर भाड़े का वास्तविक खर्च वहन करने की सिफारिश की गई थी। सरकार ने एक वृहद् आपात योजना को लागू करने का निश्चय किया था।

उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट होता है कि अकाल की समस्या राज्य सरकार के समक्ष एक महान चुनौती बनकर आती है। सरकार ने राहत कार्यों को कुशलतापूर्वक चलाने का प्रयास किया, लेकिन मुख्य कठिनाई वित्त के अभाव की रही है। सरकार केन्द्र से अधिक से अधिक सहायता लेने का प्रयास करती है ताकि सूखे पर काबू पाया जा सके। 1985-86 में गुजरात व मध्य प्रदेश में भी सूखा पड़ने के कारण राजस्थान से पशुओं का निष्क्रमण वहाँ नहीं हो पाया था और दो लाख से अधिक पशुओं को जैसलमेर के चरागाहों में भेजा गया था और उनके लिए वहाँ पीने के पानी की विशेष व्यवस्था की गई थी। दुधारू पशुओं को पशु-आहार उपलब्ध कराने के लिए सरकार ने विशेष रूप से व्यवस्था की थी तथा गाँवों में पेयजल की व्यवस्था बढ़ाई गई थी। 1986-87 के अकाल का मुकाबला करने के लिए सरकार को पुनः सक्रिय होना पड़ा था और विभिन्न राहत कार्यों पर निर्माण कार्य चलाए गए थे। ये राहत कार्य जून 1987 के बाद भी कुछ अवधि तक जारी रखने पड़े थे। राज्य सरकार ने केन्द्र से राहत कार्यों के लिए सहायता माँगी थी।

1987-88 के अकाल में राहत कार्य[1]

जैसा कि पहले कहा जा चुका है, 1987-88 में 27 जिलों को अकालग्रस्त घोषित किया गया। इससे 36252 गाँव प्रभावित हुए जिनमें 3.17 करोड़ जनसंख्या अकाल की चपेट में आ गई थी। इतनी विशाल जनसंख्या को जीविकोपार्जन के साधन उपलब्ध कराना एक चुनौती भरा कार्य था। इस अकाल में 3 लाख राहत कार्य प्रारम्भ कर कुल 42.4 करोड़ रुपये मानव-दिवस का कार्य सृजित किया गया। अकाल राहत कार्यों पर 1987-88 में 622 करोड़ रुपये व्यय हुए, जो वार्षिक योजना के सार्वजनिक परिव्यय की राशि से

---

1 बजट भाषण 1989-90, पृ 4

अधिक थे। जैसा कि पहले बतलाया गया है, यह राशि नवम्बर 1992 के मूल्यों पर 998.6 करोड़ रु. (लगभग एक हजार करोड़ रु.) आती है। इसमें गेहूँ का मूल्य भी शामिल है। राज्य ने केन्द्रीय सहायता के अतिरिक्त स्वयं के साधनों से करोड़ों रुपये व्यय किए। सूखा-प्रबन्ध पर इन 16 महीनों में (1987-88 व बाद में) जो धनराशि व्यय की गई वह गत चार दशकों में अकाल राहत-सहायता पर व्यय की गई कुल राशि से भी बहुत ज्यादा थी।

1990-91 व बाद के वर्षों के लिए अकाल व अभाव की स्थिति के आवश्यक आँकड़े निम्न तालिका में दिए गए हैं[1] —

वर्ष	प्रभावित जिले	प्रभावित गाँवों की संख्या	प्रभावित जनसंख्या (लाख में)	भू-राजस्व की वसूली रोकी गई (लाख रु.)
1990-91	–	–	–	–
1991-92	30	30041	289.0	325.9
1992-93	12	4376	34.7	29.1
1993-94	25	22586	246.8	491.4
1994-95	–	–	–	–
1995-96	29	25478	273.8	209.1
1996-97	21	5905	55.3	28.9
1997-98	24	4633	14.9	2.8
1998-99	20	20069	215.1	168.5
1999-2000	26	23406	261.8	228.0
2000-2001	31	30583	330.4	310.5
2001-2002	18	7964	69.7	45.8
2002-2003	32	40990	447.8	429.3

तालिका से स्पष्ट होता है कि 2002-03 अकाल भीषणतम रहा है। जैसा कि पहले कहा जा चुका है कि वर्ष 1990-91 व 1994-95 अकाल व अभाव से मुक्त रहे थे। लेकिन 1995-96 में राज्य पुनः अकाल की चपेट में आ गया था जिससे काफी गाँवों की जनसंख्या प्रभावित हुई थी। 1998-99 में 20 जिलों के 20069 गाँवों में अकाल का प्रभाव पड़ा। 1999-2000 में राज्य के 26 जिलों के 23406 गाँव अकाल की गिरफ्त में रहे हैं जिनमें लोगों व पशुओं को भारी क्षति पहुँची है। 2000-2001 में 31 जिलों के 30583 गाँव अकाल से प्रभावित हुए जिनमें 3.3 करोड़ जनसंख्या व 4 करोड़ पशु अकाल की गिरफ्त में आए थे। 2002-03 में राज्य के सभी [illegible] जिलों के 40990 गाँव अकाल से प्रभावित हुए थे। इसमें लगभग 4.5 करोड़ जनसंख्या व करोड़ों पशु अकाल से प्रभावित हुए। 1988-89 व बाद के वर्षों में सूखा-राहत कार्यों पर व्यय

1 Economic Review 2003-2004, Raj., पूर्वोद्धृत।

की राशि आगे की तालिका में दर्शाई गई है । इसका उपयोग लोगों को राहत-कार्यों में रोजगार देने, पीने का पानी उपलब्ध कराने व पशुओं को चारा उपलब्ध कराने जैसे कार्यों के लिए किया गया था । साथ में बाढ़ व ओलों आदि से सम्बन्धित राहत-कार्यों का व्यय भी दिया गया है ।

सूखा राहत कार्यों पर व्यय की राशि[1]

(करोड़ रु. में)

वर्ष	सूखा	बाढ़, ओलावृष्टि आदि	कुल
1988-89	322.8	1 6	324 4
1989-90	30.7	1.2	31.9
1990-91	38 4	3.8	42.4
1991-92	5 7	0 6	6 3

तालिका से स्पष्ट होता है कि 1988-89 में सूखा-राहत कार्यों पर व्यय 323 करोड़ रु. रहा । वैसे 1990-91 का वर्ष अकाल व सूखे से मुक्त था, लेकिन पिछले वर्ष का राहत व्यय जारी रहने से इस वर्ष भी 38 करोड़ रु. का व्यय दर्शाया गया है । 1995-96 में भी खरीफ के मौसम में कृषिगत उत्पादन पर विपरीत प्रभाव पड़ा और सरकार को राहत-कार्य प्रारम्भ करने पड़े । सरकार ने स्थायी प्रकृति के कार्यों पर बल दिया और अपूर्ण कार्यों को प्राथमिकता के आधार पर पूरा करने की नीति अपनाई । 1995-96 में प्रारम्भ किए गए राहत-कार्य जुलाई 1996 तक जारी रखे गए । 1996-97 में रोजगार, पेयजल व चारे आदि की व्यवस्था के लिए सम्बद्ध विभागों को 210 करोड़ रु. की राशि आवंटित की गई । 1996-97 में सामान्यतया अच्छी बरसात हुई, लेकिन राज्य के कुछ भागों में भारी वर्षा के कारण बाढ़ के हालात पैदा हो गए थे । बाढ़ से प्रभावित लोगों को राहत पहुँचाने के लिये 1996-97 में सम्बद्ध जिलाधीशों व विभागों को 33.12 करोड़ रुपये की राशि आवंटित की गई थी ।[2]

1999-2000 के अकाल की स्थिति में राज्य सरकार ने केन्द्र से राहत-सहायता के रूप में नवम्बर 1999 में 1145 करोड़ रुपये की माँग की थी, जिसमें से केन्द्र ने केवल 103 करोड़ रुपये राष्ट्रीय-आपदा-सहायता-कोष (NCRF) से 31 मार्च, 2000 को स्वीकृत किए गए थे । वर्ष 2002-2003 में लगातार पाँचवें वर्ष भीषण अकाल की स्थिति को ध्यान में रखते हुए सितम्बर 2002 में राज्य सरकार ने केन्द्रीय अध्ययन दल के समक्ष 7519.76 करोड़ रुपये की माँग प्रस्तुत की तथा 56 लाख मीट्रिक टन गेहूँ की आवश्यकता प्रकट की ।

1 Memorandum to the Tenth Finance Commission, p. 95
2. Economic Review 1996-97, GOR, pp 139-140

2003-04 में राजस्थान अकाल से मुक्त रहा, लेकिन जून-जुलाई 2004 में समय पर वर्षा नहीं होने से राज्य में पुनः अकाल के आसार उत्पन्न होने लगे । सरकार ने केन्द्र से 7719.43 करोड़ रु. की अकाल-सहायता की माँग पेश की और गेहूँ की भी माँग की है । लेकिन अगस्त 2004 में वर्षा होने से स्थिति कुछ अनुकूल हुई है । अत: सरकार को बदलते हुए हालात पर कड़ी नजर रखनी होगी और परिस्थिति के अनुकूल फैसले करने होंगे । अकाल के प्रभाव के अनुरूप लोगों के लिए अनाज, पानी, रोजगार तथा पशुओं के लिए चारे-पानी की व्यवस्था करनी होगी । अतः अकाल की समस्या पुन: उत्पन्न हो सकती है ।

अकाल की समस्या को हल करने के लिए प्रमुख सरकारी कार्यक्रम—राज्य सरकार ने अकाल की समस्या के हल के लिए निम्न दो दिशाओं में प्रयास किए हैं । राज्य में विशिष्ट योजना संगठन (Special Schemes Organisation) (SSO) की स्थापना 1971 में की गई थी । इसकी तरफ से विभिन्न योजनाएँ चलाई गई हैं, जैसे एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम, सूखा संभाव्य क्षेत्रीय कार्यक्रम, मरु विकास कार्यक्रम, बायो गैस कार्यक्रम, राष्ट्रीय रोजगार कार्यक्रम, ग्रामीण भूमिहीन रोजगार गारन्टी कार्यक्रम, लघु व सीमान्त कृषक वृहत् कार्यक्रम तथा ऊर्जा व जल बचत सिंचाई योजना आदि । इन सभी कार्यक्रमों से ग्रामीण क्षेत्रों में लाखों लोगों को लाभ पहुँचता है । लेकिन इनमें से सूखा सम्भावित कार्यक्रम व मरु विकास कार्यक्रम का अकाल की समस्या से सीधा सम्बन्ध होता है । इसलिए इन पर नीचे प्रकाश डाला गया है ।

(1) सूखा संभाव्य क्षेत्रीय विकास कार्यक्रम (DPAP)—कार्यक्रम वर्ष 1974-75 से प्रारम्भ किया गया था । इससे रोजगार व आय में वृद्धि होती है एवं सूखे के प्रभाव को कम करना सम्भव होता है । प्रारम्भ में यह कार्यक्रम पश्चिमी राजस्थान के 8 जिलों तथा बाँसवाड़ा व डूँगरपुर क्षेत्र में लागू किया गया था । लेकिन धीरे-धीरे यह 13 जिलों के 79 खण्डों में फैला दिया गया । 1982-83 में केन्द्रीय सरकार ने एक दल की सिफारिश के आधार पर इसे 61 खण्डों में समाप्त कर दिया तथा बाद में यह केवल 38 विकास खण्डों में ही जारी रखा गया ।

1974-75 से 1978-79 तक इसके व्यय का 2/3 अंश केन्द्रीय सरकार तथा 1/3 अंश राज्य सरकार द्वारा वहन किया गया था । 1979-80 में 50-50 प्रतिशत भार दोनों सरकारों के द्वारा वहन किया जा रहा है । मार्च 1985 तक लगभग 77 करोड़ रुपये विभिन्न योजनाओं पर व्यय किए गए थे । 1985-86 में केन्द्र सरकार से प्राप्त स्वीकृति के आधार पर सवाई माधोपुर, टोंक, झालावाड़ व कोटा जिलों के 12 विकास खण्डों में यह कार्यक्रम लागू किया गया था । इस प्रकार सातवीं योजना में 8 जिलों के कुल 30 विकास खण्डों में (DPAP) कार्यक्रम संचालित किया गया और इस पर 23.78 करोड़ रुपये व्यय किए गए । 2003-04 में (DPAP) के अन्तर्गत 25.23 करोड़ रु. प्राप्त किये गये, जिसके तहत 28.21 करोड़ रु. काम में लिए गये । इस कार्यक्रम के माध्यम से भू-संरक्षण, सिंचाई, वृक्षारोपण व चरागाह विकास के कार्य संचालित किए जाते हैं । **वर्तमान में यह कार्यक्रम 11 जिलों में क्रियान्वित किया जा रहा है ।**

(2) मरुस्थलीय विकास कार्यक्रम (DDP) 1977-78 से केन्द्र सरकार की शत-प्रतिशत सहायता से यह कार्यक्रम प्रारम्भ किया गया था । 1979-80 से केन्द्र व राज्य

इसमें 50-50 प्रतिशत व्यय करने लगे थे। 1985-86 से पुनः इसका सम्पूर्ण व्यय-भार केन्द्र द्वारा वहन किया जाने लगा है। यह कार्यक्रम 16 मरुस्थलीय जिलों के 85 विकास-खण्डों में क्रियान्वित किया जा रहा है। 31 मार्च 2000 तक 841 वाटरशेड प्रोजेक्ट पूरे किए जाने का लक्ष्य रखा गया, जिनके लिए शत-प्रतिशत सहायता केन्द्रीय सरकार की रही है। 1 अप्रैल 1999 से नए प्रोजेक्टों के लिए केन्द्र का अंश 75% व राज्यों का 25% रखा गया है, और 4 वर्षों में 'मरुस्थलीकरण का मुकाबला' करने के लिए 97.50 करोड़ रुपए की राशि का प्रावधान किया गया है।

इस कार्यक्रम के अन्तर्गत कृषि, मरुस्थलीय वन, भू-जल, चारा विकास, पशु, जल-सप्लाई व ग्रामीण विद्युतीकरण आदि कार्यक्रम आते हैं। आरम्भ से मार्च 1985 तक लगभग 73 करोड़ रुपये व्यय किए गए। सातवीं योजना में (1985-90) इस कार्यक्रम के लिए केन्द्र ने 147 करोड़ की धनराशि आवंटित की थी। इस क्षेत्र में प्रति व्यक्ति विनियोग की राशि 109 रुपये रही। 2003-04 में इस कार्यक्रम के लिए लगभग 128.56 करोड़ रु. प्राप्त हुए, जबकि व्यय की राशि 110.44 करोड़ रु. रही। बाह्य संस्थाओं से वित्तीय सहायता लेने का प्रयास किया गया है। इसमें इजराइल से तकनीकी सहयोग लेने का प्रयास प्रमुख माना जाता है।

सूखे की स्थिति का सामना करने के लिए दीर्घकालीन नीति (Long Term Policy)

सरकार ने सूखे की स्थिति का सामना करने के लिए अकाल राहत कार्य चालू करने की नीति अपनाई है तथा सूखा संभाव्य तथा मरु विकास कार्यक्रम आदि अपनाए हैं। लेकिन इस समस्या को स्थायी रूप से हल करने के लिए दीर्घकालीन उपायों की आवश्यकता है। इनका विवेचन नीचे किया जाता है—

(1) **विस्तृत क्षेत्र में सिंचाई की व्यवस्था**—सिंचाई के विस्तार से ही अकालों पर विजय प्राप्त की जा सकती है तथा कृषिगत उत्पादन की अस्थिरता कम की जा सकती है। राज्य में भूजल विकास की सम्भावनाओं का अधिक उपयोग किया जाना चाहिए। इसके अलावा इन्दिरा गाँधी नहर परियोजना को प्रत्येक दृष्टि से शीघ्र पूरा किया जाना चाहिए, जैसे नहर के दूसरे चरण के संशोधित रूप को पूरा करना, कमांड क्षेत्र विकास कार्यक्रम लागू करना तथा अन्य कार्य पूरे करना, ताकि उनके लाभ आम आदमी तक शीघ्र पहुंच सकें। इसके लिए प्रशासन को सुदृढ़ करना होगा।

इन्दिरा गाँधी नहर से होने वाले लाभों के संबंध में अमृत नाहटा का मत है कि इससे अकाल का स्थाई हल निकल सकता है; बशर्ते कि इसके अन्तर्गत आने वाले क्षेत्र में पशु-पालन, फलों के वृक्षों, फूलों तथा सब्जी का विकास किया जाए, क्योंकि इस क्षेत्र में कृषि का विकास करना उपयुक्त नहीं होगा। उनका मत है कि यदि इंदिरा गाँधी नहर प्रदेश में पशु-पालन, बागवानी, उद्योग-धंधे व दस्त-कारियों का विकास किया जाए तो वे कृषि के मुकाबले ज्यादा आर्थिक लाभ दे सकते हैं और उस प्रदेश के लोगों का अधिक

रोजगार मिल सकता है तथा उनकी आमदनी बढ़ सकती है ।[1] कुछ इंजीनियरों व विशेशज्ञों ने नाहटा के मत का समर्थन नहीं किया है । उनका कहना है कि इंदिरा गाँधी नहर क्षेत्र में कृषिगत फसलों की पैदावार भी बढ़ायी जा सकती है और बढ़ायी जानी चाहिए । भूमि की लवणता व जल-प्लावन की समस्या का समाधान निकाला जाना चाहिए ।

(2) सिंचित क्षेत्र में उत्तम जल-व्यवस्था—सिंचित क्षेत्रों में जल की उत्तम व्यवस्था की जानी चाहिए ताकि सिंचाई से सर्वोत्तम लाभ प्राप्त किए जा सकें । पानी के निकास की व्यवस्था ठीक प्रकार से होनी चाहिए ताकि पानी के अभाव में क्षारयुक्त भूमि की समस्या उत्पन्न न हो । जल का वितरण सही ढंग से होना चाहिए ताकि उस क्षेत्र के सभी कृषक ज्यादा से ज्यादा लाभान्वित हो सकें ।

(3) अकाल राहत कार्यों का अर्थव्यवस्था के समस्त क्षेत्रों के साथ प्रभावी समन्वय—योजना में शामिल विभिन्न ग्रामीण विकास कार्यक्रमों, सामान्य राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रमों, अकाल राहत कार्यक्रमों, पंचायतों के विभिन्न विकास कार्यक्रमों तथा अन्य विकास कार्यक्रमों में परस्पर प्रभावपूर्ण तालमेल स्थापित किया जाना चाहिए ताकि उत्पादक सामुदायिक परिसम्पत्तियों के निर्माण में तेजी लाई जा सके । भविष्य में विकेन्द्रित नियोजन को अपनाकर रोजगार बढ़ाने के कार्यक्रम लागू किए जाने चाहिए । इससे प्रत्येक आर्थिक क्षेत्र का विकास होगा ।

(4) लूनी नदी के क्षेत्र (बेसिन) का भी विकास किया जाना चाहिए । यह मरु-प्रदेश की मुख्य नदी है तथा कच्छ की खाड़ी में गिरती है । यदि सिंचाई, वृक्षारोपण, भू-संरक्षण व गाँवों में सड़क व भवन निर्माण के कार्यों को सफल बनाया जा सका तो राजस्थान में ग्रामीण जनता की खुशहाली बढ़ सकती है । लूनी जल-ग्रहण-क्षेत्र के विकास हेतु अलग से एक योजना तैयार की जा रही है । पूर्व में लूनी बेसीन परियोजना के लिए एक 200 करोड़ रु की स्कीम एफ डब्ल्यू. जर्मन मिशन को वित्तीय सहायता के लिए भेजी गई थी । अब समय आ गया है जब हम जिला व खण्ड स्तर पर विकास के विभिन्न स्पष्ट, व्यावहारिक व लाभकारी कार्यक्रम संचालित करके राज्य के विभिन्न प्रदेशों की अर्थ-व्यवस्था को अकाल से मुक्त कर सकते हैं । इसके लिए व्यापक ग्रामीण जन सहयोग की शर्त भी स्वीकार करनी होगी ।

(5) अकाल राहत केन्द्रों में मजदूरों की उपस्थिति के 'मस्टर-रोल' ठीक से बनाए जाने चाहिए । उनमें मन-माने नाम भर कर रकम हड़पने से समाज को कोई लाभ नहीं हो सकता । अकाल राहत कार्यों में स्कूल, डिस्पेन्सरी, सड़क आदि का निर्माण किया जाना चाहिए । राहत केन्द्रों की व्यवस्था में सुधार करने से लोगों की रोटी-रोजी की समस्या एक साथ हल हो सकती है । इसलिए अकाल राहत कार्यों में प्रशासनिक कार्यकुशलता बढ़ाई जानी चाहिए । इनके सम्बन्ध में आए दिन विभिन्न प्रकार की अनिय- मितताओं व कमियों के समाचार मिलते रहते हैं, जिससे अकाल से प्रभावित लोगों को पूरी राहत नहीं मिल पाती । अकाल राहत कार्यों पर व्यय करने से लोगों को

1 अमृत नाहटा, **नहर में निहित है अकाल का स्थाई हल**, राज पत्रिका में लेख 8 मई व 9 मई 2000

रोजगार देने, पशुधन को बचाने, चारा उपलब्ध कराने, पेयजल पहुँचाने, कुपोषण व बीमारियों से बचाने तथा कृषिगत क्षेत्र के विकास में योगदान दिया जाता है। अतः इस धनराशि का सर्वोत्तम उपयोग करके अकालग्रस्त लोगों को सर्वाधिक लाभ पहुँचाया जाना चाहिए।

(6) मरुक्षेत्र में बालू के टीलों का स्थिरीकरण (Stabilisation of sanddunes) करने के लिए कूचा लगाना चाहिए जो मिट्टी को उड़ने से रोकता है। चारे के वृक्षों (fodder-trees) जैसे खेजड़े का वृक्षारोपण बढ़ाया जाना चाहिए। इसे राजस्थान का 'कल्पतरू' कहा गया है। इसकी लोंग, सांगरी व लकड़ी बहुत काम की होती है। बेर की झाड़ी, बेर का फल, पशुओं के लिए पाला व बाड़ के कांटे देती है। रोहिड़ा वृक्ष भी टिम्बर की दृष्टि से विशेष महत्त्व रखता है। मोठ व ग्वार के पत्तों का चारा बनता है।

अतः अब ऐसी विधियाँ निकाली गई हैं जिनसे हम मरुस्थल में शीघ्र व कम व्यय से पेड़ों व चरागाहों का विकास करके अकाल व सूखे की दीर्घकालीन समस्या का हल निकाल सकते हैं। लेकिन इसके लिए राजनीतिक व सामाजिक इच्छा-शक्ति की विशेष आवश्यकता है, जिसके बिना ठोस प्रगति का वातावरण नहीं बन सकता। हमें व्यर्थ पड़ी भूमि का सदुपयोग करने में विलम्ब नहीं करना चाहिए। इसके लिए आवश्यकतानुसार विदेशों से तकनीकी व वित्तीय सहयोग भी लिया जाना चाहिए।

(7) ग्रामीण क्षेत्रों में गैर-कृषि कार्यकलापों के विस्तार की आवश्यकता—गाँवों में कुटीर व लघु उद्योगों का विकास करना भी अकालों का सामना करने की दीर्घकालीन नीति के अन्तर्गत लिया जा सकता है। इससे ग्रामीण जनता की आमदनी में अधिक स्थिरता व सुनिश्चितता आती है, जिससे वे अकाल की भीषण स्थिति में भी अपने कार्यों को जारी रख सकते हैं। यदि लोग-बाग सदैव कृषि पर निर्भर करते हैं, अथवा बेरोजगार रहते हैं तो उनकी अकालों का सामना करने की क्षमता कमजोर हो जाती है इसलिए ग्रामीण अर्थव्यवस्था में गैर-कृषिगत कार्यों में रोजगार बढ़ाया जाना चाहिए।

राजस्थान में लघु पैमाने पर खनन-उद्योग, खनिज पदार्थ-आधारित उद्योग, हथकरघा, विविध ग्रामीण उद्योगों तथा दस्तकारियों आदि का विकास करके ग्रामीण अर्थ-व्यवस्था को सशक्त किया जाना चाहिए। जिस सीमा तक ग्रामीण क्षेत्रों में गैर-कृषि कार्य-कलापों का विस्तार होगा, उस सीमा तक लोगों की अकाल व सूखे की दशाओं का सामना करने की आर्थिक व वित्तीय क्षमता भी बढ़ेगी।

जैसा कि पहले बतलाया जा चुका है, अकाल के समय सबसे बड़ा संकट पेयजल का होता है। राजस्थान में जल का नितान्त अभाव है और वर्षा न होने पर या कम होने पर यह संकट गहरा हो जाता है। आज भी राजस्थान का ग्रामवासी यह मानता है कि वर्षा न होने पर सरकार भी क्या कर सकती है। (देहाती भाषा में, 'राम रूठग्यो तो राज कांई कर लेसी')। अतः मुख्य समस्या पानी के अभाव को दूर करने की है। भूमि के नीचे जल-स्तर निरन्तर अधिक नीचे जाता जा रहा है। निजी स्वार्थों के वशीभूत होकर नदी-नालों पर व्यक्तिगत तौर पर छोटे बाँध व एनीकट बनाए जा रहे हैं। नदियों के पास के क्षेत्रों से अवैध रूप से पानी

निकाला जा रहा है। कहीं-कहीं पाइपें काट कर पानी निकाल लिया जाता है। बूस्टरों का प्रयोग करने से जल संकट गहरा हो जाता है। प्रायः यह भी देखने में आता है कि खराब पड़े हैण्ड पम्पों की जल्दी से मरम्मत नहीं हो पाती। विद्युत की आपूर्ति में बाधा पड़ने से पानी की सप्लाई नियमित नहीं हो पाती। नहरों का पानी अन्तिम छोर (टेल) के किसानों को नहीं मिल पाता और ऊपरी छोर (हैड) के किसान जरूरत से ज्यादा पानी खींच लेते हैं। इस प्रकार कई किस्म की अनिय-मितताओं व गड़बड़ियों ने अकाल की समस्या को अधिक जटिल बना दिया है। अतः इन सबको हल करना नितान्त आवश्यक है, जिससे उचित राहत मिल सकती है। **अधिकांश विशेषज्ञों की यह राय है कि उचित ढंग से जल-संग्रहण, जल-संरक्षण व जल-प्रबंधन** (water-harvesting, water-conservation and water-management) **से ही अकालों से संघर्ष करने में मदद मिल सकती है।** इसके लिए ग्राम-पंचायतों में कर्मचारियों को आवश्यक प्रशिक्षण देकर जल-प्रबंध के लिए तैयार करना चाहिए। इसमें NGOs की भी मदद ली जा सकती है। इसके अलावा, बरसात के जल को रोकने के लिए परम्परागत प्रणालियों जैसे कुएँ, बावड़ी, चेक-बांध, तालाब, टांकों, आदि का उपयोग भी बढ़ाना चाहिए ताकि जल-संकट के समय स्थिति का मुकाबला करने में मदद मिल सके।

इस प्रकार अल्पकालीन व दीर्घकालीन उपायों में उचित तालमेल स्थापित करके सूखे की दशाओं का सामना किया जा सकता है। इस दिशा में अधिक सचेष्ट व सजग रहने की आवश्यकता है।

नवें वित्त आयोग की सिफारिशों के आधार पर 1990-95 के पाँच वर्षों में अकाल राहत कार्यों के लिए राज्य को भारत सरकार से कुल 465 करोड़ रुपया ही उपलब्ध किया गया (620 करोड़ रुपये का 75 प्रतिशत अंश)। शेष 25% राज्य सरकार को देना पड़ा था। लेकिन 1987-88 के अकाल में इससे ज्यादा राशि (622 करोड़ रुपये) एक ही वर्ष में अकाल-राहत पर खर्च की गई थी। **अतः सरकार के समक्ष अकाल राहत कार्यों के लिए धनराशि का नितान्त अभाव पाया जाता है।** योजना के विकास-कार्यों व अकाल-राहत कार्यों में परस्पर उचित तालमेल बैठाकर अभावग्रस्त क्षेत्रों में ज्यादा से ज्यादा रोजगार उपलब्ध कराया जाना चाहिए।

दसवें वित्त आयोग ने 1995-2000 की अवधि में विपदा राहत-कोष (Calamity Relief Fund) (CRF) के तहत राजस्थान को 706.89 करोड़ रु. हस्तान्तरित किए थे। राज्य के लिए कुल कोष 945.52 करोड़ रु. का रखा गया, जिसका 75% केन्द्र द्वारा तथा 25% राज्य सरकार द्वारा दिया गया। एक राष्ट्रीय विपदा-राहत कोष (National Fund For Calamity Relief) (NFCR) 700 करोड़ रु. का अलग से बनाया गया जिसमें प्रारम्भिक राशि 200 करोड़ रु. रखी गई। (150 करोड़ रु. केन्द्र द्वारा और 50 करोड़ रु. राज्यों द्वारा) तथा 1995-96 से 1999-2000 तक के पाँच वर्षों में प्रतिवर्ष केन्द्र ने 75 करोड़ रु. और सभी राज्य सरकारों ने मिलकर 25 करोड़ रु. देने का निर्णय लिया। इस राशि का उपयोग

अधिक तीव्र किस्म की प्राकृतिक विपदा की स्थिति का मुकाबला करने में किया जाना था। अब इसका नाम राष्ट्रीय-आकस्मिक-आपदा-कोष [National Contingency Calamity Fund (NCCF)] रखा गया है।

आजकल अकाल व सूखे की स्थिति में राहत कार्यों पर व्यय की जाने वाली राशियाँ काफी बढ़ गई हैं। अतः भविष्य में अकाल राहत कार्यों के लिए सरकारी सहायता के साथ-साथ व्यक्तिगत व सार्वजनिक संस्थाओं की सहायता की भी जरूरत रहेगी। इस कार्य में सभी का सहयोग वांछनीय होगा।

प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. राज्य में 31 जिलों में अकाल व सूखे की स्थिति किस वर्ष रही ?
   (अ) 1997-98 (ब) 2000-2001
   (स) 1987-88 (द) 1988-89 (ब)
2. राज्य में अकाल व सूखे से सबसे ज्यादा गाँव कब प्रभावित हुए ?
   (अ) 2002-03 (ब) 2000-01
   (स) 1991-92 (द) 1995-96 (अ)
3. अकाल की समस्या का दीर्घकालीन समाधान है—
   (अ) सिंचाई के साधनों का विकास
   (ब) योजनाओं में गाँवों में स्थायी परिसम्पत्तियों के निर्माण पर अधिक बल,
   (स) मरुक्षेत्र को आगे बढ़ने से रोकने के उपाय,
   (द) इन्दिरा गाँधी नहर परियोजना को पूरा करना,
   (ए) सभी। (ए)
4. किन कार्यक्रमों का अकाल-राहत से सीधा सम्बन्ध है ?
   (अ) सूखा-सम्भाव्य क्षेत्रीय कार्यक्रम,
   (ब) मरु विकास कार्यक्रम,
   (स) एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम,
   (द) सभी। (अ व ब)
5. 'त्रिकाल' का सम्बन्ध है—
   (अ) बेरोजगारी, पानी व अनाज,
   (ब) अन्न, चारा व पानी,
   (स) आमदनी का अभाव, अनाज व पानी,
   (द) चारा, बेकारी व अनाज। (ब)

6. राजस्थान में बारम्बार होने वाले 'सूखे एवं अकाल' का प्रमुख कारण है—

(अ) वनों का अवक्रमण (ब) जल का अविवेकपूर्ण उपयोग

(स) अनियमित वर्षा (द) भूमि का कटाव (स)

[RAS, 1999]

अन्य प्रश्न

1. राजस्थान में अकाल के कारणों का विवेचन कीजिए। राज्य में इस समस्या को हल करने हेतु सरकार द्वारा किए गए प्रयासों का वर्णन कीजिए।
2. राजस्थान में 'अकाल व सूखे' की समस्या का वर्णन कीजिए और समस्या के समाधान के लिए अपनाए गए सरकारी प्रयासों का वर्णन कीजिए।
3. सूखे की दशाओं का सामना करने के लिए अल्पकालीन उपायों की विवेचना कीजिए।
4. राजस्थान में अकाल—"कारण व समाधान" पर एक संक्षिप्त आलोचनात्मक निबन्ध लिखिए।
5. राजस्थान में सूखे और अकाल की समस्या के स्वरूप और इसके समाधान हेतु किए गए उपायों की विवेचना कीजिए।
6. राजस्थान में सूखे एवं अकाल की गम्भीरता का वर्णन कीजिए तथा राज्य सरकार द्वारा सूखे एवं अकाल की समस्या के हल हेतु अपनाई अल्पकालीन एवं दीर्घ-कालीन नीति का वर्णन कीजिए।

12

पशु-पालन-पशुधन का महत्त्व
(Animal Husbandry-Importance of Livestock)

राजस्थान की ग्रामीण अर्थव्यवस्था में कृषि व पशुपालन एक ही धुरी के दो पहियों की भाँति माने गए हैं। **कृषि पशु-पालन पर निर्भर है तो पशुपालन कृषि पर।** इनकी परस्पर निर्भरता समस्त भारत में अपना महत्त्व रखती है, लेकिन राजस्थान के सन्दर्भ में वह ज्यादा प्रबल व प्रभावी मानी जा सकती है। राजस्थान पशु-सम्पदा में काफी सम्पन्न व विकसित श्रेणी का माना गया है। पशुधन की राज्य की अर्थव्यवस्था में महत्त्वपूर्ण भूमिका है। शुष्क व अर्द्धशुष्क क्षेत्रों में लगातार सूखे व अकाल की दशाओं के कारण जीवनयापन में पशुधन का विशेष सहयोग प्राप्त होता है।

पशुपालन से राज्य की सकल घरेलू उत्पत्ति में लगभग 9% का योगदान प्राप्त होता है।[1] अन्य सूचक, जो भारतीय सन्दर्भ में राजस्थान के पशुधन की महत्ता को दर्शाते हैं, इस प्रकार हैं—

(*i*) राजस्थान में देश के कुल दुग्ध उत्पादन (Milk Production) का अंश लगभग 10%,

(*ii*) राज्य के पशुओं द्वारा भार-वहन शक्ति (draft power) 35%,

(*iii*) भेड़ के माँस में राजस्थान का भारत में अंश 30%,

(*iv*) ऊन में राजस्थान का भारत में अंश 40%,

(*v*) वर्तमान में राज्य में भेड़ों की संख्या समस्त भारत की संख्या का लगभग 25% है।

राजस्थान में दूध व दूध से बने पदार्थ, ऊन, मांस, चमड़ा आदि उद्योगों का आधार पशुधन है। राज्य में पशुधन में काफी वृद्धि होती रही है, जो अगली तालिका से स्पष्ट हो जाती है। **1997 की पशु-संगणना (Livestock census) के अनुसार राज्य में पशुओं की संख्या 543.5 लाख आंकी गई है। यह 1992 में 477.7 लाख रही है। इस प्रकार 1992-97 की अवधि में पशुओं की संख्या में 65.8 लाख की वृद्धि हुई है।**

1. Economic Review 2003-04, p. 51.

आगे की तालिका से स्पष्ट होता है कि 1988 में 1983 की तुलना में पशुओं की संख्या में भारी गिरावट आई थी। बार-बार पड़ने वाले सूखे की दशाओं ने राज्य के पशुधन को भारी क्षति पहुँचाई है। 1983-88 की अवधि में कई बार भयंकर सूखे पड़े हैं। 1987-88 का सूखा सबसे अधिक भीषण रहा है। परिणामस्वरूप इस अवधि में गौवंश के पशुओं की संख्या में 19.2%, बकरियों की संख्या में 18 7% तथा भेड़ों की संख्या में 26 2% की भारी गिरावट आई थी। इसी अवधि में ऊँटों की संख्या में भी 4 6% की कमी हुई, लेकिन भैंस-जाति के पशुओं में 4 9% की वृद्धि हुई थी। कुल मिलाकर 1983 में पशुओं की संख्या 4.97 करोड़ से घटकर 1988 में 4.09 करोड़ रह गई थी, जो वास्तव में एक भारी क्षति की सूचक थी। राज्य में कुल पशुधन में भेड़-बकरी की संख्या 50% से अधिक पाई जाती है। 1992 की पशु-गणना के अनुसार राज्य में पशुओं की संख्या 4 78 करोड़ रही जो 1988 की तुलना में अधिक थी। 1997 में यह बढ़कर 5 47 करोड़ हो गई, जिसका विभिन्न पशुओं के अनुसार वितरण इस प्रकार रहा।[1]

1997 में विभिन्न प्रकार के पशुओं की संख्या

गौवंश अथवा गाय बैल (Cattle)	1 21 करोड़
भैंस जाति के	97 7 लाख
भेड़ जाति के	1 46 करोड़
बकरी जाति के	1 70 करोड़
शेष ऊँट, घोड़े, गधे, सुअर आदि	12 लाख

इस प्रकार संख्या की दृष्टि से पशुओं में गाय-बैल (Cattle) तथा भेड़-बकरी व भैंस जाति के पशुओं का स्थान काफी ऊँचा है। आर्थिक दृष्टि से भी इनके महत्व की अधिक चर्चा की जाती है।

विभिन्न वर्षों में पशुओं की संख्या निम्न तालिका में दर्शाई गई है—

1951-1997 के बीच पशुओं की संख्या में परिवर्तन[2]

वर्ष	पशुधन (संख्या लाखों में)
1951	246 4
1961	345 [illegible]
1972	386 8
1977	411 6
1983	496 5
1988	409 0
1992	477 7
1997	546 7

1. Some Facts About Rajasthan 2003, DES part I, p. 17.
2. Agricultural Statistics of India, 1973-74 to 1997-98, Feb. 1999, p.104

तालिका से स्पष्ट होता है कि 1997 में पशुओं की संख्या में 1992 की तुलना में 69 लाख की वृद्धि हुई। राज्य में 1997 में गौवंश के पशु लगभग 1.21 करोड़, भेड़ जाति के पशु 1.46 करोड़ तथा बकरी-जाति के पशु 1.70 करोड़ पाये गए। वर्ष 2000 व 2001 के अकालों में काफी संख्या में पशु चारे-पानी के अभाव में मौत के मुँह में चले गए हैं, जिससे राज्य के पशु-धन को भारी क्षति पहुँची है।

राजस्थान में गौ-वंश के पशुओं (Cattle) में गिर, राठी व थारपारकर नस्लें दूध के उत्पादन की दृष्टि से, नागौरी व मालवी बैल की दृष्टि से तथा हरियाणा व कांकरेज नस्लें दोनों दृष्टियों से (उत्तम बैल व अधिक मात्रा में दूध) महत्त्व रखती हैं। इनसे सम्बन्धित प्रमुख जिले व स्थान इस प्रकार हैं—

गिर—अजमेर, किशनगढ़ (तहसील), चित्तौड़गढ़, भीलवाड़ा, बूँदी।

राठी—श्रीगंगानगर, बीकानेर तथा जैसलमेर के कुछ भाग।

थारपारकर—बीकानेर, जोधपुर, जैसलमेर व बाड़मेर जिलों के कुछ भाग।

नागौरी—नागौर तथा पास के क्षेत्र।

मालवी—डूँगरपुर, बाँसवाड़ा व झालावाड़—मध्य प्रदेश की सीमा से लगे जिले।

हरियाणा—चूरू, झुंझुनूं, सीकर जिले।

कांकरेज—ये सांचोर की श्रेणी में भी आते हैं। जालौर, सिरोही, पाली तथा बाड़मेर के कुछ भागों में पाए जाते हैं।

राज्य में भैंस की मुर्रा (Murrah) नस्ल दूध के उत्पादन की दृष्टि से महत्त्व रखती है। इनके प्रमुख जिले जयपुर, उदयपुर, अलवर व गंगानगर हैं। राजस्थान में 1989-90 में 42 लाख टन दूध का उत्पादन हुआ था जो बढ़कर 1996-97 में 54.5 लाख टन हो गया। भविष्य में दूध का उत्पादन बढ़ाने के लिए पशु-नस्ल में सुधार करना होगा।

भेड़-पालन—राज्य में 1997 में भेड़ों की संख्या 1.46 करोड़ थी जो 1992 की तुलना में 17.2% अधिक थी। 1997 में राजस्थान में भेड़ों की संख्या समस्त भारत का लगभग 25% अंश थी।

ये कठोर पर्यावरण को भी सहन कर सकती हैं, इसलिए शुष्क व अर्द्धशुष्क क्षेत्रों में फसल-उत्पादन से भी भेड़-पालन ज्यादा लाभकारी व्यवसाय माना जाता है। ये राज्य की जल-वायु व आर्थिक दशाओं के अधिक अनुकूल मानी जाती हैं। राज्य की बहुआयामी अर्थ-व्यवस्था में इनका स्थान काफी ऊपर आता है। लगभग 2 लाख परिवार भेड़-पालन में लगे हैं और लगभग इतने ही परिवार ऊन-प्रोसेसिंग की क्रियाओं में संलग्न हैं।

राज्य में भेड़ों की आठ नस्लें पाई जाती हैं—चोकला, मगरा, नाली, पूगल, जैसलमेरी, मारवाड़ी, मालपुरा व सोनाड़ी। **चोकला भेड़ का ऊन मध्यम फाइन किस्म का होता है।** मगरा का ऊन मध्यम श्रेणी का होता है, जो गलीचा बनाने में उसकी चमक, मजबूती, आदि के लिए पसन्द किया जाता है। मारवाड़ी का ऊन मध्यम व मोटी किस्म का होने के कारण गलीचा बनाने में उपयुक्त रहता है। सूखा प्रभावित व मरु क्षेत्रों में कमजोर वर्ग के व्यक्तियों के लिए भेड़-पालन रोजगार का महत्त्वपूर्ण साधन माना जाता है। अन्य भागों में यह सहायक

धंधे के रूप में अपनाया जाता है। राज्य से लाखों भेड़ें प्रतिवर्ष अन्य राज्यों व विदेशों को भेजी जाती हैं। इनमें प्रमुख किस्म की भेड़ों के क्षेत्र इस प्रकार हैं—

चोकला—सीकर, झुंझुनूं (शेखावाटी क्षेत्र)।

मगरा—बाड़मेर व जैसलमेर जिले।

नाली—राज्य के उत्तर-पश्चिम में बीकानेर, श्रीगंगा नगर आदि में।

पूगल—बीकानेर, जैसलमेर व नागौर के कुछ भागों में।

जैसलमेरी—जैसलमेर जिले में।

मारवाड़ी—जोधपुर, पाली, नागौर व बाड़मेर जिलों में आधी भेड़ें इसी नस्ल की हैं।

मालपुरा—जयपुर व आस-पास के क्षेत्रों में।

सोनाड़ी—ये राज्य के दक्षिण-पूर्व में टोंक, बूँदी, कोटा व झालावाड़ क्षेत्रों में पाई जाती हैं। देशी भेड़ों की नस्ल में 'खेरी' नस्ल को भी शामिल किया जाता है।

बकरी की नस्लें—राज्य में 1997 में बकरी-जाति के पशुओं की संख्या 1.69 करोड़ थी जो 1992 की तुलना में लगभग 12% अधिक थी। बकरियों की नस्लों में जमनापुरी, बरबारी, सिरोही, लोही व मारवाड़ी उल्लेखनीय हैं। इनका दूध, माँस व बाल आर्थिक दृष्टि से महत्त्व रखते हैं।

पशु-पालन का शुष्क व अर्द्ध-शुष्क प्रदेशों (arid and semiarid zones) में महत्त्व—राज्य में अरावली पर्वतमाला के पश्चिम में (राज्य का उत्तर-पश्चिमी भाग) मरुस्थलीय प्रदेश कहलाता है। इसमें 11 जिले हैं जिनमें राज्य के कुल क्षेत्रफल का लगभग 61% भाग आता है। इसके छः जिले—श्रीगंगानगर, बीकानेर, जैसलमेर, चूरू, जोधपुर व बाड़मेर हैं, जिनमें राज्य का 45% क्षेत्रफल समाया हुआ है, और इनमें वर्षा औसतन 20 से 35 सेमी. ही होती है। यह शुष्क प्रदेश (arid zone) कहलाता है, हालांकि इसके श्रीगंगानगर जिले में सघन सिंचाई होती है, फिर भी यह शुष्क पश्चिमी क्षेत्र में ही आता है। जैसलमेर जिले में वर्षा का औसत 10 सेमी. से भी कम है। शेष 5 जिलों का क्षेत्रफल 16% है, जिसमें झुंझुनूं, सीकर, नागौर, पाली व जालौर जिले आते हैं। इनमें वर्षा सामान्यत: 35 से 50 सेमी. के बीच होती है। यह अर्द्ध-शुष्क प्रदेश (Semi-arid zone) कहलाता है।

1997 के अनुमानों के अनुसार पाली जिले में भेड़ों की संख्या 13.7 लाख, जोधपुर जिले में 15.6 लाख व नागौर जिले में 11.7 लाख आंकी गई है। बाड़मेर जिले में 15.1 लाख, भीलवाड़ा जिले में 8.5 लाख व बीकानेर जिले में 11.5 लाख भेड़ें आंकी गई हैं। 1997 में गौ-वंश के पशुओं (Cattle) की सर्वाधिक संख्या 9.7 लाख उदयपुर जिले में थी जब कि भैंस-जाति के पशुओं (Buffalo) की सर्वाधिक संख्या 7.67 लाख जयपुर जिले में थी तथा दूसरा स्थान अलवर जिले का रहा जहाँ यह 7.58 लाख थी।[1]

1 Basic Statistics 2002, Raj. DES, November 2002, p 88

इन 11 जिलों की जो मरु जिले (शुष्क व अर्द्ध-शुष्क सहित) कहलाते हैं, प्राकृतिक विशेषताएँ इस प्रकार हैं—कम व अनिश्चित वर्षा, बालू के टीले, धूलभरी आँधियाँ, गर्मी व सर्दी के तापक्रम में भारी अन्तर, भू-क्षरण व मिट्टी का कटाव (बालू का उड़कर अन्य स्थानों में जाना), जल-सतह काफी नीचे जा रहा है, कई स्थानों पर खारा पानी (brakish water), कठोर जीवन, भूतल व सतह के जल का अभाव, बार-बार सूखा व अकाल, पहुँचने में दिक्कतें, लम्बी दूरियाँ व ऊँचा वाष्पायन (high evaporation) व जीवन के प्रत्येक कदम पर भारी चुनौतियाँ।

राज्य के शुष्क व अर्द्ध-शुष्क प्रदेशों में निम्न कारणों से पशु-पालन का विशेष महत्त्व है—

(1) भीलवाड़ा व जैसलमेर जिलों में शुद्ध कृषित क्षेत्रफल कुल रिपोर्टिंग क्षेत्रफल का कम अंश पाया जाता है। इसलिए इनमें पशु-पालन स्वतंत्र रूप में विकसित हुआ है ताकि लोगों को रोजगार मिल सके। भीलवाड़ा जिले में शुद्ध कृषिगत क्षेत्रफल कुल क्षेत्रफल का 2001-02 मे 35.4% तथा जैसलमेर जिले मे मात्र 12.7% ही था।[1] बूँदी, धौलपुर, डूँगरपुर, सिरोही, उदयपुर आदि जिलो मे भी शुद्ध कृषित क्षेत्रफल काफी कम पाया जाता है। इसलिए कृषि-कार्यों के अभाव में पशु-पालन का महत्त्व बढ़ जाता है। इन जिलों में बंजर भूमि, कृषि योग्य व्यर्थ भूमि व परती भूमि का कुल क्षेत्रफल में अंश काफी ऊँचा पाया जाता है। दूसरे शब्दों में, व्यर्थ भूमि (wasteland) का अनुपात ऊँचा पाया जाता है। इससे पशु-पालन के माध्यम से जीविकोपार्जन के साधन प्राप्त हो जाते हैं।

(2) राज्य के पश्चिमी भाग में बाजरा, ग्वार आदि मुख्य फसलों की औसत उपज कम होती है। लेकिन इन फसलों के चारे का मूल्य ऊँचा होता है और वह अधिक संख्या में पशुओं का भरण-पोषण कर सकता है। इसलिए इन क्षेत्रों में पशु-पालन लाभकारी माना जाता है।

(3) पशु-पालन में ऊँची आमदनी व रोजगार की सम्भावनाएँ निहित हैं। पशुओं की उत्पादकता को बढ़ाकर आमदनी में वृद्धि की जा सकती है। राज्य के शुष्क व अर्द्ध-शुष्क भागों में कुछ परिवार (विशेषतया लघु व सीमान्त कृषक तथा खेतिहर श्रमिक) काफी संख्या में पशु-पालन करते हैं और इनका यह कार्य वंश-परम्परागत चलता आया है। इन क्षेत्रों में शुद्ध घरेलू उत्पत्ति का ऊँचा अंश पशु-पालन से सृजित होता है। इसलिए मरु अर्थव्यवस्था (desert economy) मूलतः पशु-आधारित है।

(4) जैसा कि पहले कहा गया है कि शुष्क व अर्द्ध-शुष्क प्रदेशों में पशु-पालन का कार्य कृषि से भी उत्तम माना जाता है, क्योंकि इसमें स्थिरता (stability) का विशेष गुण पाया जाता है। **कुछ विशेषज्ञों का मत है कि इंदिरा गाँधी नहर का प्रदेश पशु-पालन के लिए ज्यादा उपयुक्त है।** वहाँ चरागाहों का विकास हो सकता है, पशु-धन से ग्रामीणों की आमदनी बढ़ायी जा सकती है और अकालों का स्थाई समाधान निकाला जा सकता है।

(5) निर्धनता-उन्मूलन कार्यक्रम में भी पशु-पालन की महत्ता स्वीकार की गई है। समन्वित ग्रामीण विकास कार्य-क्रम (IRDP) में गरीब परिवारों को दुधारू पशु देकर

1. Agricultural Statistics Rajasthan 2001-02 (DES January 2004, Jaipur). P. 1.

उनकी आमदनी बढ़ाई जा सकती है। लेकिन इसके लिए चारे व पानी की उचित व्यवस्था करनी होती है तथा लाभान्वित परिवारों को बिक्री की सुविधाएँ भी प्रदान करनी होती हैं।

(6) राज्य के अन्य भागों में पशु-पालन कृषि के साथ किया जा सकता है। अतः आजकल मिश्रित खेती (mixed farming) में कृषि व पशु-पालन दोनों पर एक साथ जोर दिया जाता है। इससे अल्परोजगार (underemployment) की समस्या भी कुछ सीमा तक हल होती है। गैर-परम्परागत ऊर्जा के साधनों पर बल देने से पशुओं का योगदान ऊर्जा की आवश्यकता की पूर्ति में बायो गैस के माध्यम से काफी बढ़ जाता है।

(7) शहरों में आमदनी बढ़ने से दूध व दूध से बने पदार्थों की माँग तेजी से बढ़ रही है और भविष्य में इसके और बढ़ने की सम्भावना है। इससे भी पशु-पालन व डेयरी विकास का महत्त्व बढ़ जाता है।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट होता है कि राजस्थान के शुष्क व अर्द्ध-शुष्क क्षेत्रों में आर्थिक व जलवायु सम्बन्धी कारणों से पशु-पालन का महत्त्व सदैव रहा है। इन क्षेत्रों के लिए भेड़-बकरी पालन का महत्त्व रोजगार व आमदनी के साथ-साथ पारिवारिक पोषण के स्तर को ऊँचा करने की दृष्टि से भी माना गया है। भविष्य में भी पशु-पालन पर पर्याप्त ध्यान देकर राज्य की अर्थव्यवस्था में इनका योगदान बढ़ाया जा सकता है। वर्तमान समय में भी राज्य के कुल दूध-उत्पादन का काफी ऊँचा अंश राज्य के बाहर बिक्री हेतु भेजा जाता है। भविष्य में इसकी मात्रा बढ़ाई जा सकती है। इस प्रकार राजस्थान की अर्थव्यवस्था में, विशेषतया शुष्क व अर्द्धशुष्क क्षेत्रों में, पशु-पालन का विशेष महत्त्व माना गया है। रेगिस्तानी जिलों में लगभग 95% क्षेत्र में एक फसल ही बोई जाती है जो कम वर्षा पर आश्रित होती है। पशु-पालन सूखे की दशाओं में आवश्यक बीमे का काम करता है और आमदनी, रोजगार व पोषण प्रदान करता है।

जहाँ राज्य के मरुस्थलीय क्षेत्र (जो कुल क्षेत्रफल के 61% भाग में फैला है) में पशु-पालन लोगों की जीविका का महत्त्वपूर्ण साधन है, वहाँ जनजाति बाहुल्य पर्वतीय क्षेत्रों में कृषि के छोटे-छोटे भूखण्डों से उत्पन्न कठिन भौगोलिक व आर्थिक परिस्थितियों का मुकाबला करने के लिए एकमात्र विकल्प पशु-पालन ही रह जाता है। अतः राजस्थान में पशु-पालन से आमदनी व रोजगार पर काफी प्रभाव पड़ता है।

सातवीं योजनाकाल में सूखे व अभाव की दशाओं का सबसे अधिक दुष्प्रभाव भेड़-जाति के पशुओं पर पड़ा था, हालांकि भैंस-जाति के पशुओं की संख्या में थोड़ी वृद्धि हुई थी। राज्य में भेड़-बकरी कुल पशुधन के आधे से अधिक है। इनकी संख्या में वृद्धि को रोक कर उत्पादकता बढ़ाने की आवश्यकता है।

राज्य में पशु-पालन व डेयरी विकास का आमदनी, रोजगार व पोषण का स्तर बढ़ाने की दृष्टि से ऊँचा स्थान होने के कारण इस क्षेत्र की विभिन्न समस्याओं को हल करके इसको अधिक कार्यकुशल, अधिक उत्पादक व अधिक आधुनिक बनाने की आवश्यकता है। इसमें भावी विकास की सम्भावनाएँ व्यापक रूप से निहित हैं। विभिन्न क्षेत्रों में सूखे की

दशाओं के कारण पशुओं का अन्य स्थानों को निरन्तर निष्क्रमण (migration) होता रहता है। पशु कुपोषण के शिकार होते रहते हैं, इससे स्वदेशी नस्ल में गिरावट आती गई है और चारे की कमी के कारण लाखों पशु-पालक वर्तमान में इस रुग्ण उद्योग में नीचा जीवन-स्तर भोग रहे हैं। वे कॉमन भूमि पर स्वतंत्र चराई पर निर्भर करते हैं और पशुओं को अपने पास से घटिया किस्म का चारा व घास खिलाने को बाध्य होते हैं। इसलिए पशुओं के लिए पर्याप्त मात्रा में चारे की व्यवस्था करके तथा उनकी नस्ल में सुधार करके इनकी उत्पादकता को बढ़ाने की आवश्यकता है, ताकि यह क्षेत्र भी राज्य की घरेलू उत्पत्ति में अपना योगदान बढ़ा सके।

हम नीचे योजनाकाल में पशु-पालन के विकास से सम्बन्धित अपनाए गए विभिन्न कार्यक्रमों का विवेचन करते हैं।

(1) पशुओं के लिए नस्ल सुधार व चिकित्सा सुविधाओं के कार्यक्रम—राज्य में गहन पशु विकास कार्यक्रम क्रियान्वित किया जा रहा है जिसमें कृत्रिम गर्भाधान (Artificial Insemination) पशुओं के लिए उचित चिकित्सा व्यवस्था तथा खुराक व चारे का विकास किया गया है। बस्सी (जयपुर) में गाय व भैंस के कृत्रिम गर्भाधान के लिए एक केन्द्र स्थापित किया गया है, जहाँ आवश्यक उपकरणों व साधनों की उपलब्धि की गई है। राज्य में मुर्रा नस्ल के भैंसों का अभाव पाया जाता है। इसके लिए कुम्हेर (झालावाड़) में एक फॉर्म हाउस स्थापित करने का कार्यक्रम है क्योंकि उस क्षेत्र में भैंस की संख्या अधिक है। इसलिए वहाँ पाड़ा (Buffalo calf) का विकास किया जाएगा। कृत्रिम गर्भाधान के माध्यम से विदेशी नस्लों का उपयोग राज्य में अवर्गीकृत (non-descript) पशुओं के क्षेत्रों के क्रॉस-प्रजनन (cross breeding) के लिए व्यापक रूप से किया जा रहा है। इसके अलावा उत्तम स्वदेशी नस्लों का उपयोग करके चयनित प्रजनन (Selective breeding) भी बढ़ाया जा रहा है। चयनित प्रजनन में विदेशी नस्ल का उपयोग न करके अपने देश की उत्तम नस्ल का ही उपयोग किया जाता है, जबकि क्रॉस-ब्रीडिंग में विदेशी नस्ल का उपयोग किया जाता है। चयनित प्रजनन कृत्रिम गर्भाधान व स्वाभाविक प्रजनन (Natural breeding) दोनों माध्यमों से किया जाता है। यह स्पष्ट रूप से परिभाषित नस्लों के लिए किया जाता है, जैसे : राठी, थारपारकर, नागौरी, आदि के लिए। दक्षिण के आदिवासी जिलों में भी पशु नस्ल सुधार का काम विदेशी जर्म प्लाज्म व क्रॉस-प्रजनन के अर्द्ध-प्रजनित सांडों (Half-bred bulls) की सहायता से करने का कार्यक्रम है।

स्वदेशी पशुओं की नस्लों में भी सुधार किया जा रहा है ताकि कम उत्पादन करने वाले पशुओं की संख्या कम की जा सके। उनकी गुणवत्ता सुधारी जा सके एवं बेकार के सांडों (Scrub bulls) की संख्या कम की जा सके।

राज्य में राठी, गिर, थारपारकर, कांकरेज तथा नागौरी देशी गौ नस्ल विकास के लिए 5 परियोजनाएँ क्रियान्वित की जा रही हैं। जैसलमेर में थारपारकर नस्ल की गायों के विकास हेतु गौ-संरक्षण संस्थाओं के माध्यम से प्रयास किया गया है। सीमा क्षेत्र विकास कार्यक्रम के अन्तर्गत सीमावर्ती जिलों में प्रथम बार कृत्रिम गर्भाधान का कार्य प्रारम्भ किया गया है ताकि देशी नस्ल के पशुओं में गुणात्मक सुधार किया जा सके।

राज्य में पशु-चिकित्सालय की संख्या में उत्तरोतर वृद्धि होती रही है। 1950-51 में इनकी संख्या 147 थी जो बढ़कर 1960-61 में 255 हो गई। सातवीं योजना व बाद के वर्षों में इनमें वृद्धि की गई है। वर्तमान में राज्य में 12 पशु-पोली-क्लीनिक 175 प्रथम श्रेणी के पशु-अस्पताल, 1238 पशु-अस्पताल, 285 पशु-डिसपेन्सरियाँ व 1727 उप-केन्द्र हैं। इनके अलावा एक पशु-संस्था 15273 पशुओं पर कार्यरत है।[1]

पशुओं में क्रॉस-प्रजनन व चयनित प्रजनन (cross-breeding and selective breeding) के माध्यम से नस्ल-सुधार के प्रयास जारी हैं तथा पशुओं के स्वास्थ्य की देखभाल के प्रयास भी बढ़ाए गए हैं। इससे पशुओं की उत्पादकता में सुधार हो रहा है, जिसके भविष्य में और बढ़ने की आशा है।

गहन पशु-प्रजनन के लिए "गोपाल" कार्यक्रम—यह कार्यक्रम 1990-91 में चालू किया गया था। इसमें गैर-सरकारी संगठन अथवा गाँव के शिक्षित युवक (गोपाल) को उचित प्रशिक्षण देकर उसकी सेवाओं का उपयोग किया जाता है। इसमें विदेशी नस्ल का उपयोग बढ़ाने के लिए गोपाल को क्रॉस प्रजनन के लिए कृत्रिम गर्भाधान की विधि का प्रशिक्षण दिया जाता है। एक क्षेत्र के बेकार सांडों को पूर्णतः बधिया दिया जाता है। पशु-पालकों को इस बात का प्रशिक्षण दिया जाता है कि वे अपने पशुओं को स्टॉल पर किस प्रकार खिलावें और सदैव बाहर चरने की विधि पर आश्रित न हों।

गोपाल की शिक्षा कम से कम आठवीं कक्षा पास अवश्य होनी चाहिए। अनुसूचित जाति व अनुसूचित जनजाति या एकीकृत ग्रामीण विकास परियोजना के व्यक्तियों को वरीयता दी जाती है। इनको 4 महीने का कृत्रिम गर्भाधान का प्रशिक्षण दिया जाता है तथा आवश्यक साज-सामान निःशुल्क उपलब्ध कराया जाता है। चुने हुए व्यक्ति को प्रथम चार महीने के लिए 400 रुपये प्रतिमाह प्रशिक्षण-भत्ता (stupend) दिया जाता है और तत्पश्चात् 8 महीनों के लिए इतनी ही राशि का प्रेरणा-भत्ता दिया जाता है। दूसरे वर्ष में उसे 300 रु. प्रतिमाह भत्ता दिया जाता है तथा गर्भाधान की फीस भी दी जाती है जो सरकार द्वारा निर्धारित होती है। तीसरे वर्ष में उसे 200 रु. मासिक दिया जाता है और बाद में कोई भत्ता नहीं दिया जाता है। दूसरे वर्ष से उसे प्रति बछड़ा (calf) प्रेरणा-राशि दी जाती है, और प्रथम वर्ष में उसे बेकार सांडों को बधियाने पर प्रेरणा-राशि दी जाती है। उसे आवश्यक साज-सामान व सामग्री निःशुल्क दी जाती है। उसे काम पर लगाने से पूर्व 4 वर्ष का बांड भरना होता है। प्रति गोपाल लागत का अनुमान 21 हजार रुपये लगाया गया है। उसको प्रशिक्षण जिला स्तर पर दिया जाता है। इस कार्यक्रम के लिए आठवीं योजना में 3.67 करोड़ रुपये के व्यय का प्रावधान किया गया था।

कार्यक्रम का प्रशासनिक ढाँचा इस प्रकार रखा गया—एक जिले में 4 पंचायत समितियाँ रखी गईं। एक पंचायत समिति में 10 गोपाल संस्थाएँ होती हैं। इस प्रकार राज्य के दक्षिण व

1. Economic Review 2003-04, p. 52.

पूर्वी भाग के 10 जिलों की 40 पंचायत समितियों में 400 गोपाल संस्थाएँ रखी गई हैं। प्रत्येक गोपाल-संस्था या इकाई निम्न कार्यों में भाग लेती हैं—

(i) विदेशी नस्ल का कृत्रिम गर्भाधान,
(ii) बेकार सांडों को बधियाना (Castration of Scrub bulls),
(iii) चारे का विकास,
(iv) प्रबन्ध की विधियों में सुधार,
(v) संतुलन-राशन की बिक्री
(vi) बांझपन के कैम्प (Infertility camps),
(vii) कीट नष्ट करना (डिवॉर्मिंग) (Deworming) व सींग हटाना (डिहोर्निंग) (Dehorning)

आशा है गोपाल योजना से राज्य के पशु-पालन में प्रगति होगी, जिससे राजस्थान में दूध का उत्पादन बढ़ेगा और पशु-पालकों की आमदनी भी बढ़ेगी। वर्तमान में राज्य के दक्षिणी-पूर्वी भागों के 12 जिलों की 40 चुनी हुई पंचायत समितियों में 586 गोपाल कार्यरत हैं। अब कई लाख पशुओं को प्रजनन की सुविधा उपलब्ध है। एक पशुधन सहायक 2 हजार पशुओं को प्रजनन की सुविधा उपलब्ध कराता है। जयपुर, भरतपुर, अलवर व दौसा जिलों में डेयरी विकास कार्यक्रम राजस्थान डेयरी फेडरेशन के सहयोग से संचालित किया जा रहा है। RCDF के साथ 46 गोपाल कार्यरत हैं।

गौशालाओं को उन्नत नस्ल के दुधारू पशुओं के प्रजनन केन्द्र बनाने के लिए "कामधेनु" नाम की एक नई योजना 1997-98 में प्रारम्भ की गई है। इससे कृषि-विकास केन्द्र व सक्षम स्वयंसेवी संस्थाएँ भी लाभ उठा सकेंगी। आगे चलकर चयनित निजी पशुपालकों को भी इस योजना के अन्तर्गत लिया जाएगा। इसके लिए 1997-98 में 50 लाख रु. का प्रावधान किया गया है। (बजट-भाषण, 12 मार्च, 1997)

(2) राज्य में डेयरी विकास कार्यक्रम—डेयरी या दुग्ध विकास नीति के अन्तर्गत राजस्थान सहकारी डेयरी फैडरेशन (Rajasthan Cooperative Dairy Federation) (RCDF) अमूल के नमूने पर राष्ट्रीय डेयरी विकास के सहयोग से राज्य में डेयरी कार्यक्रम संचालित कर रहा है। डेयरी फैडरेशन उपभोक्ताओं को उत्तम किस्म का दूध तथा दूध से बने पदार्थ उपलब्ध कराने में संलग्न है। यह पशुओं के स्वास्थ्य के सुधार, पशु आहार की सुविधा तथा दुग्ध उत्पादकों को उचित मूल्य दिलवाने का भी प्रयास कर रहा है। वर्तमान में दूध-संकलन का कार्य 16 जिला डेयरी संघों के द्वारा संचालित किया जा रहा है जिनकी क्षमता क्रमशः 9 लाख लीटर से बढ़ाकर 13.45 लाख लीटर प्रतिदिन कर दी गयी है। गहन डेयरी विकास कार्यक्रम राज्य के सभी 30 जिलों में चलाया जा रहा है। इस कार्य में 16 दुग्ध उत्पादक संघों का सहयोग भी प्राप्त हो रहा है। 2003-04 में (मार्च 2004 तक) डेयरी फैडरेशन का औसत दुग्ध संग्रहण 10.33 लाख किलोग्राम प्रतिदिन रहा था तथा इसके दूध की बिक्री प्रतिदिन औसतन 8.55 लाख लीटर की थी।

राज्य में मार्च, 2004 के अन्त में कार्यशील दुग्ध उत्पादक प्राथमिक सहकारी समितियों की संख्या 7692 हो गई और इनमें जिला दुग्ध संघों की संख्या 16 हो गई। सहकारी समितियों के विकास के फलस्वरूप दुग्ध उत्पादकों को काफी लाभ पहुँचा है। इससे उत्पादन को विपणन के साथ जोड़ा जा सका है, जिससे दुग्ध उत्पादकों को उचित मूल्य मिल पाया है और मध्यस्थ वर्ग के शोषण से मुक्ति मिली है। डेयरी फैडरेशन के अधीन 4 पशु आहार संयंत्र (Cattle feed plants) कार्यरत हैं जिनमें पशु-आहार का उत्पादन कर उसका विपणन किया जाता है।

राजस्थान में डेयरी के विकास से ग्रामीण क्षेत्रों में आमदनी व रोजगार में वृद्धि हुई है। लघु व सीमान्त कृषकों तथा भूमिहीन श्रमिकों को आर्थिक लाभ पहुँचा है। समाज के निर्धन वर्ग को लाभ हुआ है, मानवीय खुराक में प्रोटीन की मात्रा बढ़ी है तथा बायो-गैस के माध्यम से ऊर्जा के गैर-परम्परागत स्रोत का विकास हुआ है। शहरी क्षेत्रों में दूध व दूध से बने पदार्थों की बढ़ी हुई माँग की पूर्ति करने में मदद मिली है, जो अन्यथा कठिन थी।

डेयरी विकास पर टेक्नोलोजी मिशन—भारत सरकार ने डेयरी विकास पर टेक्नोलोजी मिशन प्रारम्भ किया है, इसके निम्न उद्देश्य हैं—

(i) उत्पादकता बढ़ाने व लागत घटाने के लिए आधुनिक टेक्नोलोजी को अपनाकर ग्रामीण रोज-गार व आमदनी में वृद्धि करना,

(ii) दूध व दूध से बनी वस्तुओं की उपलब्धि को बढ़ाना।

राज्य में ऑपरेशन फ्लड I कार्यक्रम पाँचवीं योजनाकाल में, ऑपरेशन फ्लड II कार्यक्रम छठी योजनाकाल में तथा ऑपरेशन फ्लड III सातवीं योजना में चलाया गया था। इसे 1994 तक पूरा करने का कार्यक्रम रखा गया था। इस कार्यक्रम को राजस्थान सहकारी डेयरी फैडरेशन (RCDF) क्रियान्वित कर रहा है। इस कार्यक्रम में दुग्ध उत्पादकों की सहकारी समितियों की प्रमुख भूमिका होती है। अब ऑपरेशन फ्लड III कार्यक्रम टेक्नोलोजी मिशन में शामिल कर दिया गया है ताकि पहले से स्थापित इन्फ्रास्ट्रक्चर के पूरे लाभ प्राप्त किए जा सकें और सहकारी समिति, दूध यूनियन, व फैडरेशन के तीनों स्तरों पर आत्मनिर्भर व सुदृढ़ सहकारी ढाँचे की स्थापना की जा सके।

भावी योजनाओं में पशु-पालन, डेयरी विकास व ग्रामीण विकास कार्यक्रमों में अधिक तालमेल बैठाकर राज्य में आर्थिक विकास की प्रक्रिया तेज की जा सकती है।

महिला डेयरी विकास योजना राज्य के 9 जिलों—जयपुर, जोधपुर, पाली, अजमेर, भीलवाड़ा, बाँसवाड़ा, भरतपुर, बीकानेर एवं सीकर में चलाई जा रही है। इस योजना के अन्तर्गत दिसम्बर, 1993 तक महिला दुग्ध उत्पादक सहकारी समितियों का गठन कर एक लाख 95 हजार ग्रामीण महिलाओं को लाभान्वित किया गया है। इसे 3 वर्ष और बढ़ाने तथा चूरू व उदयपुर जिलों में लागू करना भी स्वीकार किया गया है।

राज्य में पशु-विकास कार्यक्रम के फलस्वरूप प्रति गाय दूध की मात्रा 1960 में 1.02 किलोग्राम प्रतिदिन से बढ़कर 1985-86 में 2.75 किलोग्राम प्रति दिन हो

गई है। दूध का कुल उत्पादन 1979-80 में 31.50 लाख टन हुआ था, जो 1989-90 में 42 लाख टन तथा 2002-03 में 79.1 लाख टन हो गया है। इसके अलावा ऊन का उत्पादन 1973-74 में एक करोड़ किलोग्राम से बढ़कर 1989-90 में 1.62 करोड़ किलोग्राम व 2002-03 में 2.04 करोड़ किलोग्राम तथा मांस का उत्पादन 1973-74 में 12 हजार टन से बढ़कर 1989-90 में 21.50 हजार टन तथा 2002-03 में 58 हजार टन पर आ गया है एवं अंडों का उत्पादन 2002-03 में 65.40 करोड़ हो गया है।[1]

राजस्थान में भेड़ पालन का विकास व समस्याएँ—हम पहले बता चुके हैं कि राजस्थान में भेड़ों की संख्या 1997 में 1.43 करोड़ थी जो 1992 की तुलना में 17 2% अधिक थी। लगातार सूखा पड़ने के कारण 1983-88 की अवधि में काफी भेड़ें नष्ट हो गई थीं। राज्य की ग्रामीण अर्थव्यवस्था में भेड़ें एक महत्त्वपूर्ण परिसम्पत्ति मानी जाती हैं। राज्य के शुष्क व अर्द्ध-शुष्क भागों में खेती की बजाय भेड़-पालन ज्यादा लाभकारी रहता है। इसका राज्य के आर्थिक व जलवायु सम्बन्धी पहलुओं से ज्यादा ताल-मेल बैठता है। लगभग 2 लाख व्यक्ति सीधे भेड़-पालन से अपना जीविकोपार्जन करते हैं और लगभग 20 लाख व्यक्ति ऊन व ऊन-उत्पादन में संलग्न हैं।

भेड़ प्रजनन कार्यक्रम (Sheep Breeding Programme)—राज्य में ऊन व मांस के उत्पादन में गुणात्मक व मात्रात्मक सुधार करने के लिए भेड़ प्रजनन कार्य में सुधार के व्यापक प्रयास किए गए हैं। क्रॉस-प्रजनन (Cross Bree-ding) कार्यक्रम नाली, चोकला, सोनाड़ी व मालपुरा नस्लों पर लागू किया गया है। इसके अन्तर्गत विदेशी मेढ़ों (Exotic rams) व अर्द्ध-प्रजनन मेढ़ों (Half-bred rams) की आवश्यकता होती है। इसमें कृत्रिम गर्भाधान के जरिए भेड़ों की नस्ल सुधारी जाती है। इसके अलावा चयनित प्रजनन (Selective breeding) की विधि का उपयोग मारवाड़ी, जैसलमेरी, पूगल व मगरा नस्लों पर किया गया है। इसके लिए चुने हुए मेंढ़े पालकों से उचित दामों पर खरीद कर अन्य भेड़-पालकों को अनुदान देकर कम मूल्यों पर उपलब्ध किए जाते हैं। इस विधि में कृत्रिम गर्भाधान व प्राकृतिक प्रजनन दोनों का उपयोग किया जाता है।

वर्तमान में तीन भेड़ प्रजनन-फॉर्म (three sheep breeding farms) जयपुर, फतेहपुर (सीकर जिला) व चित्तौड़गढ़ में स्थित हैं, जो विदेशी व क्रॉस प्रजनित मेंढ़े उत्पन्न करते हैं। ये भेड़ पालकों को दिए जाते हैं। क्रॉस-प्रजनन का कार्यक्रम भीलवाड़ा, जयपुर, चूरू, झुंझुनूं, श्रीगंगानगर व डूँगरपुर जिलों में लागू किया गया है। इसके लिए विदेशी भेड़ें आयात करके विदेशी मेंढ़े (Exotic rams) तैयार किए जाते हैं।

चयनित प्रजनन का कार्यक्रम बीकानेर, जैसलमेर, बाड़मेर, नागौर, जालौर, जोधपुर व पाली जिलों में लागू किया गया है। इससे ऊन की किस्म में सुधार होता है तथा भेड़-पालकों को लाभ होता है।

---

1 Draft Ninth Five Year Plan 1997-2002, p.1 13 & Economic Review 2003-04, p 52.

भेड़ की 'अविकालीन' नस्ल—मालपुरा नस्ल की भेड़ तथा रेम्बुले (विदेशी मेंढ़ा) के संकरीकरण से विकसित की गई है। यह गलीचा ऊन के लिए एक उत्तम नस्ल मानी जाती है। **भारत के लिए 'मेरिनो' नस्ल** राजस्थान की चोकला, मालपुरा, नाली तथा जैसलमेरी नस्लों के रेम्बुले व रूसी मेरिनो (विदेशी मेढ़ों) द्वारा संकरीकरण से विकसित की गई है। हमें भारतीय मेरिनो नस्ल के मेढ़ों का भेड़-प्रजनन कार्य में अधिक उपयोग करना चाहिए, क्योंकि ये विदेशी आयातित मेढ़ों से अधिक सस्ते होते हैं।[1]

राजस्थान राज्य सहकारी भेड़ व ऊन विपणन फैडरेशन लि. 1977

इसकी स्थापना 1977 में निम्न उद्देश्यों की पूर्ति के लिए की गई थी—

(i) भेड़-पालकों को बिचौलियों के शोषण से बचाना,

(ii) इनकी प्राथमिक सहकारी समितियाँ स्थापित करना,

(iii) ऊन व अतिरिक्त भेड़ें (Surplus Sheep) भेड़-पालकों से खरीदना,

(iv) ऊन की ग्रेडिंग व बिक्री करना, तथा

(v) मांस की खरीद व बिक्री करना।

इस प्रकार भेड़ व ऊन विपणन फैडरेशन की स्थापना सहकारी क्षेत्र में की गई है। इसके सदस्य इस प्रकार हैं—भारत सरकार, राजस्थान सरकार तथा भेड़-पालकों की सहकारी समितियाँ। ऊन व अतिरिक्त भेड़ों की बिक्री की व्यवस्था करना बहुत आवश्यक है। इसकी वित्तीय स्थिति की जाँच का कार्य सार्वजनिक उपक्रमों पर नियुक्त माथुर समिति को सौंपा गया था। इसे 1991-92 में 23.1 लाख रु. व 1992-93 में 3.7 लाख रु. का मुनाफा हुआ था, लेकिन 1993-94 में 94 हजार रु. का घाटा हुआ और 1994-95 में भी 23.6 लाख रु. का घाटा हुआ है।[2] इसके कार्य सम्पादन में सुधार करके इसे अधिक सक्षम व सक्रिय करने की आवश्यकता है।

भेड़ विकास से सम्बन्धित समस्याएँ व सुझाव

(1) ऊन के विपणन में कमियाँ—ऊन के लिए उचित कीमत-व्यवस्था का अभाव पाया जाता है। ऊन प्रचलित बाजार भाव पर खरीद लिया जाता है। फिर उसकी ग्रेडिंग (श्रेणीकरण) करके उसे ऊँचे भावों पर बोली लगाकर बेच दिया जाता है। लेकिन ऊन के लिए कोई समर्थन मूल्य (support price) निर्धारित नहीं किया जाता है। ऐसी स्थिति में मंदी की दशा में ऊन-उत्पादकों को हानि होने का अन्देशा बना रहता है।

ऊन का उत्पादन, खरीद, प्रोसेसिंग व बिक्री तथा मांस व जीवित भेड़-जाति के पशुओं का कारोबार निजी व सरकारी क्षेत्र में पाया जाता है। इसे सहकारी समितियों के

---

1 नरेन्द्रकुमार शर्मा, भेड़-पालन व्यवसाय : वर्तमान और भविष्य, राजस्थान पत्रिका, 14 मई, 1995, पृष्ठ 3

2. Public Enterprises Profile of Rajasthan 1991-92 to 1994-95, Bureau of Public Enterprises, (GOR), Annexure 'I'

दायरे में लाकर डेयरी विकास कार्यक्रम की भाँति संचालित करने की आवश्यकता है। ऐसी समितियाँ ग्राम स्तर पर बनाई जानी चाहिए। ये ऊन व अतिरिक्त पशु खरीद सकती हैं तथा टीकाकरण, उत्तम मेंढ़े उपलब्ध करने आदि कार्यों में सहयोग दे सकती हैं। इनसे भेड़-पालकों पर अनुकूल प्रभाव पड़ेगा। इनसे जाति, वर्ग व लिंग के भेद भी कम होंगे तथा भेड़-विकास-कार्यक्रम को अत्यधिक प्रोत्साहन मिलेगा।

(2) मांस व जीवित भेड़ों का निर्यात खाड़ी-देशों में बढ़ाकर भेड़पालकों को अतिरिक्त पशुओं का ऊँचा मूल्य दिलाना सम्भव हो सकता है।

(3) राजस्थान राज्य सहकारी भेड़ व ऊन विपणन फैडरेशन को सुदृढ़ करने की आवश्यकता है ताकि ऊन की ग्रेडिंग व विपणन में सुधार हो सके।

(4) भेड़-पालकों के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित किया जाना चाहिए। चूँकि भेड़-पालन की व्यवस्था तीन प्रकार की होती है—यथा, एक जगह स्थित होकर (sedentary), अर्द्ध-प्रवासी या भ्रमणशील (semi-migratory) तथा प्रवासी। इसलिए सम्बन्धित कर्मचारियों के लिए भेड़-पालकों से निरन्तर सम्पर्क रखना कठिन होता है। भेड़-पालक समुदाय में से ही आवश्यक भत्ता देकर युवकों को प्रशिक्षण देकर तैयार करना होगा ताकि वे भेड़-विकास कार्यक्रम को आवश्यक गति प्रदान कर सकें।

(5) **बीमारी की जाँच-पड़ताल व स्वास्थ्य नियंत्रण कार्यक्रम**—विदेशी व क्रॉस-प्रजनन की भेड़ों पर बीमारी का जल्दी असर पड़ता है। इसलिए प्रत्येक जिले में बीमारी के निदान व इलाज की व्यवस्था बढ़ाने का प्रयास किया जाना चाहिए। इसके लिए टीके लगाने, दवाइयाँ देने, भेड़ों को कीड़ों से मुक्त करने (deworming), खनिज-विटामिनों की कमी दूर करने आदि पर पर्याप्त ध्यान देना चाहिए। चूँकि भेड़-पालक दवाई की कीमत देने में असमर्थ पाए जाते हैं, इसलिए सरकार द्वारा उनको अतिरिक्त सहायता पहुँचानी होगी।

जैसा कि पहले बतलाया जा चुका है, राजस्थान में सूखे के प्रकोप से लाखों भेड़ों का सफाया हो जाने का भय बना रहता है और भेड़ों का अकाल के समय अन्य क्षेत्रों में निष्क्रमण भी होता रहता है। इसलिए चारे व आहार का उत्पादन तथा पानी की सुविधा बढ़ाकर भेड़-विकास कार्यक्रम को अधिक स्थिरता व गति प्रदान की जानी चाहिए। भेड़ों में रोगों की रोकथाम के लिए दवाइयों की खुराकों, छिड़काव व टीकाकरण जैसे कार्यक्रमों का भी महत्त्व होता है। पानी व चारे की कमी के कारण भेड़ें पश्चिमी राजस्थान से राज्य की सीमा से जुड़े राज्यों जैसे मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश व गुजरात में चली जाती हैं। उनके ठहराव के दौरान उनके उचित व शीघ्र उपचार के लिए 41 स्थायी निगरानी चौकियाँ (check posts) स्थापित की गई हैं।

बकरी-पालन : विकास व समस्याएँ—राजस्थान में बकरी की संख्या भारत में सबसे ज्यादा रही है। 1983 में बकरी-जाति के पशुओं की संख्या 1.55 करोड़ रही जो घटकर 1988 में 1.26 करोड़ पर आ गई। 1992 में बकरी-जाति की संख्या 1.51 करोड़

रही जो 1988 की तुलना में 19 8% अधिक थी । **1997 में इनकी संख्या 1.69 करोड़ आंकी गई है जो 1992 की तुलना में 12% अधिक है** । इस प्रकार बकरी की संख्या में अनियमित रूप से परिवर्तन होते रहे हैं । बकरी की संख्या बहुधा सूखे के कारण घट जाती है और अपेक्षाकृत उत्तम वर्षा के कारण बढ़ जाती है । राज्य के उत्तर-पूर्वी व पश्चिमी जिलों में लगभग 3/4 बकरी जाति के पशु पाए जाते हैं । राज्य के सभी भागों में बकरी की संख्या में वृद्धि होती रही है । राजस्थान में बकरी की प्रमुख नस्लें इस प्रकार हैं : सिरोही, लोबी, जमना, पारी, अलवरी, बरबारी तथा झकराना । सिरोही नस्ल दूध व मांस दोनों के लिए उत्तम मानी गई है, जबकि मारवाड़ी नस्ल मांस के लिए, विशेष रूप से राज्य के सूखे पश्चिमी भाग में पाली जाती है ।

बकरी 'गरीब की गाय' (poor man's cow) मानी गई है । प्रायः लागत के कारण, निर्धन परिवार बकरी पालते हैं, जिससे उनको पोषण प्राप्त होता है और वे इसे आसानी से बेच भी सकते हैं । अजमेर व सिरोही जिलों में बकरी के आर्थिक अध्ययन[1] से पता चला है कि **न केवल निर्धन लोग, बल्कि अपेक्षाकृत अच्छी आर्थिक स्थिति वाले लोग भी बकरी पालते हैं** । निर्धन लोग इसे 'कम लागत कम प्रतिफल' के रूप में अपनाए रहते हैं, लेकिन खेतों पर चराई की थोड़ी सुविधा पाए जाने के कारण मध्यम श्रेणी के किसान भी इनको पालते हैं । बकरी-पालन-श्रम-गहन होता है, और इसमें प्रायः स्त्रियों, बच्चों, कमजोर व वृद्ध व्यक्तियों के श्रम का उपयोग होता है ।

बकरी-पालन व पर्यावरण (Goat-keeping and environment)—प्रायः यह शिकायत की जाती है कि बकरी पर्यावरण का ह्रास (degradation) करती है । ऐसा बहुधा वन-विभाग कर्मचारी कहा करते हैं । उनका विचार है कि बकरी पौधों की अन्तिम पत्तियाँ तक खा जाती है, जिससे पर्यावरण में गिरावट आती है । लेकिन उपर्युक्त विकास-संस्थान के अध्ययन का निष्कर्ष है कि यह धारणा सही नहीं है । बकरी तो अन्य कारणों से गिरे हुए पर्यावरण में भी अपने आप को जिंदा रखती है, क्योंकि यह उन पौधों को भी खा सकती है, जिन्हें भेड़ें व अन्य पशु नहीं खाते । इस तरह यह चारे के लिए अन्य पशुओं से प्रतिस्पर्धा नहीं करती । इससे प्रोटीन (दूध व मांस) की मात्रा इसको दिए आहार की तुलना में भेड़ से थोड़ी अधिक प्राप्त होती है । लेकिन यह स्मरण रखना होगा कि बकरी पौधों के अपेक्षाकृत अधिक बेहतर अंशों को खा जाती है, जिससे भेड़ व अन्य पशुओं की तुलना में ये अधिक विनाशकारी सिद्ध होती हैं ।

बकरी-पालन की समस्याएँ—बकरी-पालन के अध्ययन से एक निष्कर्ष यह भी सामने आया है कि एक साथ 10-20 बकरी पालने पर प्रति बकरी लाभ की मात्रा सर्वाधिक होती है, हालांकि इस पर विभिन्न परिस्थितियों का भी प्रभाव पड़ता है । प्रायः यह देखा

---

1 Kanta Ahuja and M S Rathore, **Goat and Goat-Keepers**, Institute of Development Studies (IDS), Jaipur, 1987

गया है कि बकरी-पालन में झुंड (herd) की संख्या के बढ़ने का उत्पादकता पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। इसलिए प्रति बकरी आर्थिक लाभ सर्वाधिक रखने के लिए इनकी संख्या प्रति पालक बहुत अधिक नहीं होनी चाहिए। बकरी की ठीक-ठीक संख्या पर ही एक बकरी पालक उन पर अधिक ध्यान दे सकता है तथा उनके आहार की उचित व्यवस्था कर सकता है।

बकरी के दूध, मांस व खाल से आमदनी बढ़ाने का प्रयास किया जाना चाहिए। इसके लिए बकरी-पालकों को दूध की एक विशेष प्रकार की गंध में सुधार करने का उपाय सुझाना चाहिए ताकि इसकी बिक्री बढ़ सके। उनको मांस व जीवित पशुओं की बिक्री से अधिक आय अर्जित करने का अवसर दिया जाना चाहिए। राज्य में बकरी की नस्ल उत्तम किस्म की पाई जाती है जिसे बनाए रखने व उसमें सुधार करने के लिए बकरी-पालकों को उत्तम किस्म के स्वदेशी नस्ल के बकरों (bucks) का वितरण करना चाहिए। इस व्यवस्था पर विदेशी नस्लों के द्वारा क्रॉस-प्रजनन से ज्यादा ध्यान दिया जाना चाहिए। बकरी के लिए चारे का विकास पर्याप्त मात्रा में किया जाना चाहिए। सामाजिक वानिकी (social forestry) कार्यक्रम में ऐसे पेड़ व झाड़ियों को लगाने पर जोर देना चाहिए जो बकरी के स्वास्थ्य पर अनुकूल प्रभाव डालते हैं। 'विलायती बबूल' इस दृष्टि से हानिकारक माना गया है। बकरी अरड़ू, खेजड़ी, बोरड़ी आदि पौधों व पेड़ों को ज्यादा पसन्द करती है।

अतः बकरी जैसे छोटे पशु पर अधिक ध्यान देकर निर्धन परिवारों व पिछड़े क्षेत्रों के विकास में इनकी आर्थिक भूमिका सुदृढ़ की जा सकती है। स्मरण रहे कि बकरी पर्यावरण के ह्रास का प्रमुख कारण नहीं है। इसके लिए बकरी को दोषी ठहराना इस नन्हें से पशु के साथ घोर अन्याय करना होगा, जो किसी न किसी तरह प्रतिकूल पर्यावरण में भी अपने आपको जीवित रखे हुए है।

वर्तमान में विदेशी नस्ल के माध्यम से बकरी पर क्रॉस-प्रजनन विषय पर अध्ययन के लिए स्विट्जरलैण्ड की सरकार से एक समझौता हुआ है। इस परियोजना के चौथे चरण के मार्च 1993 के अन्त तक समाप्त होने का लक्ष्य था। बकरी-विकास कार्यक्रम में स्विस-सहयोग व सहायता से काफी लाभ प्राप्त हुआ है। स्विट्जरलैण्ड से एल्पाइन एवं टोगनबर्ग नस्ल के बकरे मंगवाए गए हैं, तथा विदेशी नस्ल से कृत्रिम गर्भाधान की विधि द्वारा भी सिरोही नस्ल की बकरियों में सुधार करने का प्रयास किया गया है। राज्य के अन्य बकरी-पालकों में भी इनका वितरण किया गया है। भूतकाल में बकरी की संख्या अपने आप बढ़ती रही है, भविष्य में इसे नियमित करने के लिए नियोजित प्रयास करने की आवश्यकता है, ताकि यह रोजगार, आय व पोषण बढ़ाने में अधिक योगदान दे सके। बकरी विकास कार्यक्रम के तहत विदेशी सहायता प्राप्त होती है। स्वदेशी नस्ल में स्वदेशी साधनों से सुधार करने का प्रयास भी साथ में जारी रहना चाहिए।

प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. राजस्थान के किस जिले में सर्वाधिक भैंसें पाली जाती हैं ?
(अ) पाली (ब) अजमेर
(स) जयपुर (द) दौसा (स)

2. केन्द्रीय भेड़ व ऊन अनुसंधान संस्थान स्थापित है—
(अ) जयपुर में (ब) अम्बिकानगर में
(स) जोधपुर में (द) पाली में (ब)
(सही नाम) (अविकानगर, मालपुरा, टोंक में)

3. राजस्थान में सर्वाधिक गायें किस जिले में पाई जाती हैं ?
(अ) उदयपुर (ब) जयपुर
(स) पाली (द) बाड़मेर (अ)

4. दूध उत्पादन में राजस्थान का कौन-सा स्थान है ?
(अ) प्रथम (ब) चतुर्थ
(स) द्वितीय (द) पंचम (अ)

5. राजस्थान के किस जिले में विश्व में सबसे अधिक प्रति व्यक्ति दूध का उत्पादन होता है ?
(अ) जयपुर (ब) जैसलमेर
(स) बाड़मेर (द) पाली (द)

6. राष्ट्रीय उष्ट्र (ऊँट) अनुसंधान केन्द्र स्थित है—
(अ) अलवर में (ब) बाड़मेर में
(स) बीकानेर में (द) जैसलमेर में (स)

7. राजस्थान में जिस पशुधन का सर्वाधिक प्रतिशत है, वे पशु हैं—
(अ) बकरियाँ (ब) दुधारू पशु
(स) ऊँट (द) भेड़ें (अ)

8. 1997 की पशु-संगठना के अनुसार राज्य में पशुओं की संख्या है—
(अ) 3.43 करोड़ (ब) 5.43 करोड़
(स) 5.5 करोड़ (द) 4.78 करोड़ (ब)

9. पशुओं में संख्या की दृष्टि से सबसे अधिक संख्या है—

(अ) गौवंश के पशुओं की (ब) भेड़-जाति के पशुओं की

(स) बकरी-जाति के पशुओं की (द) भैंस-जाति के पशुओं की (स)

10. पशु-धन से सर्वाधिक लाभ क्या मिलता है ?

(अ) सुस्त मौसम के रोजगार

(ब) वर्षभर का पूर्ण रोजगार

(स) उद्योगों के लिए कच्चा माल

(द) अर्द्ध-शुष्क व शुष्क प्रदेशों में रोजगार (द)

11. दुग्ध उत्पादन हेतु गाय की प्रसिद्ध नस्लें हैं—

(अ) थारपारकर एवं राठी (ब) राठी एवं नागौरी

(स) मालवी एवं थारपारकर (द) मेवाती एवं मालवी (अ)

[RAS, 1998]

12. किस भेड़ का ऊन मध्यम फाइन किस्म का होता है ?

(अ) चोकला (ब) मगरा

(स) मारवाड़ी (द) कोई नहीं (अ)

13. राज्य में रोजगार की दृष्टि से सर्वाधिक स्रोत है—

(अ) पर्यटन (ब) पशु-पालन

(स) बड़े उद्योग (द) खनन (ब)

14. राज्य में बकरी प्रजनन-केन्द्र कहाँ है ?

उत्तर : अजमेर जिले के रामसर गाँव में।

15. राज्य में पोल्ट्री-फार्म कहाँ स्थित है ?

(अ) जोधपुर (ब) जयपुर

(स) कोटा (द) बीकानेर (ब)

16. अश्व विकास केन्द्र कहाँ कार्यरत हैं ?

उत्तर : उदयपुर, झालावाड़, जालोर, पाली, जोधपुर, बीकानेर, बाड़मेर व जयपुर जिलों में।

17. डेयरी फेडरेशन को औद्योगिक विकास के क्षेत्र में 1999 में कौन-से पुरस्कार से सम्मानित किया गया है ?

उत्तर : ज्ञान-ज्योति।

अन्य प्रश्न

1. राजस्थान की अर्थव्यवस्था में डेयरी उद्योग का स्थान निर्धारित कीजिए। राज्य सरकार द्वारा डेयरी विकास हेतु किए गए प्रयासों का वर्णन कीजिए।

2. संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए—
   (i) राजस्थान का पशुधन (Raj. Iyear, 2004)
   (ii) राजस्थान में डेयरी विकास कार्यक्रम
   (iii) गहन पशु-प्रजनन के लिए 'गोपाल' कार्यक्रम
3. राज्य के शुष्क व अर्द्ध शुष्क क्षेत्र कौन-कौन से हैं ? इनमें पशु-पालन का महत्त्व समझाइए। क्या इनमें पशु पालन कृषिगत कार्य से अधिक लाभकारी माना जा सकता है ? स्पष्ट कीजिए।
4. राजस्थान के शुष्क एवं अर्द्ध शुष्क क्षेत्रों में पशुपालन का महत्त्व स्पष्ट कीजिए। राज्य में पशुधन की हीन दशा के क्या कारण हैं ?
5. राजस्थान को पशु-सम्पदा का विवरण दीजिए। राज्य में भेड़-पालन व्यवसाय की प्रमुख समस्याएँ क्या हैं ?
6. राजस्थान के पशुधन के महत्त्व व संरचना पर एक निबन्ध लिखिए।
7. गोपाल योजना के उद्देश्य बताइए। (100 शब्दों में)
8. (अ) राजस्थान में पशुधन के विकास में क्या-क्या बाधाएँ हैं ? सरकार द्वारा पशुधन के विकास के लिए क्या-क्या प्रयास किए गए हैं ? (5 पृष्ठों में)
   (ब) राजस्थान में डेयरी विकास कार्यक्रम की उपलब्धियाँ बताइए। (100 शब्दों में)
9. राज्य में भेड़ व बकरी व्यवसाय पर एक निबन्ध लिखिए।

13

राज्य का आधार-ढ़ाँचा–सिंचाई
(Infrastructure in the State-Irrigation)

इस अध्याय में आधार-संरचना के विकास के अन्तर्गत राजस्थान में सिंचाई के विकास व सिंचाई को महत्त्वपूर्ण परि–योजनाओ पर विस्तार से प्रकाश डाला जाएगा ।

(1) सिंचाई का विकास—राजस्थान में निरन्तर पड़ने वाले सूखे व अकाल तथा राज्य के लगभग दो-तिहाई भू-भाग में मरु व अर्द्ध-मरु क्षेत्र के पाए जाने के कारण सिंचाई का विकास करना बहुत आवश्यक माना गया है । राज्य मे नदियो व तालाबों की कमी पाई जाती है । पूर्वी राजस्थान में बहने वाली नदियाँ बरसाती नदियाँ हैं । उनके पानी का उपयोग बाँधों का निर्माण करके किया जा सकता है । इस क्षेत्र मे कुओं का पानी कम गहराई पर पाया जाता है जिसे पम्प द्वारा निकालकर सिंचाई के काम मे लिया जा सकता है । राज्य मे योजनाकाल में वृहद्, मध्यम व लघु सिंचाई के साधनों का विकास किया गया है । **वृहद् (major) सिंचाई का साधन उसे कहते हैं जिसमें कृषि योग्य कमांड क्षेत्र (Culturable command area) (CCA) 10 हजार हैक्टेयर से अधिक होता है, मध्यम में यह 2 से 10 हजार हैक्टेयर के बीच तथा लघु (Minor) में 2 हजार हैक्टेयर तक होता है ।**

निम्न तालिका से स्पष्ट होता है कि योजनाकाल में सिंचाई व बाढ़ नियंत्रण पर कुल व्यय का अनुपात घटता–बढ़ता रहा है । चतुर्थ व पंचम योजनाओं में यह 34% रहा था । सातवीं योजना में यह 22.2% रहा था, आठवीं पंचवर्षीय योजना (1992–97) में यह 15.3% रहा । नवीं योजना (1997-2002) में यह 11.4% रहा ।[1] 2002–03 में यह 8.4% व 2003–04 में 15.2% रहा ।

सिंचाई व बाढ़ नियंत्रण पर व्यय की राशि प्रथम योजना में 31.3 करोड़ रुपये से बढ़कर सातवीं योजना में 690.5 करोड़ रुपये तथा आठवीं योजना (1992-97) 1836.2 करोड़ रु. हो गई (लक्ष्य 1920 करोड़ रु. का था) । नवीं योजना में सिंचाई व बाढ़ नियंत्रण पर 2261 करोड़ रु., 2002–03 में 370.2 करोड़ रु. व 2003–04 में 916 8 करोड़ रु. व्यय किये गये ।

---

1 Budget Study, 2004-05, July 2004, pp 48 & 50, Economic Review 2003-04, p 17 (GOR)

योजनाकाल में सिंचाई व बाढ़-नियंत्रण पर व्यय तथा सिंचाई की सम्भाव्यता (Irrigation Potential) का विकास—राज्य में सिंचाई व बाढ़-नियंत्रण पर योजनावार वास्तविक व्यय की राशि का विवरण निम्न तालिका में दर्शाया गया है—

योजनाकाल	सिंचाई व बाढ़-नियन्त्रण पर वास्तविक व्यय (करोड़ रु. में)	योजना में सार्वजनिक क्षेत्र का कुल वास्तविक व्यय (करोड़ रु. में)	सिंचाई व बाढ़ नियन्त्रण पर कुल व्यय का अनुपात (प्रतिशत में)
प्रथम	31 3	54.1	57.8
द्वितीय	27 9	102 7	27.2
तृतीय	87 9	212 7	41.3
तीन वार्षिक योजनाएँ (1966-69)	46 6	136 8	34.1
चतुर्थ	105 3	308 8	34.1
पंचम	271 2	857 6	31.6
1979-80	76.3	290.2	26.3
छठी	553.3	2130.7	26 0
सातवीं	690 5	3106 2	22.2
1990-91	177.5	975 6	18.2
1991-92	217.7	1178.5	18 5
आठवीं (1992-97)	1836.2	11999	15.3
नवीं (1997-2002)	2261.3	19836	11.4
2002-03	370.2	4431	8.4
2003-04	916 8	6044.4	15.2

योजनाओं में सिंचाई पर भारी विनियोगों के फलस्वरूप राज्य में सिंचाई की सम्भाव्यता (Irrigation Potential) 1950-51 में 4 लाख हैक्टेयर से बढ़कर सातवीं योजना के अन्त में, अर्थात् 1989-90 में, लगभग 22.32 लाख हैक्टेयर तथा आठवीं योजना के अंत तक 26.63 लाख हैक्टेयर हो गई। लेकिन नवीं योजना के अंत में इसके 28 लाख हैक्टेयर रहने का अनुमान लगाया गया था।[1].

1 Draft Tenth Five Year Plan Vol. I, P 13 2 & Modified Budget Study 2004-05, p 50

योजनाकाल में वृहद् व मध्यम सिंचाई की परि योजनाओं पर किए गए व्यय व उससे उत्पन्न सिंचाई की सम्भाव्यता निम्न तालिका में दर्शाई गई है। साथ में लघु सिंचाई के विकास पर किए गए व्यय व उत्पन्न सिंचाई की सम्भाव्यता भी दी गई है।[1]

निम्न तालिका से स्पष्ट होता है कि योजनाकाल की कुल अवधि (1951-90) में सिंचाई की वृहद् व मध्यम योजनाओं पर 1515 करोड़ रुपये के व्यय से 19 2 लाख हैक्टेयर में सिंचाई की सम्भाव्यता (Irrigation Potential) उत्पन्न की गई। इसी अवधि में लघु सिंचाई की स्कीमों पर लगभग 197 करोड़ रुपये के व्यय से 3 2 लाख हैक्टेयर में सिंचाई की सम्भाव्यता का विकास किया गया। इस प्रकार कुल 1712 करोड़ रुपये के व्यय से लगभग 22 4 लाख हैक्टेयर में सिंचाई की सम्भाव्यता की जा सकी। (जो ऊपर दिए गए 22 32 लाख हैक्टेयर के समीप आती है)। स्मरण रहे कि सिंचाई की सम्भाव्यता उत्पन्न करने की प्रति हैक्टेयर लागत काफी तेजी से बढ़ रही है। उदाहरण के लिए, वृहद् व मध्यम सिंचाई की परियोजनाओं पर तृतीय योजना में 65.4 करोड़ रुपये के व्यय से 3.3 लाख हैक्टेयर में सिंचाई का विकास हुआ, जबकि सातवीं योजना में 589 करोड़ रुपये के व्यय से केवल 2 लाख हैक्टेयर में ही सिंचाई का विकास किया जा सका। इसी प्रकार की स्थिति लघु सिंचाई कार्यक्रमों में भी प्रकट हुई है। तृतीय योजना में इन पर 3.3 करोड़ रुपये के व्यय से 22 हजार हैक्टेयर भूमि में सिंचाई की सम्भाव्यता उत्पन्न की गई थी, जबकि सातवीं योजना में 108.7 करोड़ रुपये के व्यय से 38.6 हजार हैक्टेयर में ही सिंचाई का विकास किया जा सका है। इस प्रकार दोनों प्रकार की परियोजनाओं में प्रति हैक्टेयर सिंचाई के सृजन की लागत में अत्यधिक वृद्धि हुई है।

योजनावधि	वृहद् व मध्यम परियोजनाओं पर व्यय (करोड़ रु. में)	इनसे उत्पन्न सिंचाई सम्भाव्यता (लाख है. में)	लघु सिंचाई पर व्यय (करोड़ रु. में)	इनसे उत्पन्न सिंचाई सम्भाव्यता (हजार है. में)
योजना पूर्व अवधि	उपलब्ध नहीं	32	उपलब्ध नहीं	80
प्रथम योजना	218	09	11	13
द्वितीय	336	11	17	30
तृतीय	654	33	33	22
1966-69	376	15	31	10
चतुर्थ	907	14	114	25
पंचवी (वर्ष 1979-80 सहित) अर्थात् (1974-80 तक)	294 5	41	308	48
छठी	380 8	17	36 5	54
सातवीं (अनुमानित) 1985-90	589 0	20	108 7	37
कुल	1515 4	19 2	196 6	1190

1 Report of the Working Group on Irrigation for the Eighth Five Year Plan (1990-95) Department of Irrigation Government of Rajasthan, Jaipur September 1989

1990-92 की वार्षिक योजनाओं वृहद् व मध्यम परियोजनाओं से सिंचाई की सम्भाव्यता 1.0 लाख हैक्टेयर तथा लघु परियोजनाओं से 20 हजार हैक्टेयर उत्पन्न की गई जो आठवीं योजना में क्रमश: 2.75 लाख हैक्टेयर व 32 हजार हैक्टेयर रही ।

प्रथम योजना में वृहद् व मध्यम सिंचाई की परियोजनाओं पर सिंचाई की सम्भाव्यता (Irrigation Potential) उत्पन्न करने की लागत प्रति हैक्टेयर 2644 रुपये से बढ़कर सातवीं योजना में 28255 रुपये प्रति हैक्टेयर हो गई । इस प्रकार इस अवधि में सिंचाई की सम्भाव्यता उत्पन्न करने की लागत 10 गुनी से अधिक हो गई । भविष्य में अधिक जटिल क्षेत्रों में सिंचाई का प्रयास करने से यह लागत और बढ़ेगी।[1]

सिचाई से फसलों की प्रति हैक्टेयर उत्पादन में काफी वृद्धि हो सकती है। 1990-91 व 2001-02 की अवधि के लिए राजस्थान में विभिन्न फसलों की उत्पादकता के औसत परिणाम सिंचित व असिंचित फसलों के लिए निम्न प्रकार रहे—

1990-91 व 2001-02 के वर्षों में उत्पादकता के स्तर[2]

(प्रति हैक्टेयर उत्पादन किलोग्राम में)

		1990-91		2001-02	
	फसल	सिंचित	असिंचित	सिंचित	असिंचित
1.	गेहूँ	2491	1257	2855	1275
2	सरसों व राई	906	760	1177	862
3	कपास (लिट में) (1989-90)	1186	503	292	167

तालिका से स्पष्ट होता है कि आमतौर पर प्रति हैक्टेयर पैदावार सिंचित क्षेत्रों में असिंचित क्षेत्रों की तुलना में अधिक पाई जाती है । इससे सिंचाई का महत्त्व प्रगट होता है ।

राजस्थान में सिंचाई-गहनता (Irrigation-Intensity) में धीमी गति से वृद्धि—सिंचाई-गहनता निकालने के लिए सकल सिंचित क्षेत्र में शुद्ध सिंचित क्षेत्र का भाग देना होता है । इसकी बदलती हुई स्थिति निम्न तालिका में दी गई है—

योजना अथवा वर्ष	सकल सिंचित क्षेत्र (लाख है. में)	शुद्ध सिंचित क्षेत्र (लाख है. में)	सिंचाई-गहनता (Irrigation-Intensity)
प्रथम योजना का औसत	14.39	12.07	119.21
छठी योजना का औसत	38.31	31.17	124.51
1990-91	46.52	39.04	119.2
2000-01	61.35	49.07	1.250
2001-02	67.44	54.20	1.244
2002-03	52.72	43.72	1.206

1. Papers on Perspective Plan, Rajasthan, 1990-2000 AD, Planning Department, Government of Rajasthan, p 118.
2. Agricultural Statistics of Rajasthan, 1973-74 to 2001-02, DES, October 2003, pp 74 & 76

तालिका से स्पष्ट होता है कि राज्य में सिंचाई-गहनता प्रथम योजना के 119.2 के औसत से बढ़कर 2002-03 में 120.6 पर आ गई है । इससे सिद्ध होता है कि एक से अधिक बार सिंचाई का क्षेत्र थोड़ा बढ़ा है । पूर्व वर्षों में यह कभी-कभी इससे भी ऊँची रही थी ।

2002-03 में शुद्ध सिंचित क्षेत्रफल लगभग 43.7 लाख हैक्टेयर तथा सकल सिंचित क्षेत्रफल 52.7 लाख हैक्टेयर रहा । सकल सिंचित क्षेत्रफल में 38.9 लाख हैक्टेयर में कुओं व ट्यूबवैल से 74% भाग में सिंचाई हुई तथा 13.5 लाख हैक्टेयर में अर्थात् 26% भाग में नहरों से सिंचाई सम्पन्न की जा सकी । इस प्रकार राज्य में कुओं व ट्यूबवैलों के माध्यम से सिंचाई का स्थान सर्वोच्च रहा है । इसी वर्ष तालाबों का सकल सिंचित क्षेत्रफल में अंश नगण्य ही रहा (मात्र 8000 हैक्टेयर) ।

योजनाकाल में सिंचित क्षेत्रफल की प्रगति[1]—योजनाकाल मे चुने हुए वर्षों के लिए कुल सिंचित क्षेत्रफल की प्रगति निम्न तालिका में दर्शाई गई है ।

वर्ष	सकल सिंचित क्षेत्रफल (लाख हैक्टेयर में)	सकल सिंचित क्षेत्रफल सकल कृषित क्षेत्रफल का प्रतिशत
1950-51	11.7	12.0
1960-61	20.8	14 9
1970-71	24 5	14.7
1980-81	37.5	21.6
1990-91	46 5	24.0
1998-99	68.1	31.8
1999-2000	69.3	36.0
2000-2001	61 4	31.9
2001-2002	67.4	32 4

तालिका से स्पष्ट होता है कि राज्य मे कुल सिंचित क्षेत्रफल का कुल कृषित क्षेत्रफल से अनुपात 1950-51 में 12% से बढ़कर 1999-2000 में लगभग 36.0% पर पहुँच गया । लेकिन 2001-02 में यह 32.4% तथा 2002-03 में 39 9% (कुल कृषित क्षेत्र के काफी घट जाने के कारण) आंका गया है । **इसका आशय यह है कि आज भी लगभग 2/3 कृषित क्षेत्र वर्षा पर आश्रित है, इसलिए राजस्थान में सूखी खेती के विकास पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है ।**

अब हम राजस्थान में नहरों की सिंचाई पर प्रकाश डालेंगे । इनमें कुछ नहरें पुरानी हैं और कुछ नहीं हैं । पुरानी नहर व्यवस्था में गंगनहर व भरतपुर नहर का उल्लेख करना

1. Agricultural Statistics of Rajasthan, 1973-74 to 2001-02 Various Tables (for 1980-81 to 2001-02)

आवश्यक है। आगे चलकर हम बहुउद्देश्यीय नदी घाटी परियोजनाओं तथा सिंचाई की वृहद् परियोजनाओं के अन्तर्गत भी नहरों की सिंचाई का वर्णन करेंगे।

गंगनहर—नहरों के सम्बन्ध में राजस्थान की यह प्रथम सिंचाई योजना मानी गई है। यह सन् 1927 में सतलज नदी से फिरोजपुर (पंजाब) के निकट हुसैनीवाला से निकाली गई थी। मुख्य नहर फिरोजपुर से शिवपुर (श्रीगंगानगर) तक बहती है। इसकी लम्बाई 137 किलोमीटर है और वितरक-शाखाओं की लम्बाई 1280 किमी है। इससे श्रीगंगानगर जिले में 1.5 लाख हैक्टेयर भूमि में सिंचाई होती है। इसकी सिंचाई से कपास, गेहूँ, माल्टा आदि की फसलें उत्पन्न की जाती हैं। यह नहर अब काफी पुरानी हो चुकी है और इसकी मरम्मत की आवश्यकता है।

सन् 1984 मे इस नहर को गगनहर लिंक चैनल से जोड़ने का काम शुरू किया गया था। यह लिंक चैनल 80 किमी लम्बी बनाई जा सकती है जिससे इसमें इंदिरा गाँधी नहर का पानी छोड़ा जाएगा। लिंक चैनल का उद्‌गम हरियाणा मे लौहगढ़ नामक स्थान पर होगा। यह चैनल साधुवाली (श्रीगंगानगर) के पास गगनहर मे मिल जाती है।

गंगनहर के आधुनिकीकरण के लिए 445.79 करोड़ रु. की लागत की योजना का कार्य प्रगति पर है। 2004-05 के लिए इस पर 72 करोड़ रु. का व्यय प्रस्तावित है।

भरतपुर नहर— यह नहर 1964 मे बनकर तैयार हो गई थी। यह पशिचमी यमुना नहर से निकाली गई है। इसकी कुल लम्बाई 28 किमी है जिसमे से 16 किमी. लम्बाई उत्तर प्रदेश मे आती है। इससे ग्यारह हजार हैक्टेयर भूमि की सिचाई होती है। इसमे खाद्यान्नो का उत्पादन बढने मे भारी योगदान मिला है।

गुड़गाँव नहर—यह नहर यमुना नदी से ओखला (दिल्ली) के पास निकाली गई है। इसका निर्माण 1966 में शुरू किया गया था और यह 1985 में बनकर तैयार हो गई थी। राजस्थान में यह नहर भरतपुर जिले के कामां तहसील के जेरा गाँव में प्रवेश करती है, राज्य में इसकी लम्बाई 35 मील है। इससे कामां व डीग तहसीलों में 28,200 हैक्टेयर भूमि में सिंचाई होती है। यह सिंचाई की वृहद् परियोजना में आती है।

राजस्थान की बहुउद्देशीय नदी घाटी परियोजनाएं तथा सिंचाई की वृहद् परियोजनाएँ

(अ) राजस्थान की बहुउद्देशीय तथा अन्तर्राज्यीय नदी घाटी परियोजनाएँ इस प्रकार हैं—

(1) भाखड़ा नांगल परियोजना में हिस्सा,

(2) चम्बल परियोजना में हिस्सा,

(3) व्यास परियोजना,

(4) माही परियोजना।

(आ) सिंचाई की वृहद् परियोजनाएँ (जिन पर कार्य किया जा रहा है) जैसा कि पहले बतलाया जा चुका है, सिंचाई की वृहद् परियोजनाओं के अन्तर्गत कृषि के लायक कमाण्ड क्षेत्रफल 10 हजार हैक्टेयर से अधिक होता है। ये अग्रांकित हैं—

(1) इन्दिरा गाँधी नहर परियोजना,

(2) अन्य सात वृहद् सिंचाई परियोजनाएँ--गुड़गाँव नहर, ओखला जलाशय, नर्मदा, जाखम, बीसलपुर, नोहर फीडर व सिद्धमुख। इनका संक्षिप्त परिचय आगे दिया जाता है।

राज्य की बहुउद्देशीय व अन्तर्राज्यीय नदी घाटी परियोजनाएँ

(1) भाखड़ा-नांगल—यह राष्ट्र की सबसे बड़ी बहु-उद्देशीय नदी घाटी योजना है। इसमें पंजाब, हरियाणा व राजस्थान राज्य भाग ले रहे हैं। **राजस्थान का इसमें 15.2% अंश रखा गया है। इस योजना से राजस्थान के श्रीगंगा- नगर जिले की कुछ भूमि कृषि योग्य हो सकी है और वहाँ सिंचाई का विस्तार हुआ है।** राज्य में छोटी-बड़ी मिलाकर एक हजार मील लम्बी नहरें बनाई गई हैं—मुख्य शाखा-नहरों की तलहटियाँ पक्की बनाई गई हैं, जिसमें बहुमूल्य पानी रेत के द्वारा न सोखा जा सके। नहरों की खुदाई और लाइनिंग के साथ-साथ गाँव बसाने, मंडियाँ और सड़कें बनाने आदि का कार्य भी किया गया है। **भाखड़ा मुख्य नहर की सिंचाई- क्षमता 14.6 लाख हैक्टेयर है, जिसमें राजस्थान का हिस्सा 2.3 लाख हैक्टेयर, हरियाणा का 5.5 लाख हैक्टेयर तथा पंजाब का 6.8 लाख हैक्टेयर रखा गया है।**

इस योजना में सिंचाई के अतिरिक्त बड़ी मात्रा में बिजली भी पैदा की जाती है। नांगल का बिजलीघर तैयार हो गया है और इससे राजस्थान को बिजली मिलने लगी है। राजस्थान को बीकानेर और रतनगढ़ में बिजली दी गई है, जहाँ से यह अन्य शहरों और गाँवों में पहुँचाई गई है। फलस्वरूप चूरू, श्रीगंगानगर, झुंझुनूं व सीकर आदि स्थानों को भी भाखड़ा की बिजली पहुँचाई गई है।

(2) चम्बल परियोजना—चम्बल राजस्थान की सबसे बड़ी और एक अविरल बहने वाली नदी है। चम्बल विकास परियोजना पर राजस्थान और मध्य प्रदेश राज्य मिलकर कार्य कर रहे हैं। **इसमें राजस्थान का 50% हिस्सा है।** इस परियोजना के अन्तर्गत चम्बल नदी पर बाँध बनाया गया है।

***(i)* गाँधी सागर बाँध**—(प्रथम अवस्था)—यह भान-पुरी (मध्य प्रदेश) से 10 मील उत्तर-पश्चिम में और चौरासी-गढ़ से 5 मील नीचे बनाया गया है। यह सबसे बड़ा जलाशय है। ***(ii)* राणा प्रताप सागर बाँध**—(द्वितीय अवस्था)—यह पहले बाँध से 21 मील नीचे चूलिया झरने पर बनाया गया है। ***(iii)* जवाहर सागर बाँध**—(तृतीय अवस्था)—यह बाँध केवल 'पिक-अप' बाँध है जिसमें गाँधीसागर बाँध व राणा प्रताप सागर बाँधों से छोड़ा गया पानी इकट्ठा किया जाता है। यह कोटा शहर से 10 मील दक्षिण में बनाया जा रहा है। इसे कोटा बाँध भी कहते हैं। ***(iv)* कोटा सिंचाई बाँध** (Kota Barrage)—(प्रथम अवस्था)—यह कोटा शहर से 5 मील उत्तर में बनाया गया है। पहले तीन बाँधों के साथ पन-बिजलीघर भी बनाए गए हैं। इस योजना की पहली अवस्था में गाँधी सागर बाँध तथा बिजलीघर, कोटा सिंचाई बाँध और जवाहर सागर बाँध से दायीं और बायीं मुख्य नहरों का काम हाथ में लिया गया था, जो अब पूरा हो गया है। द्वितीय अवस्था में रावतभाटा के पास

राणाप्रताप सागर बाँध व बिजलीघर बनाए जा रहे हैं। तृतीय अवस्था में जवाहर सागर बाँध बनाया जा रहा है। **चम्बल परियोजना से राजस्थान में मुख्यतया कोटा व बूँदी जिलों में सिंचाई की सुविधा बढ़ेगी।** चम्बल कमाण्ड क्षेत्र में पानी के जमाव, क्षारयुक्त भूमि व पानी के मिट्टी में सोख लिए जाने की समस्याएँ उत्पन्न हो गई हैं, जिससे सिंचाई की पूरी क्षमता का उपयोग नहीं हो पा रहा है। विश्व बैंक की सहायक संस्था 'अन्तर्राष्ट्रीय विकास एसोसिएशन' (IDA) की सहायता से इन समस्याओं को हल करने का प्रयास किया जा रहा है। आधुनिकीकरण व पानी के निकास की व्यवस्था बहुत आवश्यक है। छठी योजना (1980-85) की अवधि में राणाप्रताप सागर, जवाहर सागर तथा लिफ्ट स्कीम के चालू कार्यक्रमों के लिए धनराशि की व्यवस्था की गई थी। चम्बल परियोजना के नए कार्यक्रमों में बूँदी शाखा का विस्तार, कोटा जलाशय को ऊँचा करना तथा डाउन स्ट्रीम प्रोटेक्शन वर्क्स शामिल किए गए थे। अब चम्बल परियोजना का काम पूरा हो गया है। **इससे 4.5 लाख हैक्टेयर भूमि में सिंचाई की जाती है तथा 386 मेगावाट जल-विद्युत उत्पन्न होती है। चम्बल लिफ्ट स्कीम के अन्तर्गत सिंचाई की अधिकतम क्षमता 47,880 हैक्टेयर रखी गई है।**

(3) व्यास परियोजना (Beas Project)—यह पंजाब, हरियाणा और राजस्थान राज्यों की मिलीजुली बहुउद्देशीय योजना है। **इस योजना में सतलज, रावी और व्यास तीनों के जल का उपयोग किया जा रहा है। इसकी निम्न तीन इकाइयाँ हैं—(1) व्यास-सतलज कड़ी (2) पोंग स्थान पर व्यास नदी पर बाँध (3) व्यास ट्रांसमिशन प्रणाली।** पहली इकाई में पण्डोह (Pandoh) (हिमाचल प्रदेश) नामक स्थान पर एक बाँध, दो सुरंग, सात मील लम्बी खुली हाइडल चेनल (बग्गी से सुन्दर नगर तक) एवं शक्ति-संयंत्र (देहर स्थान पर 165 मेगावाट क्षमता का) शामिल किया गया है।

दूसरी इकाई में **पोंग बाँध (व्यास नदी पर) का उद्देश्य राजस्थान के लिए पानी एकत्र करना है।** इससे पंजाब, हरियाणा व राजस्थान में सिंचाई की व्यवस्था की जा सकेगी। इसमें एक शक्ति-संयंत्र को स्थापित करने की योजना भी है। इसका निर्माण कार्य व्यास-नियंत्रण मण्डल की देखरेख में सम्पन्न किया जा रहा है। राजस्थान को व्यास परियोजना से प्रत्यक्ष रूप से सिंचाई का लाभ नहीं मिलेगा। यह इंदिरा गाँधी नहर परियोजना को स्थायी रूप से जल-सप्लाई करेगी। इस योजना से तीनों राज्यों में 21 लाख हैक्टेयर भूमि की सिंचाई हो सकेगी। इस परियोजना से राजस्थान राज्य को 150 मेगावाट विद्युत प्राप्त होगी (कुल क्षमता 240 मेगावाट होगी)।

रावी-व्यास नदी जल-विवाद[1]—पिछले दो दशकों से रावी-व्यास नदी जल-विवाद चलता आ रहा है। अन्तर्राज्यीय जल-विवाद (संशोधन) अधिनियम, 1986, पंजाब समझौते को लागू करने के लिए पारित किया गया था। इसके अन्तर्गत इराडी आयोग का गठन किया गया, जिसको दो कार्य सौंपे गए थे—

---

1 मूंगालाल सुरेका, "पंजाब व राजस्थान आमने-सामने", राजस्थान पत्रिका, 6 जून, 1986 तथा "इराडी पंचाट की असहनीय कार्यवाही", राजस्थान पत्रिका, 26 मई, 1987

(i) यह निर्धारित करना कि पंजाब, राजस्थान और हरियाणा के किसान 1 जुलाई को रावी-व्यास नदियों का कितना-कितना पानी उपयोग में ला रहे थे ताकि कम से कम उतना पानी उनको अवश्य मिलता रहे। (पंजाब समझौते के पैरा 9(1) के अनुसार)।

(ii) आयोग यह निर्णय करेगा कि पंजाब व हरियाणा के अपने बाकी बचे हुए हिस्से में से कितना हिस्सा किस राज्य (पंजाब या हरियाणा) को मिलेगा। आयोग का यह निर्णय केवल इन्हीं दो राज्यों पर लागू होगा। (पंजाब समझौते के पैरा (2) के अनुसार)

इस प्रकार इराडी आयोग की नियुक्ति किसी स्वतंत्र न्यायिक निर्णय के लिए नहीं की गई थी, बल्कि राजीव-लोंगोवाल पंजाब समझौते में किए गए राजनीतिक निर्णय को लागू करने में मदद देने के लिए की गई थी।

पंजाब का यह तर्क रहा है कि रावी-व्यास नदियाँ राजस्थान में होकर नहीं बहतीं, इसलिए इनके पानी पर राजस्थान का कोई अधिकार नहीं है। वस्तुस्थिति यह है कि पंजाब व हरियाणा के आपसी विवाद में राजस्थान को अनावश्यक रूप से घसीट लिया गया है। राजस्थान सिंध नदी का प्रदेश है और इस प्रकार इन नदियों के पानी में पूरा हकदार माना जाना चाहिए। राजस्थान के विशाल रेगिस्तानी व सूखा क्षेत्रों को सिंचाई के लिए पानी की नितान्त आवश्यकता है।

इराडी आयोग ने अपनी रिपोर्ट मई, 1987 में पेश की थी जिसके अनुसार पंजाब, हरियाणा व राजस्थान के पानी के हिस्से निम्न प्रकार निश्चित किए गए थे—

राज्य	नये निर्धारित अंश	पूर्व अंश
1 पंजाब	50 लाख एकड फुट	42 2 लाख एकड फुट
2 हरियाणा	38 लाख 30 हजार एकड़ फुट	35 लाख एकड़ फुट
3 राजस्थान	86 लाख एकड़ फुट	86 लाख एकड़ फुट

इस प्रकार इराडी आयोग की सिफारिशों से पंजाब व हरियाणा के हिस्से बढ़े तथा राजस्थान का यथावत रहा। इससे राजस्थान का वास्तविक अंश रावी-व्यास पानी में 3% कम हो गया। इस बात से राजस्थान का असंतुष्ट होना स्वाभाविक था, क्योंकि राज्य में बहुधा सूखा पड़ता रहता है और यहाँ की जल की आवश्यकता भी अधिक है। इसलिए राजस्थान का हिस्सा भी आनुपातिक रूप से बढ़ाया जाना चाहिए था, लेकिन समझौते के अन्तर्गत अतिरिक्त पानी पंजाब व हरियाणा में ही विभाजित किया गया।

जून 1992 में पंजाब के तत्कालीन मुख्यमंत्री श्री बेअंत सिंह ने सलाह दी थी कि राजस्थान को रावी-व्यास नदियों के अपने हिस्से के पानी में से 2 मिलियन एकड़ फुट (20 लाख एकड़ फुट) पानी हरियाणा को देना चाहिए, जो राष्ट्रहित में होगा। लेकिन यह सुझाव राजस्थान के हितों के विपरीत माना गया था। पंजाब व हरियाणा में सिंचित क्षेत्रफल का अनुपात राजस्थान मे कहीं ज्यादा है। राजस्थान द्वारा 2 मिलियन एकड़ फुट पानी कम कर

देने से इसकी लिफ्ट योजनाओं व कई कमाण्ड क्षेत्रों को पानी नहीं मिल पाएगा, जिससे राजस्थान के हितों को क्षति पहुँचेगी । पिछले दिनों पंजाब विधानसभा ने एक अधिनियम पारित करके सतलज-यमुना लिंक नहर बनाने से इन्कार कर दिया था जिससे राजस्थान, हरियाणा व सम्बद्ध राज्यों ने एतराज उठाया है । पंजाब के मुख्यमंत्री का कहना है कि उन्होंने अन्य राज्यों को पानी देने से इन्कार नहीं किया है । उनके हिस्से का पानी उनको मिलना बराबर जारी रहेगा । लेकिन पंजाब सरकार के इस प्रकार के एकतरफा निर्णय को अधिकांश क्षेत्रों में उचित नहीं माना गया है । अतः भविष्य में ऐसे निर्णयों में सभी की सहमति जरूरी मानी गयी है ।

(4) **माही बजाज सागर परियोजना**—यह राजस्थान का गुजरात की मिली-जुली परियोजना है। इससे दक्षिणी राजस्थान व उत्तरी गुजरात में सिंचाई की जाएगी । राजस्थान और गुजरात के बीच वर्ष 1966 में माही नदी के जल का उपयोग करने हेतु एक समझौता हुआ था । इसके अनुसार गुजरात में कडाना बाँध (Kadana Dam) बनाया जाना था, जिसकी पूरी लागत गुजरात वहन करेगा और वही उसका लाभ लेगा। लेकिन समझौते में यह व्यवस्था की गई थी कि नर्मदा का विकास होने पर कडाना बाँध का कुछ जल राजस्थान को भी दिया जाएगा और इसके लिए राजस्थान गुजरात को बाँध की यथोचित लागत भरेगा ।

माही बजाज सागर परियोजना पर 1968 से कार्य चल रहा है । इसकी प्रथम इकाई सिंचाई के लिए है, जिसमें राजस्थान व गुजरात दोनों का हिस्सा है, (मुख्य बाँध)—3109 मीटर लम्बा है। इसके व्यय मे गुजरात का अंश 55% तथा राजस्थान का 45% है । इकाई II मे सिचाई व शक्ति दोनों में केवल राजस्थान का ही हिस्सा है, इकाई III भी मात्र राजस्थान का ही शक्ति वाला भाग है, इकाई IV में राजस्थान का ही सिंचाई वाला भाग शामिल है । सातवीं योजना मे इकाई V पर भी कुछ व्यय किया गया था । यह भी राजस्थान के सिचाई वाले भाग के लिए ही था ।

योजना की तीसरी इकाई में शक्ति का विकास किया जा रहा है। शक्ति गृह नं. 2 का कार्य काफी आगे बढ़ गया है। इस पर 45-45 मेगावाट की दो इकाइयाँ लगाई जा रही हैं। प्रथम पावर हाउस में 25-25 मेगावाट की दो इकाइयाँ हैं। इसे जनवरी, 1986 में राष्ट्र को समर्पित किया गया था । इस प्रकार इसकी पावर की कुल क्षमता (90+50) = 140 मेगावाट है। पावर हाउस नं. 2 की पहली इकाई फरवरी 1986 में तथा दूसरी इकाई जुलाई 1989 में चालू की गई थी । राजस्थान व गुजरात राज्य में 8 8 लाख हैक्टेयर भूमि में सिंचाई का पानी मिलेगा । संशोधित प्रोजेक्ट के तहत कृषियोग्य कमांड क्षेत्र (CCA) 80 हजार हैक्टेयर आंका गया है, जिसकी अनुमानित लागत लगभग 802 करोड़ रु. है जिसमें से लगभग 701 करोड़ रु. मार्च 2004 तक व्यय किये जा चुके हैं । मार्च 2004 के अन्त तक 65450 हैक्टेयर क्षेत्र सिंचाई के तहत लाया जा सका है ।[1] 2004-05 में माही परियोजना के लिए 50 करोड़ रु. का प्रावधान किया गया है ।

---

1. Economic Review 2003-04, p 51.

सिंचाई व विद्युत की सुविधा मिलने से इस आदिवासी बाहुल्य क्षेत्र का कृषिगत व औद्योगिक विकास होगा, जिससे लोगों के जीवन में आमूलचूल परिवर्तन हो सकेगा।

सिंचाई की वृहद् परियोजनाएँ (Major Irrigation Projects)

इन्दिरा गाँधी नहर परियोजना का मानचित्र

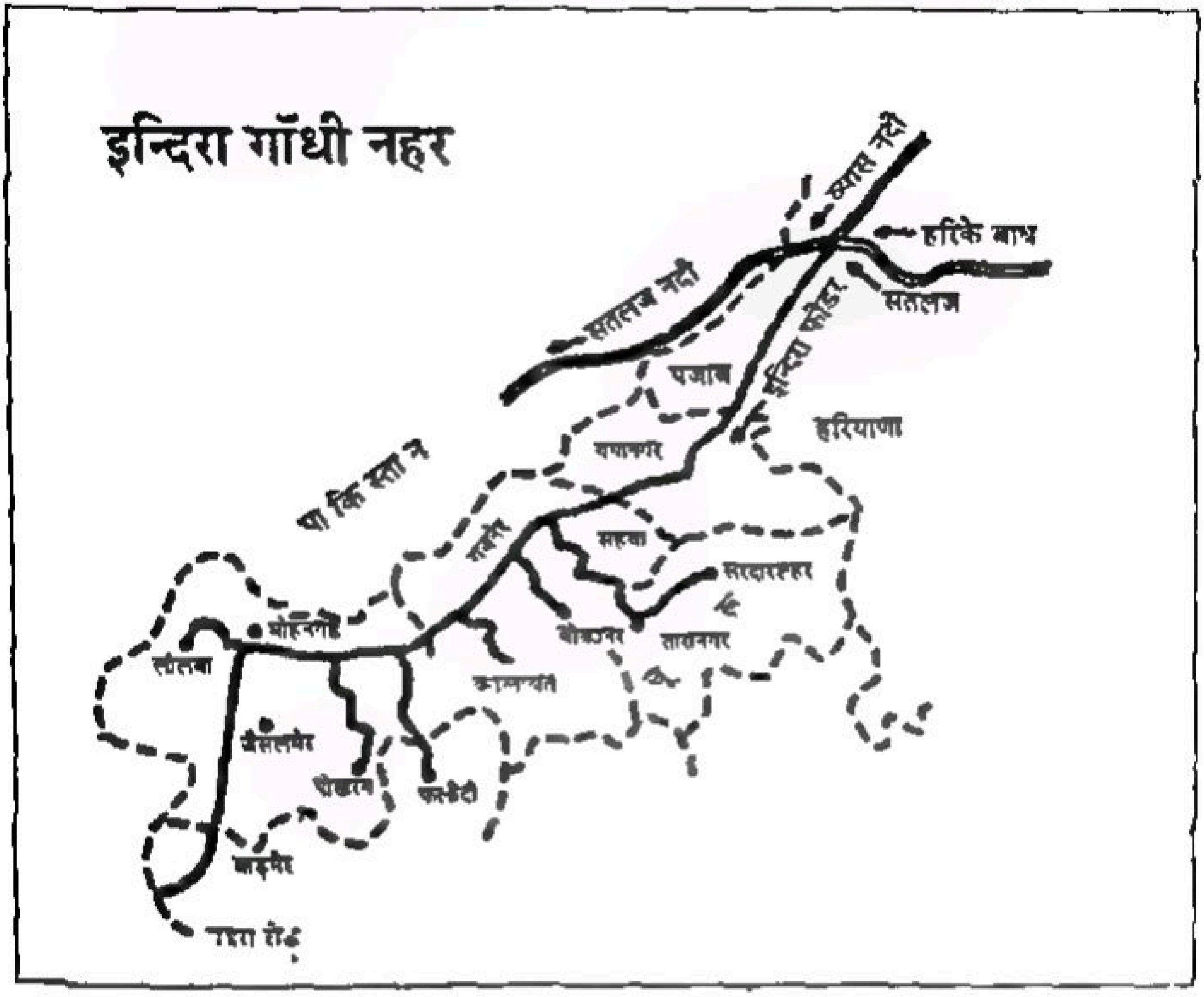

(1) **इन्दिरा गाँधी नहर परियोजना (इगानप) (Indira Gandhi Nahar Project) (IGNP) का विवरण**[1]—यह पहले राजस्थान नहर परियोजना कहलाती थी। इस परियोजना के पूरा हो जाने से यह विश्व की सबसे लम्बी सिंचाई प्रणालियों (Irrigation Systems) में से एक मानी जाएगी। यह थार के रेगिस्तान के बड़े भू-भाग को हरा-भरा बना देगी तथा चूरू, श्रीगंगानगर, बीकानेर, जैसलमेर, जोधपुर व बाड़मेर जिलों को लाभ पहुँचाएगी। इसकी सिंचाई की कुल सम्भाव्यता या क्षमता (*irrigation potential*) 15 17 लाख हैक्टेयर होगी।[1] इसके अन्तर्गत कृषि योग्य कमाण्ड क्षेत्र (Culturable Command area) 17 41 लाख हैक्टेयर होगा (चरण I में 5 53 लाख हैक्टेयर तथा चरण II में 11 88 लाख हैक्टेयर)।

1. Economic Review 2003-04, p. 50

प्रथम चरण (Stage I) के अन्तर्गत 204 किलोमीटर राजस्थान फीडर (जो पंजाब में व्यास व सतलज नदियों के संगम पर हरीके बाँध से प्रारम्भ होती है और हनुमानगढ़ के पास मसीतावाली गाँव पर समाप्त होती है), 189 किलोमीटर लम्बी राजस्थान मुख्य नहर तथा 3109 किलोमीटर में वितरिकाओं के निर्माण कार्य रखे गए थे, जो पूरा होने में आ गए हैं। द्वितीय चरण (Stage II) में 256 किलोमीटर लम्बी मुख्य नहर (189 किलोमीटर से 445 किलोमीटर तक) (छतरगढ़ से जैसलमेर जिले में मोहनगढ़ तक) तथा 5756 किलोमीटर में वितरिकाओं (कृषि योग्य कमाण्ड क्षेत्र व छः लिफ्ट नहरों के क्षेत्रों को शामिल करके) के निर्माण कार्य रखे गए हैं। 256 किलोमीटर मुख्य नहर का निर्माण कार्य वर्ष दिसम्बर 1986 में पूरा हो गया। मार्च 2004 तक शाखाओं व वितरिकाओं का निर्माण 7524 किलोमीटर की दूरी में पूरा किया गया, जबकि लक्ष्य 9060 किलोमीटर का था। इस पर कुल व्यय 2600.89 करोड़ रु. का हुआ जो प्रथम चरण में 393.17 करोड़ रु. का तथा दूसरे चरण में 2207 72 करोड़ रु. का था। 2003-04 के अन्त तक 12.13 लाख हैक्टेयर में सिंचाई की क्षमता सृजित की जा सकी है।[1] 2004-05 में इंदिरा गाँधी नहर परियोजना के लिए योजना-मद में 177 करोड़ रुपये का प्रावधान किया गया है। इस व्यय से पक्की नहरों का निर्माण कराया जाएगा जिससे 115 हजार हैक्टेयर क्षेत्र में अतिरिक्त सिंचाई की सुविधा हो सकेगी।[2] इसके अलावा 2003-2004 में इंदिरा गाँधी नहर परियोजना सिंचित क्षेत्र के विकास के लिए 63 करोड़ 59 लाख रुपये का प्रावधान किया गया था। इसका उपयोग विशेषकर पक्के खालों के निर्माण, सेम-समस्या-निवारण व कृषि-विस्तार-कार्यक्रमों पर किया जाना था, जिसके फलस्वरूप अतिरिक्त क्षेत्र में सिंचाई की सुविधा विकसित हो सकेगी।

एक अनुमान के अनुसार इस परियोजना से 1600 करोड़ रु. का वार्षिक कृषिगत उत्पादन प्राप्त होने लगा है। 1 जनवरी, 1987 को मुख्य नहर के अन्तिम छोर तक पानी पहुँचाया गया था। हिमालय की गगनचुम्बी बर्फीली चट्टानों से सैकड़ों मील दूर प्यासे और तपते हुए रेगिस्तान को जीवनदायक जल पहुँचाना एक भागीरथ प्रयास की सुखद परिणति है। इसके साथ ही वितरिकाओं का निर्माण कार्य भी कराया गया है। योजना का प्रथम चरण वर्ष 2000-2001 तक तथा दूसरा चरण वर्ष 2005 तक पूरा होने की आशा है। योजना के दोनों चरणों की कुल लागत उत्तरोत्तर बढ़ती गई है।

जैसलमेर जिले को समृद्ध बनाने में लाठी सिरीज के क्षेत्र का महत्त्वपूर्ण योगदान होगा। यहाँ पानी पहुँचते ही खेती होने लगेगी। वैसे भी वहाँ मामूली बरसात से 'सेवण' घास पैदा होती है, जो पशुओं के लिए पौष्टिक मानी जाती है। मोहनगढ़ से आगे राजस्थान नहर के अन्तिम छोर से लीलवा शाखा निकाली जा रही है। यह 90 किलोमीटर लम्बी होगी और लाठी सिरीज क्षेत्र में सिंचाई करेगी। ताजा सूचना के अनुसार, राजस्थान नहर का

1. Economic Review 2003-04, p. 50.
2. बजट-भाषण, 12 जुलाई 2004, पृ. 56

पानी सदियों से प्यासे पश्चिमी राजस्थान में मरुस्थलीय जैसलमेर जिले में मोहनगढ़ से कई किलोमीटर आगे तक पहुँच गया है। पानी के अभाव में वीरान पड़े हुए मोहनगढ़ क्षेत्र के निवासियों एवं पशु-पक्षियों को पहली बार मीठा पेयजल मिला है तथा शुष्क इलाके को सिंचाई की सुविधा मिली है। अब इस परियोजना को बाड़मेर में गडरा रोड तक बनाने की स्वीकृति मिल गई है।

इन्दिरा गाँधी नहर परियोजना से राज्य में गेहूँ, कपास व तिलहन की पैदावार बढ़ेगी। नये उद्योग, नये नगर, नई बस्तियाँ, ये सब नहर के ही वरदान होंगे। नहरी क्षेत्र में लाखों व्यक्तियों को बसाने का कार्यक्रम है। इसके लिए 'मास्टर प्लान' पर कार्य किया जा रहा है। इस परियोजना की यह विशेषता है कि इससे पहली बार नई भूमि पर खेती की जा सकेगी। इससे रावी-व्यास के जल का ज्यादा गहरा उपयोग हो सकेगा और कमाण्ड क्षेत्र में निरन्तर सूखे के कारण अकाल-राहत कार्य किया जा रहा है। इसलिए इस परियोजना का महत्त्व काफी बढ़ गया है। इस परियोजना के पूरा होने पर सारा देश लाभान्वित होगा।

जैसा कि पहले बताया जा चुका है, एक अतिरिक्त नहर (लीलवा शाखा) के निर्माण का काम चल रहा है। मुख्य नहर के आखिरी छोर से एक और बड़ी शाखा दीघा भी निकाली जाएगी, जिसका निर्माण कार्य भी हाथ में लिया जा चुका है। इन दोनों शाखाओं से जैसलमेर का क्षेत्र कुछ ही वर्षों में चमन हो जाएगा।

योजना को पूरा करने में सीमेन्ट व कोयला बाधा डाल रहे हैं। इस नहर से लिफ्ट सिंचाई (जलोत्थान) स्कीम को कार्यान्वित करने की योजना बनाई है ताकि राज्य के पश्चिमी भाग को सिंचाई के लिए जल मिल सके। मुख्य नहर से 7 लिफ्ट नहरें निकाली गई हैं। इन लिफ्ट नहरों में पानी को ऊपर उठाया जाता है। एक बार में लिफ्ट में पानी को 60 मीटर ऊपर उठा सकते हैं। जोधपुर को लिफ्ट नहर से 1992 में पानी देने का लक्ष्य रखा गया था। सात लिफ्ट नहरों के नाम इस प्रकार हैं—

(1) कंवरसेन लिफ्ट नहर (बीकानेर-लूणकरणसर लिफ्ट नहर)—इससे बीकानेर शहर को पानी मिलेगा।

(2) गजनेर लिफ्ट नहर

(3) साहवा लिफ्ट नहर—इससे कई गाँवों के अलावा सरदारशहर व तारानगर को पानी मिलेगा।

(4) बांगड़सर लिफ्ट नहर

(5) कोलायत लिफ्ट नहर

(6) फलौदी लिफ्ट नहर

(7) पोकरण लिफ्ट नहर

इन्दिरा गाँधी नहर परियोजना से थार के बड़े क्षेत्र को सिंचाई का लाभ मिलेगा तथा फलों के पेड़ों का विस्तार किया जा सकेगा। राज्य सरकार चाहती है कि इस परियोजना को केन्द्रीय सरकार पूरा करे क्योंकि इसके लिए भारी मात्रा में वित्तीय व्यय की आवश्यकता

है । अतः सतलज-यमुना लिंक (SYL) की भाँति इसका वित्तीय भार भी केन्द्र को वहन करना चाहिए । इससे राज्य के आर्थिक विकास में विभिन्न प्रकार से मदद मिलेगी; जैसे सिंचित क्षेत्र में वृद्धि, कृषिगत उपज में वृद्धि, बिजली के उत्पादन में वृद्धि, पेयजल की सप्लाई में वृद्धि, रेगिस्तान के प्रसार पर रोक, मछली पालन को प्रोत्साहन, परिवहन का विकास, अनाज की मण्डियों का निर्माण, पशुपालन का विकास, औद्योगिक विकास, पर्यटन-विकास आदि ।

सिंचाई के अलावा कंवरसैन लिफ्ट कैनाल से बीकानेर व 99 गाँवों को पेयजल की सुविधा दी गई है । इसके अलावा गंधेलीसहवा लिफ्ट स्कीम से चूरू जिले के 175 गाँवों को तथा मुख्य नहर से जोधपुर लिफ्ट स्कीम के जरिए जोधपुर शहर व बीच में पड़ने वाले गाँवों को पेयजल की सुविधा दी गई है । इन्दिरा गाँधी सिंचित विकास परियोजना के अन्तर्गत वृक्षारोपण, पक्के खालों के निर्माण, सड़कों व नई डिग्गियों के निर्माण तथा टीला-स्थिरीकरण आदि कार्यक्रमों पर बल दिया गया है ।

इन्दिरा गाँधी नहर परियोजना को पूरा करने के लिए भारी मात्रा में धन की आवश्यकता होगी जिसे केन्द्र देने में असमर्थ है । अतः इसके लिए अन्तर्राष्ट्रीय स्रोतों से साधन जुटाने होंगे । परियोजना से बेहतर लाभ प्राप्त करने के लिए पशुपालन, चरागाह विकास व स्थानीय परिस्थितियों के अनुरूप खेती पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए ।

इन्दिरा गाँधी नहर में कई स्थानों पर भारी रिसाव (सेम) से काफी उपजाऊ भूमि नष्ट होकर दलदली बनती जा रही है । उपजाऊ भूमि पर सेम का पानी व जहरीला घास नजर आने लगा है । भूमि के नीचे जिप्सम की कठोर परत है तथा किसान पानी अधिक देते हैं जिससे सेम की समस्या उत्पन्न हो गई है । इस समस्या का समाधान होना चाहिए । यदि सेम नहर से हो रहा है तो सीमेन्ट प्लास्टर पर एक-एक टाइल की लाइनिंग की एक और परत बिछा कर उसे रोका जाना चाहिए । रिसाव रोकने का कार्य शीघ्र ही किया जाना चाहिए । जैसा कि पहले कहा जा चुका है अमृत नाहटा का मत है कि इंदिरा गाँधी नहर का क्षेत्र पशुपालन, फलों के वृक्ष व बागवानी के ज्यादा योग्य है, और यह नहर खुली न रखकर पाइपों के द्वारा पानी ले जाने की दृष्टि से बनायी जाती तो ज्यादा अच्छा होता ।

वर्ष 1999-2000 के बजट में सरकार ने इन्दिरा गाँधी नहर क्षेत्र में भूमि को बेचकर 200 करोड़ रु. जुटाने का लक्ष्य घोषित किया गया था । इससे उपनिवेशन की प्रक्रिया को बढ़ावा मिलेगा और भूमि का आवंटन किया जाएगा ।

(2) अन्य वृहद् सिंचाई परियोजनाएँ—जैसा कि पहले कहा जा चुका है कि इस समय सिंचाई की निम्न 7 बड़ी परियोजनाओं पर भी काम किया जा रहा है—गुड़गाँव नहर, ओखला जलाशय, नर्मदा, जाखम (जनजाति योजना के अन्त-र्गत), बीसलपुर (जिला टोंक), नोहर फीडर तथा सिद्धमुख । इन सिंचाई की वृहद् परियोजनाओं का संक्षिप्त परिचय अग्र तालिका में दिया गया है—

	वृहद् सिंचाई की परियोजनाएँ	जिला	अधिकतम सिंचाई की क्षमता (हैक्टेयर में)
1	जाखम	उदयपुर	23505
2	गुड़गाँव नहर	भरतपुर	28300
3	ओखला जलाशय	भरतपुर	(गुड़गाँव का ही भाग)
4	नर्मदा	जालौर	73157
5	सिद्धमुख	श्रीगंगानगर	33620
6	नोहर	श्रीगंगानगर	13665
7	बीसलपुर	टोंक	69300
			(इसकी 72% सिंचाई-क्षमता पर 49900 हैक्टेयर में सिंचाई की सुविधा)

इनमे से कुछ का सक्षिप्त परिचय इस प्रकार है–

(1) सिद्धमुख परियोजना– इससे श्रीगंगानगर जिले की नोहर व भादरा तहसीलों तथा चूरू जिले की राजगढ़ (सादुलपुर) व तारानगर तहसीलों को सिंचाई का लाभ मिलेगा। इसमें राजस्थान रावी-व्यास नदियों के सरप्लस पानी का उपयोग करेगा जो उसके हिस्से में दिसम्बर 1981 मे पजाब, हरियाणा व राजस्थान के बीच हुए एक समझौते के अन्तर्गत मिला है। राजस्थान को मिलने वाला पानी नागल हैड वर्क्स से भाखड़ा मुख्य नहर, पजाब मे होते हुए फतेहाबाद शाखा तथा किशनगढ़ उपशाखा, हरियाणा के समानान्तर नहर द्वारा लाया जाएगा। **310 करोड़ रु. की लागत की इस परियोजना का 12 जुलाई, 2002 को लोकार्पण किया जा चुका है। इसके माध्यम से 94 हजार हैक्टेयर भूमि में सिंचाई की सुविधा मिल गयी है।**

(2) नोहर परियोजना का लाभ श्रीगंगानगर जिले में नोहर तहसील को मिलेगा। ये दोनों परियोजनाएँ एक ही कार्यक्रम का अंग हैं। इसमें रावी-व्यास नदियों के सरप्लस पानी का उपयोग किया जाएगा। इसकी अनुमानित लागत 40 60 करोड़ रुपये है। सिद्धमुख व नोहर क्षेत्र में सिंचाई की वृहद् परियोजना को कार्यान्वित करने के लिए यूरोपीय आर्थिक समुदाय के साथ आर्थिक समझौता हुआ है।

(3) नर्मदा परियोजना—गुजरात राज्य की सरदार सरोवर नर्मदा परियोजना एक वृहद् परियोजना है। इस परियोजना की कुल अनुमानित लागत 548 करोड़ रुपये आंकी गई है। इससे राजस्थान को भी सिंचाई का लाभ जालौर जिले के 76 गाँवों तथा बाड़मेर जिले के 7 गाँवों को मिलेगा। राजस्थान में इसके लिए नहर निर्माण कार्य 8 वर्ष में पूरा होने का प्रस्ताव है। नर्मदा के जल के बँटवारे के बारे में राजस्थान व गुजरात में कोई मतभेद नहीं है। राजस्थान के हिस्से की नहरें बनाने का कार्य सरकार के द्वारा अपने हाथ में लिया गया है।

(4) बीसलपुर योजना (Bisalpur Project)—इस परियोजना में बनास नदी पर बीसलपुर गाँव के पास एक बाँध बनाया जा रहा है। यह गाँव टोंक जिले में टोडारायसिंह कस्बे में 13 किमी. दूर है, उस पर 1986-87 में कार्यारम्भ हुआ था। यह परियोजना दो चरणों में पूरी की जाएगी।

इस परियोजना का मुख्य उद्देश्य 6 नगरों को घरेलू उपयोग के लिए पानी देना है और टोंक, अजमेर तथा बूंदी जिलों के गाँवों को सिंचाई के लिए पानी उपलब्ध कराना है।

इस प्रोजेक्ट के द्वारा जयपुर, अजमेर, ब्यावर, किशनगढ़, नसीराबाद, केकड़ी और सरवाड़ आदि को पानी दिया जायगा, जहाँ भी पीने के पानी और घरेलू उपयोग व कल-कारखानों के लिए पानी की बहुत कमी रहती है। इस कमी को पूरा करने के लिए बनास नदी के बहाव क्षेत्र में चार स्थानों पर नलकूप और कुएँ खोदे गए हैं। ये चार स्थान सांडला, छतरी, नेगडिया और देवली हैं।

सांडला में 20 नलकूप, छतरी में 16 नलकूप और एक कुआ तथा नेगडिया और देवली में एक-एक कुआ खोदा गया है। आगे चलकर इस परियोजना से पेयजल का लाभ जयपुर शहर को भी मिलेगा। **इस प्रोजेक्ट से टोंक जिले की 81800 हैक्टेयर कृषिगत भूमि में सिंचाई हो सकेगी। प्रोजेक्ट की संशोधित लागत 658 करोड़ रु. आँकी गई है।** अब तक 42500 हैक्टेयर मे सिंचाई का पानी पहुँचाने की व्यवस्था की जा चुकी है। प्रोजेक्ट के वर्ष 2006 तक पूरा होने की आशा है।

कुछ अन्य बाँधों का परिचय

***(i)* जवाई बाँध**—यह बाँध जवाई नदी पर बना है जो पश्चिमी राजस्थान में लूनी नदी की सहायक है। जवाई नदी पाली जिले में अरावली पर्वत के पश्चिमी ढाल पर बहती है। यहाँ एरिनपुरा रेलवे स्टेशन से 3 किमी. दूर जवाई बाँध बनाया गया है। इस बाँध को बनाने का काम 1946 में शुरू हुआ था और यह 1951-52 में बनकर तैयार हो गया था।

इस बाँध से जोधपुर, सुमेरपुर और पाली शहरों को घरेलू उपभोग के लिए पानी दिया जाता है। इसके अलावा पाली जिले में 26 हजार हैक्टेयर भूमि और जालौर जिले में 15 हजार हैक्टेयर भूमि पर सिंचाई होती है।

इस परियोजना में एक पक्का बाँध बनाया गया है। इसके दोनों किनारों पर मिट्टी का बाँध है। इसके दोनों ओर ऊँची दीवारें हैं। बाँध से 176 किमी लम्बी नहर निकाली गई है।

***(ii)* जाखम बाँध**—यह बाँध जाखम नदी पर प्रताप-गढ़ तहसील (जिला चित्तौड़-गढ़) में बनाया गया है। जाखम नदी माही नदी की सहायक नदी है। बाँध बनाने का कार्य 1962 में शुरू किया गया था। इसका मुख्य उद्देश्य धरियाबाद (जिला उदयपुर) और प्रतापगढ़ के गाँवों में सिंचाई की सुविधा उपलब्ध कराने का है। इन क्षेत्रों में ज्यादातर भील आदिवासी रहते हैं। आदिवासी क्षेत्रों को इस योजना से बहुत लाभ पहुंचा है।

मुख्य बाँध से 13 किमी. नीचे नागरिया गाँव में एक पिकअप बाँध बनाया गया है। ऊपरी बाँध के प्रवाह-क्षेत्र में ऊबड़-खाबड़ जमीन है जो खेती के लिए उपयोगी नहीं है, इसलिए निचले उपजाऊ भागों को सिंचाई करने के लिए एक पिक-अप बाँध बनाना जरूरी था।

पिकअप बाँध के दायें और बायें किनारों से दो नहरें निकाली गई हैं। मुख्य बाँध पर 4.5 मेगावाट जल-विद्युत बनाने की दो इकाइयाँ लगाई गई हैं जिनसे 9 मेगावाट बिजली पैदा होती है। इस परियोजना से कुल 23505 हैक्टेयर में सिंचाई की जा सकेगी। जाखम परियोजना का निर्माण जनजाति उप-योजना (tribal sub-plan) के अन्तर्गत किया गया है।

***(iii)* मेजा बाँध**—यह बाँध भीलवाड़ा जिले के माण्डलगढ़ कस्बे से 8 किमी. दूर कोठारी नदी पर बनाया गया है। बाँध का निर्माण 1957 में शुरू हुआ था और यह 1972 में बनकर तैयार हो गया था। इससे भीलवाड़ा जिले में 10 हजार हैक्टेयर भूमि की सिंचाई होती है। इस बाँध से भीलवाड़ा नगर को भी घरेलू उपभोग के लिए पानी दिया जाता है। यहाँ पाइप लाइन भी फरवरी 1985 में बनकर तैयार हो गई थी।

***(iv)* पांचना बाँध**—यह मिट्टी का बाँध करौली के समीप सवाई माधोपुर जिले में पाँच छोटी-छोटी नदियों के संगम पर गम्भीरी स्थान पर बनाया जा रहा है। बाँध पूरा भर जाने पर करौली कस्बे के कुछ भाग को खतरा उत्पन्न हो सकता है। बाँध से निकाली गई नहरों और पुलियाओं के निर्माण का काम चल रहा है। इससे गंगापुर, हिण्डौन, नादौती, टोडाभीम आदि तहसीलों में 9980 हैक्टेयर भूमि में सिंचाई हो सकेगी।

***(v)* मोरेल बाँध**—यह बाँध मोरेल नदी पर लालसोट से लगभग 16 किमी दूर सवाई माधोपुर जिले में बनाया गया है। इससे 8 6 हजार हैक्टेयर भूमि पर सिंचाई की जाती है।

वर्तमान में राज्य में कुछ प्रमुख मध्यम सिंचाई की परियोजनाओं के नाम व जिले नीचे दिए जाते हैं—

मध्यम सिंचाई परियोजनाएँ	जिला
1 भीमसागर	झालावाड़
2 छापी	झालावाड़
3. हरिश्चन्द्र सागर	झालावाड़
4 बिलास	बारां
5 सावन भादों	कोटा
6. परवन लिफ्ट	कोटा
7. सोम-कमला-अम्बा	डूँगरपुर
8. सोम कागदर	उदयपुर
9 पांचना	सवाई माधोपुर

राज्य सरकार गंगा व उसकी सहायक नदियों के अधिक जल को राजस्थान में लाने के लिए शारदा यमुना, तथा राजस्थान साबरमती लिंक नहर शीघ्र बनाने के लिए प्रयास कर रही है। इसके तहत शारदा का पानी यमुना में डाला जाना प्रस्तावित है। इसके बाद राजस्थान साबरमती लिंक नहर से हनुमानगढ़, बीकानेर, जोधपुर, जैसलमेर, बाडमेर व

सिरोही जिलों को सिंचाई व पेयजल की सुविधा मिलेगी ।[1]

वर्तमान में 7 वृहद्, 7 मध्यम एवं 140 लघु सिंचाई परियोजनाएँ निर्माणाधीन हैं । छापी, पांचना एवं बेथली मध्यम तथा 35 लघु सिंचाई परियोजनाएँ 2004-05 में पूर्ण की जायेंगी । (बजट-भाषण, 12 जुलाई 2004, पृ. 57) ।

राजस्थान में भू-जल (Ground Water) का सिंचाई के लिए विकास[2]

फरवरी 1991 में राजस्थान के भू-जल विभाग ने भू-जल साधनों व सिंचाई की सम्भाव्यता के सम्बन्ध में निम्न अनुमान प्रस्तुत किए थे—

		मिलियन एकड़ फुट (MAF)
1	कुल भू-जल साधन	12 27
2	घरेलू व औद्योगिक उपयोगों में प्रयोग के लिए (रिजर्व रखा गया)	1 99
3	सिंचाई में काम लेने के लायक मात्रा	10 80
4	सिंचाई में प्रयुक्त मात्रा (net draft)	5 82
5	सिंचाई के लिए भू जल बकाया-मात्रा (balance)	4 98
[illegible]	भूजल का सिंचाई में अब तक उपयोग (क्रम 4 का क्रम 3 से अनुपात)	लगभग 54 प्रतिशत

इस प्रकार वर्तमान में भूजल का सिंचाई के लिए 54% तक का उपयोग ऊँचा है । राज्य में जल-सतह तेजी से नीचे जा रही है । भूजल के कई क्षेत्रों में यह जल के अत्यधिक उपयोग को सूचित करने लगी है । जयपुर, झुंझुनूं, पाली, अलवर, जोधपुर, सीकर व जालौर जिलों में स्थिति काफी भयावह हो गई है, क्योंकि इनमें भूजल का उपयोग 85% से अधिक स्तर तक पहुँच गया है । विद्युत की सहायता से भूजल का उपयोग पीने व सिंचाई के लिए अत्यधिक मात्रा में हुआ है ।

1979-80 में भूजल से सिंचाई 14 6 लाख हैक्टेयर में की गई जो बढ़कर 1989-90 में 17.6 लाख हैक्टेयर तक पहुँच गई । अत: 1979-90 की अवधि में इसमें लगभग 21% की वृद्धि हुई है । अनुमान है कि 2000 ईस्वी तक भूजल का उपयोग 67% तक होने लग जाएगा, जो वर्तमान में 54% आंका गया है ।

भविष्य में सिंचाई के विकास की रणनीति सही होनी चाहिए । इसके लिए सिंचाई के लिए उपलब्ध जल का ज्यादा से ज्यादा क्षेत्र में उपयोग किया जाना चाहिए । बड़े व मध्यम सिंचाई के अधूरे प्रोजेक्टों को पहले पूरा करना चाहिए । नये प्रोजेक्ट धन की व्यवस्था होने पर ही हाथ में लेने चाहिए । पहले से उत्पन्न सिंचाई की क्षमता का पूरा-पूरा उपयोग करना चाहिए । रिसाव व वाष्पायन (seepage and evaporation) से होने वाली क्षति कम की जानी चाहिए । जल-मार्गों की लाइनिंग की जानी चाहिए । फसलों को इतनी बार पानी देना चाहिए ताकि ज्यादा से ज्यादा उपज मिल सके । इसके लिए फसलवार अधिकतम पानी देने का क्रम तय किया जाना चाहिए । सिंचाई

1 राज्यपाल श्री अंशुमान सिंह का विधान सभा में अभिभाषण, [illegible] फरवरी, 2003, पृ [illegible]

2 Papers on Perspective Plan, Rajasthan, 1990-2000 AD. pp 119-122

के प्रोजेक्टों के रख-रखाव पर पर्याप्त धनराशि के व्यय की व्यवस्था की जानी चाहिए क्योंकि रख-रखाव की कमी से इनमें तेजी से गिरावट आती है।

राजस्थान जल विकास निगम लि. (Rajasthan Water Resources Development Corporation Ltd.)—यह 1984 में कम्पनी के रूप में स्थापित किया गया था। इसके निम्न कार्य हैं—

(1) **भू-जल** (Ground Water) की जाँच करना, ट्यूबवैल स्थापित करना तथा भूजल का उपयोग कृषि, उद्योग, पीने, घरेलू व अन्य उपयोगों के लिए निर्धारित करने में मदद देना।

(2) **सतह के जल** (Surface Water) का उपयोग कृषि, उद्योग, पीने व घरेलू आदि कार्यों के लिए निर्धारित करना।

(3) पानी को लिफ्ट करने व उपयुक्त स्थान पर पहुँचाने के लिए ऊर्जा के स्रोतों की व्यवस्था में मदद देना।

निगम की **वित्तीय स्थिति** में सुधार की आवश्यकता है। इसे 1997-98 में शुद्ध लाभ 18.5 लाख रु., 1998-99 में 21.3 लाख रु. व 1999-2000 में 13 लाख रु. का मुनाफा प्राप्त हुआ।[1] यह जल-साधनो के उपयोग व विकास में महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर सकता है।

सिंचित क्षेत्रों में कमाण्ड क्षेत्र विकास कार्यक्रम—कमाण्ड क्षेत्र विकास (Command Area Development) राज्य सरकार ने पाँचवीं योजना में कमाण्ड क्षेत्र विकास कार्यक्रम शामिल किया था। वैसे इस कार्यक्रम पर चतुर्थ योजना की अवधि में भी कुछ सीमा तक बल दिया गया था। अब तक इसके अन्तर्गत इंदिरा गाँधी नहर परियोजना का क्षेत्रीय विकास-कार्यक्रम, चम्बल कमाण्ड क्षेत्र का विकास-कार्यक्रम तथा माही कमाण्ड क्षेत्र विकास कार्यक्रम शामिल किए गए हैं। इनका विवरण नीचे दिया जाता है—

(1) **इन्दिरा गाँधी नहर क्षेत्र विकास कार्यक्रम**—इसमें निम्न प्रकार के कार्यक्रम आते हैं जो रेगिस्तानी क्षेत्रों में जल का उपयोग करने के लिए आवश्यक हैं—

(अ) भूमि को समतल करना,

(ब) पानी की नालियों को पक्का करना,

(स) सड़क व डिग्गियों का निर्माण, शिक्षा, मण्डियों का विकास, ग्रामीण जल सप्लाई, कृषि, सहकारिता, पशु-पालन व मछली पालन। इन कार्यों को संचालित करने में विश्व बैंक की सहायक संस्था—अन्तर्राष्ट्रीय विकास एसो-सियेशन से मदद ली गई है। विश्व खाद्य कार्यक्रम के अन्तर्गत 24 महीने की फ्री-राशन तथा प्रत्येक बसने वाले को 2 हजार रुपये ब्याज-मुक्त कर्ज दिया गया है।

1992-93 से जापान के ओवरसीज इकोनोमिक को-ऑपरेशन फण्ड (OECF) की वृक्षारोपण-परियोजना प्रारम्भ की गई है जिसका उद्देश्य इस क्षेत्र को हरा-भरा करना है। इसके लिए जापान से वित्तीय सहायता प्राप्त होती है। इसके अतिरिक्त खालों, सड़कों,

---

1 Report of Raj Singh Nirwan Committee, March 2001, p 62

पेयजल हेतु डिग्गियों एवं नई मण्डियों के बीकानेर व जैसलमेर में निर्माण कार्य भी सम्पन्न किए जाएँगे। आठवीं पंचवर्षीय योजना में इन्दिरा गाँधी नहर क्षेत्र विकास कार्यक्रम पर लगभग 500 करोड़ रु. व्यय करने का लक्ष्य था। इसमें प्रस्तावित व्यय का उपयोग निम्न कार्यों के लिए किया गया—सामान्य वृक्षारोपण, भूमि-विकास कार्य, सड़क-निर्माण, नहरों के किनारे वृक्षारोपण, डिग्गियों का निर्माण, टिब्बा-स्थिरीकरण, आदि। सेम व खार की समस्या को हल करने का भी प्रयास किया जा रहा है। वर्ष 2004-2005 में इस क्षेत्र में खालों का निर्माण-कार्य जारी रखा गया है।

(2) चम्बल कमाण्ड क्षेत्र विकास कार्यक्रम—यहाँ पर विकास कार्य 1974-75 में चालू किया गया था। इस क्षेत्र के विकास कार्यक्रम इन्दिरा गाँधी क्षेत्र के विकास कार्यक्रम से थोड़े भिन्न हैं, क्योंकि यह एक पहले से बसा हुआ इलाका था, जहाँ लम्बी अवधि से रेवेन्यू प्रशासन चला आ रहा था। यहाँ सामाजिक सेवाओं का कुछ सीमा तक विकास हो चुका था। अत: इस क्षेत्र में जल का अधिकतम उपयोग करने के लिए जल की उचित किस्म की निकास-प्रणाली (Proper Drainage System) का विकास किया जाना चाहिए तथा जंगली घास-पात को उखाड़ने की समस्या को हल किया जाना चाहिए। अन्य कार्यक्रमों में वृक्षारोपण, कृषि के कच्चे माल पर आधारित उद्योगों का विकास, प्रोसेसिंग उद्योग, ग्रामीण गोदाम व ग्रामीण भवन निर्माण पर जोर दिया जाना चाहिए। इसके लिए भी विश्व बैंक से सहायता ली गई है। चम्बल कमाण्ड क्षेत्र के कार्यक्रम की अवधि जून 1982 में समाप्त हो गई थी, लेकिन इसे छठी योजनावधि में जारी रखा गया था।

कनाडा अन्तर्राष्ट्रीय-विकास एजेन्सी (CIDA) के एक प्रोजेक्ट (राजस्थान कृषिगत अनुसंधान ड्रेनेज प्रोजेक्ट, चम्बल, कोटा) पर कार्य 1991-92 से शुरू किया गया जिससे इस क्षेत्र के भावी विकास में मदद मिली है। इससे सिंचाई व भूमिगत जल-विकास कार्यों आदि में कोटा स्थित कमाण्ड क्षेत्र विकास एजेन्सी की वर्तमान सुविधाओं को सुदृढ़ किया जा रहा है। **2003-04 में चम्बल परियोजना के सिंचित क्षेत्र के विकास कार्यक्रमों पर 6 करोड़ 32 लाख रुपये व्यय करने का प्रस्ताव था जिससे 2500 हैक्टेयर अतिरिक्त क्षेत्र में भूमि-विकास के कार्य कराया जाना था।**

कमाण्ड क्षेत्र विकास कार्यक्रम विश्व बैंक व भारत सरकार की मदद से क्षेत्र विकास कमिश्नरों की देखरेख में किया जाता है। इससे इन इलाकों के आर्थिक विकास में काफी मदद मिलती है। गंग नहर प्रणाली उत्तरी-पश्चिमी भाखड़ा नहर प्रणाली में भी कमाण्ड क्षेत्र में विकास-कार्यक्रम लागू किया गया है।

इस क्षेत्र में सीडा की मदद से भूमिगत नालियों का निर्माण-कार्य किया गया है। भविष्य में इसे बढ़ाया जाएगा। एक एकीकृत वाटरशेड क्षेत्र भी तैयार कराया जा रहा है।

(3) माही कमाण्ड क्षेत्र विकास कार्यक्रम—इसके अन्तर्गत कच्चे जलमार्ग, सड़क, क्रोसिंग, कलवर्ट, विशेष जलमार्गों की लाईनिंग आदि के निर्माण पर बल दिया गया है। इससे जनजाति व पिछड़े हुए लोग लाभान्वित होंगे। इससे सिंचाई के पानी की हानि कम की

जा सकेंगी और पानी की सप्लाई में सुधार होने से किसानों को लाभ होगा । वर्ष 2003-04 में 1.65 लाख घनमीटर में मिट्टी भराई व 0.57 लाख वर्ग मीटर में लाइनिंग का कार्य कराया गया तथा [redacted]1 पक्के कार्य पूरे किये गये । मार्च 2004 के अंत तक 2507 हैक्टेयर अतिरिक्त क्षेत्र में सिंचाई का विस्तार किया गया ।

सामुदायिक लिफ्ट सिंचाई-कार्यक्रम (Community Lift Irrigation Programme)—राज्य के दक्षिणी व दक्षिणी-पूर्वी भागों में लघु व सीमान्त कृषकों को सिंचाई कार्यों में मदद देने के लिए 1980-81 से एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम (IRDP) के तहत एक सामुदायिक लिफ्ट सिंचाई कार्यक्रम प्रारम्भ किया गया था । इसके लिए लघु व सीमान्त कृषकों की एक प्रबन्ध समिति बनाई जाती है । सिंचाई की स्कीम की कम से कम 10% लागत लाभान्वित कृषक स्वयं प्रदान करते हैं और सरकार सब्सिडी देती है । इस कार्यक्रम की वित्तीय व्यवस्था के तीन स्रोत हैं—

(i) सरकारी सब्सिडी, *(ii)* कृषकों का स्वयं का अंशदान तथा *(iii)* वित्तीय संस्थाओं के द्वारा कर्ज की व्यवस्था करना ।

जिला ग्रामीण विकास एजेन्सियों (DRDAs) में तकनीकी कक्षों के द्वारा यह स्कीम बनाई व संचालित की जाती है । राज्य में लिफ्ट सिंचाई स्कीमें निम्न कार्यक्रमों में शामिल की गई हैं; मैसिव कार्यक्रम, एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम, सूखा सम्भाव्य क्षेत्र कार्यक्रम, जनजाति क्षेत्र विकास-कार्यक्रम तथा राज्य का बजट ।

यह कार्यक्रम झालावाड़, कोटा, बूँदी, बाँसवाड़ा, डूँगर-पुर, उदयपुर, चित्तौड़गढ़, भीलवाड़ा, टोंक, सवाई माधोपुर, सिरोही तथा धौलपुर जिलों में लाभकारी हो सकता है, जहाँ लघु व सीमान्त किसानों को सिंचाई का अधिक लाभ पहुँचाया जा सकता है । इसके लिए सब्सिडी देने का प्रावधान किया गया है ।

राजस्थान में नदी नालों, झीलों व स्रोतों आदि पर बाँध बनाकर अथवा लिफ्ट करके, सिंचाई, पेयजल एवं सार्वजनिक आवश्यकताओं के लिए योजनाएँ बनाकर जल का उपयोग किया जा रहा है । सहकारी समितियों को कृषि हेतु पम्प लगाने को प्रोत्साहन दिया जा रहा है ताकि कृषिगत उत्पादन बढ़ सके ।

राजस्थान जल-संसाधन-एकीकरण-परियोजना—राजस्थान को यमुना नदी के पानी के बंटवारे के मई 1994 के समझौते के तहत 1.111 बिलियन (अरब) क्यूबिक मीटर (बी.सी.एम.) हिस्सा मिला । इससे 3 लाख हैक्टेयर भूमि में सिंचाई हो सकती है । इस पानी से भरतपुर, अलवर, चूरू, सीकर व झुंझुनूं आदि जिलों की पेयजल की समस्या का भी हल सम्भव होगा । अप्रैल 1995 में यमुना नदी से राजस्थान को अन्तरिम रूप से 100 क्यूसेक पानी उपलब्ध कराया गया जो कम था । राज्य सरकार सर्वाधिक प्राथमिकता सिंचाई

के अधूरे कार्यों को पूरा करने पर दे रही है। सिंचाई कार्यों को पूरा करने के लिए समय सीमा निर्धारित की गई है। राज्य के जल स्रोतों का अधिकतम विकास करने के लिए जल- संसाधन एकीकरण परियोजना बनाई जा रही है। इसमें विश्व बैंक की सहायता ली जा रही है। 50 एकड़ से अधिक बड़े तालाबों का प्रबन्ध भी पंचायती राज संस्थाओं को सौंपने का विचार किया जा रहा है। वर्षा के जल के संरक्षण पर विशेष ध्यान दिया जा रहा है।

ताजा जानकारी के अनुसार राजस्थान में सिंचाई की सम्भाव्यता, सृजन व उपयोग की स्थिति इस प्रकार है[1]—

(लाख हैक्टेयर में)

		सिंचाई की अंतिम सम्भाव्यता	1993-94 तक सृजित सम्भाव्यता	1993-94 तक सृजित-क्षमता का प्रतिशत
1	वृहद् व मध्यम	28 0	21 0	75 0
2	लघु	24 0	24 0	100 0
3	कुल	52 0	45 0	86.5

तालिका से स्पष्ट होता है कि राजस्थान के लघु सिंचाई के साधनों की अन्तिम सम्भावना की सीमा का न केवल सृजन कर लिया है, बल्कि राज्य लगभग इस सीमा का उपयोग करने की स्थिति में भी आ गया है। अतः भविष्य में वृहद् व मध्यम सिंचाई के साधनों पर ही अधिक बल देना होगा।

राज्य में जल-संसाधनों के एकीकृत व वैज्ञानिक उपयोग की नितान्त आवश्यकता है।

राजस्थान में सिंचाई के विकास व जलोपयोग की व्यूहरचना के लिए आवश्यक सुझाव[2]

राजस्थान में जल-संसाधन-प्रबन्ध पर सबसे ज्यादा ध्यान देने की आवश्यकता है। इसके लिए निम्न रणनीति अपनाई जा सकती है—

(1) उपलब्ध जल का सर्वाधिक संरक्षण किया जाना चाहिए। सिंचाई के लिए उपलब्ध जल पूर्ति से अधिकतम क्षेत्र में सिंचाई की जानी चाहिए।

(2) बेसीन या उप-बेसीन आधार पर जल के सम्बन्ध में साधनों का नियोजन किया जाना चाहिए। बेसीन में एक नदी की घाटी का जल-क्षेत्र योजना की इकाई माना जाता है।

---

1 Statistical Outline of India 1999-2000, Tata Services Ltd., Dec 1999, p 66

2 Papers on Perspective Plan, Rajasthan, 1990-2000, GOR 1990, pp 121-123

प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. इंदिरा गाँधी नहर परियोजना में लिफ्ट नहरों की संख्या है—

(अ) 8 (ब) 7

(स) 6 (द) 5 (ब)

[बांगड़सर लिफ्ट नहर सहित]

2. राजस्थान में 'जीवन धारा योजना' का सम्बन्ध है—

(अ) गरीबों के लिए बीमा योजना

(ब) सिंचाई कुओं का निर्माण

(स) ग्रामीण गरीबों को बिजली उपलब्ध करवाना।

(द) चिकित्सा सहायता उपलब्ध करवाना। (ब)

3. सोम-कमला-अम्बा सिंचाई परियोजना जिस जिले में स्थित है—

(अ) डूँगरपुर (ब) बाँसवाड़ा

(स) उदयपुर (द) चित्तौड़ (अ)

[RAS, 1998]

4. 2003-04 के अन्त तक इन्दिरा गाँधी नहर परियोजना से लगभग कितने क्षेत्र में सिंचाई-सम्भाव्यता विकसित की गई ?

(अ) 12.13 लाख हैक्टेयर (ब) 11.5 लाख हैक्टेयर

(स) 10.1 लाख हैक्टेयर (द) 15.4 लाख हैक्टेयर (अ)

5. कंवरसैन लिफ्ट कैनाल से किस जिले की पेयजल की समस्या के हल में मदद मिलेगी ?

(अ) जोधपुर (ब) चूरू

(स) बीकानेर (द) चूरू व बीकानेर (स)

6. राजस्थान में 2002-03 में सकल सिंचित क्षेत्रफल कुल कृषित क्षेत्रफल का कितना प्रतिशत हो गया है ?

(अ) 39-40 (ब) 25-27

(स) 27-29 (द) 24.8-26 8 (अ)

7. 2003-04 की अवधि में कुल योजना-व्यय का लगभग कितना प्रतशित सिंचाई व बाढ़-नियंत्रण पर व्यय किया गया—

(अ) 15.2 (ब) 18

(स) 16 (द) 10

8. जाखम सिंचाई की परियोजना किस जिले को लाभ पहुँचाएगी ?

(अ) भरतपुर (ब) टोंक

(स) उदयपुर (द) जालौर (स)

अन्य प्रश्न

1. राजस्थान में योजनाकाल में सिंचाई की प्रगति पर प्रकाश डालिए। क्या यह प्रगति संतोषजनक मानी जा सकती है ?

2. संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए—

   (i) कडाना बाँध

   (ii) नर्मदा परियोजना

   (iii) इन्दिरा गाँधी नहर परियोजना

   (iv) माही बजाज सागर परियोजना

   (v) बीसलपुर सिंचाई परियोजना

   (vi) राज्य में भूजल (Ground Water) व सिंचाई का विकास

   (vii) राजस्थान में इन्फ्रास्ट्रक्चर का विकास

   (viii) राजस्थान में सिंचाई की अन्तिम सम्भाव्यता, सृजन व उपयोग की स्थिति

   (ix) राजस्थान का यमुना जल के बंटवारे में हिस्सा

   (x) राज्य की योजनाओं में सिंचाई व बाढ़-नियंत्रण पर व्यय की राशियाँ, तथा

   (xi) राज्य में सिंचाई के विभिन्न कमाण्ड क्षेत्रों का विकास।

3. बीसलपुर परियोजना पर एक संक्षिप्त लेख लिखिए।

14

विद्युत
(Power)

आर्थिक विकास में विद्युत के विकास का केन्द्रीय स्थान होता है। विद्युत की पर्याप्त मात्रा में नियमित पूर्ति तथा इसकी उचित दरों पर उपलब्धि कृषि व उद्योग के विकास को प्रभावित करती है। **आधार-ढाँचे के विकास में विद्युत का सर्वोपरि स्थान माना गया है।** पिछले आठ वर्षों में आर्थिक सुधारों के दौरान विभिन्न राज्यों में विद्युत की प्रस्थापित क्षमता के विकास पर काफी जोर दिया गया है और इसके लिए निजी विनियोग (private investment) (स्वदेशी तथा विदेशी दोनों को) इस क्षेत्र में प्रोत्साहन देने की नीति स्वीकार की गई है। ऊर्जा प्राप्त करने के दो प्रकार के स्रोत होते हैं—

(1) परम्परागत स्रोत (Conventional Sources)—इसमें जल-विद्युत, थर्मल-पावर (कोयले, गैस व तेल से उत्पन्न) व अणु-शक्ति से उत्पन्न पावर के स्रोत शामिल होते हैं।

(2) गैर-परम्परागत स्रोत (Non-Conventional Sources)—इसमें लकड़ी, बायो गैस, सौर्य-ऊर्जा (Solar Energy), निर्धूम चूल्हा, पवन-चक्की, आदि स्रोत शामिल होते हैं। इन्हें ऊर्जा के पुनः नये किए जा सकने वाले स्रोत (renewable sources of energy) भी कहते हैं क्योंकि इन्हें विभिन्न प्रकार के उपाय करके बढ़ाया या पुनः सृजित किया जा सकता है।

राजस्थान में 2002-03 में प्रति व्यक्ति बिजली का उपभोग 291 किलोवाट घंटे था जो समस्त भारत (373 किलोवाट घंटे) की तुलना में कम था। **प्रति व्यक्ति बिजली के उपभोग की दृष्टि से भारत के 17 राज्यों में राजस्थान का ग्यारहवाँ स्थान रहा।** पंजाब का प्रति व्यक्ति 870 किलोवाट घंटे के उपभोग के साथ प्रथम स्थान रहा।[1]

---

1 Economic Review 2003-2004 table 10. on Economic Indicators.

2002-03 के अन्त में राज्य में विद्युत् की कुल प्रस्थापित क्षमता लगभग 4547 मेगावाट हो गई थी। 2003-04 में इसमें लगभग 691 मेगावाट की अतिरिक्त क्षमता के सृजन का अनुमान लगाया गया है। जिससे मार्च 2004 के अंत में विद्युत्-सृजन-क्षमता लगभग 5238 मेगावाट हो गयी थी।[1] 1951-52 में यह मात्र 13 मेगावाट ही थी। इस प्रकार योजनाकाल में विद्युत् की प्रस्थापित क्षमता का काफी विकास हुआ है। लेकिन विद्युत् की माँग व पूर्ति में अन्तर निरन्तर बढ़ता जा रहा है। अतः विद्युत् की प्रस्थापित क्षमता को बढ़ाने की जरूरत है।

1989-90 में विद्युत की कुल प्रस्थापित क्षमता लगभग 2711 मेगावाट थी, जिसमें राज्य की स्वयं की क्षमता (State-owned Capacity) 789 मेगावाट, अन्य परियोजनाओं में राज्य के हिस्से की क्षमता (Shared-Capacity) 933 मेगावाट तथा अन्य परियोजनाओं के माध्यम से आवंटित क्षमता (allotted-capacity) लगभग 989 मेगावाट थी। कुल प्रस्थापित क्षमता 2711 मेगावाट में जल-विद्युत क्षमता 957 मेगावाट, थर्मल क्षमता 1292 मेगावाट तथा आणविक क्षमता 462 मेगावाट थी।[2]

राजस्थान में 1980-81 में पावर की लगभग 9 6% कमी थी, जो बढ़कर 1987-88 में 30 27% हो गई। इसके आठवीं पंचवर्षीय योजना में बढ़कर 40% हो जाने का अनुमान लगाया गया था। अतः भावी पंचवर्षीय योजना में राजस्थान को विद्युत के विकास पर विशेष ध्यान देना होगा ताकि माँग व पूर्ति में उचित संतुलन स्थापित किया जा सके।

स्मरण रहे कि सातवीं पंचवर्षीय योजना (1985-90) में विद्युत की 385 मेगावाट अतिरिक्त क्षमता उत्पन्न करने का लक्ष्य रखा गया था, जबकि वास्तविक उपलब्धि 580 मेगावाट की हुई थी, जो लक्ष्य से काफी अधिक थी। इसमें कोटा थर्मल पावर स्कीम के चरण II की दो इकाइयों का योगदान 420 मेगावाट, माही प्रोजेक्ट का 140 मेगावाट व मिनी माइक्रो जल-विद्युत-स्कीमों का 20 मेगावाट रहा था (कुल 580 मेगावाट)। आठवीं पंचवर्षीय योजना में अतिरिक्त विद्युत-सृजन क्षमता का लक्ष्य 540.2 मेगावाट था जिसमें से लगभग 258.7 मेगावाट की ही वास्तविक प्राप्ति हो सकी है। इसमें प्रमुख योगदान कोटा थर्मल पावर प्लान्ट की पाँचवीं इकाई (210 मेगावाट) का रहा, जो 26 मार्च, 1994 को कमीशन की गई। इसके अलावा जैसलमेर जिले में रामगढ़ की 3 मेगावाट व 35.5 मेगावाट की गैस-इकाइयों का योगदान रहा, जो क्रमशः 15 नवम्बर, 1994 व 12 जनवरी, 1996 को जारी की गईं। कुछ अतिरिक्त विद्युत सृजन क्षमता माइक्रो जल- विद्युत स्टेशनों व भाखड़ा दायें किनारे के पावर प्लान्ट की एक मशीन की अपरेटिंग से प्राप्त की गई। 1994-95 में राजस्थान राज्य विद्युत मण्डल को केन्द्रीय सृजन पावर स्टेशन से 620 मेगावाट विद्युत का आवंटन किया गया। इस प्रकार आठवीं योजना में विद्युत का काफी अभाव रहा जिससे उद्योगों के लिए विद्युत की कटौती करनी पड़ी और राजस्थान राज्य विद्युत मण्डल को

---

1. Economic Review 2003-2004 (GOR), p. 58
2. Papers on Perspective Plan Rajasthan 1990-2000 AD. p 125.

काफी ऊँची दरों पर पड़ौसी राज्यों से भी बिजली खरीदनी पड़ी ताकि उपभोक्ताओं को राहत पहुँचाई जा सके । कांग्रेस सरकार ने जनवरी 1999 में सत्ता सम्हालने के बाद रबी के मौसम में 8 घंटे बिजली देने के वायदे को निभाने के लिए अतिरिक्त बिजली की खरीद के लिए विद्युत मण्डल को 30 करोड़ रु. प्रति माह का विशेष नकद अनुदान दिया है जिससे राज्य पर वित्तीय भार बढ़ा है ।

(अ) विद्युत में राज्य का अपना हिस्सा व आवंटित हिस्सा देने वाली अलग-अलग परियोजनाएँ इस प्रकार हैं—

(*i*) राज्य के अपने हिस्से की क्षमता प्रदान करने वाली परियोजनाएँ निम्न प्रकार हैं—

(1) भाखड़ा-नांगल परियोजना

(2) व्यास इकाई I (देहर) तथा इकाई II (पोंग)

(3) चम्बल प्रोजेक्ट (ये तीनों जल-विद्युत योजनाएँ हैं)

(4) सतपुड़ा थर्मल पावर प्रोजेक्ट (ताप बिजलीघर) (मध्य प्रदेश) ।

(*ii*) अन्य परियोजनाएँ जिनसे राजस्थान को आवंटित-क्षमता (allotted capacity) प्राप्त होती है—

(1) सिंगरौली सुपर-थर्मल पावर प्रोजेक्ट (उत्तर प्रदेश)—इसकी कुल क्षमता 2050 मेगावाट है तथा इसमें राजस्थान को 15% हिस्सा आवंटित किया गया है । यह केन्द्रीय प्रोजेक्ट राष्ट्रीय थर्मल पावर निगम (NTPC) द्वारा संचालित किया जा रहा है ।

(2) रिहन्द सुपर-थर्मल पावर प्रोजेक्ट (उत्तर प्रदेश) (NTPC द्वारा संचालित)—इसकी कुल क्षमता 1000 मेगावाट है तथा इसमें राजस्थान का आवंटित अंश 9.5% है ।

(3) अन्ता गैस पावर स्टेशन (NTPC द्वारा)—इसकी कुल क्षमता 413 मेगावाट है तथा इसमें राजस्थान का आवंटित हिस्सा 19.8% रखा गया है ।

(4) औरैया गैस केन्द्र (उत्तर प्रदेश)—इसकी कुल क्षमता 652 मेगावाट है तथा इसमें राजस्थान को 9.2% अंश आवंटित किया गया है ।

(5) नरोरा परमाणु ऊर्जा परियोजना (उत्तर प्रदेश)—इसकी कुल क्षमता 470 मेगावाट है तथा इसमें राजस्थान का आवंटित अंश 9.6% रखा गया है ।[1]

(6) राजस्थान अणुशक्ति प्रोजेक्ट (RAPP)

(ब) राज्य की स्वयं के स्वामित्व की क्षमता प्रदान करने वाली परियोजनाएँ निम्न प्रकार हैं—

(1) कोटा थर्मल पावर स्टेशन (KTPS)

चरण I (2 × 110) = 220 मेगावाट (1983 में चालू)

चरण II (प्रथम इकाई) 210 मेगावाट (25 सितम्बर, 1988 को चालू)

---

1 राजस्थान पत्रिका, 30 जुलाई, 1991, पृ. 12 (विभिन्न विद्युत केन्द्रों में राजस्थान के आवंटित अंश के लिए)

चरण II (द्वितीय इकाई) 210 मेगावाट (1 मई, 1989 को चालू)

चरण III (एक इकाई) 210 मेगावाट (11 अप्रैल, 1994 को चालू) इसकी लागत 480 करोड़ रु. आंकी गई है।

इस प्रकार कोटा थर्मल पावर स्टेशन (KTPS) की कुल क्षमता = 850 मेगावाट हो गई है। अब तक तीन चरणों में इसकी कुल पाँच इकाइयाँ चालू की जा चुकी हैं। इसकी 195 मेगावाट की छठी इकाई से अगस्त 2003 में उत्पादन प्रारम्भ होने की आशा है। इस पर 2003-04 मे 38 करोड़ रु का निवेश किया जायगा।

(2) माही हाइडल प्रोजेक्ट

(3) राजस्थान की मिनी हाइडल स्कीमें—

(i) इन्दिरा गाँधी नहर प्रोजेक्ट में अनूपगढ़ शाखा, सूरतगढ़ शाखा, मांगरोल, चारणवाला व पूगल शाखाएँ,

(ii) अन्य—दायीं मुख्य नहर माही I व II, इटवा, बिरसलपुर व जाखम परियोजना, कुल 10 मिनी स्कीमें।

राजस्थान अणु-शक्ति प्रोजेक्ट (RAPP)—यह कनाडा के सहयोग से रावतभाटा नामक स्थान पर (राणाप्रताप सागर के विद्युतगृह के समीप) 1973 में स्थापित किया गया था। इसमें 235 मेगावाट की 2 इकाइयाँ लगाने से इसकी क्षमता 470 मेगावाट हो गई है। यह शत-प्रतिशत राजस्थान के लिए है। तीसरी व चौथी इकाइयाँ (कुल क्षमता 440 मेगावाट) के क्रमशः जुलाई व दिसम्बर 1999 में प्रारम्भ होने की सम्भावना बतलायी गई थी।[1] चार इकाइयाँ (प्रत्येक 500 मेगावाट की) बाद में और लगाई जाएँगी।

कुछ समय पूर्व रावतभाटा अणु शक्ति परियोजना की दूसरी इकाई ने काम करना बन्द कर दिया था और तकनीकी कारणों से इस इकाई से कुछ समय तक विद्युत का उत्पादन नहीं किया गया। पहली इकाई पहले से ही बन्द पड़ी थी। इस परियोजना से राज्य को 61 पैसे प्रति यूनिट बिजली मिलती थी। इसके बन्द हो जाने से अन्य जगहों से महँगी दर पर बिजली खरीदी गई। इससे राज्य विद्युत मण्डल के साधनों पर भी भारी प्रतिकूल वित्तीय प्रभाव पड़ा। बाद में भारतीय इन्जीनियरों व आणविक तकनीक के विशेषज्ञों ने इस इकाई की नालियों को साफ करके इसे पुनः चालू कर दिया जिससे सिद्ध होता है कि भारत की स्वदेशी तकनीक भी काफी सुदृढ़ है और हम इस दिशा में काफी प्रगति करने की क्षमता व दक्षता रखते हैं। कनाडा की तकनीकी सहायता के बिना यह सफलता प्राप्त करना भारत के लिए यह एक उल्लेखनीय बात मानी जा सकती है।

हाल में राज्य सरकार का परमाणु-शक्ति-निगम (Nuclear Power Corporation) (NPC) से एक समझौता हुआ है जिसके तहत RAPP की तीसरी व चौथी इकाई से पूरी बिजली राजस्थान को दी जाएगी। राज्य को विद्युत 2.78 रु. प्रति

---

1 राज्यपाल का विधानसभा में अभिभाषण, 8 जनवरी, 1999

यूनिट दी जाएगी, जिसमें हर साल 18 पैसे की वृद्धि की जाएगी। यह समझौता 5 साल के लिए किया गया है। पहले तीसरी व चौथी इकाई से केवल 19.56% बिजली (86 मेगावाट) ही मिलने की चर्चा थी, लेकिन अब पूरी 440 मेगावाट बिजली राज्य को उपलब्ध हो सकेगी। RAPP की तीसरी इकाई के जून 2000 में तथा चौथी इकाई के सम्भवत: जनवरी 2001 तक पूरी होने का अनुमान प्रस्तुत किया गया है। यह समझौता लागू होने पर राज्य में विद्युत की आपूर्ति में काफी सुधार होने की आशा है।

राजस्थान ऊर्जा विकास एजेन्सी (Rajasthan Energy Development Agency) (REDA) की स्थापना जनवरी 1985 में हुई थी। इसका कार्य गैर-परम्परागत ऊर्जा के स्रोतों का विकास करना था। **अब इसका अगस्त 2002 में स्थापित नई कम्पनी-राजस्थान अक्षय ऊर्जा विकास निगम (Rajasthan Renewable Energy Corporation Ltd.) (RREC)** में विलय हो गया है। इसका सम्बन्ध निर्धूम चूल्हे, बायो-गैस, सौर्य-ऊर्जा आदि से है। इनकी प्रगति का संक्षिप्त परिचय नीचे दिया जाता है—

(i) **सौर-ऊर्जा (Solar Energy)**—इससे गैस व ईंधन की बचत होगी। पहला सौर-ऊर्जा फ्रीज जोधपुर जिले में बालेसर उन्नीकृत प्राथमिक चिकित्सा केन्द्र में लगाया गया था। इसमें छत पर काँच की प्लेटों का पेनल बनाया जाता है। सूर्य की रोशनी से फ्रीज की बैटरी में ऊर्जा इकट्ठी होकर फ्रीज को चलाती है।

जोधपुर जिले के मथानिया में 140 मेगावाट के सौर-मिश्रित-चक्रीय-विद्युत्-गृह (Integrated Solar Combined Cycle (ISCC) की स्थापना प्रस्तावित है। इस परियोजना की कुल संशोधित लागत 700 करोड़ रु. आंकी गई है, जिसमे विश्व बैंक का योगदान 160 करोड़ रु., जर्मनी की सहायता एजेन्सी (KFW) का 300-400 करोड़ रु. तथा राजस्थान सरकार व केन्द्र मे प्रत्येक का 50 करोड़ रु. होगा। विश्व बेंक ग्लोबल एन्वायरनमेण्टल फेसीलिटी (GEF) के तहत सहायता देने को तैयार हो गया है। इसकी लागत बढ़कर 980 करोड़ रु. हो सकती है।

इससे उत्पन्न होने वाली सौर्य-ऊर्जा का उपयोग निम्न कार्यों के लिए किया जाएगा—

(i) स्ट्रीट ट्यूब-लाइटे लगाना, *(ii)* सोलर-कूकर्स चलाना, *(iii)* वाटर-हीटर्स लगाना, *(iv)* सोलर पम्प लगाना—नीची सतह से पानी निकालने के लिए बाड़मेर, नागौर, चूरू आदि मे पम्प लगाना, *(v)* सीमावर्ती क्षेत्रो मे रंगीन टी.वी. सेट्स लगाना।

(ii) **वायु-ऊर्जा**—राजस्थान मे वायु का वेग 20 से 40 किलोमीटर प्रति घण्टा पाया जाता है। सरल व कम लागत के उपकरण लगाकर इन्दिरा गाँधी नहर परियोजना क्षेत्र में चारे व चरागाह के विकास के लिए 10 वायु मिल (पवन-चक्कियाँ) स्थापित करने की योजना है। इस प्रकार मरुस्थल के विकास के लिए वायु एरो-जेनरेटर्स प्राप्त किए जाएँगे। **जैसलमेर में 10 अप्रैल, 1999 को 2 मेगावाट के वायु-आधारित पावर प्रोजेक्ट की नींव रखी गयी और इस प्रोजेक्ट ने 14 अगस्त, 1999 से पावर-उत्पन्न करना चालू कर दिया।** दूसरा वायु-पावर-डिमोन्स्ट्रेशन-प्रोजेक्ट, **चित्तौड़गढ़ जिले के देवगढ़ स्थान पर 6 मार्च 2001 को राष्ट्र को समर्पित किया।** अब तक वायु-ऊर्जा की क्षमता 186.11 मेगावाट प्रस्थापित की जा चुकी है। **RREC द्वारा जैसलमेर जिले के सोडाग्राम में 25 मेगावाट क्षमता का संयंत्र स्थापित किया जा रहा है।**

(iii) **बायो-गैस**—राजस्थान में गाँवों में गोबर-गैस संयंत्रों का विस्तार किया जा रहा है। इनसे किरोसीन तेल व जलाने की लकड़ी की काफी बचत होगी।

छठी योजना में 13660 बायोगैस संयंत्र लगाए गए, जिनकी संख्या सातवीं योजना में 20779 हो गई। 1990-91 में यह 3950, 1991-92 में 4128 तथा आठवीं योजना में 18243 रही। राज्य सरकार इनकी स्थापना के लिए सब्सिडी देती है। राज्य के कई भागों में बहुत से संयंत्रों के विफल हो जाने के कारण अब पूर्व उपलब्धियों को बनाए रखने पर अधिक बल दिया जाने लगा है।

राजस्थान में विद्युत की स्थिति तथा उससे जुड़े कुछ प्रश्न—राज्य में मार्च 1996 के अन्त में स्वयं की विद्युत-सृजन-क्षमता (Owned Generating Capacity) 1982 मेगावाट थी जिसमें जल-विद्युत का अंश 968 मेगावाट तथा थर्मल का 1014 मेगावाट था।[1] 1992-93 में राज्य में कैप्टिव पावर के उपभोग का अंश 21.6% पाया गया था, जबकि समस्त भारत के लिए यह अंश 47.9% था। अन्य बातों का नीचे उल्लेख किया जाता है—

(1) थर्मल स्टेशनों में संयंत्र-भार-तत्त्व (Plant Load Factor of Thermal Station)[2]—राज्य में थर्मल स्टेशनों का संयंत्र-भार-तत्त्व 1990-91 में 42.8% था जो बढ़कर 1993-94 में 81% हो गया। 1994-95 में यह 75.7% रहा। इस प्रकार राज्य में थर्मल संयंत्रों की क्षमता का अधिक मात्रा में उपयोग किया जाने लगा है। 1994-95 में समस्त भारत के लिए यह 60% आंका गया है। इसी वर्ष राजस्थान में अन्य राज्यों की तुलना में थर्मल स्टेशनों का संयंत्र-भार-तत्त्व सर्वाधिक पाया गया था। बिहार में तो यह मात्र 20% ही पाया गया था। संयंत्र-भार-तत्त्व पर प्रबंध की कार्यकुशलता, संयंत्रों की देखभाल, आम किस्म के कोयले की उपलब्धि, आदि का असर पड़ता है। राजस्थान में पिछले वर्षों में इस दिशा में हुई प्रगति सराहनीय रही है।

(2) ट्रान्समिशन व वितरण के घाटे (Transmission and Distribu-tion Losses (T & D Losses)—राज्य में कई कारणों से उपलब्ध बिजली का कुछ अंश ट्रांसमिशन व वितरण के दौरान नष्ट हो जाता है। 1992-93 से 1995-96 के दौरान इस प्रकार की हानि कुल उपलब्धि का लगभग 22% आंकी गई है, जबकि राष्ट्रीय औसत लगभग 20% रहा है। जम्मू-कश्मीर मे तो यह अंश 42-48 प्रतिशत पाया गया है। मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश व बिहार आदि की स्थिति राजस्थान जैसी ही पाई गई है। इसके अलावा बिजली की चोरी भी एक आम समस्या बन गई है। एक अध्ययन के अनुसार राज्य में बिजली की छीजत व चोरी का अंश वर्तमान में लगभग 35% है जिसे घटाने से विद्युत् मण्डल का राजस्व कई करोड़ रु. तक बढ़ सकता है।[3] अब यह बढ़कर 42% अनुमानित है।

---

1 India's Energy Sector, CMIE, September, 1996, p 28

2 The India Infrastructure Report, 1997, (Chairman Rakesh Mohan) p 307, आगे की अधिकांश सूचना भी इसी पर आधारित है।

3 राजस्थान राज्य विद्युत मण्डल का आर्थिक संकट : चोरी और छीजत पर अंकुश जरूरी, एम आर. गर्ग, राजस्थान पत्रिका, 1 व 2 अप्रैल 1999

(3) राज्य विद्युत मण्डल की वित्तीय स्थिति अन्य राज्यों की भाँति बहुत कमजोर रही है। 31 मार्च, 1995 को केन्द्रीय क्षेत्र के उपक्रमो को चुकाने की बकाया राशि राजस्थान राज्य विद्युत मण्डल पर लगभग 500 करोड़ रु. थी, हालाँकि उत्तर प्रदेश पर यह 2054 करोड रु व बिहार पर 1033 करोड रु. थी। विद्युत मण्डलो की वित्तीय स्थिति सभी राज्यो मे डावाडोल पाई गई है। राजस्थान राज्य विद्युत मण्डल के 5 कम्पनियो मे विभाजन से पूर्व ऊर्जा के क्षेत्र का सयुक्त घाटा 1678 करोड रु था (मासिक औसत 139 करोड रु. का था) पिछले दो वर्षों (2000-01 व 2001-02) मे इस क्षेत्र मे विद्युत-मण्डल को 5 कम्पनियो मे विभक्त करने के बाद पाँच माह (अप्रैल–अगस्त 2000) की अवधि मे प्रति माह 150 करोड रु का घाटा हुआ, और आगामी 18 महीनो मे यह घट कर 110 करोड रु मासिक पर आ गया। **इस प्रकार वार्षिक घाटा 1290 करोड रु से अधिक आंका गया है।**[1] इसका मुख्य कारण कृषि–उपभोक्ता को भारी मात्रा मे सब्सिडी का दिया जाना है।

(4) विद्युत की बिक्री पर औसत प्रशुल्क– 1995-96 मे प्रति किलोवाट घंटे विद्युत की औसत दर राजस्थान मे 147 53 पैसे रही है, जबकि असम मे यह 234 09 पैसे, गुजरात मे 141.50 पैसे व मध्य प्रदेश मे 136 47 पैसे रही है। (The India Infrastructure Report, 1997, पृ 311)

इस प्रकार विभिन्न राज्यों में संयंत्र-भार-तत्त्व, ट्रान्समिशन व वितरण के घाटों, विद्युत की औसत दर, आदि में काफी अन्तर पाये जाते हैं । भविष्य मे देश के विभिन्न भागों में बिजली की बढ़ती माँग को पूरा करने के लिए विद्युत की प्रस्थापित क्षमता को वृद्धि करनी होगी और बिजली की उचित दर अथवा कीमत निर्धारित करनी होगी ताकि वित्तीय घाटों को कम किया जा सके ।

पूर्व में राज्य में निजी क्षेत्र में लगभग 4300 मेगावाट अतिरिक्त विद्युत-सृजन की परियोजनाएँ[2]

पूर्व मे राज्य सरकार ने निजी क्षेत्र में लगभग 4300 मेगावाट की अतिरिक्त विद्युत-क्षमता स्थापित करने की परियोजनाएँ तैयार की थीं । लेकिन उनके क्रियान्वयन की दिशा मे आवश्यक प्रगति नहीं हो सकी । इनकी पुनः समीक्षा की जानी चाहिए । इनका संक्षिप्त परिचय इस प्रकार है—

लिग्नाइट-आधारित ताप-विद्युत परियोजनाएँ

(1) कपूरडी व जालीपा—में दो लिग्नाइट-आधारित ताप-विद्युत परियोजनाओं की स्थापना के लिए कई पार्टियों से प्रस्ताव मिले हैं । इनके लिए अनुबन्ध किए जा रहे हैं ।

कपूरडी परियोजना की लागत 1800 करोड़ रु आंकी गई है । इसमें दो विद्युत-सृजन इकाइयाँ (प्रत्येक 250 मेगावाट की) होगी । जालीपा परियोजना की लागत 3600 करोड़ रु व क्षमता 1000 मेगावाट अनुमानित है । इसमें चार इकाइयाँ (प्रत्येक 250 मेगावाट की) होंगी । इस प्रकार कपूरडी व जालीपा (Kapurdi and Jalipa) दोनों की कुल विद्युत-सृजन क्षमता 1500 मेगावाट आंकी गई है ।

1 Hindustan Times, 28 February, 2003

2 Eighth Five Year Plan (1992-97) Review of Progress, Planning Department GOR, July 1996, p 6

(2) सूरतगढ़ ताप बिजलीघर—इसे वन व पर्यावरण, नागरिक उड्डयन, जल-आवश्यकता आदि के दृष्टिकोण से स्वीकृति मिल गई है, लेकिन कोयले की जरूरत को पूरा करने में कठिनाई का सामना करना पड़ा है। **सूरतगढ़ ताप विद्युत गृह के प्रथम चरण (stage I) की पहली इकाई (250 मेगावाट) ने नियमित उत्पादन 3 नवम्बर 1998 से प्रारम्भ कर दिया है। प्रथम चरण की दूसरी इकाई (250 मेगावाट) का 13 अक्टूबर, 2000 को श्रीमती सोनिया गांधी द्वारा लोकार्पण किया गया।**

सूरतगढ़ ताप विद्युत गृह के **द्वितीय चरण (stage II)** में प्रत्येक 250 मेगावाट की दो इकाइयाँ लगाई जाएँगी। इनके लिए एक आर्थिक-तकनोकी स्वीकृति शीघ्र ही प्राप्त होने की आशा है। पूरे प्रोजेक्ट में 5000 करोड़ रु के निवेश का अनुमान है।

(3) धौलपुर ताप बिजलीघर—इसके लिए भारत सरकार से स्वीकृति मिल चुकी है। पहले इस क्षेत्र के ट्राइपेजियम जोन में आने के कारण इससे ताजमहल की सुरक्षा को तथा चम्बल नदी में घड़ियालों को खतरा होने की सम्भावना बतलाए जाने के कारण पर्यावरणीय कारणो से स्वीकृति नहीं मिल पाई थी। लेकिन बाद में इस प्रस्तावित संयंत्र के लिए पर्यावरण-मंत्रालय की स्वीकृति मिल जाने पर यह भी निजी क्षेत्र के लिए खोल दिया गया है। इसकी संशोधित क्षमता 702 मेगावाट रखी गई है। इसकी लागत 1300 करोड़ रु. आंकी गई हे। इसका कार्य आरपीजी धौलपुर पावर कं को सौंपा गया है, जिससे पावर खरीदने का समझौता (PPA) 29 अगस्त, 1996 को किया गया था। यह नेप्था-आधारित परियोजना है। अतः इसके लिए केन्द्र द्वारा नेप्था की आवश्यक आपूर्ति अत्यावश्यक है।

(4) बरसिंगसर में लिग्नाइट-आधारित बिजलीघर—बरसिंगसर में लिग्नाइट आधारित बिजलीघर की स्थापना के लिए नवम्बर 1987 में राजस्थान सरकार व नैवेली लिग्नाइट निगम के बीच एक समझौता हुआ था। बरसिंगसर में लिग्नाइट के काफी भण्डार हैं। बीकानेर के पलाना व गुडा क्षेत्रों में तथा बाड़मेर के कपूरडी व जालीपा क्षेत्रों में तथा नागौर के मेडता रोड मे लिग्नाइट के विशाल भण्डार पाए गए हैं। अब इस परियोजना के क्रियान्वयन हेतु मैसर्स नेवेली लिग्नाइट कॉरपोरेशन, कोयला मन्त्रालय, भारत सरकार तथा राज्य सरकार के बीच 10 जून, 2002 को मेमोरेण्डम ऑफ अण्डरस्टेण्डिग के फलस्वरूप 2 x 125 मेगावाट की क्षमता की इकाइयो पर वर्ष 2004 से कार्य आरम्भ होने की आशा है।

गैस-आधारित ताप-विद्युत की परियोजना— जैसलमेर क्षेत्र मे जुलाई 1990 मे डांडेवाला मे गैस के नए विशाल भण्डार मिले है। वहॉ भी गैस आधारित विद्युत का उत्पादन किया जा सकता है। रामगढ के **तनोट क्षेत्र** मे गैस प्राप्त हुई है। रामगढ मे दो गैस–आधारित ताप–विद्युत स्टेशनो का निर्माण किया जा रहा है। **इससे बाडमेर, जैसलमेर व जोधपुर जिलों को विद्युत की सप्लाई बढाने मे मदद मिलेगी।** राज्य सरकार ने 35 5 मेगावाट के रामगढ (जिला जैसलमेर) मे गैस–आधारित विद्युत गृह के लिए केन्द्र सरकार से समुचित गैस–आपूर्ति के लिए आग्रह किया है। **इस अतिरिक्त गैस से वर्तमान बिजलीघर में 76 मेगावाट की विद्युत क्षमता सृजित हो सकेगी।**

डीजल-आधारित विद्युत-संयंत्र—राज्य में पहले अलवर, भिवाड़ी, जयपुर, जोधपुर, उदयपुर व आबू रोड में (छः स्थानों में) डीजल-आधारित विद्युत संयंत्रों की स्थापना का निर्णय लिया गया था। इनमें प्रत्येक की क्षमता 100 मेगावाट आंकी गई थी। इन पर कुल लागत का अनुमान 1900 करोड़ रु. लगाया गया था। इनके चालू हो जाने से इन छः औद्योगिक क्षेत्रों की विद्युत आपूर्ति में काफी सुधार की आशा लगाई गई है।

अन्य प्रोजेक्ट—राज्य सरकार कोटा ताप विद्युत परियोजना की छठी इकाई (चरण IV की प्रथम इकाई) की स्थापना करेगी जिसकी लागत 470 करोड़ रु. आंकी गई है। इसे नवीं पंचवर्षीय योजना में चालू किया जाएगा। इसकी क्षमता 210 मेगावाट निर्धारित की गई है।

जैसा कि पहले कहा जा चुका है जोधपुर में मथानियाँ नामक स्थान पर 140 मेगावाट (संशोधित क्षमता) की सौर ताप परियोजना चालू की जाएगी जिसमें पश्चिमी राजस्थान में उपलब्ध विपुल सौर-ऊर्जा का उपयोग किया जाएगा। इसके लिए ग्लोबल एनवायरनमेण्ट फैसिलिटी (GEF) से सहायता प्राप्त की जा रही है। इस प्रकार आगामी वर्षों में विद्युत के विकास पर भारी विनियोग होने की आशा है। पूर्व में राज्य सरकार ने इसके लिए अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर खुले आवेदन-पत्र माँगे थे, जो एक नया प्रयास था। राज्य में आगामी वर्षों में ऊर्जा के क्षेत्र में भारी कायापलट होने की सम्भावनाएँ हैं।

पिछले वर्षों में पूर्व सरकार ने राज्य में सौर्य-ऊर्जा के विकास के लिए तीन परियोजनाओं का चयन किया था जिनकी कुल सृजन-क्षमता 300 मेगावाट की आंकी गई थी। लेकिन कुछ कठिनाइयों व समस्याओं के कारण इन्हें बीच में ही छोड़ना पड़ा है। ये जैसलमेर, बाड़मेर व जोधपुर के 'सोलर-एनर्जी-एन्टरप्राइज-जोन' (SEEZ) में स्थापित की जानी थी। इनमें एक एनरजन इन्टरनेशनल कम्पनी द्वारा जैसलमेर में 200 मेगावाट का संयंत्र लगाने की योजना थी, दूसरी एमको-एनरान सोलर पावर कम्पनी द्वारा 50 मेगावाट की जैसलमेर में लगाई जाने वाली योजना थी तथा तीसरी बाड़मेर के 'आगोरिया गाँव' में सन-सोर्स (इण्डिया) लि. द्वारा 50 मेगावाट की लगाई जाने वाले सौर्य-ऊर्जा की योजना थी। लेकिन ये सब योजनाएँ बाद में संकट मे फस गई, जिससे इनके क्रियान्वयन मे बाधा उपस्थित हो गयी। भावी समझौतो मे इनके अनुभवो से लाभ उठाया जाना चाहिए।

पूर्ववर्णित नये प्रोजेक्टों के अलावा तरल ईंधन (Liquid Fuel) पर आधारित 100 मेगावाट तक की लघु क्षमता वाले निम्न प्रोजेक्टों के पावर-खरीद के समझौते (PPA) ज्यादातर सितम्बर-अक्टूबर 1996 में किए गए थे। इनकी कम्पनी, स्थान व क्षमता आदि के विवरण इस प्रकार हैं—

	कम्पनी	स्थान	क्षमता
1	एस टी पावर सिस्टम	जोधपुर	2 x 75 मेगावाट
2.	टी एफ एण्ड एम सर्विसेज निगम	भरतपुर/बाँसवाड़ा	2 x 75 मेगावाट
3	कानोडिया केमिकल्स एण्ड इण्डस्ट्रीज	नीमराना	1 x 50 मेगावाट
4	डी एल एफ इन्डस्ट्रीज	सवाई माधोपुर, झालावाड, उदयपुर	3 x 100 मेगावाट
5	गोयल गैसेज	कांठ अलवर	50 मेगावाट, 140 मेगावाट
6	केडिया कैशल	सारेखुर्द (Sarekhurd) (जिला अलवर)	1 x 50 मेगावाट
7	ग्लोबल बोर्ड्स	केशोरायपाटन (जिला बूँदी)	166 मेगावाट
8	केडिया कैशल	सारेखुर्द (जिला अलवर)	100 मेगावाट
9	इन्डो कैल पावर वेंचर्स	जोधपुर	2 x 40 मेगावाट, 2 x 10 मेगावाट
10	भगत पावर	केशोरायपाटन	100 मेगावाट
11	यूरो पावर कन्सोर्टियम	भीलवाड़ा, हनुमानगढ़, चित्तौड़गढ़	10 x 50 मेगावाट, 2 x 25 मेगावाट (5 स्थान)
12	बर्धन इन्फ्रास्ट्रक्चर	आबू रोड (सिरोही)	100 मेगावाट

इनकी स्थापना में आ रही बाधाओं को दूर करने के लिए एक मंत्रिमण्डलीय समिति ने पूर्व में विचार किया था।

राजस्थान को दसवीं पंचवर्षीय योजना में विद्युत की प्रस्थापित क्षमता बढ़ाने पर विशेष ध्यान देना चाहिए ताकि आगामी वर्षों में इसकी माँग व पूर्ति के अन्तर को समाप्त किया जा सके। प्रयत्न करने पर भविष्य में राजस्थान विद्युत की सप्लाई में आत्मनिर्भर हो सकता है।

केन्द्र से समय पर स्वीकृति नहीं मिलने पर सूरतगढ़ ताप विद्युत परियोजना, बरसिंगसर लिग्नाइट खनन व ताप विद्युत परियोजना, मथानियाँ सौर ऊर्जा ताप केन्द्र व अन्ता (द्वितीय चरण) की प्रस्तावित लागतों में अरबों रुपयों की वृद्धि हो गई है।

नवीं पंचवर्षीय योजना में सूरतगढ़ चरण I की दोनों इकाइयों को चालू करके 500 मेगावाट क्षमता का विकास करने का लक्ष्य रखा गया था। इसके अलावा कुछ क्षमता का विकास गंगुवाल व कोटला तथा पोंग पावर प्रोजेक्टों व भाखड़ा के दायें किनारे की मशीन की अपरेटिंग से प्राप्त किया जाना था। निम्न केन्द्रीय पावर-सृजन केन्द्रों से राजस्थान को 590.20 मेगावाट तक की क्षमता के आवंटित होने (allocation) की सम्भावना व्यक्त की गयी थी[1]—

1 Draft Ninth Five Year Plan, 1997-2002, Vol 1, (GOR), p 15 4

(मेगावाट)

(i)	ऊन्चाहर (Unchahar) चरण I	42 0
(ii)	रिहन्द	100 0
(iii)	RAPP विस्तार	88 0
(iv)	उरी (Uri)	41 2
(v)	नाथपा-झाकरी	150 0
(vi)	दुलहस्ती जल विद्युत प्रोजेक्ट	39 0
(vii)	धौलीगंगा	28 0
(viii)	टेहरी चरण I	100 0
	कुल	590 2

पार्वती पन बिजली परियोजना में विभिन्न राज्यों की हिस्सेदारी इस प्रकार रखी गई है[1]—

राजस्थान	40%	
हिमाचल	27%	(12% नि.शुल्क बिजली, तथा 15% बिजली उत्पादन-लागत पर)
हरियाणा	25%	
दिल्ली	8%	

कांग्रेस के शासन-काल (1999-2002) में विद्युत का विकास[2]—राज्य सरकार के 4 वर्षों के ठोस प्रयासों के फलस्वरूप विद्युत उत्पादन 3356 मेगावाट से बढ़कर 4564 मेगावाट हो गया था। इस तरह चार वर्षों में 1208 मेगावाट अतिरिक्त उत्पादन-क्षमता अर्जित की गयी थी। वर्ष 2003-2004 में 631 मेगावाट अतिरिक्त विद्युत उत्पादन क्षमता अर्जित करने का लक्ष्य था। इसके परिणामस्वरूप 5 साल में विद्युत उत्पादन-क्षमता में 1839 मेगावाट की कुल बढ़ोत्तरी होनी थी, जो गत 50 वर्षों के कुल विद्युत उत्पादन का 50 प्रतिशत से अधिक आंकी गयी थी। सूरतगढ़ राज्य का पहला सुपर तापीय विद्युत गृह बन गया है। इसे उत्कृष्ट कार्य के लिए भारत सरकार द्वारा 2000-2001 व 2001-2002 में स्वर्ण पदक के लिए चुना गया। कोटा तापीय विद्युत गृह की 195 मेगावाट की छठी इकाई से अगस्त 2003 में विद्युत उत्पादन प्रारम्भ करने का लक्ष्य था। रामगढ़ गैस तापीय विद्युत गृह के द्वितीय चरण में 37.5 मेगावाट के गैस टरबाइन से 7 अगस्त, 2002 से विद्युत उत्पादन प्रारम्भ हो गया था, तथा 37.5 मेगावाट के स्टीम-टरबाइन से मार्च 2003 में विद्युत-उत्पादन प्रारम्भ होने

1 राजस्थान पत्रिका 26 दिसम्बर, 1998

2 राज्यपाल का अभिभाषण, 24 फरवरी, 2003, पृ 6-9

की आशा व्यक्त की गयी थी । बरसिंगसर लिग्नाइट तापीय खनन एवं विद्युत परियोजना का काम नेवेली लिग्नाइट निगम को सौंपा गया था । कई सब-स्टेशन स्थापित करने का लक्ष्य रखा गया था । गैर-परम्परागत ऊर्जा स्रोतों में राजस्थान स्टेट माइन्स व मिनरल्स लि. द्वारा 4.90 मेगावाट तथा सुजलोन एनर्जी लि. द्वारा 5.25 मेगावाट क्षमता की पवन-ऊर्जा-परियोजनाएँ क्रमशः मई 2002 व सितम्बर 2002 में उत्पादन प्रारम्भ कर चुकी हैं ।* राज्य में वर्ष 1998 में विद्युत की माँग व पूर्ति का अंतर 23.2% से घटकर 2003 में 5.6 पर आ गया था । राज्य के कई गाँवों में सोलर फोटो वोल्टाइक संयंत्र स्थापित करने की योजना है । राज्य में कुओं के ऊर्जीकरण का कार्य काफी प्रगति पर है ।

भारतीय जनता पार्टी की सरकार के ऊर्जा के क्षेत्र में कार्यक्रम[1]

सरकार की प्राथमिकता राज्य को ऊर्जा के क्षेत्र में आत्मनिर्भर बनाने की होगी । ऊर्जा का उत्पादन बढ़ाने के लिए 2004-05 में 50 करोड़ रु. का निवेश लिग्नाइट आधारित विद्युत परियोजना, गिराल तथा 120 करोड़ रु. का निवेश गैस थर्मल परियोजना, धोलपुर में किया जाना प्रस्तावित है । राज्य सरकार राष्ट्रीय जल विद्युत निगम की परियोजनाओं से 230 मेगावाट व पवन-ऊर्जा-परियोजनाओं से 135 मेगावाट प्राप्त करने का भी प्रयास करेगी ।

विद्युत्-प्रसारण-तंत्र को सुदृढ़ किया जा रहा है । 400 के.वी. जयपुर-मेड़ता-जोधपुर लाइन का कार्य लगभग पूरा हो गया है । 400 के.वी. रतनगढ़-मेड़ता लिंक लाइन तथा 220 के.वी. के 4 एव 132 के वी के 12 नये ग्रिड स्टेशन स्थापित करने के प्रस्ताव हैं ।

'प्रसारण व वितरण क्षतियों' (T & D Losses) को कम करने के लिए 6 हजार ग्रामीण फीडरों का पुनरोद्धार किया जायगा, ताकि T & D Losses को घटाकर 25% के स्तर पर लाया जा सके । इस वर्ष (2004-05) 600 फीडरों का रिनोवेशन किया जायगा । उपभोक्ताओं को नये विद्युत-कनेक्शन दिये जायेंगे ।

राजस्थान में विद्युत क्षेत्र में सुधार (Power Sector Reforms in Rajasthan)— वर्तमान में राजस्थान में विद्युत् क्षेत्र मे काफी सुधार किए जा रहे हैं । विद्युत् के उत्पादन, ट्रान्समिशन, वितरण, प्रशुल्क-निर्धारण व अन्य नियमों में आवश्यक परिवर्तन करने की दिशा में कदम उठाए जा रहे हैं । इनका संक्षिप्त परिचय आगे दिया जाता है—

(1) जैसा कि ऊपर बताया जा चुका है आगामी चार-पाँच वर्षों में राज्य मे विद्युत् की प्रस्थापित क्षमता काफी बढ़ने की सम्भावना है । आशा है कि तब राज्य विद्युत की सप्लाई में न केवल आत्म-निर्भर हो जाएगा, बल्कि कुछ मात्रा में सरप्लस भी हो सकता है । इसके लिए निजी कम्पनियों (देशी व विदेशी) से समझौते किए गए हैं । ये अन्तर्राष्ट्रीय

---

1. मुख्यमंत्री श्रीमती वसुन्धरा राजे का बजट-भाषण, 2004-05, 12 जुलाई 2004, पृ 54-55

निविदा प्रणाली के आधार पर पारदर्शी, खुले व सुनिश्चित रूप में किए गए हैं, जिनकी सर्वत्र सराहना हुई है।

(2) राज्य विद्युत मण्डल को राज्य विद्युत निगम में बदला जा रहा है जिसके कम्पनी अधिनियम में पंजीकरण की कार्यवाही पूरी हो चुकी है। भविष्य में निगम बनने के बाद यह सरकारी नियंत्रण से मुक्त हो जाएगा। बिजली की दर एक निर्धारण-समिति तय करेगी। यह निजी क्षेत्र को उत्पादन व सप्लाई का काम ठेके पर देने के लिए स्वतन्त्र होगा। इससे मौजूदा आर्थिक संकट को हल करने में मदद मिलेगी। विद्युत की चोरी पर अंकुश लगेगा और बिलों की वसूली में भी सख्ती की जा सकेगी।

(3) विद्युत-वितरण (Power Distribution) व बिल वसूली का काम ठेके पर देने से गुणात्मक सुधार होगा। प्रथम चरण में अलवर व सवाई माधोपुर जिलों में यह कार्य ठेके पर दिया गया है। आगे चलकर चार जिलों—पाली, जालौर, सिरोही व जोधपुर में भी ठेके पर इसी प्रकार का काम देने का प्रयास किया जा रहा है। आशा है इससे विद्युत क्षेत्र की व्यवस्था में गुणात्मक सुधार आएगा और कुल मिलाकर विद्युत व्यवस्था घाटे के दौर से निकलकर लाभ के दौर में प्रवेश कर सकेगी।

(4) पिछले वर्षों में ग्रामीण विद्युतीकरण कार्यक्रम के अन्तर्गत गाँवों में विद्युतीकरण की सुविधा बढ़ाई गई है। वर्ष 1994 में रा.रा.वि.मं. (RSEB) ने एक 'नर्सरी स्कीम' (Nursery Scheme) लागू की थी जिसके अन्तर्गत क्रम को लांघकर (out of term) कृषि-कनेक्शन दिए गए थे। इसके लिए उपभोक्ता पूरी लागत भरता था और गैर-घरेलू श्रेणी (non-domestic category) के प्रशुल्क (tariff) का 50% देता था। इस प्रकार इस स्कीम के उपभोक्ता कृषिगत क्षेत्र की सामान्य दर के दुगुने से ज्यादा का भुगतान करते थे। यह स्कीम कृषकों में काफी लोकप्रिय हुई थी और काफी कृषकों ने इसका लाभ उठाया था। लेकिन नई कांग्रेस सरकार ने नर्सरी योजना को समाप्त कर दिया और 1999-2000 से राज्य में नई कृषि-कनेक्शन नीति लागू की गई जिसके अन्तर्गत सामान्य आवेदकों को उचित प्राथमिकता गयी थी।

(5) राज्य में विद्युत-नियमनकारी आयोग (Electricity Regulatory Commission) एक स्वतन्त्र संस्था के रूप में स्थापित किया गया है जो राज्य विद्युत निगम के कार्यों का नियमन करेगा और विद्युत के ट्रान्समिशन व सप्लाई के लाइसेंस जारी करेगा।

(6) राज्य विद्युत मण्डल का मुख्य रूप से तीन भागों—उत्पादन, प्रसारण व वितरण—में बंटवारा किया गया है। इसके लिए तकनीकी अधिकारियों व कर्मचारियों का बड़े पैमाने पर स्थानान्तरण करना होगा। वितरण क्षेत्र को भी तीन कम्पनियों में विभाजित किया गया है—एक जयपुर, दूसरी जोधपुर व तीसरी अजमेर क्षेत्र के लिए होगी। राज्य में विद्युत-सुधारों के अन्तर्गत इन परिवर्तनों के प्रभाव आगामी वर्षों में सामने आएँगे। विद्युत-सुधारों का कार्य बहुत कठिन है। इसे कर्मचारियों के सहयोग से ही पूरा करना सम्भव हो सकता है।

भविष्य में राज्य में ऊर्जा के गैर-परम्परागत साधनों के विकास पर अधिक जोर देने की आवश्यकता है । राज्य विद्युत–मण्डल के घाटों के कारण राज्य की अर्थव्यवस्था पर निरन्तर दुष्प्रभाव पड़ता रहता है । इसलिए इनको प्रबन्ध–व्यवस्था में सुधार करके तथा विद्युत की दरों में आवश्यक संशोधन करके एवं बिजली की चोरी व छीजत को रोककर इनकी वित्तीय स्थिति में सुधार करने का प्रयास किया जाना चाहिए । विद्युत की उपलब्धि बढ़ाकर ही कृषि व उद्योग के विकास की बात सोची जा सकती है। विद्युत के विकास पर ही आम उपभोक्ताओं के हित निर्भर करते हैं । अतः आगामी वर्षों में सरकार को काफी मात्रा में अतिरिक्त विद्युत्-सृजन की क्षमता का विकास करने का भरपूर प्रयास करना होगा ।

उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट होता है कि राजस्थान का ऊर्जा–परिदृश्य (power-scenario) काफी तेजी से बदल रहा है । यदि विभिन्न ऊर्जा–परियोजनाओं पर तेजी से काम किया गया तो राज्य भविष्य में 'ऊर्जा–आधिक्य' (power surplus) वाला राज्य बन सकता है, जिससे इसको आगे चल कर विकसित राज्यों की पंक्ति में बैठने का मौका मिल सकता है ।

प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. राजस्थान के कुल आबाद गाँवों में से विद्युतीकृत गाँवों का प्रतिशत 2002–03 में लगभग था—

   (अ) 97 प्रतिशत

   (ब) 80 प्रतिशत

   (स) 75 प्रतिशत

   (द) 90 प्रतिशत (अ)

2. सूरतगढ़ ताप विद्युत गृह की पहली इकाई ने नियमित उत्पादन आरम्भ कर दिया—

   (अ) 3 नवम्बर, 1998 से

   (ब) 3 नवम्बर, 1997 से

   (स) नवम्बर 1999 से सम्भावित

   (द) कोई नहीं (अ)

3. धौलपुर विद्युत परियोजना किस पर आधारित होगी ?

(अ) लिग्नाइट पर (ब) गैस पर

(स) नेफ्था पर (द) डीजल पर (स)

4. वर्ष 1999 में किस परियोजना की किस इकाई पर कार्य प्रारम्भ होने की आशा प्रगट की गई ?

(अ) धौलपुर नेफ्था-आधारित परियोजना (702 मेगावाट)

(ब) बरसिंगसर लिग्नाइट-आधारित परियोजना (500 मेगावाट)

(स) राजस्थान आणविक विद्युत गृह, रावतभाटा की तीसरी व चौथी इकाई (कुल 440 मेगावाट)

(द) सूरतगढ़ ताप विद्युत परियोजना की (250 मेगावाट की) दूसरी इकाई (स)

5. राज्य में नई विद्युत नीति की दिशा में क्या कदम उठाए गए हैं ?

(अ) विद्युत-सृजन में निजी क्षेत्र की भागीदारी

(ब) विद्युत-वितरण में निजी क्षेत्र की भागीदारी

(स) राज्य विद्युत-नियामक-प्राधिकरण की स्थापना

(द) सभी (द)

6. सूरतगढ़ सुपर थर्मल पावर प्रोजेक्ट की कुल कितनी इकाइयाँ रखी गयी हैं ?

(अ) 4 (ब) 5

(स) 6 (द) इनमें से कोई नहीं (ब)

7. राजस्थान परमाणु बिजलीघर की तीसरी व चौथी इकाई (2×200 मेगावाट) राष्ट्र को कब समर्पित की गई ?

(अ) 10 मार्च, 2001 (ब) 18 मार्च, 2001

(स) 18 दिसम्बर, 2000 (द) अभी नहीं (ब)

8. जून 2001 में कोटा थर्मल की छठी इकाई की 195 मेगावाट क्षमता को स्वीकृति मिलने पर इसकी कुल उत्पादन-क्षमता कितनी हो गयी ? इसका राजस्थान पर क्या प्रभाव पड़ेगा ?

उत्तर :

(i) इसकी कुल उत्पादन-क्षमता 1045 मेगावाट हो गयी ।

(ii) यह सूरतगढ़ थर्मल के बाद राजस्थान का दूसरा सुपर थर्मल पावर स्टेशन बन गया ।

(iii) छठी इकाई के वर्ष अगस्त 2003 में पूरा होने की सम्भावना व्यक्त की गयी थी ।

अन्य प्रश्न

1. राजस्थान में पावर के क्षेत्र में हुई प्रगति का आलोचनात्मक परीक्षण कीजिए । क्या राज्य अपनी पावर की आवश्यकताओं के लिए अन्य राज्यों पर आश्रित है ?
2. राजस्थान में पावर के विकास की प्रस्तावित परियोजनाओं का संक्षिप्त परिचय दीजिए । इनको कार्यान्वित करने में क्या कठिनाइयाँ आ सकती हैं ?
3. संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए—
   (i) राजस्थान में पावर-इन्फ्रास्ट्रक्चर,
   (ii) राजस्थान में ऊर्जा-आधारित संरचना,
   (iii) राजस्थान अणुशक्ति प्रोजेक्ट (RAPP),
   (iv) बरसिंगसर थर्मल पावर प्रोजेक्ट,
   (v) सूरतगढ़ या धौलपुर ताप-बिजली परियोजना,
   (vi) मथानियाँ सौर-ऊर्जा परियोजना,
   (vii) राज्य की डीजल-आधारित विद्युत परियोजनाएँ तथा
   (viii) REDA तथा अब RREC
   (ix) राजस्थान के विद्युत क्षेत्र में सुधार ।
   (x) पार्वती जल-विद्युत परियोजना ।

15

सड़कें व नई सड़क नीति दिसम्बर, 1994

(Roads and New Road Policy December, 1994)

आर्थिक विकास में सड़कों की महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है। इनके विकास को भी आधार-ढाँचे के विकास में उच्च स्थान दिया जाता है। सड़कों के विकास के बिना किसी भी प्रकार का आर्थिक विकास सम्भव नहीं होता। कृषि, उद्योग, परिवहन, व्यापार, लोगों के आवागमन, आदि की प्रगति बहुत कुछ सड़कों के विकास पर ही निर्भर करती है। सड़क-विकास की योजनाओं के माध्यम से रोजगार बढ़ाने का प्रयास किया जाता है, अकाल के समय राहत-कार्य चलाए जाते हैं, खनन-क्षेत्रों का विकास किया जाता है तथा सामाजिक विकास (शिक्षा, चिकित्सा, आदि) का आधार तैयार किया जाता है।

राजस्थान के निर्माण के समय सड़कों की दशा काफी असंतोषजनक थी। 31 मार्च, 1951 को राज्य में डामर की (BT) सड़कों की लम्बाई केवल 17,339 किलोमीटर थी, जो बढ़कर 2003-04 में 96091 किलोमीटर हो गई। राज्य में सभी प्रकार की सड़कों की लम्बाई मार्च, 2004 के अन्त में 1,57,178 किलोमीटर आंकी गयी है।[1]

राज्य में निम्न कार्यक्रमों के अन्तर्गत योजनाकाल में सड़कों का विकास किया गया है—*(i)* सिंचित क्षेत्र विकास, (कमांड क्षेत्र विकास के अन्तर्गत), *(ii)* न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम (MNP), *(iii)* दुग्ध-मार्ग का विकास, *(iv)* खनिज सड़कें, *(v)* राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम, *(vi)* ग्रामीण भूमिहीन रोजगार गारंटी कार्यक्रम (अब जवाहर रोजगार योजना के अन्तर्गत), *(vii)* अकाल राहत कार्य, *(viii)* कृषि विपणन बोर्ड द्वारा कृषि-उपज-मंडी की सड़कें, *(ix)* स्थानीय संस्थाओं द्वारा जैसे जयपुर विकास प्राधिकरण (JDA), नगर निगम, म्यूनिसिपैलिटी द्वारा, आदि।

---

1 Economic Review 2003-2004, Govt. of Rajasthan, p 61 (नवीनतम स्थिति के लिए)
इसमें डामर, मेटल, ग्रेवल व मौसमी सभी तरह की सड़कें शामिल हैं।

इस प्रकार 1950-51 की तुलना में 2003-04 में डामर की सड़कों की लम्बाई लगभग 5.5 गुनी हो गई । इसके बावजूद भी राज्य सड़कों की दृष्टि से समस्त भारत की तुलना में काफी पिछड़ा हुआ माना जाता है ।

योजनाकाल में राज्य में सड़कों का अंश काफी बढ़ा है जो एक संतोषजनक स्थिति का परिचायक है । पहले की तुलना में सड़कों की गुणवत्ता में सुधार हुआ है । विभिन्न वर्षों में सड़कों के विकास की स्थिति निम्न तालिका में दर्शाई गई है—

वर्ष	डामर सड़कों की लम्बाई (किमी. में)
1955-56	18,749
1960-61	26,693
1970-71	31,752
1980-81	41,194
1990-91	58,350
2001-02	89727
2003-04	96091

सड़कों की वर्तमान स्थिति—31 मार्च, 2004 को राज्य में सभी प्रकार की डामर की सड़कों की सम्भावित लम्बाई 96091 किलोमीटर थी, जिसका वर्गीकरण निम्न तालिका में दिया है—

31 मार्च, 2004 को राज्य में
डामर की (Black Top) सड़कों की लम्बाई[1]

	लम्बाई (किलोमीटर में)
1. राष्ट्रीय राजमार्ग	5592
2. राज्यीय राजमार्ग	8514
3. बड़ी जिला सड़कें	5278
4. अन्य जिला सड़कें	15956
5. ग्रामीण सड़कें	60751
कुल	96091

आजकल सड़कों को किस्मों के अनुसार निम्न श्रेणियों में रखा जाता है—

(1) B.T. (Bitumen Treated) या डामर की सड़कें,

(2) WBM (Water Bound Macadam) या पक्की सड़कें (Metalled roads)

(3) Gravel Roads या मिट्टी व छोटे गोल पत्थरों को मिलाकर बनी सड़कें तथा

(4) Fair Weather Roads या साधारण मौसमी सड़कें ।

1. Economic Review 2003-2004. (GOR), p 61.

2003-04 में विभिन्न प्रकार की सड़कों की लम्बाई इस प्रकार थी[1]—

	(किलोमीटर में)
1. बी. टी. या डामर की सड़कें	96091
2. डब्ल्यू. बी.एम. (पक्की सड़कें)	11729
3. ग्रेवल की सड़कें	45085
4. साधारण सड़कें (FWR)	4273
कुल	157178

राज्य में 31 मार्च, 2001 को निम्न पाँच जिलों में सभी प्रकार की सड़कों की लम्बाई (राष्ट्रीय राजमार्गों सहित) कुल राज्य का लगभग 28.2% अंश पाई गई थी ।[2]

जिला	(किलोमीटर में)
1. जोधपुर	6156
2. पाली	4863
3. नागौर	5368
4. बाड़मेर	5407
5. भीलवाड़ा	4017
योग	25811

31 मार्च, 2001 को सभी 32 जिलों में सड़कों की लम्बाई 92009 किलोमीटर आंकी गई थी । उपरोक्त पाँच जिलो में राज्य की सड़कों की कुल लम्बाई का लगभग 28% अंश पाया गया था । राजस्थान में जिलेवार सड़कों की लम्बाई में काफी असमानता पाई जाती है ।

मार्च 2001 के अन्त तक राज्य मे डामर की सड़कों से जुड़े गाँवों की संख्या अग्र तालिका में दर्शाई गई है—

1. Economic Review 2003-04 p 61
2 Basic Statistics Rajasthan 2002, p 147.

1991 की जनगणना के अनुसार डामर की सड़कों से जुड़े गाँवों की संख्या[1]

जनसंख्या	गाँवों की संख्या	मार्च 2002 के अन्त तक BT सड़कों से जुड़े गाँव	मार्च 2002 के अन्त तक सड़कों से बिना जुड़े गाँवों की संख्या
1. 1,500 व अधिक	6131	5857	274
2. 1,000-1,500	4635	3526	1109
3. 1,000 से कम	27123	8193	18930
योग	37889	17576	20313

इस प्रकार 1991 की जनगणना के अनुसार मार्च 2002 के अन्त तक लगभग 46% गाँव ही सड़कों से जुड़ पाए हैं और लगभग 54% गाँव सड़कों से बिना जुड़े रह गए हैं । इनकी संख्या 20313 आंकी गई है ।

अतः आज भी राजस्थान में काफी गाँव सड़कों से नहीं जुड़ पाए हैं । राज्य में सड़कों के सम्बन्ध में कई प्रकार के काम करने बाकी हैं; जैसे सड़क की परत को मोटा करना, सड़कों को चौड़ा करना तथा मार्ग में पड़ने वाले बिना पुल के नदी-नालों पर पुल बनाना आदि ।

राज्य में 32 जिले (नये करौली जिले सहित) हैं, जो 105 उप-खण्डों (sub-divisions), 241 तहसीलो व 9,184 पंचायत मुख्यालयो में विभाजित हैं । ये प्रशासनिक, आर्थिक व सामाजिक क्रियाओं के मेरुदण्ड हैं । इनको सड़कों से जोड़ना अत्यावश्यक है । सभी पंचायत मुख्यालयों को सड़कों से जोड़ने की आवश्यकता है ।

राजस्थान में 2003-04 के अन्त में सड़कों का घनत्व बहुत कम था । यह 100 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र के पीछे 45.93 किलोमीटर था, जबकि राष्ट्रीय औसत 77 किलोमीटर आंका गया था (1998-99 में) । इस प्रकार यह राष्ट्रीय औसत से काफी नीचा है ।[2] भविष्य में सड़क-विकास के विभिन्न कार्यक्रमों पर ध्यान देना होगा, जैसे बड़ी गायब कड़ियों का निर्माण करना, अन्तर्राज्यीय सड़कों का निर्माण करना तथा बिना पुल के क्रोसिंग के स्थानों पर पुल बनाना, आदि । स्वाभाविक है कि इसके लिए काफी पूँजी का विनियोजन करना होगा ।

सड़क विकास की नागपुर योजना के अनुसार सड़कों की लम्बाई प्रति 100 वर्ग किलोमीटर में 42 किलोमीटर होनी चाहिए, जो 1961 तक प्राप्त करनी थी । लेकिन 31 मार्च, 1999 के अन्त में यह राजस्थान में 43.7 किलोमीटर तक आ पाई है, जो नागपुर योजना के लक्ष्य के समीप होते हुए भी आज भी राष्ट्रीय औसत से काफी कम है ।

1 Some Facts About Rajasthan, 2003 part-I, p 37
2. Economic Review 2003-2004, p-61 & Table 10 at the end.

सड़क विकास की मास्टर प्लान (1981-2001)—पहले राज्य के सार्वजनिक निर्माण विभाग (*PWD*) ने सड़क विकास की बीस वर्षीय मास्टर प्लान तैयार की थी जिसकी मुख्य बातें इस प्रकार हैं—

(1) सभी पंचायत मुख्यालयों को सड़कों से जोड़ना, (2) एक हजार व अधिक जन-संख्या (1971 की जनगणना के अनुसार) वाले सभी गाँवों को सड़कों से जोड़ना, (3) सड़कों की गायब कड़ियों का निर्माण करना व दो मार्ग वाली सड़कें बनाना, (4) बड़ी जिला सड़कों पर आवश्यक पुलों का निर्माण करना, (5) अन्तर्राज्यीय सड़कों का निर्माण करना, (6) पर्यटन महत्त्व की सड़कों का निर्माण करना, (7) धार्मिक स्थानों तक सड़कें बनाना, (8) रेलवे-स्टेशन तक सड़कें बनाना, (9) खनन-सड़कें बनाना, (10) औद्योगिक केन्द्रों तक सड़कें बनाना, (11) मण्डियों तक सड़कें बनाना तथा दूध के मार्गों एवं पंचायत मुख्यालयों तक आबादी क्षेत्रों में छोटी कड़ियाँ स्थापित करना।

उपर्युक्त मास्टर प्लान के अनुसार, सड़क निर्माण कार्य पर 3,500 करोड़ रु. व्यय करने की आवश्यकता आंकी गई थी।

सड़क निर्माण की योजना को कृषि उपज मण्डी समिति (KUMS), केन्द्रीय सड़क कोष (CRF), ग्रामीण निर्माण कार्यक्रम व अकाल राहत कार्यों (सूखे के वर्षों में) से जोड़ने पर बल *दिया गया है ताकि सड़क विकास की गति तेज की जा सके।*

राज्य में नई सड़कों के निर्माण के साथ-साथ वर्तमान सड़कों के रख-रखाव पर भी पूरा ध्यान देने की आवश्यकता है। जैसा कि पहले कहा जा चुका है, सड़कों के निर्माण का अनेक दृष्टियों से महत्त्व है, जैसे कृषिगत माल के उचित विपणन के लिए, पिछड़े क्षेत्रों के औद्योगिक विकास के लिए, निर्धनता-निवारण के लिए, रोजगार देने की दृष्टि से, दस्युग्रस्त इलाकों में दस्यु-उन्मूलन कार्यक्रम चलाने के लिए, जनजाति क्षेत्रों के विकास के लिए, पर्यटन के विकास के लिए, सीमावर्ती क्षेत्रों के विकास के लिए, नगरीय क्षेत्रों के विकास के लिए, आदि-आदि। इसलिए भावी योजनाओं में सड़कों के विकास पर काफी बल देना होगा।

आठवीं पंचवर्षीय योजना (1992-97) में सड़क- विकास के लिए प्रावधान, लक्ष्य व उद्देश्य—आठवीं पंच-वर्षीय योजना में सड़क-विकास के लिए 697 50 करोड़ रु. आवंटित किए गए जिनमें से 388 करोड़ रु. राज्यस्तरीय सड़कों के लिए और 260 करोड़ रु. न्यूनतम-आवश्यकता-कार्यक्रम के अन्तर्गत बनाई जाने वाली सड़कों के लिए रखे गए। शेष राशि हवाई पट्टियों के विकास, शहरी सड़कों, पर्यटन-महत्त्व की सड़कों तथा अन्य अनुसंधान व *विकास-कार्यों पर व्यय के लिए निर्धारित की गई।*

विश्व बैंक की सहायता से 280 7 करोड़ रु. की लागत से 5 राज्यस्तरीय सड़कों को चौड़ा करने, परत को मजबूत करने और पुलों के निर्माण का कार्य हाथ में लिया गया।

आठवीं योजना में ग्रामीण सड़कों की लम्बाई 6600 किलोमीटर बढ़ाने का लक्ष्य रखा गया था।

सड़क-विकास के अन्य मुख्य लक्ष्य इस प्रकार रखे गए थे—*(i)* 1000 की जनसंख्या से ऊपर (1971 की जन- गणना के अनुसार) के सभी गाँवों को डामर की सड़कों से जोड़ दिया जाएगा। इसके लिए गायब कड़ियों के लिए सड़कों का निर्माण करना होगा और ग्रेवल व पक्की सड़कों को काफी सीमा तक डामर की सड़कों में समुन्नत किया जाएगा। *(ii)* 1,798 पंचायत मुख्यालयों को ग्रेवल या पक्की सड़कों से जोड़ दिया जाएगा। *(iii)* कई गायब कड़ियों को पूरा किया जाएगा। *(iv)* बड़े पर्यटन स्थलों व धार्मिक स्थानों को परस्पर मिला दिया जाएगा। *(v)* 5 राज्य स्तरीय सड़कों को बाह्य सहायता की मदद से समुन्नत किया जाएगा।

नवीं पंचवर्षीय योजना में सड़क-विकास के लिए प्रावधान, उद्देश्य व लक्ष्य— नवीं पंचवर्षीय योजना में PWD के योजना-कोषों से लगभग 1,600 करोड़ रु. व्यय किए जाएँगे। ये राज्यस्तरीय सड़कों व न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम की सड़कों पर व्यय होंगे। नवीं योजना में सड़क-विकास के प्रमुख लक्ष्य इस प्रकार रखे गए हैं—

(i) 1991 की जनगणना के अनुसार 1000 से ऊपर की जनसंख्या वाले सभी गाँवों को डामर की सड़कों से जोड़ा जाएगा। इसके लिए लगभग 700 करोड़ रु. के व्यय से 15,186 किलोमीटर में सड़कों का निर्माण किया जाएगा, अथवा उन्हें उन्नत किया जाएगा।

(ii) 1991 की जनगणना के अनुसार जनजाति क्षेत्रों में व कम आबादी वाले मरु जिलों में 750 की जनसंख्या से अधिक वाले सभी गाँवों को सड़कों से जोड़ दिया जाएगा।

(iii) सभी पंचायत मुख्यालयों को मिलाने वाली सड़कों को डामर की सड़कों में उन्नत किया जाएगा।

(iv) बड़ी राज्य स्तरीय सड़कों व कुछ मध्यम जिला-सड़कों को चौड़ा किया जाएगा तथा उन्हें सुदृढ़ किया जाएगा। इसका उद्देश्य जिला मुख्यालयों को राज्य की राजधानी से व जिला मुख्यालयों को पड़ौसी जिला मुख्यालयों से दुगुनी चौड़ी सड़क (7 मीटर) के माध्यम से जोड़ना है।

(v) अन्तर्राज्यीय व आर्थिक महत्त्व की बड़ी कड़ियों का निर्माण किया जाएगा। पर्यटन की सुविधा, धार्मिक महत्त्व व रेलवे स्टेशनों जैसे स्थानों को जोड़ने वाली सड़कों का निर्माण किया जाएगा।

(vi) बाईपास मार्गों का निर्माण किया जाएगा। ऐसा भारी घनत्व वाली सड़कों पर विशेषतया किया जाएगा।

(vii) गायब पुलों, कलवर्ट (पुलिया), आदि का निर्माण किया जाएगा तथा भारी ट्रैफिक की सड़कों पर ओवर ब्रिजों का निर्माण किया जाएगा।

(viii) खनन क्षेत्रों में टोल-टैक्स के आधार पर सड़कों का निर्माण किया जाएगा।

(ix) सड़क-निर्माण की गुणवत्ता में सुधार किया जाएगा।

इन उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए अतिरिक्त साधन-संग्रह करना होगा, टेक्नोलोजी को समुन्नत करना होगा, लागत कम करने का प्रयास करना होगा, पेशेवर प्रबन्ध को बेहतर बनाना होगा, तकनीकी दक्षता में सुधार करना होगा एवं सड़क निर्माण की विधियों को बदलना होगा। आठवीं योजना में सड़क-विकास पर कुल सार्वजनिक परिव्यय का 6% आवंटित किया गया था, जिसे बढ़ाकर नवीं योजना के पूर्व स्वरूप में 8% प्रस्तावित किया गया।

अकाल व बाढ़ राहत कार्य, जवाहर रोजगार योजना, 32 जिले 32 काम, रोजगार-आश्वासन योजना (Employment Assurance Scheme) आदि रोजगारोन्मुख कार्यक्रम हैं और इनमें सड़क-निर्माण प्रमुख क्रिया मानी जाती है। इनमें परस्पर ताल-मेल बैठाने की आवश्यकता है तथा कृषि-उपज-मंडी, कमांड क्षेत्र विकास व खनन-विकास आदि के साथ इनको जोड़कर सड़क-विकास के काम को अधिक तेज गति से करने की आवश्यकता है।

इन विभिन्न कार्यक्रमों को लागू करने पर सड़क-विकास के लिए नवीं पंचवर्षीय योजना (1997-2002) की अवधि में कुल 3000 करोड़ रु. के व्यय की आवश्यकता होगी, जिसका आवंटन निम्न प्रकार दर्शाया गया है—

(करोड़ रु.)

(i)	सार्वजनिक निर्माण विभाग के योजना कोषों से	1600
(ii)	अकाल राहत कोषों से	400
(iii)	कृषि उपज मण्डी कोषों से	300
(iv)	रोजगार-आश्वासन स्कीम के कोषों से	300
(v)	जवाहर रोजगार योजना कोषों से	200
(vi)	संस्थागत वित्त से	200
	कुल	3000

विभिन्न कार्यों के पूरा होने पर वर्ष 2002 तक 20 हजार किलोमीटर दूरी में डामर की सड़कें तथा 5 हजार किलोमीटर में ग्रेवल-सड़कें (अकाल राहत व अन्य रोजगार-सृजन कार्यक्रमों के अन्तर्गत) एवं अलग से खनन-सड़कें, कमाण्ड-क्षेत्र-विकास-सड़कें व कृषि-उपज-मण्डी की सड़कें बन सकेंगी, जिससे वर्ष 2002 में सड़क-घनत्व (road-density) 100 वर्ग किलोमीटर पर लगभग 45 किलोमीटर होने का अनुमान लगाया गया था।

नई सड़क-विकास नीति की विशेषताएँ—उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट होता है कि राजस्थान सड़क-विकास के एक वृहद् कार्यक्रम को अपनाने जा रहा है। इसकी मुख्य विशेषताएँ इस प्रकार होंगी—

(1) नवीं पंचवर्षीय योजना में सड़क-विकास पर 3000 करोड़ रु. का विनियोजन करना होगा।

(2) सड़क-निर्माण के विभिन्न कार्यक्रमों में परस्पर ताल-मेल बैठाना होगा।

(3) सड़क-निर्माण को आगे बढ़ाने के लिए संस्थागत वित की मदद लेनी होगी। जैसे राजस्थान राज्य पुल व निर्माण निगम (RSBCC) इस कार्य के लिए कर्ज लेगा जिसको चुकाने के लिए टोल-टैक्स लगाना होगा।

(4) सड़क-विकास के लिए निजी साझेदारी को आमन्त्रित करना होगा। इसके लिए खुले टेण्डर आमंत्रित किए जाएँगे। निजी उद्यमकर्त्ता Build, Operate and Transfer (BOT) (निर्माण करो, संचालन करो और बाद में हस्तान्तरित करो) अथवा BOMT (Build, Operate, Maintain and Transfer) (निर्माण, संचालन, देखभाल व हस्तान्तरण) के आधार पर आगे आ सकते हैं। लेकिन अन्त में यह कार्य वापस सरकार के पास चला जाएगा। निजी उद्यमकर्त्ता अपनी पूँजीगत लागत निकालने के लिए सरकार द्वारा निर्धारित दरों पर टोल-टैक्स एकत्र कर सकेंगे।

(5) सड़क-विकास की नई नीति में सड़कों के रख-रखाव (maintenance) पर भी पर्याप्त ध्यान आकर्षित किया गया है।

(6) सड़कों को चौड़ा करने पर भी पर्याप्त बल दिया गया है।

(7) सड़क-विकास के लिए आवश्यक अनुसंधान को भी प्रोत्साहन दिया जाएगा ताकि यह कार्य कम लागत पर अधिक कार्यकुशल ढंग से पूरा किया जा सके।

नई सड़क नीति, 1994 की आलोचना—सड़क- विकास की नई नीति राजस्थान में सड़क-विकास की दिशा में एक 'लम्बा डग' (a big leap forward) **मानी जा सकती है।** आठवीं योजना में सड़कों के विकास के लिए 697.50 करोड़ रु. का प्रावधान किया गया था, जिसे बढ़ाकर नवीं पंचवर्षीय योजना में 3000 करोड़ रु. करने का लक्ष्य रखा गया। प्रश्न उठता है कि वित्तीय साधनों के अभाव की स्थिति में क्या इतनी विशाल धनराशि जुटा पाना सम्भव होगा? सड़कों के अलावा वित्तीय साधनों की आवश्यकता नई विद्युत-परियोजनाओं व नई सिंचाई की परियोजनाओं के लिए भी होगी। चालू परियोजनाओं को पूरा करने के लिए भी धन की आवश्यकता होगी। इसलिए नई सड़क-नीति को सफल बनाने के लिए विशाल मात्रा में वित्तीय साधनों की व्यवस्था करनी होगी। राज्य पर पहले ही बकाया कर्ज का भार बहुत अधिक है। अतः अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं से सहायता लेकर ही आधार-ढाँचे का विकास करना सम्भव हो पाएगा।

नई सड़क नीति की सफलता निम्न तीन बातों पर निर्भर करेगी—

(i) निजी क्षेत्र सड़क-विकास में किस सीमा तक साझेदारी कर पाता है ?

(ii) सड़क-विकास की विभिन्न परियोजनाओं व एजेन्सियों जैसे न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम (MNP), जवाहर रोजगार योजना, कमांड क्षेत्र विकास कार्यक्रम, खनन-सड़कों, कृषि-उपज-मंडी की सड़कों, धार्मिक स्थलों व पर्यटन स्थलों की सड़कों, आदि में कितना ताल-मेल स्थापित हो पाता है ?

(iii) नई सड़कों का उपयोग करने वाले टोल-कर, आदि के रूप में कितनी राशि चुका पाते हैं ? अतः नई सड़क नीति एक साहसी व दूरगामी नीति है। आशा है इससे राज्य में सड़क निर्माण-कार्य को काफी बल मिलेगा।

सड़क-विकास के नये कार्यक्रमों की प्रगति का विवरण[1]—मार्च 2004 के अंत तक 19,696 आबाद गाँवों के सड़कों से जुड़े जाने का अनुमान है। इसी अवधि तक 8751 पंचायत मुख्यालय डामर की सड़कों से जोड़े जा चुके थे।

प्रगति का अन्य विवरण नीचे दिया जाता है।

(1) प्रधानमंत्री ग्रामोदय सड़क योजना (PMGSY) प्रधानमंत्री द्वारा 25 दिसम्बर, 2000 को प्रारम्भ की गयी थी। इसके माध्यम से 2001 की जनगणना के अनुसार 500 या अधिक आबादी के सभी गाँव 2007 के अंत तक सड़कों से जोड़ दिये जायेंगे। मार्च, 2004 के अंत तक 1904 गाँवों में 6826 किलोमीटर डामर की सड़कें बनायी जा चुकी हैं। (2) मार्च 2004 तक 1687 किलोमीटर की दूरी तक राष्ट्रीय राजमार्गों की गुणवत्ता में सुधार किया गया है। भारत का राष्ट्रीय हाईवे प्राधिकरण (NHAI) प्रधानमंत्री के राष्ट्रीय राजमार्ग-ड्रीम प्रोजेक्ट के तहत राज्य में 4 व 6 लेन की सड़कें बनाने में संलग्न है। इसके तहत—

(1) स्वर्णिम-चतुर्भुज (अ) जयपुर बाईपास चरण II (4 लेन का) व (आ) जयपुर-किशनगढ़ (राष्ट्रीय राजमार्ग-8) (6 लेन का); (इ) किशनगढ़-भीलवाड़ा-उदयपुर-रतनगढ़ (गुजरात सीमा) (4 लेन का); (2) उत्तर दक्षिण कोरीडोर-आगरा-धौलपुर-मुम्बई (4 लेन का) तथा (3) पूर्व-पश्चिम कोरीडोर-पिंडवाड़ा-उदयपुर-चित्तौड़गढ़-कोटा-बारां-शिवपुरी (4 लेन का) शामिल हैं। इनकी लम्बाई, लागत व पूरा होने के वर्ष भिन्न-भिन्न हैं।

(3) नाबार्ड की वित्तीय सहायता से 'सड़क-अपग्रेडेशन प्रोजेक्ट' सड़कों की मरम्मत के लिए चलाया गया है। यह जनवरी 2002 से प्रारम्भ किया गया है।

(4) निजी क्षेत्र के निवेश से 'बनाओ-संचालन करो-हस्तान्तरित करो (BOT) के तहत सड़क, बाई-पास व टनलों, आदि के निर्माण का कार्य राजस्थान सड़क विकास अधिनियम 2002 के तहत चलाया जा रहा है।

(5) केन्द्रीय-सड़क-कोष के तहत राज्यीय राजमार्गों को सुदृढ़ करने, चौड़ा करने तथा नवीनीकरण का कार्य किया जा रहा है।

(6) कृषक उपज मण्डी, पब्लिक वर्क्स डिपार्टमेण्ट व अकाल राहत वर्क्स के तहत 'गावब कड़ी प्रोजेक्ट', 2003-04 में स्वीकृत किया गया था। इस प्रकार राज्य में सड़क-विकास के कई कार्य संचालित किये जा रहे हैं।

राजस्थान राज्य सड़क परिवहन निगम (Rajasthan State Road Transport Corporation) (RSRTC)—इसकी स्थापना 1964 में एक वैधानिक निगम के रूप में हुई थी। इसके मुख्य कार्य इस प्रकार हैं—

(i) राज्य में सड़क परिवहन का विकास करके जनता, व्यवसाय व उद्योग को लाभ पहुँचाना,

(ii) सड़क परिवहन का परिवहन के अन्य साधनों से ताल-मेल बैठाना तथा

(iii) एक क्षेत्र में सड़क परिवहन की सुविधाओं का विस्तार करना व उनमें सुधार करना और राज्य में सड़क परिवहन सेवा को कार्यकुशल व किफायती रूप प्रदान करना।

निगम को 1991-92 से 1997-98 तक लगातार सात वर्षों तक मुनाफा प्राप्त हुआ जो 1994-95 में 24.12 करोड़ रु. तक पहुँच कर बाद में घटता गया और 1997-98 में मात्र लगभग 4 करोड़ रु. रह गया। लेकिन 1998-99 में इसे लगभग

---

1. Economic Review 2003-04, pp. 61-63.

44 करोड़ रु., 1999-2000 में 73.8 करोड़ रु. व 2000-2001 में 85.6 करोड़ रुपये का घाटा हुआ ।[2]

इस प्रकार राजकीय उपक्रमों में राजस्थान राज्य सड़क परिवहन निगम पिछले 7 वर्षों में लाभार्जन करने वाला एक अग्रणी उपक्रम माना गया था, जिसने 1998-99 में अपना नाम घाटे के उपक्रमों में लिखा लिया है जो एक भारी चिंता का विषय है । इसके कारणों पर आगे प्रकाश डाला गया है ।

राजस्थान राज्य सड़क परिवहन निगम की मार्च 1996 के अन्त में उपलब्धियों की तुलना कुछ राज्यों व समस्त भारत से निम्न तालिका में की गई है ।

मार्च 1996 के अंत में	फ्लीट का (औसत वर्ष)	प्रति बस प्रति-दिन यात्रियों की संख्या	प्रति बस प्रतिदिन वाहन-उत्पादकता (किलोमीटर में)	प्रति बस प्रति-दिन मुनाफा या घाटा (रु. में)
राजस्थान	3.71	177	280	47.21
पंजाब	5.30	359	238	(-) 271.19
महाराष्ट्र	4.81	455	274	(-) 49.87
समस्त भारत	5.27	627	277	(-) 369.32

तालिका से स्पष्ट होता है कि 1995-96 में जहाँ पंजाब, महाराष्ट्र व समस्त देश में प्रति बस, प्रतिदिन घाटा हुआ था, वहाँ राजस्थान में मुनाफा अर्जित किया गया था । प्रति बस प्रतिदिन वाहन-उत्पादकता भी किलोमीटर में राजस्थान में अधिक रही थी । लेकिन प्रति बस प्रतिदिन मुनाफा राजस्थान में 1994-95 में 138.79 रु. हुआ, जो लागत बढ़ने के कारण 1995-96 में 47.21 रु. ही हुआ । पूर्व में इसकी प्रशासनिक व्यवस्था में सुधार करके इसके मुनाफे में वृद्धि की गई थी । लेकिन 1998-99 में रोड़वेज की दुर्गति का मुख्य कारण कुप्रबन्ध, भ्रष्टाचार, रोड़वेज द्वारा किरायों में भारी वृद्धि तथा निजी बसों का धड़ल्ले से संचालन माना जा रहा है । रोडवेज के किरायों में तथा निजी बसों के किरायों में ज्यादा अन्तर होने से लोगों ने सरकारी बसों से मुँह मोड़ लिया है । इस स्थिति पर तुरन्त ध्यान देकर इसे सुधारने की जरूरत है, अन्यथा भविष्य में रोड़वेज को घाटे से उबारना दुष्कर हो जाएगा ।

निष्कर्ष—राजस्थान के नियोजित विकास में सड़कों के विकास को उच्च प्राथमिकता दी जानी चाहिए । योजनाकाल में सड़कों की लम्बाई कई गुनी हो गई है । हालांकि यह प्रगति काफी सराहनीय है, फिर भी राज्य की आवश्यकताओं को देखते हुए, यह पर्याप्त नहीं कही जा सकती । इसलिए राजस्थान को आगामी दशक में अपने आधार-ढाँचे को अधिक सुदृढ़ करने की दिशा में प्रयास जारी रखना होगा । सरकार को सड़क-विकास की नई नीति (1994) के क्रियान्वयन की भरपूर कोशिस करनी चाहिए ताकि 2004-05 में सड़कों का विकास राज्य के आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक व सांस्कृतिक विकास में अपनी महत्त्वपूर्ण भूमिका आदा कर सके ।

राजस्थान भारत में पहला राज्य है जिसने सड़क-विकास की इतनी बड़ी योजना प्रस्तुत की है । नवीं पंचवर्षीय योजना के पूर्व प्रारूप में सड़क-विकास के लिए 3000

2. राजस्थान राज्य सड़क परिवहन निगम, 37वाँ वार्षिक प्रतिवेदन 2000-2001. पृ 4.

करोड़ रु. का विनियोग प्रस्तावित किया गया था। अब देखना है कि सरकार इतनी धनराशि को किस प्रकार जुटा पाती है और विभिन्न कार्यक्रमो मे किस प्रकार आवश्यक सामजस्य बैठा पाती है। इसमे कोई सदेह नहीं कि नई नीति ने सड़क–विकास के तकनीकी, वित्तीय, प्रशासनिक व व्यावहारिक पक्षो को काफी स्पष्ट, पारदर्शी व गतिमान बनाया है, जो सरकार की एक उपलब्धि है। राज्य सरकार ने सडकों की स्थिति सुधारने के लिए 600 करोड रु. की एक योजना बनाई है जिसके अन्तर्गत आगामी दो वर्षों में 24 हजार किलोमीटर की सडकों का सुदृढ़ीकरण व उन्नयन किया जाएगा।

इसमे धनराशि राज्य सरकार, कृषि विपणन बोर्ड व वित्तीय सस्थाओ से प्राप्त की जाएगी। राज्य सरकार सडक–विकास की दिशा मे महती प्रयास कर रही है ताकि राज्य का आर्थिक विकास द्रुतगति से हो सके।

सडक विकास के नए कार्यक्रम[1]-

नवीं पंचवर्षीय योजना में सड़क-विकास में योजना की राशि का 4.8 प्रतिशत रखा गया था, जिसे दसवीं योजना में बढ़ाकर 8 प्रतिशत कर दिया गया है। प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना के अन्तर्गत 1 हजार से अधिक जनसंख्या वाले 417 गाँवों को सड़कों से जोड़ने का कार्य प्रगति पर है । इस योजना के तहत देश में निर्मित सड़कों में से अधिकांश सड़कें राजस्थान में बनी हैं ।

पिछली साल की प्रस्तावित सड़कों में रींगस-खाटूश्याम जी, लक्ष्मणगढ़-सालासर, भीलवाड़ा-नाथद्वारा, पीपासर-मुकाम सड़कों के उन्नयन व नवीनीकरण का कार्य पूरा कर लिया गया है तथा शेष सडकों का कार्य प्रगति पर है जिसे सितम्बर 2003 तक पूरा कर लिया जायगा। 2003-2004 में सड़क निर्माण पर 76 करोड़ रू. का व्यय प्रस्तावित है, जिसमें निम्न सडकें शामिल हैं: जयपुर-डिग्गी-मालपुरा-केकड़ी-शाहपुरा-मांडलगढ-भीलवाड़ा, भरतपुर-डीग-नगर-अलवर- बहरोड, बूँदी-लाखेरी- इन्द्रगढ़-सवाईमाधोपुर-लालसोट, चित्तौड़गढ- प्रतापगढ-बासवाडा, डूँगरपुर- सागवाड़ा- बासवाडा-रतलाम-(स्टेट बोर्डर), डूँगरपुर-सीमलवाड़ा, बालोतरा- बायतू- बाड़मेर- गडरारोड, भरतपुर-रूपवास-सेपऊ, गगानगर-पदमपुर-रायसिहनगर, उदयपुर-डबोक-मावली-मोपाल सागर- कपासन-चित्तौड़गढ, जयपुर-जोबनेर-पचकोडिया लूणावा-नावा-कुचामन- खाटूरोड, जैसलमेर-सम-धनाना, भरतपुर-मथुरा, अलवर-शाहपुरा-कोटपूट-नीमकाथाना- खेतडी-सिंघाना, तथा सिरोही-कालंदरी-रामसीन-जालोर-सीवाणा-बालोतरा-शेरगढ।

इसके अलावा 'मिसिंग कड़ियों' को चिन्हित किया गया है जिन्हें पूरा करने का प्रयास किया जायगा । सड़क निर्माण में बी.ओ.टी. स्कीम के अन्तर्गत नई परियोजनाएँ तैयार की गई हैं । इस प्रकार राज्य सरकार सड़क–निर्माण कार्य को सर्वोच्च प्राथमिकता दे रही है ।

प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. राज्य मे वर्तमान मे प्रति एक सौ वर्ग किलोमीटर पर सडको की लम्बाई है–

(अ) 45.9 किलोमीटर (ब) 40 किलोमीटर

(स) 38 किलोमीटर (द) 70 किलोमीटर (अ)

2. राज्य में सडक–नीति घोषित की गई–
(अ) जनवरी 1994 मे (ब) दिसम्बर 1994 में
(स) दिसम्बर 1995 मे (द) जनवरी 1995 मे (ब)
3. सडक–नेटवर्क का विकास करने के लिए अनेक परियोजनाएँ किसके द्वारा संचालित की जा रही है
(अ) राजस्थान राज्य पुल–निर्माण निगम द्वारा
(ब) सार्वजनिक–निर्माण–विभाग द्वारा
(स) स्थानीय सस्थाओ द्वारा
(द) जवाहर रोजगार योजना के अन्तर्गत (अ)
4. जयपुर से कोटपुतली तक राष्ट्रीय राजमार्ग की सख्या है–
(अ) राष्ट्रीय राजमार्ग–8 (ब) राष्ट्रीय राजमार्ग–10
(स) राष्ट्रीय राजमार्ग–65 (द) कोई नहीं (अ)
5. निकट भविष्य मे सडको के विकास व उन्नयन हेतु सर्वाधिक वित्तीय सहायता राज्य को मिलेगी–
(अ) भारत सरकार से (ब) निजी निवेश से
(स) राज्य सरकार से (द) विश्व बैंक से (द)

अन्य प्रश्न

1. राज्य मे सडको के विकास का विवेचन कीजिए। ग्रामीण सडको की वर्तमान स्थिति पर प्रकाश डालिए। सडको के विकास से राज्य की अर्थव्यवस्था पर पडने वाले प्रभावो का उल्लेख कीजिए।
2. नई सडक नीति, 1994 की मुख्य विशेषताएँ लिखिए।
3. राज्य की सडक–विकास–नीति, 1994 मे नवीं पचवर्षीय योजना के लिए सडक–विकास के लिए क्या लक्ष्य सुझाए गए हैं? इसके वित्तीय प्रावधान भी स्पष्ट कीजिए।
4. सक्षिप्त टिप्पणी लिखिए–
(i) राज्य मे सडक–विकास की वर्तमान स्थिति.
(ii) सडक–विकास–नीति, 1994–उद्देश्य व लक्ष्य.
(iii) राज्य मे सडक–विकास का महत्त्व
(iv) सडक–विकास के मार्ग मे आने वाली बाधाएँ.
(v) सडक–विकास मे निजी क्षेत्र की साझेदारी
(vi) सडक–विकास का 20 वर्षीय मास्टर प्लान (1981-2001)
(vii) राजस्थान राज्य सडक परिवहन निगम।
(viii) सड़क-विकास के नये कार्यक्रम व उनकी प्रगति ।

16

पंचवर्षीय योजनाओं में राज्य का औद्योगिक विकास

(Industrial Development of the State During Five Year Plans)

सन् 1949 के पुनर्गठन के पूर्व राजस्थान में छोटे-बड़े कई राज्य थे, जिनमें बिजली, पानी व यातायात के साधनों के अभाव के कारण बड़े पैमाने के आधुनिक उद्योगों का विकास करना सम्भव नहीं था। स्वतन्त्रता प्राप्ति के पूर्व राज्य में केवल सात सूती-वस्त्र मिलें, दो सीमेन्ट की फैक्ट्रियाँ व दो चीनी की मिलें थीं। आज भी राजस्थान को औद्योगिक दृष्टि से अपेक्षाकृत एक पिछड़ा हुआ राज्य माना जाता है।

1999-2000 में पंजीकृत फैक्ट्रियों की संख्या, कर्मचारियों की संख्या, उत्पादन के मूल्य, विनियोजित-पूँजी की मात्रा, विनिर्माण द्वारा जोड़े गए शुद्ध मूल्य (net value added by manufacture)[1] आदि का 4/5 से अधिक अंश देश के 10 राज्यों महाराष्ट्र, गुजरात, तमिलनाडु, उत्तर प्रदेश, बिहार, पश्चिम बंगाल, मध्य प्रदेश, कर्नाटक, आंध्र प्रदेश व पंजाब में पाया गया था। 1986-87 में पहली बार शुद्ध जोड़े गए मूल्य की दृष्टि से समस्त भारत के फैक्ट्री क्षेत्र में राजस्थान का दसवां स्थान आया था। लेकिन बाद में उसे यह स्थान नहीं प्राप्त हुआ। सर्वप्रथम स्थान महाराष्ट्र का रहा है। अन्य राज्यों का क्रम ऊपर दिया गया है। राज्य में 1962 की तुलना में 1999-2000 में औद्योगिक प्रगति हुई है, लेकिन सम्पूर्ण देश की पृष्ठभूमि में अब भी राजस्थान का पिछड़ापन अगली तालिका से स्पष्ट हो जाता है।[2]

---

1 यह उत्पत्ति के मूल्य में से इन्पुटों का मूल्य (ईंधन, कच्चा माल आदि) घटाने से प्राप्त राशि के बराबर होता है।

2 ASI (Factory Sector) 1999–2000, (CSO), March 2001 (Quick Estimates)

तालिका से स्पष्ट होता है कि 1999-2000 में भी राजस्थान का भारत की औद्योगिक अर्थव्यवस्था में काफी नीचा स्थान था। इस वर्ष भारत में पंजीकृत फैक्ट्रियों का 3 9% राजस्थान में तथा महाराष्ट्र में 14 4% था। फैक्ट्री में रोजगार की दृष्टि से राजस्थान का समस्त भारत में अंश 2 6% था, जबकि महाराष्ट्र का 14 5% था। विनिर्माण द्वारा जोड़े गए शुद्ध मूल्य (net value added) में भी राजस्थान का अंश 2.1% ही था, जबकि महाराष्ट्र का 24.3% था। इस प्रकार जोड़े गए शुद्ध मूल्य में भारत में जहाँ महाराष्ट्र का अंश लगभग 1/4 था, वहाँ राजस्थान का केवल 1/48 था। फैक्ट्री-क्षेत्र में जोड़ा गया मूल्य राजस्थान में 1960-61 में समस्त भारत का 1% था, जो 1970-71 में 2 1% तथा 1999-2000 में 2.1% हो गया। इस तरह राजस्थान का स्थान औद्योगिक दृष्टि से फैक्ट्री क्षेत्र में काफी नीचे आता है। लेकिन जोड़े गए मूल्य में उसकी स्थिति असम, हिमाचल प्रदेश, जम्मू-कश्मीर व उड़ीसा आदि से बेहतर है।

राजस्थान का भारत की औद्योगिक अर्थव्यवस्था में स्थान

(प्रतिशत अंश)

वर्ष	कुल पंजीकृत फैक्ट्रियों का अंश	स्थिर पूँजी का अंश	रोजगार का अंश	विनिर्माण द्वारा जोड़े गए मूल्य (VAM) का अंश
1962	1 6	1 0	1 5	1 1
1999-2000	3 9	NA	2 6	2.1

तालिका से स्पष्ट होता है कि फैक्ट्री-क्षेत्र के विभिन्न सूचकों, जैसे फैक्ट्रियों की संख्या, स्थिर पूँजी, रोजगार, व विनिर्माण द्वारा वर्धित मूल्य में राजस्थान का अंश समस्त भारत की तुलना में 3-4% के बीच आता है। इस प्रकार राजस्थान का फैक्ट्री क्षेत्र में अपेक्षाकृत नीचा स्थान पाया जाता है।

DES के सर्वे के अनुसार राज्य में 1951 में 103 पंजीकृत फैक्ट्रियाँ थीं, जिसमें लगभग 18 हजार व्यक्ति काम पाए हुए थे और उनमें केवल 9 करोड़ रुपयों की पूँजी लगी हुई थी। 2000-01 में रिपोर्टिंग फैक्ट्रियों की संख्या 5325, स्थिर पूँजी की राशि लगभग 14560 करोड़ रुपये, कर्मचारियों की संख्या 2.59 लाख तथा विनिर्माण द्वारा जोड़े गए शुद्ध मूल्य की राशि 4951 करोड़ रुपये रही थी। राजस्थान में लघु इकाइयों में ज्यादातर 'अति लघु इकाइयाँ' (संयंत्र व मशीनरी में 25 हजार रुपये तक का विनियोग) पाई जाती हैं। आधी से अधिक इकाइयाँ धातु-पदार्थों, चमड़े की वस्तुओं व अधात्विक खनिज पदार्थों के निर्माण में हुई हैं।

सरकार ने पंचवर्षीय योजनाओं में राज्य के औद्योगीकरण के लिए विद्युत-सृजन पर काफी बल दिया है। भाखड़ा व चम्बल परियोजनाओं से विद्युत प्राप्त करने का प्रयास किया गया है। थर्मल व विद्युत संयंत्रों की स्थापना की गई है। राज्य में अणुशक्ति का भी विकास किया गया है। प्रथम योजना के प्रारम्भ में शक्ति की प्रस्थापित क्षमता केवल 13 मेगावाट थी

जो 1998-99 के अन्त में लगभग 3355.84 मेगावाट हो गई। इसी प्रकार पानी की व्यवस्था का भी कई नगरों व गाँवों में विस्तार किया गया है। सड़कों का निर्माण किया गया है और उद्यमकर्ताओं को कई प्रकार की रियायतें दी गई हैं, जिनका सम्बन्ध भूमि के आवंटन, विद्युत की दरों, बिक्री कर, चुंगी एवं वित्तीय सहायता व पूँजी सब्सिडी आदि से रहा है। इन रियायतों के फलस्वरूप राज्य में पंजीकृत फैक्ट्रियों की संख्या काफी बढ़ी है।

1980 में राज्य में 20 सूती व सिन्थेटिक रेशे की इकाइयाँ, 10 ऊनी, 3 चीनी, 5 सीमेन्ट, 3 मिनी सीमेन्ट की इकाइयाँ, एक टेलीविजन फैक्ट्री, एक टायर व ट्यूब फैक्ट्री, 9 वनस्पति तेल की मिलें, 20 इंजीनियरी की औद्योगिक इकाइयाँ तथा 5 खनिज आधारित बड़ी व मध्यम श्रेणी की इकाइयाँ थीं। इनके अलावा केन्द्रीय क्षेत्र में केवल 7 औद्योगिक इकाइयाँ हैं जिनके नाम इस प्रकार हैं—हिन्दुस्तान जिंक लिमिटेड, हिन्दुस्तान कॉपर लिमिटेड, हिन्दुस्तान मशीन टूल्स लिमिटेड, इन्स्ट्रूमेन्टेशन लि., हिन्दुस्तान साल्ट्स लि., माडर्न बेकरीज एवं राजस्थान इलेक्ट्रोनिक्स एण्ड इन्स्ट्रूमेन्ट्स लि। 1999-2000 में राजस्थान के औद्योगिक क्षेत्र के गैर–विभागीय उपक्रमों मे समस्त भारत के कुल केन्द्रीय परिसम्पत्तियो (assets) का 2.2% अंश ही पाया गया था, जबकि 1980-81 मे यह 1.7 प्रतिशत था। अत 1999-2000 में इसमे वृद्धि हुई है।[1]

मार्च 1999 के अन्त में राजस्थान में लगभग 531 बड़े एवं मध्यम दर्जे के उद्योग लगे हुए थे। इनमें पूँजीगत निवेश की मात्रा 13740 करोड़ रु. तथा रोजगार की मात्रा 1.70 लाख व्यक्ति आंकी गई है। 2002–2003 में उद्योग–विभाग में पंजीकृत लघु पैमाने के उद्योगों व कारीगरी की इकाइयों की संख्या 2.41 लाख थी जिनमें 3571 करोड़ रुपये का विनियोग किया गया था तथा लगभग 9.27 लाख व्यक्ति काम पाए हुए थे।

राजस्थान में उद्योगों का कुल राज्य-घरेलू-उत्पत्ति तथा रोजगार में स्थान

(1) उद्योगों का कुल राज्य-घरेलू-उत्पत्ति में स्थान—आजकल औद्योगिक क्षेत्र की व्यापक परिभाषा में इसे द्वितीयक क्षेत्र के बराबर माना जाने लगा है। हम इसमें खनन, विनिर्माण तथा विद्युत, गैस और जल-पूर्ति शामिल करते हैं, हालांकि व्यापक परिभाषा के अनुसार इसमें निर्माण-कार्य (Construction) भी शामिल किए जा सकते हैं।

राज्य की शुद्ध घरेलू उत्पत्ति में उद्योगों का स्थान (1993-94) के मूल्यों पर अग्र तालिका में दर्शाया गया है।

1 **Hand Book of Industrial Policy And Statistics 2001. (GOI)** pp 368-369 1999-2000 में राजस्थान मे केन्द्रीय सार्वजनिक उपक्रमों में परिसम्पत्तियो का मूल्य 8419 करोड रु रहा जबकि समस्त भारत में यह 381365 करोड रु रहा। अत राज्य मे इनका अश 2.2% रहा। राज्य में इनमे 30 हजार व्यक्ति लगे हुए थे, जबकि समस्त भारत मे 18.2 लाख व्यक्ति थे।

2. Some Facts About Rajasthan 2003, p.28.

अवधि : 1980-81 से 2002-03 राज्य की शुद्ध घरेलू उत्पत्ति में योगदान (1993-94 के मूल्यों पर) (प्रतिशत में)[1]

	1980-81	1990-91	2002-03 (त्वरित अनुमान)
(*i*) खनन व पत्थर निकालना	1.25	1.24	2.99
(*ii*) विनिर्माण (Manufacturing)	11.04	11.04	11.54
(अ) पंजीकृत	3.65	5.77	5.63
(ब) गैर-पंजीकृत	7.39	5.27	5.91
(*iii*) विद्युत, गैस तथा जल-पूर्ति	0.76	1.44	3.28
कुल	13.05	13.72	17.81

पूर्व तालिका से स्पष्ट होता है कि औद्योगिक क्षेत्र का राजस्थान की शुद्ध घरेलू उत्पत्ति में 1980-81 में लगभग 13.1% अंश था, जो 1990-91 में 13.7% तथा 2002-03 में 17.8% रहा। इस प्रकार 1980-81 से 2002-03 की अवधि में इसमें कुछ सीमा तक (लगभग 5 प्रतिशत बिन्दु की) वृद्धि हुई है। अखिल भारतीय स्तर पर यह लगभग 25% आंका गया है। इस प्रकार राजस्थान में उद्योगों का राज्य की आय में अंश आज भी समस्त भारत की तुलना में काफी कम है, जिसे भविष्य में बढ़ाने की आवश्यकता है। 2002-03 में अखिल भारतीय स्तर पर विनिर्माण, निर्माण, विद्युत, गैस व जल-पूर्ति का सकल घरेलू उत्पाद में (1993-94 के भावों पर) योगदान 24.9% रहा था, जबकि राजस्थान में यह 28.1% रहा। (1993-94 के भावों पर)(निर्माण का 10.32% अंश जोड़ने पर) था। अतः राजस्थान में यह अनुपात अपेक्षाकृत ऊँचा हो गया है। (विशेषतया निर्माण के योगदान के कारण)

उद्योगों के विनिर्माण (Manufacturing) का अंश विशेष महत्वपूर्ण माना जाता है। **राजस्थान में यह 2002-03 में लगभग 11.5% आंका गया है। इसमें पंजीकृत क्षेत्र का अंश लगभग 5.6% तथा गैर-पंजीकृत क्षेत्र का लगभग 5.9% है।** इस प्रकार विनिर्माण क्षेत्र का अंश आज भी कम है। पंजीकृत व गैर-पंजीकृत दोनों क्षेत्रों का अंश कम है। पंजीकृत क्षेत्र में फैक्ट्री क्षेत्र या संगठित क्षेत्र की प्रधानता होती है, जबकि गैर-पंजीकृत क्षेत्र में ग्रामीण व कुटीर उद्योग, दस्तकारियाँ आदि आते हैं, जिनमें कारीगर अपने घरों का काम करके माल का उत्पादन करते हैं। अभी भी विनिर्माण का अंश शुद्ध घरेलू उत्पाद में 11-12 प्रतिशत ही पाया जाता है, जो काफी कम है। यह गणना 1993-94 के मूल्यों पर की गयी है।

(2) उद्योगों का रोजगार में स्थान—जैसा कि जनसंख्या के अध्याय में बतलाया गया था, 1991 की जनगणना के अनुसार राजस्थान में विनिर्माण कार्यों में रोजगार का अंश मुख्य श्रमिकों में *7.4%* था, जिसमें पारिवारिक उद्योगों में यह *2%* तथा अन्य में *5.4%* था। यह खनन व पत्थर निकालने में 1% तथा विद्युत, गैस व जल-पूर्ति में भी कम है। 1981 व 1991 में उद्योगों का रोजगार में स्थान अग्र तालिका से स्पष्ट हो जाता है—

1. Net State Domestic Product of Rajasthan (1960-61 to 2001-02) July 2002, (DES, Jaipur) Tables on p 38 p 42 & p 54 Economic Review 2003-04, Table 4

उद्योगों में श्रम-शक्ति का अनुपात

(प्रतिशत में)

		1981	1991
(i)	खनन व पत्थर निकालना	07	10
(ii)	(अ) घरेलू उद्योग	33	20
	(ब) घरेलू उद्योग के अलावा अन्य उद्योग	50	54
	कुल	90	84

तालिका से स्पष्ट होता है कि 1981-91 की अवधि में घरेलू उद्योगों के अलावा अन्य उद्योगों में रोजगार का अंश बढ़ा है तथा घरेलू उद्योगों में कुछ कम हुआ है। खनन व विनिर्माण कार्य (mining and manufacturing) में श्रम-शक्ति का अंश 1991 में केवल 8.4% रहा है, जो पहले से भी कुछ कम है। भविष्य में राज्य का औद्योगिक विकास करके उद्योगों का रोजगार में अंश बढ़ाने का प्रयास किया जाना चाहिए। इसके लिए राज्य में खनन-कार्य व लघु उद्योगों तथा विभिन्न प्रकार के कुटीर उद्योगों का विकास करने की सम्भावनाओं पर ध्यान दिया जाना आवश्यक है। राज्य की खनिज-सम्पदा विपुल मानी गई है। राज्य में हथकरघा क्षेत्र में विकास की सम्भावनाएँ विद्यमान हैं। राज्य में कई प्रकार की दस्तकारियों को प्रोत्साहन दिया जा सकता है तथा विद्युत, गैस व जलपूर्ति के क्षेत्र में भी अधिक श्रमिकों को काम दिया जा सकता है। ऐसा करने से औद्योगिक रोजगार में वृद्धि होगी, लोगों की आमदनी बढ़ेगी तथा उनके जीवन-स्तर में सुधार आएगा। गलीचों, चमड़े की वस्तुओं, हथकरघा की वस्तुओं तथा रत्न-आभूषण आदि के निर्यात से अधिक विदेशी मुद्रा भी अर्जित की जा सकती है। इस प्रकार राज्य में औद्योगिक रोजगार का विस्तार किया जाना चाहिए।

राजस्थान के औद्योगिक क्षेत्र के मुख्य लक्षण या विशेषताएँ—उपर्युक्त विवेचन के आधार पर राजस्थान के औद्योगिक क्षेत्र के मुख्य लक्षण इस प्रकार हैं—

(i) आकार—जैसा कि पहले बतलाया गया है कि समस्त भारत के फैक्ट्री-क्षेत्र में राजस्थान का स्थान काफी नीचा आता है। 1999-2000 में भारत में कुल रिपोर्टिंग फैक्ट्रियों का 3.9% अंश ही राजस्थान में था। विनिर्माण द्वारा जोड़े गए मूल्य (VAM) में राज्य का अंश 2.1% था। **1986-87 में पहली बार जोड़े गए शुद्ध मूल्य की दृष्टि से भारत में राजस्थान का दसवाँ स्थान आया था, लेकिन बाद में यह स्थान राजस्थान को पुनः नहीं मिल पाया है।**

राज्य के आर्थिक व सांख्यिकी निदेशालय, जयपुर द्वारा भी समय-समय पर उद्योगों के वार्षिक सर्वेक्षण के आँकड़े प्रकाशित किए जाते हैं। इनमें फैक्ट्री क्षेत्र में हुई औद्योगिक प्रगति का अनुमान लगाया जा सकता है। हालांकि ये आँकड़े भारत सरकार के केन्द्रीय सांख्यिकीय संगठन (CSO), नई दिल्ली, द्वारा प्रकाशित आँकड़ों से थोड़े भिन्न होते हैं,

(पद्धति के अन्तर के कारण) फिर भी इनके माध्यम से हमें कई प्रकार के नये विवरण प्राप्त होते हैं, जैसे फैक्ट्रियों का आकार के अनुसार वितरण, जिलों के अनुसार वितरण, आदि जो अन्यत्र उपलब्ध नहीं होते। इसलिए राज्य के आर्थिक व सांख्यिकी निदेशालय, जयपुर से प्राप्त सूचना के आधार पर राजस्थान के औद्योगिक क्षेत्र के मुख्य लक्षणों का विवेचन किया जा सकता है।

राज्य में लघु पैमाने की इकाइयों की भरमार—वर्ष 1997-98 में राज्य को 4537 फैक्ट्रियों के विवरण प्राप्त हुए थे, जिनमें विभिन्न आकार की फैक्ट्रियों की स्थिति निम्न तालिका में दर्शाई गई है[1]—

आकार	संख्या	संख्या में प्रतिशत अंश	कुल उत्पत्ति (करोड़ रु.)	कुल उत्पत्ति में प्रतिशत अंश
(i) लघु पैमाने की इकाइयाँ	3933	88 8	11569 1	45 0
(ii) मध्यम पैमाने की इकाइयाँ	300	6 8	2762 1	10 8
(iii) बड़े पैमाने की इकाइयाँ	196	4 4	11356 1	44 2
कुल	4429	100 0	25687 3	100 0

तालिका से स्पष्ट होता है कि राजस्थान में 1997-98 में लगभग 88 8% फैक्ट्रियाँ लघु पैमाने की थीं। उस समय लघु पैमाने की इकाइयों में प्लांट व मशीनरी में विनियोग की सीमा 60 लाख रुपये थी। पाँच करोड़ रुपये तक की प्रोजेक्ट-लागत की इकाइयाँ मध्यम आकार की तथा इससे ऊपर की बड़े आकार की मानी जाती थीं। उस समय मध्यम पैमाने की औद्योगिक इकाइयाँ 6 8% तथा बड़े पैमाने की भी 4 4% थीं। इससे पता चलता है कि राजस्थान में लघु इकाइयों की भरमार है। इनमें कुल फैक्ट्री-कर्मचारियों का लगभग 1/3 अंश लगा हुआ है। लघु पैमाने की इकाइयों में स्थिर पूँजी (Fixed capital) की मात्रा कम होती है, लेकिन जोड़े गए शुद्ध मूल्य (net value added) में इनका अंश स्थिर पूँजी के अंश से अधिक पाया जाता है।

1997-98 में लघु पैमाने की इकाइयों का कुल उत्पत्ति में अंश 45% रहा, जो बड़े पैमाने की इकाइयों के 44% के लगभग समान था। राज्य के फैक्ट्री-क्षेत्र में लघु इकाइयों के योगदान का काफी महत्त्व होता है। इनके माध्यम से काफी कर्मचारियों को काम दिया जा सकता है।

जहाँ तक बड़े पैमाने की औद्योगिक इकाइयों का प्रश्न है, 1997-98 में इनका अनुपात लगभग 4.4% रहा तथा कुल उत्पत्ति के मूल्य में इनका अंश 44% रहा। इस प्रकार बड़े पैमाने की औद्योगिक इकाइयों की संख्या तो कम है, लेकिन सकल उत्पत्ति के मूल्य में इनका योगदान ऊँचा पाया जाता है।

---

1 Report on Annual Survey of Industries, Rajasthan, 1997–98 DES, Jaipur December 2000, p 21

उपर्युक्त विवेचन से यह निष्कर्ष निकलता है कि राज्य के औद्योगिक विकास में सभी प्रकार की इकाइयों की अपनी-अपनी भूमिका पाई जाती है । राज्य में आवश्यकतानुसार सभी प्रकार की औद्योगिक इकाइयों का विकास किया जाना चाहिए । लेकिन रोजगार बढ़ाने की दृष्टि से श्रम गहन लघु इकाइयों को प्राथमिकता दी जा सकती है । आधुनिक युग में टेक्नोलोजी भी उत्पादन के पैमाने के चुनाव को प्रभावित करती है ।

(2) वस्तुगत ढाँचा (Commodity Structure)—राजस्थान में फैक्ट्री-क्षेत्र तथा गैर फैक्ट्री क्षेत्र में कई प्रकार की वस्तुओं का उत्पादन किया जाता है । फैक्ट्री-क्षेत्र की विस्तृत सूचना उद्योगों के वार्षिक सर्वेक्षण के आधार पर प्रतिवर्ष प्राप्त होती है । इसमें भारतीय फैक्ट्री अधिनियम, 1948 के तहत धारा 2 एम (i) व 2 एम (ii) में पंजीकृत विभिन्न फैक्ट्रियाँ शामिल की जाती हैं । इसमें पावर की सहायता से चालित 10 या अधिक व्यक्तियों को काम देने वाली फैक्ट्रियों तथा बिना पावर के 20 या अधिक व्यक्तियों को काम देने वाली फैक्ट्रियाँ शामिल होती हैं ।

स्मरण रहे कि फैक्ट्री-क्षेत्र में शामिल इकाइयों में विनिर्माण इकाइयों (Manufacturing units) के अलावा विद्युत-इकाइयाँ, वाटर-वर्क्स व सप्लाई, स्टोरेज, वेयरहाउसिंग तथा मरम्मत सम्बन्धी सेवा की इकाइयाँ भी शामिल होती हैं ।

राजस्थान की फैक्ट्री-क्षेत्र की विनिर्माण इकाइयों में आजकल कई प्रकार की वस्तुओं का उत्पादन किया जाने लगा है, इसलिए उत्पादन में विविधता दिखाई देने लगी है ।

राज्य में 1997-98 में निम्न सात श्रेणी के उद्योगों में कुल फैक्ट्री-उद्योगों में जोड़े गए शुद्ध मूल्य (Net Value Added) का अंश 82.5% रहा । विभिन्न उद्योगों की स्थिति अग्र तालिका में दर्शाई गई है ।[1]

शुद्ध जोड़े गए मूल्य (NVA) में अंश

उद्योग कोड	उद्योग	(%)
24	ऊन व रेशम टैक्सटाइल्स	10 2
30	रसायन व रसायन पदार्थ	7 3
20–21	खाद्य-पदार्थ	6 3
32	गैर धात्विक खनिज पदार्थ	8 3
35–36	परिवहन के अलावा अन्य मशीनरी	5 9
31	रबड, पेट्रोलियम व कोयला-पदार्थ	7 0
40	विद्युत	37 5
	कुल	82 5

इस प्रकार राजस्थान में 1997-98 में उपर्युक्त सात श्रेणी के उद्योगों में शुद्ध वर्धित मूल्य (net value added) का लगभग 4/5 अंश पाया गया जिसमें अकेले विद्युत का अंश 37.5% था ।

1 Annual Survey of Industries 1997–98, CSO, September 1999, p 54

विभिन्न उद्योग-समूहों के अन्तर्गत शामिल उद्योगों के नाम इस प्रकार है—

उद्योग-समूह	उत्पादित वस्तुओं के नाम
1 ऊन, रेशम व सिंथेटिक रेशे के वस्त्र	(ऊन की कताई, बुनाई व अन्य क्रियाएँ, रेशम तथा सिंथेटिक वस्त्रों से सम्बन्धित क्रियाएँ)
2 गैर धात्विक खनिज पदार्थों से बनी वस्तुएँ (non metallic mineral products)	(सीमेंट मार्बल ग्रेनाइट, चीनी-मिट्टी, काँच, अभ्रक आदि से बनी वस्तुएँ)
3 परिवहन-उपकरण के अलावा अन्य मशीनरी व उपकरण	(कृषिगत मशीनरी व उपकरण, निर्माण व खनन उद्योगों की मशीनरी, बॉयलर्स, कई प्रकार की औद्योगिक मशीनरी व मशीनी औजार, विद्युत औद्योगिक मशीनरी, बिजली के लैम्प, बिजली के पखे, टीवी रिसीवर्स, कम्प्यूटर्स आदि ।)
4 बेसिक धातु व एलोय उद्योग (Basic metals and Alloy Industries)	(लोहा व इस्पात, ताँबा, एल्यूमिनियम, जस्ता व अन्य अलौह धातु उद्योग)
5 रसायन व रसायन-पदार्थ	(उर्वरक, पेंट वार्निश, दवाइयाँ, प्लास्टिक का सामान, अखाद्य-तेल, कोस्मेटिक्स (प्रसाधन-सामग्री), आदि) ।

इसके अलावा राजस्थान में खाद्य-वस्तुओं (Food Products) के निर्माण में संलग्न इकाइयों की संख्या भी काफी पाई जाती है । ये दुग्ध-पदार्थों, अन्न-पदार्थों (जैसे दाल आदि), बेकरी में बने पदार्थों, चीनी, गुड़, खण्डसारी, कॉमन नमक, खाद्य-तेल व वनस्पति, बर्फ आदि का उत्पादन करती हैं ।

पिछले वर्षों में राज्य में रबड़, प्लास्टिक एवं रसायन-पदार्थों का उत्पादन काफी बढ़ा है । राज्य में विभिन्न प्रकार की मशीनरी (विद्युत व गैर-विद्युत) तथा इलेक्ट्रोनिक्स की वस्तुओं का भी निर्माण किया जाता है ।

हालांकि आज भी राजस्थान औद्योगिक दृष्टि से महाराष्ट्र, गुजरात आदि की तुलना में पीछे है, लेकिन धीरे-धीरे इसकी स्थिति में सुधार आ रहा है । जैसा कि पहले कहा जा चुका है, 1986-87 में जोड़े गए शुद्ध मूल्य की दृष्टि से भारत में इसका दसवाँ स्थान रहा था, जबकि कर्नाटक व मध्य प्रदेश का क्रमश: आठवाँ व नवाँ स्थान रहा था । पंजाब व हरियाणा का स्थान क्रमश: ग्यारहवाँ व बारहवाँ रहा था। अत: इनसे राजस्थान की स्थिति थोड़ी बेहतर रही थी। लेकिन बाद के वर्षों में जोड़े गए मूल्य की दृष्टि से पंजाब ने दसवाँ स्थान ले लिया।

राजस्थान के फैक्ट्री-क्षेत्र में रोजगार की मात्रा 1980-81 में 1.91 लाख व्यक्तियों से बढ़कर 2000-01 में 2.59 लाख व्यक्ति हो गई। इस प्रकार 20 वर्षों में फैक्ट्री-क्षेत्र में कर्मचारियों की संख्या में लगभग 68 हजार की वृद्धि हुई। लेकिन इसी अवधि में अखिल भारतीय स्तर पर फैक्ट्री-क्षेत्र में रोजगार 78.54 लाख व्यक्तियों से बढ़कर 79.88 लाख व्यक्ति हो गया । इस प्रकार समस्त भारत में फैक्ट्री-क्षेत्र में रोजगार लगभग 1.34 लाख ही बढ़ा। लेकिन 1995-96 में भारत में फैक्ट्री-क्षेत्र में रोजगार की मात्रा 100 लाख रही थी । इस प्रकार पिछले पाँच वर्ष में फैक्ट्री-क्षेत्र में रोजगार बहुत घट गया है ।

राजस्थान का औद्योगिक ढाँचा (Industrial Structure of Rajasthan)— औद्योगिक ढाँचे के अन्तर्गत उपयोग-आधारित औद्योगिक वर्गीकरण (Use-based industrial

classification) का अध्ययन किया जाता है। इसमें निम्न चार प्रकार के उद्योगों का रोजगार अथवा जोड़े गए शुद्ध मूल्य में योगदान के आधार पर सापेक्ष महत्त्व देखा जाता है—

(1) आधारभूत वस्तुओं के उद्योग (Basic Goods Industries) जैसे इस्पात, उर्वरक, विद्युत आदि।

(2) पूँजीगत वस्तुओं के उद्योग (Capital Goods Industries) जैसे मशीनरी, परिवहन का माल आदि।

(3) मध्यवर्ती वस्तुओं के उद्योग (Intermediate Goods Industries) जैसे कॉटन यार्न, रंग, टायर-ट्यूब आदि।

(4) उपभोक्ता वस्तुओं के उद्योग (Consumer Goods Industries) इनमें टिकाऊ व गैर-टिकाऊ उप-भोक्ता वस्तुएँ शामिल की जाती हैं। टिकाऊ उप-भोक्ता माल में टी.वी. सेट्स, स्कूटर, मोटर गाड़ियाँ आदि आती हैं तथा गैर-टिकाऊ उपभोक्ता वस्तुओं में चीनी, नमक, माचिस, दवा आदि वस्तुएँ आती हैं।

राजस्थान में इनमें से प्रत्येक की स्थिति का संक्षिप्त परिचय आगे दिया जाता है।

(1) आधारभूत वस्तुओं के उद्योग—इस श्रेणी में प्रमुख उद्योगों के नाम इस प्रकार हैं—सीमेन्ट, बेसिक रसायन, लोहा व इस्पात, उर्वरक व कीटनाशक, ताँबा, पीतल, एल्यूमिनियम, जस्ता व अन्य अलौह धातु, नमक एवं विद्युत।

***(i)* सीमेन्ट**—राज्य में सीमेंट के कई बड़े कारखाने कार्यरत हैं। सीमेंट के कारखाने सवाई माधोपुर, लाखेरी, चित्तौड़गढ़, उदयपुर, निम्बाहेड़ा, ब्यावर व कोटा में निजी क्षेत्र में तथा रीको से सहायता प्राप्त दो कारखाने मोडक (कोटा) (मंगलम सीमेंट लि) तथा बनास (सिरोही) (स्ट्रा प्रोडक्ट्स जे के ग्रुप का) में चल रहे हैं। राज्य में कई मिनी सीमेंट प्लांट भी लगाए गए हैं जिनसे सिरोही, बाँसवाड़ा व जयपुर जिलों में सीमेंट का उत्पादन होने लगा है। भविष्य में राज्य में कई सीमेंट के बड़े कारखाने लगाने की योजना है।

***(ii)* रासायनिक उद्योग**—इसमें मुख्यतया राजस्थान स्टेट केमिकल वर्क्स, डीडवाना आता है। यह सोडियम सल्फेट व सोडियम सल्फाइड उत्पन्न करता है। डीडवाना में नमक का भी उत्पादन होता है। कोटा में श्रीराम केमिकल इण्डस्ट्रीज लि भी इसी श्रेणी में आता है। उदयपुर फोस्फेट्स एण्ड फर्टिलाइजर्स तथा मोदी एल्केलाइज एण्ड केमिकल लि , अलवर भी आधारभूत उद्योगों की श्रेणी में आते हैं।

धौलपुर में संयुक्त क्षेत्र में रीको व IDL केमिकल लि हैदराबाद के परस्पर सहयोग से दी राजस्थान अक्सप्लोजिव्स एण्ड केमिकल्स लि., की स्थापना की गई थी, जहाँ विस्फोटक (detonators) बनाए जाते थे। यहाँ मार्च, 1981 से उत्पादन चालू किया गया था। लेकिन यह कई महीनों से बंद पड़ा है जिससे श्रमिकों को बेकारी का सामना करना पड़ रहा है। वर्तमान सरकार इसे पुनः चालू करने का भरसक प्रयास कर रही है। आशा है इसे शीघ्र ही चालू किया जा सकेगा।

(iii) डूँगरपुर जिले में मांडो-की-पाल नामक स्थान पर फ्लोर्सपार बेनेफिशियेशन प्लांट लगाया गया था जो फ्लोर्सपार उत्पन्न करता है। यह इस्पात बनाने में प्रयुक्त होता है।

(iv) राज्य में उदयपुर में जस्ता गलाने का संयंत्र (हिन्दुस्तान जिंक लि.) तथा खेतड़ी में ताँबा गलाने का संयंत्र (हिन्दुस्तान कॉपर लि) कार्यरत हैं। इस प्रकार राज्य में आधारभूत उद्योगों के अन्तर्गत सीमेंट, रसायन, उर्वरक तथा ताँबा व जस्ता के कारखाने चल रहे हैं।

(2) पूँजीगत वस्तुओं के उद्योग—पूँजीगत उद्योगों की श्रेणी में औद्योगिक मशीनरी, रेफ्रिजरेटर व एयर कन्डीशनर, मशीनी औजार, विद्युत मशीनरी, विद्युत कम्प्यूटर व पुर्जे, रेलवे वैगन, (रेल परिवहन का साज-सामान) आदि आते हैं। भरतपुर में सिम्को वैगन फैक्ट्री है। अजमेर में हिन्दुस्तान मशीन टूल्स लि. (HMT Limited) तथा कोटा में इन्स्ट्रूमेन्टेशन लि. हैं। जयपुर में नेशनल ईजीनियरिंग इण्डस्ट्रीज लि. में बाल बियरिंग एवं अशोका लीलेण्ड लि., अलवर में व्यापारिक वाहन बनाए जाते हैं तथा कुछ और इन्जीनियरिंग उद्योग भी हैं। इस प्रकार राजस्थान में पूँजीगत वस्तुओं के भी कारखाने हैं।

(3) मध्यवर्ती वस्तुओं के उद्योग—इस श्रेणी में उद्योगों के नाम इस प्रकार हैं : कॉटन जिनिंग, क्लीनिंग व बेलिंग, सूती वस्त्रों की छपाई, रंगाई व ब्लीचिंग, ऊन की सफाई, रंगाई व ब्लीचिंग, चमड़े की रंगाई व तैयारी, टायर-ट्यूब, पेंट व वार्निश, आदि जयपुर में पानी व बिजली के मीटर बनाए जाते हैं। उदयपुर के पास कांकरोली में जे के टायर का कारखाना है जिसमें ऑटोमोबाइल टायर व ट्यूब बनाए जाते हैं।

(4) उपभोक्ता वस्तुओं के उद्योग—राजस्थान में सूती वस्त्र, सिंथेटिक वस्त्र, चीनी, गुड़, वनस्पति घी व वनस्पति तेल, साबुन, क्रॉकरी, साइकिल के पुर्जे, जूते (चमड़े व रबड़ के), स्कूटर्स व मोपेड (केल्विनेटर ऑफ इण्डिया लि), ऊनी माल (बीकानेर), बीड़ी (मयूर बीड़ी उद्योग, टोंक) आदि उपभोक्ता वस्तुओं के उद्योग आते हैं।

फैक्ट्री-क्षेत्र में विभिन्न औद्योगिक श्रेणियों का योगदान[1]

उद्योगों की श्रेणी	रोजगार में अंश प्रतिशत		जोड़े गए मूल्य में अंश (प्रतिशत)	
	1970	1980-81	1970	1980-81
1 आधारभूत उद्योग	30 0	34 6	39 0	51 4
2 पूँजीगत उद्योग	21 5	14 3	18 8	15.5
3 मध्यवर्ती उद्योग	5 4	15 6	2 8	9 0
4 उपभोक्ता उद्योग	43 1	35.5	39 4	24 1
कुल	100 0	100 0	100 0	100 0
कुल मात्रा	1 12	1 92	62.4	37 0
	(लाख व्यक्ति)		(करोड़ रुपए)	

उपर्युक्त विवरण से यह स्पष्ट होता है कि राजस्थान में सभी प्रकार के उपयोग-आधारित उद्योगों (Use-based industries) की इकाइयाँ पाई जाती हैं, हालांकि राज्य का समस्त देश की औद्योगिक अर्थव्यवस्था में आज भी नीचा स्थान है। योजनाकाल में इन

1 Industrial Structure of Rajasthan, 1970. and A.S I 1980-81 (Rajasthan) (DES) के आँकड़ों के आधार पर लेखक द्वारा प्रतिशत निकाले गए हैं। इसमें विनिर्माण की इकाइयों के अलावा विद्युत, गैस, जल-पूर्ति व मरम्मत में संलग्न सभी प्रकार की फैक्ट्री-इकाइयाँ शामिल की गई हैं।

विभिन्न श्रेणियों के उद्योगों का योगदान रोजगार व जोड़े गए मूल्य आदि में बदला है, जो उपरोक्त तालिका में दर्शाया गया है।

तालिका से पता चलता है कि 1970 से 1980-81 की अवधि में राजस्थान में आधारभूत उद्योगों का योगदान रोजगार व जोड़े गए मूल्य में बढ़ा है, पूँजीगत उद्योगों का घटा है, मध्यवर्ती उद्योगों का काफी बढ़ा है तथा उपभोक्ता-उद्योगों का घटा है। 1980-81 में आधारभूत उद्योगों का अंश जोड़े गए मूल्य में लगभग 1/2 व उपभोक्ता-उद्योगों का 1/4 पाया गया था। **स्मरण रहे कि आधारभूत उद्योगों के योगदान के बढ़ने के पीछे मुख्य कारण इस श्रेणी में विद्युत का शामिल होना है।**

1990-91 से 2000-2001 की अवधि में राज्य की औद्योगिक स्थिति में सुधार हुआ है तथा औद्योगिक विनियोगों के नए प्रस्ताव स्वीकृत हुए हैं।

उद्योगों का साधन-आधारित वर्गीकरण (Input-based Classification of Industries)—उद्योगों का अध्ययन इन्पुटों के आधार पर वर्गीकरण करके भी किया जाता है जैसे—कृषि-आधारित, वन-आधारित, खनिज पदार्थ-आधारित तथा रसायन-आधारित उद्योग। इनका संक्षिप्त परिचय आगे दिया जाता है—

(1) कृषि-आधारित व फूड-प्रोसेसिंग उद्योग—व्यापक अर्थ में कृषि-आधारित उद्योगों में खाद्य-पदार्थ, दुग्ध-पदार्थ व मांस-पदार्थ शामिल किए जाते हैं, लेकिन संकीर्ण अर्थ में इस श्रेणी में कृषिगत कच्चे माल पर आधारित उद्योग आते हैं, जैसे-कॉटन-जिनिंग व प्रेसिंग फैक्ट्रियाँ, सूती कपड़ा उद्योग (कताई व बुनाई) (खादी, हथकरघा, शक्ति-करघा व मिल-करघा), रेशम उद्योग, तिलहन पर आधारित वनस्पति घी व वनस्पति तेल उद्योग, साबुन उद्योग, गन्ने पर आधारित गुड़, खंडसारी व चीनी, अचार-मुरब्बा, दाल मिल, बेकरी व कान्फेक्शनरी उद्योग, आदि। इसी में सुपारी, चूर्ण, पाली की मेहंदी व बांसवाड़ा का आम-पापड़, बीकानेर के पापड़-भुजिया, जोधपुर-नागौर क्षेत्र की मेथी, झालावाड़ व श्रीगंगानगर के रसदार फल, आबू-सिरोही क्षेत्र के टमाटर तथा पुष्कर के गुलाब के फूल, सब्जी व फल, आदि आते हैं।

(2) वन-आधारित उद्योग—इसमें लकड़ी का फर्नीचर उद्योग, रबड़, गोंद, राल, लाख आदि पर आधारित उद्योग आते हैं।

(3) पशु-धन आधारित उद्योग—राजस्थान में पशु-धन पर आधारित उद्योगों में ऊन, दूध से बने पदार्थ, चमड़ा, खालें, हड्डियाँ व माँस शामिल होते हैं।

(4) खनिज-पदार्थ आधारित उद्योग—धातु-आधारित, जैसे इस्पात उद्योग, मशीनरी, परिवहन का सामान (वैगन) धातु से बनी वस्तुएँ जैसे इस्पात का फर्नीचर, मोटर-साइकिल, आदि।

(अ) अधातु-खनिज उद्योग (non-metallic mineral industries)—इसमें पत्थर व मार्बल से बनी वस्तुएँ, काँच व काँच का सामान, चायना क्ले व सिरेमिक की इकाइयाँ, एस्बेस्ट्स सीमेंट, सीमेंट-पाइप आदि आते हैं।

राजस्थान में कृषि-आधारित, खनिज-आधारित व पशु-आधारित उद्योगों का बड़ा महत्त्व है। इनके विकास से अकाल, निर्धनता व बेरोजगारी की समस्याओं का समाधान निकालने में मदद मिल सकती है। इस समय राज्य में 23 सूती वस्त्र की मिलें हैं, तीन चीनी के बड़े कारखाने हैं तथा वेजिटेबल घी व वनस्पति तेल की कई फैक्ट्रियाँ हैं। सूती वस्त्र की मिलों में 17 मिलें निजी क्षेत्र में, 3 सार्वजनिक क्षेत्र में (दो ब्यावर व एक विजयनगर में) तथा तीन सार्वजनिक क्षेत्र में (गुलाबपुरा, गंगापुर तथा हनुमानगढ़) में हैं। सूती वस्त्र की मिलें ब्यावर, भीलवाड़ा, जयपुर, किशनगढ़, उदयपुर, पाली, गंगापुर (भीलवाड़ा जिला) आदि में स्थित हैं। चीनी के तीन कारखाने भोपाल सागर (चित्तौड़गढ़ जिला) (निजी क्षेत्र में), श्रीगंगानगर (सार्वजनिक क्षेत्र में) तथा केशोरायपाटन सहकारी शूगर मिल्स लि (बूँदी जिले में) (सहकारी क्षेत्र में) हैं।

राज्य में वनस्पति तेल की फैक्ट्रियाँ जयपुर (विश्वकर्मा में 'वीर बालक'), अलवर (खैरथल में), दौसा, निवाई, भरतपुर (सरसों इंजन छाप), गंगापुर सिटी, सवाई माधोपुर, जालौर आदि में स्थित हैं। वनस्पति घी के कारखाने जयपुर के विश्वकर्मा क्षेत्र में 'महाराजा वनस्पति', झोटवाड़ा औद्योगिक क्षेत्र में 'आमेर वनस्पति', निवाई में 'केसर वनस्पति' दुर्गापुरा में रोहिताश तथा अन्य चित्तौड़गढ़ व भीलवाड़ा में स्थित हैं।

राजस्थान में साधन-आधारित उद्योगों की संख्या का परिवर्तन 1989-90 से 1997-98 की अवधि में निम्न तालिका में दर्शाया गया है[1]—

उद्योग की श्रेणी	1989-90 में इकाइयों की संख्या	कुल का प्रतिशत	1997-98 में इकाइयों की संख्या	कुल का प्रतिशत
1. साधन-आधारित उद्योग				
(i) कृषि व पशु-धन आधारित	1276	39 4	1575	35 6
(ii) वन-आधारित	61	1 9	96	2 2
(iii) खनिज-आधारित	347	10 7	618	13 9
2. उपभोक्ता माल के उद्योग	612	18 9	930	21 0
3. उत्पादक माल के उद्योग	216	6 7	305	6 9
4 सामान्य इंजीनियरिंग के उद्योग	443	13 7	525	11 8
5. रसायन उद्योग	82	2 5	149	3 4
6. छपाई व प्रकाशन उद्योग	55	1 7	43	1 0
7. विद्युत, रोशनी, पावर व गैस	129	4 0	173	3 9
8 वाटर वर्क्स	14	0 4	15	0 3
कुल	3235	100 0	4429	100 0

1 Report on Annual Survey of Industries, Rajasthan, 1997-98, December 2000, p 15 (1997-98 के लिए) व पूर्व वर्षों के ASI, Raj

तालिका से पता चलता है कि 1989-90 से 1997-98 की अवधि में राज्य में खनिज-आधारित उद्योगों, उपभोक्ता-माल के उद्योगों तथा रसायन उद्योग की इकाइयों का कुल औद्योगिक इकाइयों में अनुपात बढ़ा है । छपाई तथा प्रकाशन की इकाइयों में स्थिरता की दशा देखने को मिली है ।

राजस्थान में औद्योगिक उत्पादन की प्रगति—1971 से 2003 की अवधि में राज्य में प्रमुख औद्योगिक वस्तुओं के उत्पादन की प्रगति निम्न तालिका में दर्शाई गई है—

कुछ उद्योगों के उत्पादन में वृद्धि[1]

वस्तु का नाम	इकाई	1971	2002	2003
1. सीमेंट	(लाख टन)	14.0	81.5	84.5
2. यूरिया	(लाख टन)	2.6	3.52	3.80
3. सुपर फॉस्फेट	(हजार टन)	45.0	1.10	1.80
4. बॉल-बियरिंग	(लाखों में)	73.0	257	291

उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट होता है कि 1971-2003 की अवधि में विभिन्न वस्तुओं जैसे सीमेन्ट, बॉल-बियरिंग, आदि के उत्पादन में वृद्धि हुई है । राज्य में घी, वनस्पति घी, खाद्य-तेल, सभी किस्म की शराब, सूती वस्त्र, सिन्थेटिक यार्न व वस्त्र, ट्रान्सफॉर्मर्स, पानी के मीटरों आदि का उत्पादन होता है ।

राजस्थान के 32 जिलों में फैक्ट्रियों का वितरण काफी असमान पाया जाता है । आगे की तालिका में 1970 तथा 2000-01 के लिए विभिन्न जिलों के अनुसार फैक्ट्रियों की संख्या व उनमें संलग्न कर्मचारियों की संख्या दी गई है, जिससे जिलेवार तुलनात्मक अध्ययन किया जा सकता है । तालिका से स्पष्ट होता है कि 1970 से 2000-01 के बीच *रिपोर्टिंग फैक्ट्रियों की संख्या 1022 से बढ़कर 5325 हो गई । इसमें संलग्न कर्मचारियों की* संख्या 1.1 लाख से बढ़कर 2.59 लाख हो गई ।

---

1 Economic Review 2003-2004, Govt. of Raj., Table on pp. 32-33. on Industrial Production of Selected Items

राजस्थान में उद्योगों का प्रादेशिक अथवा जिलेवार फैलाव (Regional Spread)

जिले का नाम	फैक्ट्रियों की संख्या		कर्मचारियों की संख्या	
	1970	2000-01	1970	2000-01
1. अजमेर	149	446	17118	11414
2. अलवर	14	552	470	36698
3. बांसवाड़ा	5	42	227	5690
4. बाड़मेर	2	118	147	1587
5. भरतपुर	21	52	3180	5799
6. भीलवाड़ा	45	424	5043	34010
7. बीकानेर	46	240	3099	4594
8 बूंदी	12	29	2370	1516
9. बाँरा	(कोटा में शामिल)	5	-	195
10. चित्तौड़गढ़	35	114	1637	5802
11. चूरू	5	15	113	246
12. डूंगरपुर	-	6	-	2545
13. धौलपुर	-	10	-	654
14. दौसा	(जयपुर में शामिल)	10	-	678
15. हनुमानगढ़	(गंगानगर मे शामिल)	140	-	5642
16. गंगानगर	114	309	7292	11818
17. जयपुर	234	1014 (H)	36891	46289 (H)
18. जैसलमेर	1	6	15	120
19. जालौर	2	8	21	136
20. झालावाड़	12	15	1377	2485
21. झुंझुनूं	3	13	36	3035
22 जोधपुर	76	599	6240	19879
23. कोटा	75	89	11835	10512
24 नागौर	41	95	1206	3442
25. राजसमंद	(उदयपुर में शामिल)	122	-	3198
26. पाली	47	351	5431	10069
27. सवाईमाधोपुर	10	18	2724	868
28. सीकर	5	39	153	3904
29. सिरोही	9	95	208	5862
30. टोंक	3	23	96	2733
31. उदयपुर	56	325	4764	17214
32. करौली	(सवाईमाधोपुर में शामिल)	1	(स.मा.)	374
कुल	1022	5325	111693	259010

लगभग

स्रोत: ASI Reports for 1970 and 2000-01, Feb , 2003, pp 70-73, DES, Jaipur.

2000-01 में 200 से अधिक फैक्ट्रियों की संख्या निम्न 9 जिलों में पाई गयी थी। इसे क्रमवार निम्न तालिका में दर्शाया गया है—

जिले का नाम	फैक्ट्रियों की संख्या	कर्मचारियों की संख्या
1. जयपुर	1014	46289
2. जोधपुर	599	19879
3. पाली	351	10069
4. भीलवाड़ा	424	34010
5. अजमेर	446	11414
6. अलवर	552	36698
7. उदयपुर	325	17214
8. गंगानगर	309	11818
9. बीकानेर	240	4594
कुल	4260	191985
9 जिलों में कुल फैक्ट्रियों का अंश = लगभग 80%		
इनमें कुल रोजगार का अंश = 74%		

इस प्रकार राज्य के उपर्युक्त 9 जिलों में कुल फैक्ट्रियों का लगभग 80% अंश पाया गया तथा शेष 23 जिलो में 20% अंश ही पाया गया। इन्हीं नौ जिलो में कुल फैक्ट्री रोजगार का 74% अंश पाया गया। इस प्रकार अधिकांश फैक्ट्रियाँ व फैक्ट्री-रोजगार इन नौ जिलों में पाया गया है। वैसे रोजगार की दृष्टि से नौ जिलों का क्रम भिन्न रहा है, जो इस प्रकार है। जैसे—जयपुर, अलवर, भीलवाड़ा, जोधपुर, उदयपुर, गंगानगर, अजमेर, पाली, व बीकानेर।

यह ध्यान देने की बात है कि 2000-01 में भी निम्न जिलों में फैक्ट्रियों की संख्या 10 से भी कम रही—

क्रं. स.	जिले	फैक्ट्रियों की संख्या
1.	करौली	1
2.	डूंगरपुर	6
3.	जैसलमेर	6
4.	जालौर	8
5.	बारां	5
	कुल	26

इस प्रकार ये पाँच जिले फैक्ट्री-विकास की दृष्टि से काफी पिछड़े माने जा सकते हैं। 2000-01 में धौलपुर व दौसा जिलों में प्रत्येक में फैक्ट्रियों की संख्या 10 थी। 1970 से 2000-01 के 30 वर्षों में नई फैक्ट्रियों की स्थापना में अग्र जिलों ने विशेष प्रगति दर्शाई है—

जयपुर, पाली, जोधपुर, गंगानगर, उदयपुर, भीलवाड़ा व अलवर । पाली जिले में फैक्ट्रियों की संख्या 1970 में 47 थी जो 2000-01 में बढ़कर 351 हो गई । यहाँ सूती वस्त्रों की छपाई, रंगाई व ब्लीचिंग का काम काफी बढ़ा है । इसी अवधि में उदयपुर जिले में इनकी संख्या 56 से बढ़कर 325 हो गई है । यहाँ अधात्विक खनिज पदार्थों का काम बढ़ा है।

2000-01 में राज्य के फैक्ट्री-क्षेत्र में जोड़े गए शुद्ध मूल्य (Net value added) की कुल राशि में सर्वाधिक राशि अलवर जिले की थी। दूसरा स्थान भीलवाड़ा जिले का रहा। इस प्रकार राजस्थान में फैक्ट्री-क्षेत्र की दृष्टि से विभिन्न जिलों का विकास काफी असंतुलित रहा है । भविष्य में पिछड़े जिलों के औद्योगिक विकास पर शेष ध्यान देन होगा ताकि विकास की दृष्टि से क्षेत्रीय असमानताओं को दूर किया जा सके । इसके लिए सर्वोच्च प्राथमिकता आधारभूत-ढाँचे के विकास को देनी होगी ताकि राज्य में विद्युत, संचार, सड़क, जल, शिक्षा व स्वास्थ्य की समुचित सुविधाएँ विकसित की जा सकें । साथ में साधन-आधारित उद्योगों का पिछड़े प्रदेशों में विकास करना होगा । रोजगार के अवसरों का विकास करने के लिए लघु उद्योगों, ग्रामीण उद्योगों व दस्तकारियों के विकास पर अधिक ध्यान देना होगा ।

अब हम राज्य के प्रमुख ग्रामीण उद्योगों व दस्तकारियों, लघु उद्योगों व कुछ बड़े पैमाने के उद्योगों का विवेचन प्रस्तुत करेंगे ।

राजस्थान के कुटीर या ग्रामीण उद्योग व दस्तकारियाँ—कुटीर या पारिवारिक उद्योगों में प्राय: परिवार के सदस्य मिलकर उत्पादन का कार्य करते हैं । लेकिन कभी-कभी एक मालिक या कोई फर्म कुछ श्रमिकों से मजदूरी पर उत्पादन का काम करवा सकते हैं; जैसे सोने-चाँदी के जेवर बनवाना, कपड़े की रंगाई-छपाई का काम करवाना, गलीचे बनवाना, आदि । इनके द्वारा थोड़े समय के लिए रोजगार दिया जा सकता है, अथवा पूर्णकालिक रोजगार दिया जा सकता है । ये गाँव व शहर दोनों में चलाए जाते हैं । इनमें विद्युत का उपयोग भी किया जा सकता है, लेकिन ज्यादातर हाथ का काम ही किया जाता है । भारतीय अर्थव्यवस्था में भी इनका काफी महत्त्व है । 1997-98 के केन्द्रीय बजट में घोषित लघु उद्योगों की परिभाषा में वे उद्योग आते हैं, जिनमें संयंत्र व मशीनरी (Plant and Machinery) में पूँजी की सीमा 3 करोड़ रुपये* तथा टाइनी इकाइयों की 25 लाख रुपये होती है । इनके लिए श्रमिकों की संख्या निर्धारित नहीं होती है, बल्कि इनके लिए केवल प्लांट व मशीनरी में विनियोग की सीमा ही निश्चित की जाती है । नीचे राजस्थान के खादी, ग्रामीण उद्योग तथा हस्तशिल्प-उद्योग का विवेचन किया जाता है ।

---

* दिसम्बर 1999 में इसे घटाकर 1 करोड़ रुपए किया गया है ।

(1) खादी उद्योग (Khadi Industries)—राजस्थान के कुटीर व ग्रामीण उद्योगों में खादी का महत्त्वपूर्ण स्थान है । यह एक परम्परागत घरेलू उद्योग है, जिसमें लोग अंश-कालिक व पूर्णकालिक रोजगार पाते हैं और अपनी जीविका चलाते हैं । इसमें कुछ सीमा तक स्त्रियों को भी काम मिलता है । इसमें सूती व ऊनी खादी दोनों आती हैं । वर्तमान में इनमें 1.5 लाख से अधिक व्यक्तियों को आंशिक व पूर्णकालिक काम मिला हुआ है । अत: रोजगार देने की दृष्टि से राज्य में इसका काफी ऊँचा स्थान माना गया है । ऊनी खादी में जैसलमेर की बरड़ी, बीकानेर के ऊनी कम्बल, चक की रेजी व चौमूँ के खेस एवं अन्य स्थानों की रेजी काफी मशहूर हैं । बीकानेर, जैसलमेर व जोधपुर की मैरीनो खादी की परस्पर होड़ लगी रहती है । सूती खादी की अपेक्षा ऊनी खादी पर अधिक मुनाफा होता है ।

खादी उद्योग में उत्पादन के मूल्य की स्थिति निम्न तालिका से स्पष्ट हो जाती है ।[1]

सूती व ऊनी खादी के उत्पादन का मूल्य
(1977-78 से 2000-2001)

वर्ष	करोड़ रु.
1977-1978	4.1
1980-1981	10.8
1999-2000	34.6
2000-2001	27.1
2003-2004	23.5

इस प्रकार 1977-78 की तुलना में खादी के उत्पादन का मूल्य 2003-04 में लगभग 5.7 गुना हो गया है । 1997-98 में यह 43 करोड़ रु. का हुआ था । ऊनी खादी का मूल्य सूती खादी के मूल्य से अधिक होता है । सरकार प्रतिवर्ष ऊनी, सूती तथा रेशमी खादी पर बिक्री बढ़ाने के लिए सब्सिडी देती है ताकि इनकी बिक्री अधिकाधिक की जा सके ।

राजस्थान में खादी उद्योग का अध्ययन करने वालों का कहना है कि राज्य में खादी संस्थान व्यापारिक लाभ कमा रहे हैं, जबकि ऊन के उत्पादकों व कातने एवं बुनने वालों को उनके कठिन श्रम का पूरा प्रतिफल नहीं मिल पाता है । खादी कर्मचारियों को न्यूनतम वेतन भी नहीं दिया जाता है । रंगों की खरीद में कई प्रकार की अनियमितताएँ पाई जाती हैं । अत: खादी से जुड़ी संस्थाओं के प्रबन्ध में सुधार किया जाना चाहिए तथा साधारण खादी के मजदूरों के हितों पर अधिक ध्यान दिया जाना चाहिए ।

---

1. Ten Years of Industrial and Mineral Statistics, Rajasthan, From 1977-78 to 1986-87, (1988), (DES, Jaipur). p 17 and Economic Review 2003-04, p 35.

(2) ग्रामीण उद्योग (Village Industries)—राज्य में खादी व ग्रामोद्योग बोर्ड खादी के अलावा निम्न ग्रामीण उद्योगों का भी संचालन करता है, जैसे घानी का तेल, गुड़, खण्डसारी, हाथ का बना कागज, गैर-खाद्य तेल का साबुन, चमड़ा, मिट्टी के बर्तन बनाना (Pottery), मधुमक्खी-पालन (शहद) तथा चावल की हाथ से कुटाई। इस प्रकार ग्रामीण उद्योगों में से आठ उद्योग प्रमुख रूप से शामिल होते हैं । इसमें उत्पादन व बिक्री-मूल्य की दृष्टि से चमड़े व घानी के तेल का स्थान काफी ऊँचा पाया जाता है ।

राज्य में ग्रामीण उद्योगों में उत्पादन-मूल्य व रोजगार की प्रगति निम्न तालिका में दर्शाई गई है—

ग्रामीण उद्योगों में उत्पादन का मूल्य
(1977-78 से 2003-04)

वर्ष	करोड़ रु.
1977-78	7.5
1980-81	21.6
1997-98	340.3
1998-99	408.0
1999-2000	450.0
2000-2001	463.5
2003-2004	97.3

तालिका से स्पष्ट होता है कि पिछले दशक में ग्रामीण उद्योगों के उत्पादन-मूल्य में काफी वृद्धि हुई थी। लेकिन 2003-04 में ग्रामीण उद्योगों का उत्पादन-मूल्य मात्र 97.3 करोड़ रु. आंका गया है जो काफी कम है ।

ग्रामीण उद्योगों को भी माल की बिक्री की समस्या का सामना करना पड़ता है। सरकार ने इनकी बिक्री में सहायता पहुँचाने के लिए कई प्रतिष्ठान खोले हैं। इनके लिए कच्चे माल की व्यवस्था की जाती है तथा कारीगरों को हर प्रकार की मदद दी जाती है। भविष्य में सहकारिता के आधार पर ग्रामीण कारीगरों को अधिक मदद पहुँचाई जानी चाहिए।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट होता है कि 2000-2001 में राज्य में खादी व ग्रामोद्योग में उत्पादन का मूल्य लगभग 490 करोड़ रुपये था तथा इनमें रोजगार की मात्रा लगभग 5 लाख व्यक्ति थी, जो फैक्ट्री कर्मचारियों से काफी अधिक थी । लेकिन 2003-04 में उत्पादन का मूल्य काफी घट गया है ।

सरकार को इनके संगठन, वित्त-व्यवस्था, टेक्नोलोजी व उत्पादन-विधि, बिक्री की व्यवस्था व प्रशिक्षण आदि की व्यवस्था में सुधार करके इनके विकास पर समुचित ध्यान देना चाहिए । जयपुर में राष्ट्रीय खादी व ग्रामोद्योग नुमाइश 10 दिसम्बर, 2003 से 19 जनवरी 2004 तक दौसा समिति व खादी आयोग तथा राजस्थान खादी बोर्ड की तरफ से संचालित की गयी थी ।

(3) हस्तशिल्प उद्योग (Handicrafts)—राजस्थान की दस्तकारी में यहाँ की कला व संस्कृति की छाप पाई जाती है । यहाँ के कारीगरों ने पीतल, पत्थर, मिट्टी, चमड़े, कपड़े, लकड़ी व अन्य पदार्थों पर काम करके अपनी कारीगरी व प्रतिभा का उच्च कोटि का

परिचय दिया है । सांगानेर, पाली, बगरू आदि स्थानों के वस्त्र पर हाथ की रंगाई व छपाई का काम काफी प्रसिद्ध माना गया है । बाड़मेर की 'अजरक प्रिंट', उदयपुर के समीप नाथद्वारा की 'पिछवाइयाँ' (मूर्तियों के पृष्ठ भाग में) जिनमें पहले कपड़ों को काला रंगते हैं तथा उस पर भगवान कृष्ण की बाल-लीलाएँ आदि अंकित करते हैं तथा फड़ कपड़े पर भी किसी महापुरुष की जीवनी का चित्रांकन करते हैं । जोधपुर के मशहूर बादले व बँधेज के काम की ओढ़नियाँ व जयपुर की बँधेज की चुनरिया, औढ़नियाँ, लहरिया आदि प्रसिद्ध माने गए हैं । जयपुर की पाव रजाई (250 ग्राम रुई से बनी) काफी मशहूर मानी गई है, जिमे विदेशी भी बहुत चाव से खरीदते हैं । इनके अलावा जयपुर के मूल्यवान व अर्द्ध-मूल्यवान रत्नों तथा सोने चाँदी के कलात्मक आभूषण, पीतल की खुदाई व मीनाकारी के बर्तन, लाख से बनी चूड़ियाँ व अन्य सजावटी वस्तुएँ, संगमरमर की मूर्तियाँ, हल्की सलमा-सितारों की कारीगरी से युक्त जूतियाँ (मौजड़िया व नागरे), ब्ल्यू पॉटरी की अनेक वस्तुएँ, मिट्टी व लकड़ी के खिलौने, चंदन व हाथीदाँत की बनी वस्तुएँ, जयपुर व बीकानेर के ऊनी गलीचे, ऊँट की खाल से बनी वस्तुएँ, खस के पानदान आदि राजस्थान की हस्तकला के एक से एक अद्‌भुत नमूने हैं । राजस्थान की हस्तकला की वस्तुएँ निर्यात भी होती हैं, जैसे गलीचे, आभूषण आदि ।

राज्य के कुछ जिलों में रेशम उद्योग विकसित किया गया है । कोटा, उदयपुर, भरतपुर, बूँदी, चित्तौड़गढ़ जिलों में इसके लिए रेशम के कीड़े पाले जाते हैं व मलबरी की खेती की जाती है ।

टसर (कृत्रिम रेशम) का विकास भी कोटा, उदयपुर व बाँसवाड़ा जिलों में किया जा रहा है । इसके लिए "अर्जुन" पेड़ लगाए जाते हैं जिनसे परिवेश-संतुलन भी होता है और रासायनिक विधि से कृत्रिम रेशम भी बनाया जाता है ।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट होता है कि राजस्थान की अर्थव्यवस्था में, विशेषतया ग्रामीण अर्थव्यवस्था में, कुटीर व ग्रामीण उद्योगों का महत्त्वपूर्ण स्थान है । राज्य में विभिन्न प्रकार की दस्तकारियाँ भी प्राचीनकाल से चली आ रही हैं, जिनकी छाप आज भी कायम है तथा जिनकी कलात्मक कृतियाँ देश-विदेश में काफी समय से विख्यात हैं ।

राजस्थान के लघु उद्योग—जैसा कि पहले कहा जा चुका है, लघु उद्योग की चालू परिभाषा के अनुसार संयंत्र व मशीनरी में पूँजी की सीमा 60 लाख रुपए (जो बाद में 3 करोड़ रुपए तथा दिसम्बर 1999 में घटाकर 1 करोड़ रुपए) रखी गई है, जबकि पहले यह 35 लाख रुपये हुआ करती थी । 2002-2003 में राजस्थान में पंजीकृत लघु पैमाने की इकाइयाँ तथा कारीगरों की इकाइयाँ 2.41 लाख हैं जिनमें 9.27 लाख व्यक्ति काम पाए हुए हैं । इनमें पूँजी का विनियोजन 3571 करोड़ रु. का हुआ है ।[1] इनके सम्बन्ध में स्थिति पूर्णतया स्पष्ट नहीं है, क्योंकि कुछ लघु इकाइयाँ तो फैक्ट्री-क्षेत्र में आती हैं और कुछ नहीं आतीं । फैक्ट्री-क्षेत्र की लघु इकाइयों के आँकड़े तो नियमित रूप से एकत्र किए जाते हैं, लेकिन गैर-फैक्ट्री-क्षेत्र की लघु इकाइयों का ज्ञान ठीक से नहीं हो पाता है ।

---

1. Some Facts About Rajasthan, 2003, p 28.

फिर भी राजस्थान के फैक्ट्री व गैर-फैक्ट्री-क्षेत्र में लघु इकाइयों की संख्या काफी है। यहाँ पर मध्यम पैमाने के उद्योगों का अभाव है। लघु उद्योग विभिन्न प्रकार के होते हैं—

(1) कृषि-पदार्थों पर आधारित लघु उद्योग—जैसा कि पहले संकेत दिया गया है, इसके अन्तर्गत वनस्पति तेल व घी उद्योग, गुड़ व खण्डसारी की इकाइयाँ, छोटी दाल फैक्ट्रियाँ व अन्य इकाइयाँ, हथकरघा उद्योग, बेकरी व कन्फेक्शनरी की इकाइयाँ, दरी व निवार बनाने वाली इकाइयाँ, कपास की जिनिंग व प्रेसिंग इकाइयाँ आदि आती हैं, जिनमें संयंत्र व मशीनरी में पूँजी की राशि अब 3 करोड़ रु. कर दी गई है।

राज्य में जयपुर, भरतपुर, सवाई माधोपुर, गंगानगर, कोटा, बूँदी, अजमेर और पाली जिलों में तिलहन का उत्पादन होने से यहाँ वनस्पति तेल की कई इकाइयाँ पाई जाती हैं। राज्य में वनस्पति तेल की फैक्ट्रियाँ जयपुर (विश्वकर्मा में 'वीर बालक'), अलवर (खैरथल में), दौसा, निवाई, भरतपुर (सरसों इंजन छाप), गंगापुर सिटी, सवाई माधोपुर, जालौर आदि स्थानों में पाई जाती हैं। वनस्पति घी के कारखाने जयपुर (विश्वकर्मा में) **'महाराजा वनस्पति'**—प्रीमियर वेजीटेबल प्रोडक्ट्स; **'आमेर वनस्पति'**—पी.वी.पी. लिमिटेड, झोटवाड़ा औद्योगिक क्षेत्र, **'केसरी वनस्पति'** (निवाई में), दुर्गापुरा में रोहिताश तथा चित्तौड़गढ़ व भीलवाड़ा में पाए जाते हैं। राज्य में अरहर, मूँग, उड़द व मोठ आदि की दालें बनाने की इकाइयाँ पाई जाती हैं। हाथकरघा उद्योग में कोटा डोरिए की साड़ियाँ प्रसिद्ध हैं। अन्य स्थानों पर कई प्रकार का कपड़ा बुना जाता है। गन्ने का उपयोग गुड़ व खण्डसारी की इकाइयों में किया जाता है।

(2) पशु-आधारित लघु उद्योग—इनमें ऊनी वस्त्र, चमड़े, खाल, हड्डियाँ, दुग्ध पदार्थ आदि के उद्योग आते हैं। राज्य में भेड़ों की संख्या बहुत अधिक है। बीकानेर, चूरू और लाडनूं की ऊनी मिलें लघु उद्योगों के अन्तर्गत कार्यरत हैं। इनकी आर्थिक स्थिति काफी खराब हो गई है। इनको बंद करने का कार्य चल रहा है।

(3) खनिज पदार्थ-आधारित उद्योग—राज्य में मकराना (नागौर), बाँसवाड़ा व अन्य स्थानों में संगमरमर का पत्थर निकलता है, जिससे विभिन्न प्रकार की मूर्तियाँ व अन्य वस्तुएँ बनाई जाती हैं। जयपुर, पाली, जोधपुर, भरतपुर तथा किशनगढ़ में पीतल व ताँबे के बर्तन बनाने के कारखाने हैं। जयपुर में सोने-चाँदी के बर्तन बनाए जाते हैं। राज्य के कई भागों में लोहे के कृषिगत औजार बनाए जाते हैं। इस सम्बन्ध में गजसिंहपुर (श्रीगंगानगर) तथा जयपुर में झोटवाड़ा के कारखाने विशेष रूप से मशहूर हैं।

(4) वन-आधारित उद्योग—राज्य में उदयपुर, सवाई माधोपुर व जोधपुर में लकड़ी के खिलौने बनाने के कारखाने हैं। यहाँ बांस का सामान भी बनाया जाता है। कोटा में स्ट्रा बोर्ड का कारखाना है। राज्य में तेंदू पत्तियों का उपयोग बीड़ी बनाने में किया जाता है। कत्था, गोंद व लाख का उपयोग किया जाता है। फर्नीचर बनाने की इकाइयाँ पाई जाती हैं। अजमेर तथा अलवर में माचिस बनाने के कारखाने हैं।

इस प्रकार राज्य में यहाँ के साधनों पर आधारित कई प्रकार के कारखाने व अन्य औद्योगिक इकाइयाँ चल रही हैं। जैसा कि पहले कहा जा चुका है 1997-98 में लघु पैमाने

की कुल पंजीकृत इकाइयों की संख्या 1.94 लाख थी, जिनमें कुल विनियोग 2333 करोड़ रुपयों का था तथा रोजगार प्राप्त व्यक्ति लगभग 7.53 लाख थे।

कुटीर व लघु उद्योगों की समस्याएँ व समाधान—सम्पूर्ण देश की भाँति राजस्थान में भी कुटीर व लघु उद्योगों को कई प्रकार की समस्याओं का सामना करना पड़ता है, जिनका हल निकालने का सरकार प्रयत्न कर रही है। ये समस्याएँ इस प्रकार हैं—

(1) कच्चे माल की समस्या—इन उद्योगों को पर्याप्त मात्रा में कच्चा माल उचित कीमत पर नहीं मिलता, जिससे कठिनाई उत्पन्न हो जाती है।

(2) उत्पादन की पुरानी तकनीक—उत्पादन की पुरानी तकनीक व पुरानी मशीनें होने से माल की किस्म घटिया होती है और कीमत भी ऊँची होती है, क्योंकि उत्पादन-लागत अधिक आती है। उत्पादन की पद्धति में सुधार किया जाना आवश्यक है।

(3) बिक्री की समस्या—कुटीर व लघु उद्योगों को तैयार माल की बिक्री की समस्या का सामना करना पड़ता है। बड़े उद्योगों की प्रतियोगिता से इनके माल की माँग कम हुई है, जिसे बढ़ाने की आवश्यकता है।

(4) पूँजी का अभाव—इनके लिए कार्यशील पूँजी का अभाव पाया जाता है। बैंकों से कर्ज की व्यवस्था करके इस कमी को दूर किया जाना चाहिए।

(5) दक्ष श्रमिकों का अभाव—आवश्यक प्रशिक्षण की सुविधा बढ़ाकर इस कमी को दूर किया जा सकता है।

(6) पावर की कमी—प्राय: कारखानों को उनकी आवश्यकतानुसार पावर नहीं मिल पाती है। पावर कटौतियाँ, पावर के उतार-चढ़ाव आदि उत्पादन को निरन्तर जारी नहीं रहने देते जिससे इसको क्षति पहुँचती है। अत: पावर सप्लाई की स्थिति में सुधार किया जाना चाहिए ताकि कारखानों की जरूरतों को पूरा किया जा सके।

कुटीर व लघु उद्योगों की विभिन्न समस्याओं को हल करके इनके माध्यम से ग्रामीण औद्योगीकरण को बढ़ावा दिया जाना चाहिए। खनिज-पदार्थ आधारित लघु इकाइयों का विकास करके राज्य में औद्योगिक रोजगार व आमदनी बढ़ाने के अवसर हैं, जिनका उपयोग करने की आवश्यकता है। राज्य में तिलहन का उत्पादन बढ़ने से वनस्पति तेल की अधिक इकाइयाँ लगाई जा सकती हैं। सोने-चाँदी के आभूषणों का उत्पादन बढ़ाकर निर्यात को प्रोत्साहन दिया जा सकता है। रत्न व जवाहरात का उद्योग विकसित किया जाना चाहिए। गलीचों का उत्पादन बढ़ाने की भी आवश्यकता है ताकि इनका निर्यात करके अधिक विदेशी मुद्रा कमाई जा सके।

राजस्थान में प्रमुख वृहद् उद्योग-सूती वस्त्र उद्योग—सूती वस्त्र उद्योग राजस्थान के बड़े पैमाने के उद्योगों में महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है। 1949 में वृहद् राजस्थान के निर्माण के समय राज्य में 7 सूती वस्त्र की मिलें थीं। वर्तमान में इनकी संख्या 23 हो गई है। इनमें से 17 मिलें निजी क्षेत्र में हैं, 3 सार्वजनिक क्षेत्र में हैं (दो ब्यावर में तथा एक विजयनगर में) तथा 3 सहकारी क्षेत्र में कताई मिलें (गुलाबपुरा, गंगापुर तथा हनुमानगढ़ में) हैं। सूती वस्त्र की मिलें ब्यावर (3), भीलवाड़ा (3), जयपुर (2), किशनगढ़ (2), उदयपुर, पाली, गंगापुर

(भीलवाड़ा), हनुमानगढ़, कोटा, भवानीमंडी, विजयनगर, गंगानगर, गुलाबपुरा (भीलवाड़ा) आदि केन्द्रों में स्थित हैं। भविष्य में राजस्थान में सूती वस्त्र मिलों के बढ़ने की सम्भावना है।

राज्य में पहली सूती वस्त्र मिल "दी कृष्णा मिल्स लि." 1889 में निजी क्षेत्र में स्थापित हुई थी। यहाँ पर दूसरी मिल "एडवर्ड मिल्स लि." 1906 में स्थापित की गई। तीसरी मिल "महालक्ष्मी मिल्स लि." भी यहीं पर 1925 में स्थापित हुई। इसके बाद 1938 में भीलवाड़ा में मेवाड़ टेक्सटाइल मिल्स तथा 1942 में पाली में महाराजा उम्मेद मिल्स लि. की स्थापना की गई। 1946 में श्रीगंगानगर में सार्दुल टेक्सटाइल लि. की स्थापना की गई। आगे चल कर कृष्णा मिल्स व एडवर्ड मिल्स के रुग्ण हो जाने के कारण इनको राष्ट्रीय वस्त्र निगम ने अपने हाथ में ले लिया था, जिससे ये सार्वजनिक क्षेत्र में आ गई थीं।

राज्य में सूती वस्त्र उद्योग के स्थानीयकरण को प्रभावित करने वाले तत्त्व—इस उद्योग की स्थापना पर कच्चे माल अर्थात् कपास की समीपता का इतना प्रभाव नहीं पड़ता जितना बाजार की समीपता का पड़ता है। यह आवश्यक नहीं कि सूती कपड़े की मिलें उन्हीं स्थानों के आस-पास स्थापित हों, जहाँ कपास का उत्पादन किया जाता है। यह दूसरे ऐसे स्थानों पर भी भेजी जा सकती है, जहाँ उद्योग की स्थापना के लिए अनुकूल तत्त्व पाए जाते हैं।

(1) कच्चे माल की उपलब्धि—फिर भी राजस्थान में सूती वस्त्र मिलों की स्थापना पर कच्चे माल की उपलब्धि का प्रभाव पड़ा है। उदाहरण के लिए, श्रीगंगानगर की सूती वस्त्र मिल को कपास वहाँ की सिंचित भूमि से मिल जाती है। अजमेर, भीलवाड़ा, झालावाड़, चित्तौड़गढ़ तथा जयपुर जिलों में भी कपास की खेती होती है। बाँसवाड़ा में भी माही सिंचाई परियोजना से कपास की खेती को काफी प्रोत्साहन मिला है। ब्यावर की मिलों को भी कपास राज्य के अन्दर व बाहर दोनों से उपलब्ध होती रही है।

(2) उस उद्योग की स्थापना पर बाजार की समीपता व श्रम की उपलब्धि का प्रभाव पड़ा है। श्रमिक पास के गाँवों से आ जाते हैं और उत्पादन केन्द्रों के पास ही माल के उपभोक्ता केन्द्र व बाजार भी पाए जाते हैं। श्रम-शक्ति में पुरुष, स्त्रियाँ, युवक आदि आस-पास के स्थानों से उपलब्ध हो जाते हैं।

(3) उद्योग की स्थापना जलवायु, **पानी की सप्लाई**, भूमि की उपलब्धि आदि से भी प्रभावित हुई है।

(4) कोयला राज्य के बाहर से मँगाना पड़ता है। इसके अलावा विभिन्न केन्द्रों में **विद्युत की भी व्यवस्था है तथा डीजल जेनरेटिंग सेट्स की स्थापना की भी इजाजत दी गई है।**

इस प्रकार राज्य में सूती कपड़े की मिलों की स्थापना पर कई तत्त्वों का प्रभाव पड़ा है। भविष्य में राज्य में सूती वस्त्र उद्योग के विकास के नये कार्यक्रम हैं ताकि श्रमिकों को रोजगार के अवसर उपलब्ध किए जा सकें।

कपास के उत्पादन की प्रवृत्ति—राज्य में कपास का वार्षिक उत्पादन काफी घटता-बढ़ता रहता है। 1998-99 में कपास का उत्पादन 8.8 लाख गाँठें, 2001-02 में 2.8 लाख गाँठें, 2002-03 में 2.5 लाख गाँठें तथा 2003-04 में 5.3 लाख गाँठें अनुमानित हैं।

राज्य में सूती वस्त्र व सूत के उत्पादन की स्थिति अग्र तालिका में दी गई हैं।[1]

	मद	1978	1983	2000	2001
1	सूती वस्त्र (करोड़ मीटर)	3 32	5 58	4 10	2 91
2	सूत (Yarn) (हजार टन)	33 6	42 7	83	70

इस प्रकार राज्य में सूती वस्त्र का उत्पादन 2001 में लगभग 2.91 करोड़ वर्ग मीटर हुआ तथा सूत (यार्न) का उत्पादन 70 हजार टन रहा। तालिका से पता चलता है कि वर्ष 2001 में सूती वस्त्र का उत्पादन 2 91 करोड़ वर्ग मीटर हुआ जो 1983 की तुलना में कम था। राजस्थान में सूती वस्त्र का उत्पादन काफी घटता-बढ़ता रहता है। 2001 में कॉटन यार्न का उत्पादन पिछले वर्ष की तुलना में कम हुआ है। 1983 में राज्य में सूती वस्त्र का उत्पादन 5.6 करोड़ मीटर हुआ, जो अपने आप में एक रिकार्ड था। बाद में इसके उत्पादन में लगातार कमी हुई है।

सहकारी क्षेत्र में कताई-मिलें
(Spinning Mills in the Cooperative Sector)

(1) राजस्थान सहकारी कताई मिल लि., गुलाबपुरा (भीलवाड़ा)—यह 1965 में स्थापित हुई थी। यह कपास का उत्पादन करने वाले सदस्य कृषकों व अन्य से कपास खरीदती है और जिनिंग, कताई, बुनाई, रंगाई व अन्य सम्बद्ध क्रियाओं में भाग ले सकती है। इसका मुख्य उद्देश्य यार्न बेचकर कपास के उत्पादकों को लाभप्रद मूल्य दिलाना होता है। 1991-92 में इसे 96 लाख रुपयों का घाटा हुआ था। 1 अप्रैल, 1993 से गुलाबपुरा, गंगापुर व हनुमानगढ़ की तीन सहकारी कताई मिलों एवं गुलाबपुरा की जिनिंग मिल्स को मिलाकर राजस्थान राज्य सहकारी व जिनिंग मिल्स संघ लि. स्थापित किया गया है। इसका नाम "स्पिनफेड" (SPINFED) रखा गया है।

(2) गंगापुर सहकारी कताई मिल लि.—यह 1981 में स्थापित की गई थी। यह भी भीलवाड़ा जिले के गंगापुर कस्बे में स्थित है। यह समिति के सदस्यों के लाभ के लिए सहायक उद्योगों का संचालन करती है। इसे 1991-92 में 1 23 करोड़ रुपये का शुद्ध मुनाफा हुआ जो पिछले साल से कम था। 1 अप्रैल, 1993 से इसे "स्पिनफेड" में मिला दिया गया है।

(3) श्रीगंगानगर सहकारी कताई मिल लि.—इसकी स्थापना 1978 में हुई थी। इसका कार्यालय हनुमानगढ़ जंक्शन (जिला श्रीगंगानगर) में है। इसका उद्देश्य भी जिले में

उत्पन्न कपास का उपयोग करना तथा पावरलूम व हाथकरघों को कच्चा माल उपलब्ध कराना है। यह पिछले वर्षों से घाटे में चल रही थी, लेकिन इसे 1990-91 में 2.28 करोड़ तथा 1991-92 में 1.17 करोड़ रु का शुद्ध मुनाफा हुआ था। 1 अप्रैल, 1993 से इसे "स्पिनफेड" में मिला दिया गया है।

सूती वस्त्र मिलों की समस्याएं व उनका हल

(1) कच्चे माल की कमी—राज्य में जिस वर्ष कपास का उत्पादन घट जाता है, उस वर्ष सूती वस्त्र मिलों को कच्चे माल की कमी का सामना करना पड़ता है। यहाँ लम्बे रेशे की कपास का अभाव पाया जाता है।

(2) पुरानी मशीनरी—राज्य में सूती वस्त्र की मिलों में काफी मशीनें बहुत पुरानी हैं। ब्यावर में कृष्णा मिल व एडवर्ड मिल राष्ट्रीय वस्त्र निगम ने रुग्ण होने के कारण अपने अधिकार में ले ली थी। इनमें आधुनिकीकरण का अभाव रहा है।

(3) शक्ति के साधनों की कमी—राज्य में पुराने स्टीम संयंत्रों के लिए कोयला बिहार से मँगाया जाता है। प्रायः मिलों को पावर की समस्या का सामना करना पड़ता है जिसे हल किया जाना आवश्यक है।

(4) सामान्य कठिनाइयाँ—पूँजी की कमी, कुप्रबन्ध व मिलों के आकार के छोटे होने से उत्पादन लागत अधिक आती है। अतः इस उद्योग के प्रबन्ध में काफी सुधार करने की आवश्यकता है।

चीनी उद्योग—राज्य में कई वर्षों से चीनी के तीन बड़े कारखाने चल रहे हैं जो इस प्रकार हैं—(1) दी मेवाड़ शूगर मिल्स, भोपाल सागर (चित्तौड़गढ़ जिला) जो 1932 में स्थापित हुई थी, (2) दी गंगानगर शूगर मिल्स लि. जो 1945 में बीकानेर औद्योगिक निगम लि. के अधिकार में थी तथा 1 जुलाई, 1956 को इसे श्रीगंगानगर शूगर मिल्स लि. के नाम से राजकीय उपक्रम में बदल दिया गया था। अतः अब यह सार्वजनिक क्षेत्र में है। (3) श्री केशोरायपाटन सहकारी शूगर मिल्स लि. 1965 में सहकारी क्षेत्र में स्थापित की गई थी। यह बूँदी जिले में स्थित है।

इस प्रकार चीनी की तीन मिलें क्रमशः निजी, सार्वजनिक व सहकारी क्षेत्र में स्थापित होने के कारण तीन प्रकार के औद्योगिक संगठनों के उत्पादन की तुलना करने का अवसर देती हैं। चीनी की मिलों की स्थापना गन्ना उत्पादक क्षेत्रों के समीप होती है ताकि गन्ने को दूर तक ले जाने की असुविधा का सामना न करना पड़े तथा उसके अधिकाधिक रस का प्रयोग किया जा सके। गन्ने का उपयोग गुड़ व खण्डसारी बनाने में भी किया जाता है।

राज्य में बूँदी, चित्तौड़गढ़ व श्रीगंगानगर जिलों में काफी गन्ना उत्पन्न किया जाता है, इसलिए चीनी की मिलें भी इन्हीं जिलों में स्थापित की गई हैं।

गन्ने का उत्पादन—राज्य में गन्ने का उत्पादन काफी घटता-बढ़ता रहता है जिससे चीनी के उत्पादन पर विपरीत प्रभाव पड़ा है। 1977-78 में गन्ने का उत्पादन 28.3 लाख टन हुआ था जो बाद में कम हुआ है।

2001-02 में गन्ने का उत्पादन 4.3 लाख टन हुआ । 2002-03 में 4.2 लाख टन हुआ तथा 2003-04 में 3.3 लाख टन रहने का अनुमान है ।

अत: पिछले वर्षों में राज्य में गन्ने की पैदावार में घटने की प्रवृत्ति पाई गई है, जो एक चिन्ता का विषय है ।

चीनी के उत्पादन की प्रवृत्ति—राजस्थान में चीनी के उत्पादन में भारी उतार-चढ़ाव आते रहते हैं । 1978 में चीनी का उत्पादन लगभग 41 हजार टन हुआ था । 1993 में इसका उत्पादन 26 हजार टन हुआ जो घटकर 1994 में 12 हजार टन के स्तर पर आ गया था । 1999 में यह बढ़कर 23.4 हजार टन, 2000 में 12.0 हजार टन तथा 2001 में मात्र 4733 टन रह गया है ।

हम नीचे उपलब्ध सूचना के आधार पर दी गंगानगर शुगर मिल्स लि. (सार्वजनिक उपक्रम) व सहकारी क्षेत्र की श्री केशोरायपाटन सहकारी शुगर मिल्स लि. की प्रगति का संक्षिप्त विवरण देते हैं ।

(1) दी गंगानगर शुगर मिल्स लि.—यह जुलाई 1956 से राजकीय उपक्रम के रूप में कार्य कर रही है । इसमें 97% अंश राज्य के हैं तथा शेष निजी शेयरहोल्डरों के हैं । इसके अन्तर्गत निम्न इकाइयों का कार्य चल रहा है—

(i) शुगर फैक्ट्री, श्रीगंगानगर, जहाँ गन्ने व चुकन्दर से चीनी बनाई जाती है ।

(ii) श्रीगंगानगर व अटरू में स्थित डिस्टलरी में तथा राज्य के अन्य भागों में मदिरा-घरों में परिशोधित स्प्रिट (Rectified spirit) तैयार की जाती है ।

(iii) लाइसेंस प्राप्त दुकानदारों को देशी मदिरा बेचने के लिए दी जाती है (कोटा व उदयपुर डिवीजन में जनजाति क्षेत्रों में), तथा

(iv) धौलपुर में हाइटेक ग्लास फैक्ट्री में काँच के सामान, बोतलों व रेलवे जार्स का उत्पादन किया जाता है ।

गंगानगर शुगर मिल्स लि को 1991-92 में 69 9 लाख रुपयों का घाटा हुआ था । बाद के वर्षों में यह लाभ की स्थिति में आयी और 1994 95 में इसे 27 3 लाख रुपयों का मुनाफा हुआ । 1987-88 में भीषण अकाल के कारण काफी गन्ना पशुओं के चारे के लिए बेचना पड़ा था, जिससे चीनी के उत्पादन पर विपरीत प्रभाव पड़ा था । इसी वर्ष पानी व सिंचाई के अभाव में गन्ने की पैदावार कम हुई, गन्ने में रस की मात्रा कम हुई एवं गन्ने पर पायरीला नामक कीड़े का भारी प्रकोप रहा । कम्पनी द्वारा श्रीगंगानगर व अटरू में मोलासेस या सीरे (Molass ,) से परिशोधित स्प्रिट अजमेर व मण्डोर की डिस्टीलरियों में केसर-कस्तूरी व 14 बॉटलिंग केन्द्रों पर देशी मदिरा का उत्पादन किया जाता है ।

1991-92 में हाइटेक ग्लास फैक्ट्री, धौलपुर में लगभग 62 लाख बोतलों का उत्पादन हुआ था । कोयले की कमी से उत्पादन पर विपरीत प्रभाव पड़ता है । इसे बन्द करने की कार्रवाई की जा रही है ।

(2) श्री केशोरायपाटन सहकारी शुगर मिल्स लि. (बूँदी जिला)—इसकी स्थापना सहकारी क्षेत्र में 1965 में हुई थी । गन्ने के कृषक इसके सदस्य हैं । इसका एक उद्देश्य

पास-पड़ौस के क्षेत्रों में गन्ने का उत्पादन बढ़ाना भी है। इसकी प्रतिदिन गन्ना पिराई की क्षमता 1250 टन है, जिसका 1991-92 में पिराई के मौसम में 70% उपयोग हो पाया था। 1991-92 में यहाँ चीनी का उत्पादन 9555 टन हुआ था, जो पहले से अधिक था। इसे 1991-92 में 2 9 लाख रुपये का मामूली मुनाफा हुआ जबकि 1990-91 में 73.3 लाख रुपये का घाटा हुआ था। बाद के वर्षों में इसके मुनाफों में काफी उतार-चढ़ाव आता रहा है, जैसे 1992-93 में इसे 35 2 लाख रु. का मुनाफा हुआ जो 1993-94 में केवल 81 हजार रु. रह गया और 1994-95 में यह पुनः बढ़कर 44.5 लाख रु के स्तर पर पहुँच गया।

निष्कर्ष—राजस्थान में चीनी, गुड़ तथा खण्डसारी का उत्पादन बढ़ाने के लिए गन्ने का उत्पादन बढ़ाया जाना चाहिए। साथ में चुकन्दर का उत्पादन भी बढ़ाया जा सकता है। प्रचलित मिलों की प्रबन्ध-व्यवस्था में सुधार करके उत्पादन बढ़ाया जाना चाहिए। उनके लिए वित्त, नई मशीनें, पावर आदि की पर्याप्त सुविधा होनी चाहिए।

सीमेंट उद्योग—राजस्थान सीमेंट उद्योग में भारत में एक अगुआ राज्य माना जाता है। यहाँ सीमेंट ग्रेड लाइमस्टोन काफी मात्रा में पाया जाता है। इस उद्योग के लिए जिप्सम भी राजस्थान में मिलता है तथा कोयला राज्य के बाहर से मँगाना पड़ता है। राज्य में सीमेंट के कारखाने लाइमस्टोन की खानों के आस-पास स्थापित किए गए हैं। इस प्रकार कच्चे माल की उपलब्धि ने इस उद्योग की स्थापना को प्रभावित किया है। 1988 में सीमेंट की 9 बड़ी इकाइयाँ इस प्रकार थीं। इनके अलावा बहुत-सी मिनी सीमेंट की इकाइयाँ भी स्थापित हुई हैं। सीमेंट की बडी इकाइयाँ इस प्रकार हैं—

(1) ए सी सी लि , लाखेरी, (2) जयपुर उद्योग, सवाई माधोपुर, (3) बिड़ला जूट, चित्तौड़गढ़, (4) हिन्दुस्तान शुगर, उदयपुर, (5) जे के. सीमेंट, निम्बाहेड़ा, (6) मंगलम् सीमेंट, मोडक, (7) स्ट्रॉ प्रोडक्ट्स, बनास, सिरोही जिला, (8) श्री सीमेंट, ब्यावर, तथा (9) श्रीराम सीमेंट, श्रीरामनगर, कोटा।

इनमें सर्वाधिक उत्पादन-क्षमता जे के. सीमेंट, निम्बाहेड़ा की है। इसकी क्षमता 1 अप्रैल, 1988 को 11 4 लाख टन वार्षिक थी। सबसे कम श्रीराम सीमेंट, कोटा की थी जो केवल 2 लाख टन वार्षिक ही थी।

सीमेंट का उत्पादन—राज्य में सीमेंट का उत्पादन योजनाकाल में काफी बढ़ाया गया है। यह निम्न तालिका में दर्शाया गया है—

सीमेंट का उत्पादन (लाख टन में)	
1978	20 6
1989	41.8
1993	48 1
2000	86 0
2001	63 8
2002	81.4
2003	84.5

राज्य में पिछले वर्षों में सीमेंट का उत्पादन काफी बढ़ा है । 2003 में सीमेंट का उत्पादन 84.5 लाख टन आंका गया है जो 1978 की तुलना में लगभग 4 गुना है । यह 2000 की तुलना में कुछ कम है । राजस्थान में सीमेंट ग्रेड लाइमस्टोन के विशाल भण्डार होने के कारण भविष्य में सीमेंट का उत्पादन और भी बढ़ाया जा सकता है । राज्य में कई स्थानों पर मिनी सीमेंट की इकाइयाँ भी स्थापित की गई हैं । । अप्रैल, 1989 से सीमेंट के वितरण व मूल्य पर से नियंत्रण हटा लिया गया था ।

अब राज्य में सीमेंट के उत्पादन की क्षमता लगभग 110 लाख टन प्रतिवर्ष हो गई है । पिछले कुछ वर्षों में सीमेंट की कुछ नई बड़े आकार की इकाइयाँ भी स्थापित की गई हैं । पिछले वर्षों में रीको व राजस्थान वित्त निगम ने कई मिनी सीमेंट के संयंत्र भी स्वीकृत किए हैं, जिससे सीमेंट उद्योग में एक अभूतपूर्व प्रगति की स्थिति उत्पन्न हो गई है ।

वर्ष 1992-93 में रीको से दो सीमेंट की बड़ी कम्पनियों का 'टाइ-अप' हुआ था । एक तो डी.एल.एफ. सीमेंट लिमिटेड का तथा दूसरी इन्डो निपोन स्पेशल सीमेंट्स लि. का । इनमें से प्रत्येक में 400 करोड़ रुपये की पूँजी का विनियोजन होने का अनुमान लगाया गया है । इस प्रकार राजस्थान का सीमेंट उद्योग भारत के मानचित्र पर तेजी से उभर रहा है । राज्य में निकट भविष्य में सीमेंट की कई बड़ी इकाइयाँ स्थापित की जा सकती हैं ।

भारत में सीमेंट की माँग बढ़ रही है, इसलिए इस उद्योग का विकास देश के हित में रहेगा । मिनी सीमेंट के कारखाने—आबूरोड, नीम का थाना, बाँसवाड़ा, हिण्डौन सिटी व कोटपूतली आदि स्थानों में स्थापित किए गए हैं । इनमें लागत कम व रोजगार अधिक मिलता है । सीमेंट उद्योग के विकास पर कच्चे माल की उपलब्धि व बाजार की माँग का भी काफी प्रभाव पड़ता है ।

राज्य में सीमेंट उद्योग की समस्याएं व उनका समाधान

(1) यहाँ सीमेंट के कारखानों में उत्पादन लागत अधिक आने से उनकी प्रति-स्पर्द्धात्मक शक्ति पर विपरीत प्रभाव पड़ा है । प्रबन्ध-व्यवस्था में सुधार करके लागत घटाई जा सकती है ।

(2) मिनी सीमेंट की इकाइयाँ बड़ी इकाइयों की प्रतियोगिता का पर्याप्त मात्रा में सामना नहीं कर पातीं । इसलिए सीमेंट की माँग के बढ़ने पर ही उनका विकास सम्भव हो पाता है ।

(3) बिजली की सप्लाई के बढ़ने व उसके अनियमित से नियमित होने पर उद्योग का भविष्य निर्भर करता है ।

(4) सवाई माधोपुर की सीमेंट फैक्ट्री कई कारणों से बन्द रही है, जिसके लिए श्रमिकों की तरफ से काफी आन्दोलन भी हुए हैं । इसे पुनः चालू किया जाना चाहिए ।

राजस्थान को आधुनिक उत्पादन-विधि को अपनाकर सीमेंट का उत्पादन बढ़ाना चाहिए । राज्य में इस उद्योग का भविष्य काफी उज्ज्वल है, क्योंकि यहाँ इसके विकास की समस्त आवश्यकताओं की पूर्ति हो जाती है । आशा है कि भविष्य में भी सीमेंट उद्योग का

राज्य में काफी विकास होगा। 1990-91 के राज्य सरकार के बजट में सीमेंट पर केन्द्रीय बिक्री-कर 16% से घटाकर 7% कर दिया गया था ताकि सीमेंट की बिक्री को प्रोत्साहन मिले और उद्यमकर्त्ता अन्य राज्यों में सीमेंट बेचने के लिए अपनी 'ब्रांच-ट्रांसफर' न करें।

नमक उद्योग—राजस्थान में नमक उद्योग का अपना महत्त्वपूर्ण स्थान है। यहाँ खारे पानी की झीलें पाई जाती हैं, जिससे नमक के उत्पादन के लिए प्राकृतिक दशाएँ काफी अनुकूल हैं। राजस्थान में सार्वजनिक क्षेत्र में नमक के कारखाने सांभर, डीडवाना, पचपदरा में हैं तथा निजी क्षेत्र में छोटे आकार के नमक के कारखाने फलौदी, कुचामन सिटी, पोकरन व जाब्दीनगर (नावां तहसील, नागौर-जिला) आदि स्थानों में पाए जाते हैं।

हम नीचे लवण-स्रोतों का परिचय देंगे। उसके बाद इन पर आधारित कारखानों का वर्णन किया जाएगा।

(1) राजकीय लवण-स्रोत, डीडवाना—यह स्रोत 1910 एकड़ क्षेत्र में फैला हुआ है। वर्तमान में 400 नमक के क्यारे पुश्तैनी देश वालों के द्वारा तथा 800 क्यारे विभाग द्वारा दिए गए 10 वर्ष के लीज के अन्तर्गत कार्यरत हैं। स्रोत के दोनों तरफ बने बाँधों में वर्षा का पानी इकट्ठा किया जाता है। यही पानी रिसकर नमक उत्पादन क्षेत्र में आता है। इस पानी को 'ब्राइन' कहते हैं। ब्राइन में नमक के अलावा सोडियम सल्फेट अधिक मात्रा में होने से यह नमक खाने के काम में नहीं आ सकता। इसलिए इस स्रोत से 80-85% अखाद्य नमक (non-edible salt) बनता है। इसको बेचने में बड़ी कठिनाई होने लगी है। 1990-91 में इसे शुद्ध लाभ 125 लाख रुपयों का हुआ था, जो पिछले वर्ष से अधिक था।

(2) राजकीय लवण-स्रोत, पचपदरा—पचपदरा लवण स्रोत 32 वर्ग मील में फैला है। यहाँ नमक की उत्पादन क्षमता 6 लाख क्विंटल वार्षिक है। पचपदरा जोधपुर से 128 किलोमीटर दूर दक्षिण-पश्चिम में स्थित है। यह स्रोत भी 1964 से कार्यरत है। इस स्रोत से 1989-90 में 115 लाख रुपयों का शुद्ध मुनाफा प्राप्त हुआ, जबकि 1990-91 में एक लाख रुपये का घाटा हुआ था।

ये दोनों नमक-स्रोत राजस्थान सरकार संचालित करती है जबकि साँभर में नमक का उत्पादन भारत सरकार की देखरेख में होता है—जिसका संचालन साँभर साल्ट्स लि. (हिन्दुस्तान सॉल्ट्स लि की सहायक कम्पनी) कर रही है। साँभर झील नमक उत्पादन के लिए प्रसिद्ध रही है। यहाँ का नमक अपनी गुणवत्ता के लिए भी प्रसिद्ध रहा है।

विभाग द्वारा साँभर के निकट जाब्दीनगर में नया नमक स्रोत विकसित किया जा रहा है।

राज्य में नमक पर आधारित राजकीय उपक्रमों का विवरण आगे दिया जा रहा है।

(1) राजस्थान स्टेट केमिकल वर्क्स, डीडवाना (सोडियम सल्फाइड फैक्ट्री)[1]—यह 1966 में स्थापित की गई थी। इसमें सोडियम सल्फाइड का उत्पादन किया जाता है। यह चमड़े तथा रंगाई उद्योग में काम आता है। इसे डीडवाना केमिकल्स लि. को लीज पर

---

1 Public Enterprises Profile of Rajasthan for 1991-92 to 1994-95, GOR, Annexure, 'J', 1997

दिया गया था, लेकिन लीज का भुगतान समय पर न करने से लीज को फरवरी, 1987 में समाप्त कर दिया गया। उत्पादन कार्य सितम्बर 1988 से बन्द कर दिया गया। इसे पुनः संयुक्त क्षेत्र में चलाने का विचार किया गया है। इसे 1991-92 में 5.5 लाख रुपयों, 1992-93 में 4.1 लाख रु. व 1993-94 में 7.7 लाख रु. का घाटा हुआ था। 1994-95 में 'न लाभ न हानि' की स्थिति रही थी। वर्तमान में यह बन्द पड़ी है।

(2) राजस्थान स्टेट केमिकल्स वर्क्स, डीडवाना (सोडियम सल्फेट वर्क्स)[1]—यह 1964 में स्थापित किया गया था। यह क्रूड सोडियम सल्फेट का उत्पादन करता है। नमक की क्यारी में सर्दी में सल्फेट अलग होकर जम जाता है। 10-12 वर्ष में यह परत मोटी हो जाती है जिसे क्रूड सल्फेट कहते हैं। यह सल्फेट सल्फाइड उत्पादन के काम में आता है जिसका ऊपर उल्लेख किया गया है। इस इकाई से पिछले वर्षों में लाभ हुआ है लेकिन लाभ की मात्रा उत्तरोत्तर घटती गई है। यह 1991-92 में 42 [illegible] लाख रु. से घटकर *1994-95 में 4.7 लाख रु. पर आ गई थी। 1995-96 में इसे पुनः 16 लाख रु.* का मुनाफा हुआ। बाद के वर्षों के आंकड़े उपलब्ध नहीं हैं।

(3) राजस्थान सरकार साल्ट वर्क्स, डीडवाना–इसकी स्थापना *1960* में विभागीय उपक्रम के रूप में हुई थी। यहाँ खाद्य, अखाद्य, औद्योगिक व आयोडीनीकृत नमक बनाया जाता है। यहाँ ब्राइन से सोडियम सल्फेट निकाल कर शुद्ध नमक बनाया जाता है। इसे भी सितम्बर, 1981 में मैसर्स डीडवाना केमिकल प्राइवेट लि. को लीज पर दे दिया गया था, लेकिन विवाद होने पर मामला कोर्ट में चला। पिछले वर्षों में इसका मुनाफा घटता-बढ़ता रहा है। *1994-95 में इसे 50.3 लाख रु. का मुनाफा हुआ जो घटकर 1995-96 में 42.8* लाख रु. के स्तर पर आ गया। बाद के वर्षों के आंकड़े उपलब्ध नहीं हैं।

(4) राजस्थान सरकार साल्ट वर्क्स, पचपदरा—यह 1960 में स्थापित हुआ था। यह भी खाद्य, अखाद्य, औद्योगिक व आयोडीनीकृत नमक बनाता व बेचता है।

पचपदरा व डीडवाना दोनों में आयोडीनीकरण के संयंत्र लगाए गए हैं ताकि नमक का आयोडीनीकरण किया जा सके। पहाड़ी क्षेत्रों में आयोडीन की कमी से घेंघे (Goitre) की बीमारी हो जाती है जिसको दूर करने के लिए नमक के माध्यम से आयोडीन मनुष्य के शरीर में पहुँचाया जाता है। *इसे 1991-92 में 13.3 लाख रु. तथा 1992-93 में 15.3 लाख रु.* का घाटा हुआ। बाद के दो वर्षों में 'न लाभ न हानि' की स्थिति रही है।

राज्य में नमक के उत्पादन की प्रवृत्ति—राज्य में नमक का उत्पादन घटता-बढ़ता रहता है।

विभिन्न वर्षों में उत्पादन की स्थिति निम्न तालिका में दी गई है—

वर्ष	नमक का उत्पादन (लाख टन)
1978	46
1989	9.3
1991	14.4
1997	11.7
1998	11
1999	17
2000	12
2001	18

---

1 Public Enterprises Profile 1997-98, GOR, p 138

2001 में नमक का उत्पादन 18 लाख टन हुआ जो पिछले वर्ष से कम था।

निष्कर्ष—जैसा कि ऊपर बतलाया गया है, डीडवाना के संयंत्र लीज पर दिए गए हैं, लेकिन नमक-आधारित वस्तुओं के उत्पादन की स्थिति अनिश्चित बनी हुई है। नमक के राजकीय उपक्रमों की प्रबन्ध-व्यवस्था में सुधार करने की नितान्त आवश्यकता है।

काँच का उद्योग—काँच बनाने में बालू मिट्टी के अलावा कई रासायनिक पदार्थ तथा कोयला आदि प्रयुक्त होते हैं। राज्य में काँच के उद्योग के विकास के लिए अनुकूल दशाएँ विद्यमान हैं, जैसे बालू पत्थर, सिलिका मिट्टी, सोडियम सल्फेट, शोरा आदि की पर्याप्त उपलब्धि। यहाँ काँच बनाने वाले कुशल मजदूर भी पाए जाते हैं। चूने का पत्थर भी बहुतायत में मिलता है। काँच का सामान बनाने के कारखाने पहले कुछ नगरों में पाए जाते थे, लेकिन आजकल धौलपुर के निम्न दो कारखाने विशेष रूप से महत्त्वपूर्ण हैं—

(1) **धौलपुर ग्लास वर्क्स**—यह निजी क्षेत्र में है। इसमें काँच का लगभग 1000 टन वार्षिक उत्पादन होता है।

(2) **हाइटेक ग्लास फैक्ट्री, धौलपुर**—यह दी गंगानगर शुगर मिल्स लि. जयपुर के अन्तर्गत है। यह जुलाई 1968 से कम्पनी के पास लीज पर है। यहाँ मदिरा विभाग के लिए बोतलों का उत्पादन किया जाता है। 1991-92 में यहाँ 62 लाख बोतलों का उत्पादन हुआ था। पुरानी भट्टी के खराब हो जाने से उत्पादन कम हुआ है। कोल इण्डिया व लघु उद्योग निगम से अच्छी किस्म का कोयला न मिलने से फर्नेस में पूरा तापमान न बनने से उत्पादन लक्ष्यों के अनुसार नहीं किया जा सका है। इस इकाई की स्थिति असंतोषजनक बनी हुई है।

राजस्थान में काँच के उद्योग के विकास की सम्भावनाएँ जयपुर, सवाई माधोपुर, बीकानेर, बूँदी तथा उदयपुर में पाई जाती हैं।

उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट होता है कि राज्य में सूती वस्त्र, चीनी, सीमेंट, नमक व काँच उद्योगों का विकास कुछ सीमा तक हुआ है। भविष्य में राज्य में इलेक्ट्रोनिक्स उद्योगों के विकास पर बल दिया जा रहा है। राज्य में खनिज-आधारित उद्योगों के विकास की भी काफी सम्भावनाएँ हैं।

प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. राजस्थान का सबसे प्राचीन संगठित उद्योग है—

(अ) सीमेंट उद्योग (ब) सूती वस्त्र उद्योग

(स) चीनी उद्योग (द) वनस्पति तेल उद्योग (ब)

2. फैक्ट्रियों की नवीनतम सूचना के अनुसार राजस्थान के किस जिले में सबसे ज्यादा फैक्ट्रियाँ हैं ?

(अ) भीलवाड़ा (ब) कोटा
(स) जयपुर (द) जोधपुर (स)

3. राज्य में किस श्रेणी के उद्योगों में विकास की सर्वाधिक सम्भावनाएँ है—
(अ) खनिज-आधारित (ब) पशुधन-आधारित
(स) कृषि-आधारित (द) इलेक्ट्रोनिक्स (अ)

4. राजस्थान में टायर एवं ट्यूब बनाने का सबसे बड़ा कारखाना स्थापित है—
(अ) केलवा (ब) कांकरोली
(स) करौली (द) कोटपूतली (ब)

[RAS, 1998]

5. उन आठ जिलों के नाम लिखिए जिनमें राज्य की 3/4 फैक्ट्रियाँ स्थित हैं, और जिनमें राज्य के फैक्ट्री क्षेत्र के 3/4 कर्मचारी कार्यरत हैं—
उत्तर : जयपुर, जोधपुर, पाली, भीलवाड़ा, अजमेर, अलवर, उदयपुर व गंगानगर ।

6. 2002-2003 में विनिर्माण-क्षेत्र (manufacturing) का राज्य के शुद्ध घरेलू उत्पाद में (1993-94 के भावों पर) लगभग कितना अंश रहा ?
(अ) 14% (ब) 11.5%
(स) 9% (द) 8% (ब)

7. राज्य का ऐसा उद्योग बताइए जिसका संगठन सार्वजनिक, सहकारी व निजी तीनों क्षेत्रों में देखने को मिलता है ?
(अ) सूती वस्त्र (ब) चीनी
(स) सीमेन्ट (द) नमक (ब)

अन्य प्रश्न

1. राजस्थान में औद्योगिक दृष्टि से अग्रिम चार जिलों के नाम लिखिए । (फैक्ट्री-विकास की दृष्टि से)
उत्तर : जयपुर, अलवर, भीलवाड़ा तथा जोधपुर ।

2. राजस्थान में लघु-उद्योग एवं दस्तकारी उद्योग के महत्त्व को समझाइये । लघु उद्योगों की समस्याओं का विवेचन कीजिये तथा उन्हें दूर करने के उपायों को भी बताइये ।
(Raj. I year, 2004)

3. "राजस्थान के औद्योगिक विकास में क्षेत्रीय (प्रादेशिक) भिन्नता" विषय पर संक्षिप्त एवं आलोचनात्मक निबन्ध लिखिए ।

4. संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए—
(i) उद्योगों का राजस्थान की कुल घरेलू उत्पत्ति में योगदान;
(ii) राज्य में उद्योगों का रोजगार में अंशदान;
(iii) राजस्थान में उद्योगों का आकार;
(iv) राजस्थान में लघु उद्योग व हस्तशिल्प

5. राजस्थान के औद्योगिक क्षेत्र के मुख्य लक्षणों का विवरण निम्न शीर्षकों के अन्तर्गत दीजिए—
   (i) आकार,
   (ii) वस्तुगत ढाँचा, तथा
   (iii) प्रादेशिक फैलाव या जिलेवार वितरण।
6. राजस्थान में पंचवर्षीय योजनाओं के अन्तर्गत औद्योगिक विकास की उपलब्धियों का वर्णन कीजिए।
7. राजस्थान में लघु एवं कुटीर उद्योग तथा हस्तकलाओं के महत्त्व को समझाइए। इन उद्योगों की समस्याएँ व उपाय बताइए।
8. राजस्थान में जिले वार औद्योगिक विकास (फैक्ट्री-क्षेत्र के अनुसार) का संक्षिप्त विवेचन करिए।

9. राजस्थान के सीमेंट उद्योग या सूती वस्त्र उद्योग की वर्तमान स्थिति व समस्याओं पर प्रकाश डालिए। इनके विकास के लिए आवश्यक सुझाव दीजिए।
10. राजस्थान में औद्योगिक दृष्टि से कौन से जिले अधिक विकसित हो पाए हैं ? राज्य में औद्योगिक दृष्टि से अविकसित पाँच जिलों के नाम लिखिए और उनकी वर्तमान स्थिति का उल्लेख कीजिए।
11. राजस्थान के औद्योगिक ढाँचे का संक्षिप्त परिचय दीजिए। क्या वह पहले की तुलना में काफी परिवर्तित हुआ है ?
12. योजनाकाल में राजस्थान में औद्योगिक विकास की प्रमुख प्रवृत्तियों का वर्णन कीजिए।
13. राजस्थान के ग्रामीण व कुटीर उद्योगों का विवरण दीजिए। इनमें मुख्यतः किन वस्तुओं का निर्माण होता है ?
14. राजस्थान में सीमेन्ट उत्पादन के प्रमुख कारखानों के नाम बताइए।

15. राज्य में सीमेंट उद्योग की प्रमुख समस्याएँ बताइए। (100 शब्द)

16. राज्य में नमक उत्पादन के कारखानों के नाम लिखिए। (100 शब्द)

17

राज्य में औद्योगिक नीति का विकास, जून 1998 की नीति व नई दिशाएँ

(Evolution of Industrial Policy of the State, Policy of June 1998 and New Directions)

इस अध्याय में राज्य के औद्योगिक विकास के लिए सरकार की तरफ से दी गई वित्तीय रियायतों व सुविधाओं का संक्षिप्त परिचय देकर राज्य की पूर्व औद्योगिक नीतियों—1978, 1990 व 1994 का उल्लेख करते हुए जून 1998 की नीति पर प्रकाश डाला जाएगा। बाद में पिछले कुछ वर्षों में सरकार द्वारा औद्योगिक विकास के लिए उठाए गए कदमों की चर्चा की जाएगी। अध्याय के परिशिष्ट में राज्य में बहुराष्ट्रीय व विदेशी कम्पनियों की औद्योगिक विकास में भूमिका व निर्यात की स्थिति का भी परिचय दिया जाएगा।

राज्य में औद्योगिक विकास के लिए रियायतें व सुविधाएँ[1]

(Concessions & Facilities for Industrial Development in the State)

पिछली दो शताब्दियों में राजस्थान सरकार ने औद्योगिक विकास के लिए उद्यम कर्ताओं को आकर्षित करने के लिए कई प्रकार की रियायतें, सुविधाएँ तथा प्रेरणाएँ प्रदान की हैं। राज्य का **उद्योग निदेशालय (Directorate of Industries)** लघु व कुटीर उद्योगों की **प्रगति का कार्य** देखता है। इसके द्वारा लघु इकाइयों का पंजीकरण (Registration) किया जाता है तथा यह उनके लिए कच्चे माल का आवंटन करने की

---

1. **Concessions & Facilities to Industries, RIICO, July 1999 & Industrial Land In Rajasthan, January, 2003 for land rates in various industrial areas**

सिफारिश करता है । इसी के अन्तर्गत वर्तमान में 32 जिला उद्योग-केन्द्र (District Industries Centres) (DICs) काम कर रहे हैं, जिनमें RFC, RIICO व राजस्थान लघु उद्योग निगम (RSIC) तथा व्यापारिक बैंकों के प्रतिनिधि भी भाग लेते हैं ।

राजस्थान सरकार ने औद्योगिक क्षेत्रों के विकास में तथा उद्यमकर्ताओं को पूँजी की सुविधा प्रदान करने में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है । विभिन्न प्रकार की सुविधाओं का विवरण नीचे दिया जाता है—

(1) भूमि का आवंटन—राज्य सरकार ने चुने हुए स्थानों पर उद्योगों की स्थापना के लिए बड़े भू-क्षेत्र निर्धारित किए हैं । इन औद्योगिक क्षेत्रों (Industrial Areas) में उद्योगों को 99 वर्ष की 'लीज' पर भूमि आवंटित की गई है । भूमि के आवंटन की दरें विभिन्न क्षेत्रों में अलग-अलग रखी गई हैं । ये पिछड़े जिलों के औद्योगिक क्षेत्रों में अपेक्षाकृत कम हैं । विभिन्न औद्योगिक क्षेत्रों में भू-आवंटन की दरें संशोधित की गई हैं । रीको की पुस्तिका **Industrial Land in Rajasthan,** जनवरी 2003 के अनुसार विभिन्न औद्योगिक क्षेत्रों में भूमि की दरो में काफी अतर पाया जाता है। झालावाड के नये विकास केन्द्र में यह सामान्यतया 165 रु प्रति वर्गमीटर, धौलपुर के विकास केन्द्र मे 200 रु प्रति वर्गमीटर, जयपुर के कूकस औद्योगिक क्षेत्र मे 550 रु प्रति वर्गमीटर, तथा अलवर के भिवाडी चोपन्की (Bhuwadi Chopanki) में 440 रु प्रति वर्गमीटर रखी गई है। लेकिन भिवाडी में यह 550 रु प्रति वर्गमीटर तक रही है।

रीको (राजस्थान राज्य औद्योगिक विकास व विनि-योजन निगम लि.) एक समय में भुगतान की शर्त पर भूमि का आवंटन करता है, जिनमें 25% राशि आवंटन के समय जमा करनी होती है और शेष राशि तीन माह में देय होती है । इसका विस्तृत विवरण आगे चलकर किया जाएगा ।

(2) औद्योगिक बस्तियों व औद्योगिक क्षेत्रों का विकास—(रीको) राजस्थान राज्य औद्योगिक विकास एवं विनियोजन निगम लि. ने औद्योगिक क्षेत्र विकसित किए हैं । इनमें पावर, सड़क, जल व पानी के विकास की सुविधाएँ दी गई हैं । इसके द्वारा विकसित किए गए क्षेत्र जयपुर (विश्वकर्मा तथा मालवीय), कोटा, अलवर, जोधपुर, उदयपुर, अजमेर, पाली, चिड़ावा, पिलानी, बूँदी, टोंक, निवाई, सीकर, बालोतरा, बाड़मेर, सादुलपुर व चित्तौड़गढ़ आदि स्थानों में हैं । **मार्च 2003 के अंत तक रीको ने 286 औद्योगिक क्षेत्रों का विकास किया है** और इनमें 17121 औद्योगिक इकाइयाँ उत्पादन में आ चुकी हैं ।

व्यापारिक बस्तियों में नीचे दुकान व ऊपर रिहायशी मकान की व्यवस्था होती है । रीको ने इलेक्ट्रोनिक्स उद्योगों के लिए जयपुर व पिलानी में **कार्यात्मक बस्तियाँ** (Functional estates) स्थापित की हैं ।

अलवर जिले के 9 औद्योगिक क्षेत्र हैं, मत्स्य, मत्स्य विस्तार, राजगढ़, राजगढ़ विस्तार, थानागाजी, खेड़ली रेल, बहरोड़, खैरथल, खैरथल विस्तार व अलवर टी ए. रीको ने ये औद्योगिक क्षेत्र राष्ट्रीय राजधानी प्रदेश (National Capital Region) के अलवर जिले के भाग में विकसित किए हैं । NCR में दिल्ली के इर्द-गिर्द के हरियाणा व उत्तर प्रदेश के कई

औद्योगिक क्षेत्र भी आते हैं। अलवर जिले की भिवाड़ी इकाई के अन्तर्गत भिवाड़ी, खुशखेरा I, II, III चरण, चोपान्की, सारे-खुर्द, रामपुर-मुण्डाना भिवाड़ी के IV चरण के विस्तार में आते हैं। भिवाड़ी इकाई में काफी पूँजी का निवेश हो चुका है। यह अपनी क्षमता के उच्च शिखर पर पहुँच गया है। अब यहाँ पर्यावरण सम्बन्धी समस्याएँ बढ़ने लगी हैं। रीको खस्ता हाल औद्योगिक क्षेत्रों को बेचने का कार्य भी संचालित करता है। इसने भिवाड़ी औद्योगिक क्षेत्र की कुछ अतिरिक्त भूमि को अलवर नगर विकास न्यास को बेचा है।

(3) वित्तीय प्रेरणाएँ (Financial Incentives)—उद्योगों को वित्तीय सहायता राज्य सरकार के उद्योग विभाग, राजस्थान वित्त निगम, राजस्थान राज्य औद्योगिक विकास व विनियोजन निगम लि., भारतीय स्टेट बैंक व इसके सहायक बैंक तथा अन्य राष्ट्रीयकृत बैंकों से प्राप्त होती है। इस सम्बन्ध में वर्तमान स्थिति का उल्लेख नीचे किया जाता है।

राजस्थान वित्त निगम (RFC) लघु व मध्यम श्रेणी के उद्योगों को दीर्घकालीन कर्ज देता है जिसकी अधिकतम राशि पहले 60 लाख रुपये तक हो सकती थी, जिसे क्रमशः बढ़ाकर 90 लाख रु., 1.5 करोड़ रु. तथा वर्तमान में 2.40 करोड़ रु. कर दिया गया है। कर्ज देने की कई स्कीमें हैं, जैसे कम्पोजिट टर्म लोन योजना, उदार ऋण योजना, परिवहन ऋण (सिंगल वाहन), होटल कर्ज, डीजल जेनरेटिंग सैट के लिए कर्ज, टेक्नीशियन सहायता स्कीम, अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति उद्यमकर्ता स्कीम, भूतपूर्व सैनिकों के लिए स्कीम, शारीरिक दृष्टि से अयोग्य व्यक्तियों तथा डॉक्टरों के लिए स्कीम। पहले एकाकी स्वामित्व व साझेदारी फर्म के लिए ऋण की अधिकतम सीमा 15 लाख रुपये रखी गई थी जिसे अब बढ़ाया गया है। (RFC) अपनी उदार ऋण योजना (Soft Loan Scheme) के अन्तर्गत कर्ज देता है। कर्ज की सुविधा टेक्नोक्रेट्स व टेक्नीशियनों के लिए भी उपलब्ध की गई है।

कम्पोजिट टर्म लोन योजना के अन्तर्गत कर्ज दस्तकारों व उद्यमियों को उपलब्ध कराया जाता है।

पहले रीको 90 लाख रुपये तक के अवधि-कर्ज (Term Loans) प्रदान कर सकता था, जिसे एक बार बढ़ाकर 1.5 करोड़ रु. तथा वर्तमान में 2.5 करोड़ रु. किया गया है। अब रीको 10 करोड़ रुपये तक की लागत के प्रोजेक्टों को सहायता दे सकता है। IDBI रीको के साथ 5 करोड़ रु. से अधिक, लेकिन 10 करोड़ रुपये की लागत तक के प्रोजेक्टों में संयुक्त रूप से कर्ज देने में शरीक होता है।

पहले RFC, RIICO व व्यापारिक बैंक परस्पर मिल-कर जो कुल कर्ज दे सकते थे, अब उसकी सीमा भी बढ़ा दी गई है। औद्योगिक इकाई शेयर बेचकर भी धन जुटा सकती है। उद्योग निदेशालय भी लघु इकाइयों को अब 35 हजार रुपये तक के कर्ज उपलब्ध करता है। रीको द्वारा अवधि-कर्ज (टर्म-लोन) पर ली जाने वाली ब्याज की दर औद्योगिक विकास बैंक की पुनर्वित्त स्कीम के अन्तर्गत निर्धारित होती है।

रीको व (RFC) के द्वारा बिक्री कर की राशि के बराबर ब्याज-मुक्त-ऋण (Interest free loans) भी दिए जाते हैं। राज्य में उद्योगों को बिक्री कर से कुछ वर्षों के लिए मुक्त रखने व इसका आस्थगन (Deferment) करने की एक स्कीम 1987 में घोषित की गई थी, जिसे 1989 में परिवर्तित रूप में लागू किया गया था।

(4) विद्युत की सप्लाई बढ़ाई गई है एवं इस दिशा में प्रयास भी जारी हैं। विद्युत-प्रशुल्क पर रिबेट दी जाती है। जल-सप्लाई व कच्चे माल की पूर्ति बढ़ाई गई है।

(5) राजकोषीय प्रेरणाएँ (*Fiscal Incentives*) व करों में राहत (Tax Relief)—सरकार ने कारखानों में लगाई जाने वाली मशीनरी को चुंगी-शुल्क (Octroi) से मुक्त किया है। कच्चे माल पर भी यह छूट दी गई है। राज्य सरकार ने मशीनों व कच्चे माल पर बिक्री कर की छूट दी है। विद्युत-शुल्क में भी छूट दी गई है। बाद में बिक्री कर से छूट व आस्थगन की 1989 की स्कीम लागू की गई। इसे जून 1998 में पुनः संशोधित किया गया, जिस पर आगे चलकर प्रकाश डाला गया है।

(6) राजस्थान के पिछड़े जिलों के औद्योगिक विकास के लिए सब्सिडी की व्यवस्था—भूतकाल में राज्य में 16 जिलों को औद्योगिक विकास की दृष्टि से पिछड़ा घोषित किया गया था। **ये जिले इस प्रकार थे**—जालौर, नागौर, जोधपुर, चूरू, सीकर, झालावाड़, टोंक, अलवर, सिरोही, उदयपुर, बाँसवाड़ा, डूँगरपुर, भीलवाड़ा, झुंझुनूं, जैसलमेर व बाड़मेर। सितम्बर 1988 तक 27 जिलों में से 16 जिलों को भारत सरकार की तरफ से विनियोग-सब्सिडी दी जाती थी। (जो बाद में बन्द कर दी गई) तथा शेष 11 जिलों को राज्य सरकार की तरफ से सब्सिडी दी जाती थी। **सब्सिडी की स्कीम पूँजी से जुड़ी राजकोषीय प्रेरणा (Capital-linked Fiscal Incentive) की स्कीम होती है** जिसके अन्तर्गत उद्यमकर्ताओं को वित्तीय सहायता मिलती है। इसके अन्तर्गत स्थिर पूँजीगत वि-नियोग जैसे भूमि, फैक्ट्री, व प्लान्ट तथा मशीनरी के विनियोग का निर्धारित अंश उद्यमकर्ता को सरकार सब्सिडी या अनुदान सहायता के रूप में देती है, जिससे उनको कारखाना लगाने के लिए भारी प्रोत्साहन मिलता है।

पहले केन्द्रीय सब्सिडी की व्यवस्था में पिछड़े जिलों को तीन श्रेणियों A, B तथा C के अन्तर्गत विभक्त किया गया था, जो इस प्रकार थे—(A) इसके अन्तर्गत 25% **सब्सिडी जैसलमेर, सिरोही, चूरू व बाड़मेर के लिए रखी गई थी।** ये 'शून्य उद्योग जिले' (No Industries Districts अथवा NIDs) कहलाते थे। सब्सिडी की अधिकतम सीमा एक इकाई के लिए 25 लाख रुपये रखी गई थी। (B) इसके अन्तर्गत 15 प्रतिशत सब्सिडी पाँच जिलों—अलवर, भीलवाड़ा, जोधपुर, नागौर व उदयपुर के लिए रखी गई थी तथा इसकी अधिकतम राशि 15 लाख रुपये रखी गई थी। (C) इसके अन्तर्गत 10 प्रतिशत सब्सिडी सात जिलों—बाँसवाड़ा, डूँगरपुर, जालौर, झालावाड़, झुंझुनूं, सीकर व टोंक के लिए थी तथा एक औद्योगिक इकाई के लिए सब्सिडी की अधिकतम राशि 10 लाख रुपये रखी गई थी।

इस प्रकार केन्द्रीय सब्सिडी की व्यवस्था काफी लचीली थी। शेष 11 जिलों—अजमेर, भरतपुर, बूँदी, बीकानेर, चित्तौड़गढ़, जयपुर, श्रीगंगानगर, कोटा, पाली, सवाई

माधोपुर व धौलपुर के लिए पहले राज्य सरकार सब्सिडी देती थी, जो बड़ी व मध्यम इकाइयों के लिए 10% (अधिकतम 10 लाख रुपये) एवं लघु इकाइयों के लिए 15% (अधिकतम 3 लाख रुपये), अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति के लिए लघु इकाइयों पर 20% तथा नन्हीं (tiny) इकाइयों के लिए 25% रखी गई थी। निम्न क्षेत्रों को सब्सिडी नहीं दी गई थी; जैसे मत्स्य (अलवर), मरुधर (जोधपुर), जयपुर के विश्वकर्मा व मालवीय तथा मेवाड़ (उदयपुर)। सार्वजनिक वित्तीय संस्थाएँ पिछड़े क्षेत्रों के विकास के लिए उदार शर्तों पर ऋण प्रदान करती रही हैं। रीको कुछ मामलों में बिक्री-कर की एवज में ब्याज-मुक्त कर्ज की सुविधा भी प्रदान करता रहा है।

बिक्री-कर मुक्ति-योजना, 1998[1]
(Sales-tax Exemption Scheme, 1998)

इस स्कीम में बिक्री-कर मुक्ति/आस्थगन की प्रेरणा की अवधि 11-14 वर्ष की गई है, जो पहले से अधिक है। प्रेरणाओं को घटते हुए (tapering) ढंग पर रखा गया है; जैसे प्रथम एक या दो वर्षों तक बिक्री-कर की प्रेरणा 100% रखी गई है, जो आगे के वर्षों में प्रति वर्ष घटते हुए क्रम में अन्तिम वर्ष में 30% तक पहुँच जाएगी। बिक्री-कर की प्रेरणाएँ ग्रस्त क्षेत्रों; जैसे गारमेण्ट्स व बुने हुए वस्त्रों, रत्न व जवाहरात, टेक्सटाइल्स, आदि के लिए, **बहुत प्रतिष्ठामूलक इकाइयों (very prestigious units) (स्थिर पूँजी निवेश 50 करोड़ रु. या अधिक तथा रोजगार 250 व्यक्तियों को), 5 विकास केन्द्रों के उद्योगों, ऑटो इकाइयों, प्रीमियर इकाइयों (न्यूनतम निवेश 150 करोड़ रु. व नियमित रोजगार 500 व्यक्तियों को)** आदि के लिए अधिक उदार रखी गई हैं। आगे की तालिका में इनका विवरण दिया गया है।

बिक्री-कर मुक्ति-योजना, 1998 की आवश्यक बातें—

क्र. सं.	इकाई की किस्म	कुल कर-देयता से मुक्ति के प्रतिशत की सीमा	स्थिर पूँजी-निवेश के प्रतिशत के रूप में अधिकतम छूट की सीमा	कर से मुक्ति की अधिकतम समय-सीमा
1	क्र.सं. 2 व 3 में वर्णित नई इकाइयों को छोड़कर अन्य इकाइयाँ तथा विस्तार व विविधीकरण वाली इकाइयाँ	प्रथम वर्ष में 100% द्वितीय वर्ष में 90% क्रमश: घटते हुए क्रम में अन्त में 11वें वर्ष में 30%	150 लाख रु. से अधिक वाले स्थिर पूँजी-निवेश के मामलों में 100% तक तथा 150 लाख रु. तक के लिए 125%	ग्यारह वर्ष

1 Concessions & Facilities to Industries in Rajasthan RIICO, updated upto July 1999, pp 4-5

क्र. सं.	इकाई की किस्म	कुल कर-देयता से मुक्ति के प्रतिशत की सीमा	स्थिर पूँजी-निवेश के प्रतिशत के रूप में अधिकतम छूट की सीमा	कर से मुक्ति की अधिकतम समय-सीमा
2	(अ) बुना हुआ कपड़ा (knit-wears) रत्न व जवाहरात, टैक्सटाइल, इलेक्ट्रोनिक्स व दूरसंचार, कम्प्यूटर सोफ्टवेयर, जूते (फुटवीयर्स) व चमडे का माल	प्रथम वर्ष में 100% द्वितीय वर्ष में 100% तृतीय वर्ष में 90% फिर क्रमश घटते ,हुए तेरहवें वर्ष में 30%	स्थिर पूंजीगत विनियोग (FCI) का 125%	तेरह वर्ष
	(आ) कौच व सिरेमिक की नई इकाइयाँ बहुत प्रतिष्ठा-मूलक इकाइयाँ			
3	मिनी सीमेंट प्लाट छोड़कर सीमेंट प्लांट की सभी श्रेणियाँ, पायोनियरिंग/प्रतिष्ठा मूलक/बहुत प्रतिष्ठामूलक/प्रीमियर इकाइयों सहित	कुल कर-देयता का 25%	स्थिर पूँजी विनियोग (FCI) का 100%	ग्यारह वर्ष
4	**रुग्ण इकाइयाँ** (अ) वे इकाइयाँ जिन्हें पहले कर-मुक्त या आस्थगन का लाभ नहीं मिला था।	क्रम संख्या 1 की नई इकाइयों को उपलब्ध होने वाले लाभ	क्रम संख्या 1 के अनुसार	ग्यारह वर्ष
	(आ) जिन्हें पहले कर मुक्ति/आस्थगन का लाभ मिल चुका है।	प्रथम वर्ष में 80% द्वितीय वर्ष में 70%, फिर घटते क्रम मे ग्यारहवें वर्ष में 10%	स्थिर पूँजी विनियोगों का 100% जहाँ इनकी राशि 150 लाख रु से अधिक हो, जहाँ विनियोगों की राशि 150 लाख रु तक हो वहाँ उसका 125%	ग्यारह वर्ष
5	पायोनियरिंग इकाइयाँ/प्रतिष्ठा मूलक इकाइयाँ/निर्यात-इकाइयाँ (जहाँ उत्पादन का न्यूनतम 50% निर्यात किया जाए।	प्रथम वर्ष में 100% द्वितीय वर्ष में 100%, बाद में घटते क्रम में 13वें वर्ष में 30%	स्थिर पूँजी-विनियोगो का 100%	तेरह वर्ष

नोट : विकास-केन्द्रों में स्थापित इकाइयों को स्थिर पूँजी विनियोग (FCI) का 20% और मिलेगा (कुल 145%), और एक अतिरिक्त वर्ष (कुल 14 वर्ष) तक का लाभ मिलेगा।

बिक्री कर-आस्थगन (deferment) की भी लगभग वे ही शर्तें हैं जो कर-मुक्ति की ऊपर बतलाई गई हैं। लेकिन उसमें श्रेणी 2(अ) व (आ) के लिए तथा श्रेणी 5 के लिए तेरहवें वर्ष में कुल कर-देयता के आस्थगन के प्रतिशत की दर 40% पर ही आ पाती है। बाकी सब शर्तें समान रहती हैं। औद्योगिक इकाई बिक्री कर-मुक्ति या आस्थगन में से एक को चुन सकती है। उद्योगों को मिलने वाली अन्य प्रेरणाओं या रियायतों जैसे ब्याज पर सब्सिडी, माल भाड़ा-सब्सिडी, DG सेट पर सब्सिडी, चुंगी से मुक्ति, आदि का विवरण अगले अध्याय में विस्तार से दिया गया है।

स्मरण रहे कि नई परिभाषा के अनुसार प्रीमियर इकाई में स्थिर पूँजी की राशि 150 करोड़ रु., बहुत प्रतिष्ठामूलक इकाई में 50 करोड़ रु. तथा प्रतिष्ठामूलक इकाई में 15 करोड़ रु. की गई है; तथा इनमें नियमित श्रमिकों की संख्या क्रमशः 500, 250 व 100 मानी गई है।

विकास केन्द्रों (Growth Centres) से सम्बन्धित नीति—22 अक्टूबर, 1989 को केन्द्रीय सरकार ने देश के विभिन्न भागों में 70 विकास-केन्द्र स्थापित करने की घोषणा की थी, जिसमें राजस्थान के लिए 4 विकास केन्द्र बीकानेर, (खारा), झालावाड़, आबूरोड व धौलपुर के लिए स्वीकृत किए गए थे। वर्ष 1996-97 में हमीरगढ़ (भीलवाड़ा) विकास-केन्द्र का काम भी हाथ में लिया गया। इस प्रकार कुल पांच विकास-केन्द्र हो गए हैं। जोधपुर के लिए एक मिनी-विकास केन्द्र बनाया जा रहा है तथा उदयपुर में भी एक विकास-केन्द्र स्थापित करने की योजना है। प्रत्येक विकास केन्द्र पर 30 करोड़ रुपये व्यय करने का प्रावधान रखा गया है, ताकि वहाँ इन्फ्रास्ट्रक्चर; जैसे पानी, बिजली, सड़क, रेल, संचार व अन्य आधारभूत सुविधाएँ विकसित की जा सकें। यह महसूस किया गया कि इन स्थानों में विभिन्न प्रकार की आधारभूत सुविधाओं के उपलब्ध होने पर औद्योगिक इकाइयों की स्थापना में सहूलियत होगी जिससे इनमें औद्योगिक विकास की गति तेज की जा सकेगी। इससे इन केन्द्रों के आसपास के इलाकों में भी आर्थिक विकास को प्रोत्साहन मिलेगा।

इन स्थानों के चुनाव के पीछे प्रमुख कारण यह था कि इनमें औद्योगिक विकास की भावी सम्भावनाएँ काफी हैं। उदाहरण के लिए, भीलवाड़ा ने देश के टेक्सटाइल क्षेत्र में काफी नाम कमा लिया है। यहाँ काफी संख्या में पावरलूम व प्रोसेस-गृह (process-houses) स्थापित हुए हैं, जिससे वस्त्र उद्योग को प्रोत्साहन मिला है। यहाँ खनिज पदार्थों के विकास के भी अवसर हैं। इस जिले के दक्षिण भाग से कोटा-चित्तौड़गढ़ ब्राडगेज लाइन गुजरती है जिससे यहाँ विकास के नये अवसर खुले हैं।

भीलवाड़ा सिन्थेटिक यार्न व कपड़े का एक बड़ा उत्पादन-केन्द्र बन चुका है। यहाँ पहले ही विभिन्न उद्योग-धन्धों में काफी पूँजी का विनियोजन हो चुका है। यहाँ विकास-केन्द्र के पनपने की काफी सम्भावनाएँ हैं।

बीकानेर जिले के बीच से इन्दिरा गाँधी नहर गुजरती है। यहाँ कृषि-आधारित उद्योगों के विकास की सम्भावनाएँ हैं। इस सम्बन्ध में बीछवाल का औद्योगिक क्षेत्र

उल्लेखनीय है। बीकानेर के विकास केन्द्र में कॉटन जिनिंग व प्रेसिंग फैक्ट्रियाँ, वनस्पति तेल, खण्डसारी व गुड़ की इकाइयों, ऊन उद्योग, डेयरी उद्योग, चमड़ा उद्योग, आदि कृषि व पशु-आधारित उद्योग पनप सकते हैं। बीकानेर में बड़ी रेल लाइन भी पहुँच गई है। अत: यहाँ विकास के नये अवसर उत्पन्न हुए हैं।

झालावाड़ जिले के एक भाग से बम्बई-दिल्ली ब्रॉडगेज लाइन गुजरती है। इसने नारंगी के उत्पादन में नाम कमाया है। आधारभूत सुविधाओं के विकास से इस विकास केन्द्र में नई औद्योगिक इकाइयाँ विकसित की जा सकती हैं।

आबू रोड में पहले से कई औद्योगिक इकाइयाँ स्थापित हो चुकी हैं जिनमें मार्बल, ग्रेनाइट, मिनी सीमेन्ट आदि की इकाइयाँ प्रमुख हैं। यह शहर अहमदाबाद के निकट है। यहाँ विकास-केन्द्र के पनपने की भारी सम्भावनाएँ हैं।

राज्य में अन्य स्थान भी विकास केन्द्र बनाए जाने के लायक हैं; जैसे बहरोड, बाँसवाड़ा, आदि। लेकिन उन पर साधनों की स्थिति को देखकर विकास के अगले चरण में विचार किया जाएगा।

विकास-केन्द्रों की स्थापना के कार्य की प्रगति को तेज करने की आवश्यकता है। रीको इस सम्बन्ध में आवश्यक कार्यवाही करने में संलग्न है। विकास-केन्द्र पर जो 30 करोड़ रुपये की धनराशि व्यय की जानी है, उसमें केन्द्रीय सरकार, राज्य सरकार व वित्तीय संस्थाएँ अपना-अपना योगदान देती हैं।

इसके अलावा भारत सरकार की एक स्कीम के अन्तर्गत **समन्वित आधारभूत ढाँचे के विकास [Integrated Infrastructure Development (IID)] का कार्य भी चलाया जा रहा है ताकि लघु उद्योगों को आवश्यक प्रोत्साहन दिया जा सके।** इसके लिए एक केन्द्र सांगरिया (जोधपुर) में तथा दूसरा नागौर में स्थापित किया जा रहा है।

राज्य में औद्योगिक नीति का विकास
(Evolution of Industrial Policy in the State)

राजस्थान में जनता सरकार की औद्योगिक नीति, जून 1978—राज्य में जनता सरकार ने 24 जून, 1978 को अपनी औद्योगिक नीति घोषित की थी। इसे भारतीय जनता पार्टी की सरकार की प्रथम औद्योगिक नीति माना गया है। इसका संक्षिप्त परिचय नीचे दिया जाता है। इसमें उद्योगों में प्राथमिकताओं का क्रम निश्चित किया गया था, क्षेत्रीय असन्तुलनों को कम करने के उपाय बतलाए गए थे, उद्योगों को दी जाने वाली *सहायताएँ व सुविधाएँ स्पष्ट की गई थीं और बीमार औद्योगिक इकाइयों को दी जाने* वाली सहायता के बारे में भी नीति निर्धारित की गई थी।

(i) उद्योगों में प्राथमिकता का क्रम—उद्योगों को प्राथमिकता के क्रम में खादी, ग्रामोद्योग, हथकरघा व हस्त-शिल्प को सबसे ऊपर रखा गया था। उसके बाद एक लाख रुपये तक की पूँजी वाले उद्योग, फिर क्रमश: 10 लाख रुपये, 50 लाख रुपये तथा अन्त में वृहद् आकार के उद्योग रखे गए थे।

(ii) क्षेत्रीय प्राथमिकता का क्रम—क्षेत्रीय असमानताएँ कम करने के लिए क्षेत्रीय प्राथमिकताएँ तय की गई थीं। इनका क्रम इस प्रकार रखा गया था : पहले गाँव, फिर अर्द्ध-शहरी क्षेत्र तथा अन्त में शहर। नये, सार्वजनिक व संयुक्त क्षेत्र के उद्योग क्षेत्रीय आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर लगाने का निश्चय किया गया था।

स्थानीय साधनों पर आधारित उद्योगों को प्रोत्साहन देने का निश्चय किया गया था। श्रम-प्रधान उद्योगों को पूँजी-प्रधान उद्योगों की तुलना में अधिक महत्त्व दिया गया था।

***(iii)* सार्वजनिक उद्योग**—सार्वजनिक क्षेत्र के उद्योगों की कार्यकुशलता में सुधार करने के लिए राजस्थान प्रबन्धक सेवा-संवर्ग (Rajasthan Management Cadre) बनाने का प्रस्ताव किया गया था। एक ब्यूरो ऑफ पब्लिक एन्टरप्राइजेज बनाने का प्रस्ताव किया गया था जो सार्वजनिक क्षेत्र की कार्यकुशलता व कार्य-प्रणाली की निरन्तर समीक्षा करता रहेगा। संयुक्त क्षेत्र में उद्योगों को प्रोत्साहित करने के लिए इक्विटी पूँजी में 10% सरकारी सहयोग की नीति घोषित की गई थी।

***(iv)* बीमार औद्योगिक इकाइयों के प्रति नीति**—जिस औद्योगिक इकाई में कुल क्षमता का 20% से कम उत्पादन हो तथा जो घाटे में चल रही हो व जिसने पिछले तीन वर्ष से ब्याज या मूलधन का भुगतान न किया हो, वह बीमार या रुग्ण इकाई मानी गई थी। इनके सम्बन्ध में यह कहा गया था कि ऐसी इकाई को उद्योग-निदेशक प्रमाण पत्र देगा। रुग्णता का कारण खोजा जाएगा। राजस्थान वित्त निगम ऐसी इकाइयों के ऋण के भुगतान की दूसरी तिथि निर्धारित करेगा (Reschedule)। ऐसी इकाइयों से की गई सरकारी खरीद का भुगतान एक माह के भीतर कर दिया जाएगा। सरकारी खरीद में भी ऐसी इकाइयों के माल को प्राथमिकता दी गई थी।

***(v)* नई सहायताएँ व सुविधाएँ**—औद्योगिक नीति में यह भी कहा गया था कि उद्योगों के लिए आवश्यक गोचर भूमि जिलाधीश ग्राम पंचायत की सिफ़ारिश पर रूपान्तरित (Convert) करेंगे। स्वयं का उद्योग लगाने पर किसान की खातेदारी की 500 वर्गमीटर भूमि का रूपान्तरण अपने आप माना गया था। इसके लिए केवल परिवर्तन-शुल्क जमा करना आवश्यक माना गया था। दाल मिल, चावल मिल आदि को 25 हजार से कम आबादी वाले ग्रामीण क्षेत्रों में स्थापित करने पर बिजली खर्च में 25% सब्सिडी देने की नीति घोषित की गई थी।

बाद में 1980 में राज्य में कांग्रेस (आई) सरकार पर राजस्थान के औद्योगीकरण की जिम्मेदारी आ गई थी। विभिन्न प्रकार की रियायतों व सुविधाओं का लाभ मिलने से राज्य औद्योगीकरण की दिशा में आगे बढ़ा था। रीको, राजस्थान वित्त निगम, राजस्थान लघु उद्योग निगम, उद्योग-निदेशालय, आदि राज्य में औद्योगीकरण को आगे बढ़ाने का भरपूर प्रयास करते रहे हैं। उद्योगों के विकास के लिए केन्द्रीय पूँजीगत सब्सिडी व राज्यीय पूँजीगत सब्सिडी का विस्तार किया गया था। विदेशों में बसे भारतीयों को राजस्थान में पूँजी लगाने के लिए आकर्षित किया गया था।

सातवीं पंचवर्षीय योजना में औद्योगिक विकास की व्यूहरचना (Industrial Strategy During Seventh Plan)—राज्य के योजना विभाग ने सातवीं पंचवर्षीय योजना (1985-90) के प्रारूप में औद्योगिक विकास की व्यूहरचना में निम्न बातों का समावेश किया था।

औद्योगिक नीति के उद्देश्य—सातवीं योजना में इस बात पर बल दिया गया था कि औद्योगिक नीति के अन्तर्गत राज्य में प्रचुर मात्रा में उपलब्ध साधनों का उपयोग किया जाएगा, बड़े पैमाने पर रोजगार के अवसर उत्पन्न किए जाएँगे, प्रादेशिक असन्तुलनों को कम किया जाएगा, परम्परागत शिल्पकलाओं का विकास किया जाएगा, उद्यमकर्ताओं को सहायता दी जाएगी तथा औद्योगिक इन्फ्रास्ट्रक्चर का विकास किया जाएगा।

(1) रोजगारोन्मुख उद्योगों के विकास को सर्वोच्च प्राथमिकता देने पर बल दिया गया था। इसके लिए खादी व ग्रामोद्योगों, हथकरघा, दस्तकारियों, अति लघु व लघु उद्योगों को इसी क्रम में प्राथमिकता देने पर जोर दिया गया था।

(2) जिला उद्योग केन्द्रों के स्टाफ का स्वरूप बदलने की आवश्यकता स्वीकार की गई थी। इसके लिए अतिरिक्त-कार्यालय मैनेजरों व प्रोजेक्ट-मैनेजरों को नियुक्त करने पर बल दिया गया था।

(3) श्रेणी 'A', 'B', 'C' के जिलों के लिए विनियोग-सब्सिडी की व्यवस्था जारी रखी गई थी। बिक्री-कर की एवज में ब्याज-मुक्त कर्ज की स्कीम काफी आकर्षक बनाई गई थी। अत: इसे योजना की स्कीमों में शामिल करने का सुझाव दिया गया था। इसके अलावा बिक्री-कर से मुक्ति/ आस्थगन की स्कीम, 1987 तथा बाद में 1989 में घोषित की गई थी।

(4) यह कहा गया था कि राजस्थान लघु उद्योग निगम गलीचा प्रशिक्षण केन्द्रों, परम्परागत दस्तकारियों, एयर कारगो कॉम्पलेक्स व निर्यात-संवर्द्धन कार्यों को बढ़ावा देगा।

(5) खादी व ग्रामीण उद्योगों के उत्पादन व रोजगार में वृद्धि करने पर जोर दिया गया था।

(6) मार्च, 1984 में राजस्थान हथकरघा विकास निगम (RHDC) स्थापित किया गया ताकि सहकारिता के दायरे से बाहर रहने वाले बुनकरों को मदद दी जा सके। निगम बुनकरों को अधिक रोजगार उपलब्ध कराता है तथा कारगो की गुणवत्ता (क्वालिटी) में सुधार करता है। उनको कच्चा माल देता है तथा निर्मित माल की बिक्री की व्यवस्था करता है।

(7) राज्य के कुछ जिलों में रेशम के उद्योग को तथा टसर के विकास के लिए पौधे लगाने को महत्त्व दिया गया। राज्य में उनके विकास के समुचित अवसर विद्यमान हैं। बाद में मार्च 1987 में औद्योगीकरण का एक व्यापक कार्यक्रम घोषित किया गया।

शेखावत सरकार की औद्योगिक नीति 1990

भारतीय जनता पार्टी व जनता दल की सरकार (मुख्यमंत्री श्री भैरोंसिंह शेखावत) ने राजस्थान की औद्योगिक नीति दिसम्बर, 1990 में घोषित की थी, जिस पर जनवरी, 1991 से कार्यारम्भ हो गया था। **यह भारतीय जनता पार्टी की सरकार की द्वितीय औद्योगिक नीति मानी जाती है।** इस नीति का विवेचन नीचे किया जाता है—

उद्देश्य—*(i)* खनन, कृषिगत व अन्य साधनों का अधिकतम उपयोग करना ताकि राज्य की आय में उद्योगों का योगदान बढ़े, *(ii)* अतिरिक्त रोजगार के अवसर उत्पन्न करना, *(iii)* प्रादेशिक असंतुलन समाप्त करना, *(iv)* उद्यमकर्ता को प्रोत्साहन देना तथा *(v)* औद्योगीकरण के माध्यम से राज्य के वित्तीय साधन बढ़ाना ताकि अधिक मात्रा में विकास कार्यक्रम संचालित किए जा सकें।

प्राथमिकताएँ—औद्योगिक नीति में प्राथमिकताएँ इस क्रम में सुझाई गई थीं—

(i) सर्वोच्च प्राथमिकता खादी व ग्रामीण उद्योग, हथ-करघा, दस्तकारियों व चमड़ा आधारित इकाइयों को, *(ii)* उसके बाद टाइनी उद्योग जिनमें स्थिर पूँजी का विनियोग 5 लाख रुपयों तक हो, *(iii)* तत्पश्चात् लघु पैमाने के उद्योग जिनमें स्थिर पूँजी का विनियोग 60 लाख रुपयों तक होगा, सहायक उद्योग जिनमें पूँजी के लिए 75 लाख रुपये की सीमा होगी तथा *(iv)* अन्त में मध्यम व बड़े पैमाने के उद्योग।

निम्न उद्योगों को विशेष प्रोत्साहन दिया जाएगा—इलेक्ट्रॉनिक्स, बायो टेक्नोलॉजी, एग्रो फूड प्रोसेसिंग, साधन-आधारित, श्रम-गहन, कम-ऊर्जा तथा कम पानी का उपयोग करने वाले उद्योग।

पावर का विकास निजी क्षेत्र में भी किया जाएगा। 33 के.वी से 220 के वी. पर बिजली लेने वालों को 1 5% से 10% विद्युत-प्रशुल्क रियायत व 1990-95 की अवधि में पावर-कनेक्शन प्राप्त कई औद्योगिक इकाइयों के लिए 3000 के वी तक के भार पर 31-3-1995 तक कोई पावर कटौती नहीं होगी। लघु व मध्यम इकाइयों से एक वर्ष तक कोई न्यूनतम चार्जेज नहीं लिए जाएँगे।

पिछले तीन माह के अधिकतम उपभोग के 15 दिन के उपभोग की नकद सिक्यूरिटी मनी ही जमा की जा सकेगी। डीजल जेनरेटिंग सैट की लागत पर 15% या 50 हजार रुपये तक (जो भी कम हो) नकद सब्सिडी की राशि मिल सकेगी।

उद्योग के लिए पूँजी-विनियोग सब्सिडी—*(i)* सभी नये मध्यम व बड़े पैमाने के उद्योगों की स्थिर पूँजी के विनियोग पर 15% सब्सिडी की दर से (एक इकाई को 15 लाख रुपयों तक अधिकतम राशि), *(ii)* निम्नलिखित श्रेणी के उद्योगों को 20% की दर से सब्सिडी (एक इकाई को अधिकतम 20 लाख रुपयों तक), यह सुविधा लघु व सहायक उद्योगों, साधन-आधारित उद्योगों व प्रवासी भारतीयों द्वारा स्थापित उद्योगों तथा 100% निर्यातोन्मुख उद्योगों को दी गई।

29 अगस्त, 1992 की एक अधिसूचना के अनुसार, राज्य पूँजी-विनियोजन सब्सिडी की स्कीम को अधिक आकर्षक व उदार बनाया गया। इसके अनुसार

जनजाति व NID में लघु पैमाने की इकाइयों की सब्सिडी के लिए नई दर 30% (एक इकाई के लिए अधिकतम सीमा 30 लाख रुपये तक) तथा जनजाति क्षेत्रों व उद्योग रहित जिलों में मध्यम व बड़े पैमाने के उद्योगों के लिए नई दर 20% (एक इकाई के लिए अधिकतम सीमा 20 लाख रुपये तक) कर दी गई । इसी प्रकार प्रवासी भारतीयों के लिए भी नई सब्सिडी की दर 20% (एक इकाई के लिए अधिकतम राशि 35 लाख रुपये) कर दी गई ।[1]

:2% की अतिरिक्त सब्सिडी (2 लाख रुपये अधिकतम) श्रम-गहन उद्योगों को दी गई जिनमें प्रति श्रमिक विनियोग 35 हजार रुपये से कम हो (फैक्ट्री अधिनियम, 1948 में पंजीकृत) ।

यह विनियोग-सब्सिडी जोधपुर, उदयपुर, अजमेर, अलवर व भीलवाड़ा शहरों की म्युनिसिपल व शहरी सुधार-सीमाओं में स्थापित उद्योगों तथा जयपुर व कोटा शहरों की शहरी-संकुलन-सीमाओं (Urban agglomeration limits) में नहीं दी गई । बाद में इस सम्बन्ध में यह रियायत घोषित की गई कि रीको के औद्योगिक क्षेत्रों में स्थापित औद्योगिक इकाइयों को यह सब्सिडी सुविधा प्राप्त होगी । यह एक महत्त्वपूर्ण घोषणा थी जिसका इन क्षेत्रों के औद्योगिक विकास पर काफी अनुकूल प्रभाव पड़ने की आशा उत्पन्न हो गई थी । लेकिन इससे राज्य सरकार पर सब्सिडी का वित्तीय भार काफी बढ़ गया था ।

इलेक्ट्रोनिक्स व टेलीकम्यूनिकेशन्स जैसे उद्योगों को समस्त राज्य में पूँजी-विनियोग-सब्सिडी उपलब्ध की गई । साथ में यह भी स्पष्ट किया गया कि जब केन्द्रीय सब्सिडी की स्कीम लागू हो जाएगी तब राज्य सब्सिडी स्कीम में आवश्यक संशोधन किया जाएगा और केन्द्रीय सब्सिडी की सीमा तक राज्य सब्सिडी उपलब्ध नहीं की जाएगी ।

बिक्री-करों में रियायतें (Sales Tax Conces-sions)—औद्योगिक नीति, 1990 में बिक्री करों में जो व्यापक रियायतें घोषित की गईं, वे इस प्रकार थीं—

(i) 1987 व 1989 की बिक्री कर-प्रेरणा व आस्थगन की स्कीम नये उद्योगों व पर्याप्त विस्तार व विविधीकरण करने वाली इकाइयों पर लागू की गई । इनका कार्य-काल जो 31 मार्च, 1992 को समाप्त होने वाला था, वह 31 मार्च, 1995 तक बढ़ा दिया गया ।

(ii) जो औद्योगिक इकाइयाँ वर्तमान स्थिर पूँजीगत विनियोग के 100% या अधिक तक विस्तार या विविधी-करण करने जा रही हैं, और अपना उत्पादन वर्तमान लाइसेंसशुदा/पंजीकृत क्षमता के 100% या अधिक तक बढ़ा लेती हैं, उन्हें भी 1989 की बिक्री कर प्रेरणा/आस्थगन स्कीमों के अन्तर्गत 75% तक कर से मुक्ति या आस्थगन का लाभ दिया गया, जैसा कि एक नई इकाई को दिया गया था ।

---

1 RIICO News letter, October, 1992, p 6 जनजाति क्षेत्रो में बांसवाड़ा, डूँगरपुर व उदयपुर जिलो के कुछ क्षेत्रों, चित्तौड़गढ़ जिले में प्रतापगढ़ तथा सिरोही जिले में आबू रोड खण्ड को बढ़ी हुई सब्सिडी का लाभ दिया गया तथा उद्योगविहीन जिलों (NIDs) में सिरोही, जैसलमेर, चूरू व बाड़मेर जिलो को यह लाभ दिया गया ।

(iii) नये इलेक्ट्रोनिक्स उद्योगों को बिक्री कर से मुक्ति व आस्थगन का लाभ उनके स्थिर पूँजीगत विनियोग तक ही सीमित नहीं रखा गया। नई पायोनियरिंग (विनियोग सीमा 10 करोड़ रुपये तक) तथा प्रतिष्ठामूलक (prestigious) (विनि-योग सीमा 25 करोड़ रुपये तक) इलेक्ट्रोनिक्स इकाइयों को बिक्री कर की रियायत 9 वर्ष तक दी गई, चाहे वे कहीं भी स्थित क्यों न हों।

(iv) निम्न उद्योगों में मशीनरी की खरीद पर नई इकाइयों को आठवीं योजना-काल में बिक्री-कर के भुगतान से छूट दी गई—सीमेंट, तम्बाकू, वस्त्र, चीनी, इलेक्ट्रोनिक्स, फूड प्रोसेसिंग तथा कृषिगत पदार्थों पर आधारित इकाइयाँ।

(v) कुछ उद्योगों के कच्चे माल पर बिक्री कर 3% से कम किया गया। उदाहरण के लिए, ताँबा, लोहा व इस्पात व कच्चे ऊन पर बिक्री कर 1.5% लगाया गया। नमदे के निर्माण में प्रयुक्त कच्चे ऊन पर कोई बिक्री कर नहीं लगाया गया। वनस्पति घी के निर्माण में प्रयुक्त खाद्य तेलों पर यह 1.5% रखा गया।

(vi) राज्यों में कार्यरत केन्द्रीय सरकार के विभागों द्वारा खरीदी जाने वाली कई वस्तुओं पर बिक्री कर की दर 4% रखी गई; जैसे मोटर गाड़ियाँ, टाइपराइटर्स, रेफ्रीजेरेटर्स, सिलाई की मशीन, आदि।

(vii) अति प्रतिष्ठामूलक या बहुत प्रतिष्ठामूलक (very prestigious) उद्योगों (जिनमें स्थिर पूँजी का विनियोग 100 करोड़ रुपये या अधिक होता है) को बिक्री कर में जो अतिरिक्त प्रेरणाएँ मुक्ति-स्कीम (Under exemption scheme) में दी गई, वे इस प्रकार हैं—जो अपने कुल उत्पादन का 90% तक ब्रांच-ट्रान्सफर के माध्यम से अन्य राज्यों में हस्तान्तरित कर सकेंगी, उन्हें कर-दायित्व के 90% तक बिक्री कर से मुक्त रखा गया। इन्हें श्रेणी (1) के जिलों में 11 वर्ष तक तथा श्रेणी (2) के जिलों में बिक्री कर की 1989 की स्कीम के मुताबिक छूट दी गई तथा इलेक्ट्रोनिक्स इकाइयों को ग्यारह वर्ष तक के लिए बिक्री कर से मुक्त रखा गया, वे चाहे जहाँ स्थित हों। पायोनियरिंग व प्रेस्टीजियस इकाइयों को अपने कुल उत्पादन का 80% तक राज्य के बाहर ब्रान्च-ट्रान्सफर के मार्फत बेचने की छूट दी गई तथा अन्य लघु, मध्यम व बड़े पैमाने के उद्योगों के लिए इनकी अधिकतम सीमा 60% रखी गई। इनका उल्लेख पहले भी तालिका में दिया जा चुका है।

(viii) जेम्स व स्टोन्स को बिक्री कर से मुक्त किया गया ताकि इनका निर्यात बढ़ सके।

(ix) बिक्री कर की एवज में 7 वर्ष के लिए ब्याज-मुक्त कर्ज की एक नई स्कीम लागू की गई। इसमें वे इकाइयाँ शामिल की गईं जिनको पहले की अवधि में बिक्री-कर से अन्य किसी स्कीम के तहत लाभ नहीं मिल रहा था।

चुंगी से छूट—उत्पादन आरम्भ होने से पाँच वर्ष तक की अवधि के लिए नए उद्योगों को आठवीं योजनावधि में कच्चे माल पर चुंगी कर से छूट दी गई थी। उन्हें आयातित मशीनरी पर चुंगी कर से मुक्त रखा गया था। यह कहा गया था कि विस्तार के लिए आयोजित मशीनरी पर भी चुंगी नहीं देनी होगी। कृषि-आधारित लघु उद्योगों को सीधे किसान से अपनी जरूरत का माल खरीदने पर मण्डी कर से मुक्त रखा गया था।

यह कहा गया था कि राजस्थान लघु उद्योग निगम कच्चे माल की सप्लाई बढ़ाने का प्रयास करेगा। वितरण नीति में कुटीर उद्योगों के कच्चे माल की आवश्यकताओं का विशेष ध्यान रखा गया था। इनके लिए आयातित कच्चे माल की व्यवस्था भी बढ़ाई गई थी। हथकरघा बुनकरों, दस्तकारों तथा कारीगरों के लिए भी कच्चे माल की व्यवस्था बढ़ाई गई थी।

विपणन—*राजस्थान का स्वयं का औद्योगिक वस्तुओं का बाजार बड़ा नहीं है।* इसलिए उद्योगों को प्राय: विपणन की जटिल समस्या का सामना करना पड़ता है। औद्योगिक नीति में विपणन के सम्बन्ध में निम्न उपाय सुझाए गए थे—

(i) वित्त विभाग के केन्द्रीय स्टोर्स क्रय-संगठन ने सरकारी विभागों द्वारा लघु पैमाने के उद्योगों से 130 वस्तुओं को खरीदने के लिए अब तक नियम बनाए थे। इनमें 34 वस्तुओं को और जोड़ा गया। राज्य के मानक स्तर के लघु उद्योगों को 15% का कीमत-अधिमान (Price preference) दिया गया, और अन्य को 10% का कीमत-अधिमान दिया गया था। ये लाभ राज्य के विभिन्न विभागों या स्थानीय संस्थाओं के द्वारा की जाने वाली खरीद पर भी उपलब्ध किए गए थे।

(ii) यह व्यवस्था भी की गई कि यदि उद्योगों के संगठन अपने माल की बिक्री के लिए कम्पनी बनाते हैं तो राज्य सरकार उनको भी आवश्यक सहायता देगी।

(iii) राजस्थान लघु उद्योग निगम एक व्यापार केन्द्र व औद्योगिक म्यूजियम की स्थापना करेगा जिनके माध्यम से लघु उद्योगों की वस्तुओं की नुमाइश व विपणन की व्यवस्था की जाएगी।

अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति के उद्यमकर्ताओं के लिए विशेष सहायता

इनके द्वारा औद्योगिक इकाइयाँ स्थापित करने के लिए विशेष सुविधाओं का विस्तार किया गया। रीको के औद्योगिक क्षेत्रों में इनके द्वारा खरीदे जाने वाले 4 हजार वर्गमीटर तक के भू-खण्डों की खरीद पर 50% तक रिबेट दी जाती है। राजस्थान वित्त निगम एक लाख रुपये तक के कर्ज पर ब्याज में 2% की रिबेट देता है, और शिक्षित युवकों के लिए स्वरोजगार की स्कीम में इनके लिए 30% का आरक्षण दिया गया था। राजस्थान राज्य विद्युत मण्डल इनको पावर कनेक्शन देने में प्राथमिकता देता है। जनजाति उप-योजना में स्थापित उद्योगों के लिए राजस्थान वित्त निगम ने ब्याज पर रिबेट 0.5% से बढ़ाकर 1% कर दी। यह कहा गया कि रीको भी इतनी ही रिबेट देगा। जनजाति उप-योजना क्षेत्र में स्थापित होने वाले उद्योगों में रीको शेयर पूँजी में 10% हिस्सा लेता है। अनुसूचित जाति के उद्यमकर्ताओं द्वारा स्थापित उद्योगों में 10% शेयर प्रदान करने के लिए एक पृथक् शेयर पूँजी कोष स्थापित किया गया था।

औद्योगिक रुग्णता से सम्बन्धित नीति

(i) राजस्थान राज्य विद्युत मण्डल रुग्ण इकाइयों को न्यूनतम चार्जेज व पावर कटौती से मुक्त करने की सुविधा देता है। रुग्णता का सर्टिफिकेट जारी किया जाता है जिसे जिला

स्तर पर जारी करने की व्यवस्था की गई। रुग्ण इकाइयों को दो वर्ष के लिए पावर कटौती से मुक्त रखा गया।

(ii) रुग्ण औद्योगिक इकाइयों का सर्वेक्षण करने की व्यवस्था की गई तथा रुग्णता के कारणों का पता करके इनके पुनर्स्थापन की व्यवस्था की गई।

(iii) औद्योगिक और वित्तीय पुनर्गठन बोर्ड (BIFR) के विचाराधीन रुग्ण इकाइयों को निम्न रियायतें दी गईं—

(अ) पुनर्वास की अवधि में पाँच वर्ष तक विद्युत-शुल्क का स्थगन, ब्याज, जुर्माने व दण्डस्वरूप ब्याज (Penal interest) को माफ करना।

(आ) बिक्री कर, क्रय-कर, विद्युत-शुल्क आदि का पुनर्निर्धारण तथा पुनर्वास अवधि में स्थगन-राशि पर ब्याज के भुगतान से मुक्ति प्रदान करना।

(इ) रुग्ण इकाई को अतिरिक्त भूमि को बेचकर प्राप्त राशि का उपयोग उस इकाई के पुनर्वास की योजना के आधार पर ब्याज मुक्त कर्ज के रूप में किया जा सकता है। भूमि का बेचान राज्य सरकार द्वारा अधिकृत अधिकारी या संस्था के मार्फत करना होगा।

(ई) कर्ज लेने के लिए सरकार द्वारा रुग्ण इकाई की भूमि को वित्तीय संस्था को गिरवी रखने की इजाजत समय पर दे दी जाएगी।

(उ) राजस्थान वित्त निगम ने एक खिड़की (Single window) पर सहायता देने की स्कीम लागू की जिसमें स्थिर पूँजी की 5 लाख रुपये की सहायता के साथ 2.5 लाख रुपये की कार्यशील पूँजी भी दी जा सकती है। इससे रुग्ण लघु इकाइयों को कार्यशील पूँजी की सुविधा भी मिलने लगी।

(ऊ) रुग्ण लघु इकाइयों को बिक्री कर प्रेरणा/आस्थगन के अन्तर्गत मिलने वाले लाभ जारी रखे गए।

(ए) रुग्ण लघु इकाइयों के पुनर्वास के लिए मार्जिन मुद्रा से सम्बन्धित कर्ज की स्कीम अधिक इकाइयों पर लागू करने के लिए अधिक कोष प्रदान करने पर जोर दिया गया।

यह आशा की गई कि इन विभिन्न उपायों को लागू करने से रुग्ण इकाइयों की पुनर्स्थापना में मदद मिलेगी जिससे उत्पादन व रोजगार को बनाए रखना सुगम होगा।

औद्योगिक नीति में औद्योगिक माल का निर्यात बढ़ाने तथा प्रवासी भारतीयों को औद्योगिक विनियोग के लिए प्रोत्साहित करने के लिए उपाय सुझाए गए थे। इस प्रकार दिसम्बर, 1990 की औद्योगिक नीति के माध्यम से औद्योगिक समस्याओं को हल करने की दिशा में कई प्रकार के आवश्यक कदम उठाए गए थे।

सितम्बर 1991 में उद्योगों के विकास के लिए पाँच नई रियायतें घोषित की गईं जो इस प्रकार हैं—

(1) बिक्री कर से मुक्त या आस्थगन की स्कीम के लिए सम्पूर्ण राज्य को पिछड़ा घोषित कर दिया गया। पहले यह श्रेणी I व II जिलों में विभाजित किया गया था एवं श्रेणी II के जिलों में बिक्री-कर से मुक्ति या आस्थगन की दर श्रेणी I के जिलों की तुलना में नीची रखी गई थी।

बिक्री कर से मुक्ति या आस्थगन की अवधि आमतौर पर 2 वर्ष के लिए बढ़ाई गई (जैसे 5 से 7 वर्ष एवं 7 वर्ष से 9 वर्ष तथा 9 वर्ष से 11 वर्ष आदि) । अतः इसे अधिक उदार बनाया गया ।

(2) 100% निर्यातोन्मुख इकाइयों (Export-oriented units) को अतिरिक्त लाभ दिए गए, जैसे अति-प्रतिष्ठामूलक इकाई को 11 वर्ष तक क्रय-कर से छूट, 5 वर्ष तक विद्युत-शुल्क की देयता से छूट, 11 वर्ष तक बिक्री कर की देयता से छूट, आदि ।

(3) प्रवासी भारतीयों (NRIs) को स्थिर विनि- योग-सब्सिडी 20% (अधिकतम राशि एक इकाई को 35 लाख रुपये) देने का निर्णय लिया गया । NRI की इकाई वह मानी गई जिसमें कुल इक्विटी में वह कम से कम 40% इक्विटी विदेशी करेंसी के रूप में प्रदान करे ।

(4) स्टेनलेस स्टील की इकाइयों को अतिरिक्त बिक्री कर सम्बन्धी रियायतें दी गई । इन पर बिक्री कर 8% से घटाकर 2% किया गया । स्टेनलेस स्टील की शीटों पर क्रय-कर 3% से घटाकर 1% किया गया ।

(5) सभी टाइनी औद्योगिक इकाइयों व कुछेक लघु उद्योगों को राजस्थान प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड (RPCB) से 'No Objection Certificate' (NOC) लेने की शर्त से भी मुक्ति दी गई ।

मार्च 1995 में घोषित अतिरिक्त बिक्री कर की प्रेरणाएँ[1]

(1) 31 मार्च, 1997 तक स्थापित होने वाले सभी नए उद्योगों की प्लांट व मशीनरी को बिक्री-कर से मुक्त रखा गया । (2) आस्थगित बिक्री कर की राशि को अब उद्योगों के लिए ब्याजमुक्त कर्ज में बदल दिया गया । (3) विस्तार (expansion) के मामलों में बिक्री-कर प्रेरणा-स्कीम में अब छूट की सीमा 75% कर दी गई, जो पहले 60% हुआ करती थी । (4) बिक्री-कर की प्रेरणा अब पैकेजिंग के सामान पर भी दी जाने लगी । (5) निर्यात के लिए आभूषण-निर्माताओं द्वारा खनिज व धातु व्यापार निगम (MMTC) से खरीदी गई सोने व चाँदी की खरीद को क्रय-कर से मुक्त किया गया । (6) कच्चे माल के रूप में प्रयुक्त चमड़ा व खालों तथा कच्चे ऊन को बिक्री-कर से मुक्त किया गया । (7) सभी दस्तकारी की मदों को बिक्री-कर से पूर्णतया मुक्त किया गया ।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट होता है कि 1990 की औद्योगिक नीति काफी व्यापक व व्यावहारिक किस्म की थी और इससे राज्य में साधन-आधारित उद्योगों (Resource-based industries) तथा इलेक्ट्रोनिक्स उद्योगों के विकास को प्रोत्साहन मिला था । इसमें समस्त राज्य में उद्योगों के लिए पूँजी-विनियोग सब्सिडी का प्रावधान किया गया था, जिससे राजस्थान भी औद्योगिक प्रेरणाओं व रियायतों की दृष्टि से पहली बार न केवल अन्य राज्यों के समकक्ष आ गया, बल्कि कुछ सीमा तक उनसे भी आगे निकल

1 RIICO, Concessions & Incentives of Industries, January 1996, p. 12

गया था। सितम्बर, 1988 में केन्द्रीय सब्सिडी के बंद हो जाने के बाद राज्यों के औद्योगिक क्षेत्र में शिथिलता का वातावरण छा गया था। अन्य राज्यों ने केन्द्रीय सब्सिडी के बदले में राज्य सब्सिडी स्कीम को लागू करके इस अभाव की काफी सीमा तक पूर्ति कर ली थी। लेकिन इस दृष्टि से राजस्थान पीछे रह गया था। 1990 की औद्योगिक नीति ने इस अभाव की पूर्ति की और उद्यमकर्ता राज्य में उद्योगों की स्थापना के लिए आगे आने लगे।

राज्य की औद्योगिक नीति, 1994*

औद्योगिक नीति के उद्देश्य इस प्रकार रखे गए—*(i)* राज्य का अधिक तेज गति से औद्योगीकरण करना, *(ii)* राज्य के संसाधनों का अधिकतम उपयोग करना, *(iii)* अतिरिक्त रोजगार के अवसरों का सृजन करना, *(iv)* प्रादेशिक असंतुलनों को हटाना, *(v)* निर्यात-संवर्धन करना तथा *(vi)* खादी व ग्रामीण उद्योगों, हथकरघा, दस्तकारी व लघु तथा अति लघु (यानी) उद्योगों को सहायता प्रदान करना।

व्यूहरचना (Strategy)—इन उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए अग्र **व्यूहरचना (Strategy)** व उपाय अपनाने पर बल दिया गया—

(i) विनियोगों के लिए वातावरण सुधारना, *(ii)* भौतिक व सामाजिक आधार-ढाँचे (infrastructure) का विस्तार करना तथा इसे अधिक सुदृढ़ बनाना, *(iii)* नियम व कार्य-विधियों को सरल बनाना, *(iv)* उद्योगों को शीघ्रता से इन्पुट उपलब्ध कराना तथा उनके लिए विभिन्न प्रकार की स्वीकृतियों के मामलों को तेजी से निपटाना, *(v)* इन्फ्रास्ट्रक्चर के विकास में निजी क्षेत्र का योगदान बढ़ाना, *(vi)* रोजगारोन्मुख विनियोगों तथा ग्रामीण व लघु उद्योगों को प्रोत्साहन देना, *(vii)* दक्ष मानवीय शक्ति की उपलब्धि में सुधार करना तथा गुणवत्ता सुधार में मदद देना तथा *(viii)* मुख्य क्षेत्रों पर अधिक ध्यान केन्द्रित करना। इसमें निर्यातों व राज्य के संसाधन-आधारित विकास को उच्च प्राथमिकता देना।

औद्योगिक विकास नीति के उपर्युक्त उद्देश्यों व व्यूहरचना को कारगर बनाने के लिए कार्य-विधि व विभिन्न प्रेरणाओं में प्रमुखतया निम्न परिवर्तन किए गए—

1. आधार-ढाँचा (Infrastructure)

(i) सरकार ने निजी क्षेत्र को औद्योगिक क्षेत्र की स्थापना के लिए प्रोत्साहन दिया। लेकिन यह शर्त रखी कि प्रस्तावित क्षेत्र रीको के निकटतम औद्योगिक क्षेत्र से 10 किलोमीटर से ज्यादा दूरी पर स्थित होना चाहिए।

(ii) भूमि का औद्योगिक कार्यों के लिए रूपान्तरण (Conversion)–5 हैक्टेयर तक का भू-क्षेत्र सम्बन्धित अधिकारी (Prescribed authority) द्वारा आवेदन की प्राप्ति के 30 दिन में औद्योगिक कार्य के लिए रूपान्तरित कर दिया जाएगा। यदि इस अवधि में आदेश जारी न हो सका तो स्वीकृति स्वत: दी हुई मानी जाएगी।

* Industrial Policy 1994, GOR, June 15, 1994

5 हैक्टेयर से 20 हैक्टेयर तक के भू-क्षेत्र के रूपान्तरण के अधिकार जिलाधीश के कार्यक्षेत्र में माने गए। इससे ऊपर व 30 हैक्टेयर तक के लिए अधिकार खण्ड-कमिश्नर (Divisional Commissioner) के माने गए।

नमक वाले क्षेत्र (Saline area) के आवंटन के नियम आसान बनाए गए। इनकी लीज की अवधि 10 वर्ष से बढ़ाकर 20 वर्ष कर दी गई।

(iii) **राज्य में पावर की सृजन-क्षमता 31 मार्च, 1994 को 2813 मेगावाट हो गई थी।** इसके बाद कोटा थर्मल पावर स्टेशन की इकाई-V चालू की गई जिससे 210 मेगा-वाट सृजन-क्षमता और जुड़ी है। 1 अप्रैल, 1994 को राष्ट्रीय थर्मल पावर निगम (NTPC) से समझौता होने से 250 मेगावाट अतिरिक्त पावर प्राप्त हो सकी थी। भविष्य में निम्न परियोजनाओं से पावर प्राप्त करने का प्रावधान किया गया—सूरतगढ़ थर्मल पावर स्टेशन (2 × 250 मेगावाट) रामगढ़ गैस पावर स्टेशन (विस्तार) (35.5 मेगावाट), बरसिंगसर लिग्नाइट थर्मल पावर स्टेशन (2 × 120 मेगावाट) तथा धौलपुर पावर स्टेशन (3 × 250 मेगावाट)। पावर-सृजन में निजी क्षेत्र की भागीदारी को बढ़ाने का भी कार्यक्रम रखा गया।

औद्योगिक इकाइयों को कैप्टिव पावर संयंत्र (Captive Power Plants) लगाने की सुविधा दी गई और उनकी अतिरिक्त पावर RSEB द्वारा खरीद कर अन्यत्र उपलब्ध कराने की व्यवस्था की गई। डीजल जेनरेटिंग सेट (DG Sets) के लिए अनापत्ति सर्टिफिकेट (NOC) 15 दिन में स्वीकार करने का आश्वासन दिया गया।

(iv) राज्य में पानी का अभाव है। **यह देश के सतह के कुल जल (Surface water) का लगभग 1 प्रतिशत मात्र है।** यमुना जल-समझौते से राज्य के पूर्वी भाग को 111.9 करोड़ घन मीटर पानी उपलब्ध करने का निर्णय लिया गया जो काफी सीमा तक पानी की कमी को दूर करेगा। इन्दिरा गाँधी नहर से श्रीगंगानगर, बीकानेर, जैसलमेर व जोधपुर जिलों को तथा चम्बल से कोटा व बूँदी जिलों को पानी देने का निर्णय लिया गया। माही प्रोजेक्ट से बाँसवाड़ा जिले को तथा नर्मदा से जालौर व बाड़मेर क्षेत्रों को जल देने का कार्यक्रम रखा गया।

(v) राज्य में संचार की सुविधाएँ बढ़ी हैं। 1995-96 तक लगभग 2000 किलोमीटर में मीटर गेज से ब्रोडगेज में परिवर्तन करने का लक्ष्य घोषित किया गया ताकि उद्योगों के लिए विकास की सुविधाएँ काफी बढ़ सकें।

सड़कों का निर्माण निजी क्षेत्र में भी प्रोत्साहित करने पर बल दिया गया। यह कहा गया कि निजी पार्टियाँ अपने द्वारा निर्मित सड़कों व पुलों से टोल-टैक्स भी एकत्र कर सकेंगी।

(vi) **रीको व राजस्थान वित्त निगम का अवधि- कर्ज देने का काम बढ़ाने का निर्णय लिया गया।** रीको ने मर्चेन्ट बैंकिंग कम्पनी का कार्य करने की दिशा में कदम बढ़ाया है। इससे सरकार को योजनाओं के लिए वित्तीय साधन जुटाने में मदद मिली है; जैसे राज्य सरकार ने सार्वजनिक बॉण्ड बेचकर 1994-95 में 250 करोड़ रु. एकत्र करने का लक्ष्य रखा जिसे प्राप्त कर लिया गया।

(vii) यह कहा गया कि सरकार निजी क्षेत्र को इन्फ्रास्ट्रक्चर के विकास में अधिक सहयोग देगी। **सरकार के स्वामित्व वाली हेरीटेज प्रोपर्टी को होटल में बदलने के लिए निजी क्षेत्र को आमंत्रित किया जाएगा।** निजी पार्टियाँ मनोरंजन पार्क, रोपवेज, जल-स्पोर्ट्स व अन्य क्रीड़ाओं का विकास कर सकेंगी।

2. शीघ्र स्वीकृतियाँ (Speedy clearances) व प्रणाली का सरलीकरण (Simplified Systems)

(i) प्रदूषण-नियंत्रण-बोर्ड से स्वीकृति—1994 की औद्योगिक नीति के अन्तर्गत 115 लघु उद्योगों को अनापत्ति प्रमाण-पत्र (NOC) लेने से मुक्त कर दिया गया। राज्य में 26 उद्योग '**लाल**' (Red) श्रेणी में रखे गए। ये सबसे ज्यादा प्रदूषण फैलाने वाले उद्योग माने गए हैं और 32 उद्योग मामूली प्रदूषण फैलाने वाले उद्योग माने गए हैं। इन्हें '**नारंगी**' (**Orange**) श्रेणी में रखा गया।

1994 की नीति में यह व्यवस्था की गई कि प्रदूषण नियंत्रण-बोर्ड से स्वीकृति 15 वर्ष के लिए दी जाएगी, लेकिन लाल श्रेणी के उद्योगों के लिए यह 3 वर्ष व नारंगी श्रेणी के उद्योगों के लिए 5 वर्ष के लिए होगी। स्वीकृतियों के नवीकरण की प्रक्रिया भी सरल की गई।

(ii) उद्योगों के निरीक्षण-कार्य (इन्स्पेक्शन) में कमी—वर्तमान में फैक्ट्री अधिनियम को छोड़कर 14 श्रम-कानून हैं जिनके अन्तर्गत एक उद्योग का इन्स्पेक्शन किया जाता है। 1994 की नीति के तहत यह निर्णय लिया गया कि अलग-अलग निरीक्षण की वर्तमान व्यवस्था को समाप्त किया जाए और इसकी जगह एक कॉमन निरीक्षण की व्यवस्था ही रखी जाए। श्रम-विभाग द्वारा औद्योगिक व व्यावसायिक प्रतिष्ठानों के द्वारा श्रम-कानूनों के अन्तर्गत पूरे किए जाने वाले महत्वपूर्ण दायित्वों की एक चैकलिस्ट तैयार की जाएगी जिसे उद्योगों व इन्स्पेक्टरों में वितरित किया जाएगा और उसी के आधार पर निरीक्षण किया जाएगा।

1994 की नीति के तहत यह व्यवस्था की गई कि 20 श्रमिकों से कम व्यक्तियों को काम देने वाली लघु व टाइनी इकाइयों के सम्बन्ध में रैण्डम आधार पर केवल 5% प्रतिष्ठानों का निरीक्षण किया जाएगा। अन्य मामलों में वर्ष में एक बार 10% इकाइयों का निरीक्षण किया जाएगा। बड़े व मध्यम उद्योगों में निरीक्षण के वर्तमान नॉर्म को 50% कम कर दिया गया। सामान्य निरीक्षण के लिए फैक्ट्री देखने से पूर्व नियंत्रक अधिकारी की लिखित इजाजत जरूरी कर दी गई। लेकिन विशेष परिस्थितियों में या विशेष शिकायतें होने पर यह शर्त लागू नहीं होगी।

आगे से लघु पैमाने की इकाइयों को केवल एक वार्षिक-रिटर्न ही भेजना होगा और सभी श्रम-कानूनों के लिए एक कॉमन नोटिस लगाना होगा।

10 श्रमिकों से कम काम देने वाले प्रतिष्ठानों को केवल एक रजिस्टर रखना होगा और 10-19 श्रमिकों वाली इकाइयों को तीन रजिस्टर रखने होंगे।

फैक्ट्री अधिनियम के अन्तर्गत भी निरीक्षण के मान (Norms) घटाए गए। राज्य की लगभग 12600 फैक्ट्रियों में से 5000 इकाइयों को अधिनियम से मुक्त कर दिया गया क्योंकि अब यह 15 मदों की जगह केवल 3 मदों वाली फैक्ट्रियों पर ही लागू होगा। इससे बहुत छोटे उपक्रम इसके दायरे से निकल गए जिससे इन लघु इकाइयों को काफी राहत मिली।

विशेष इन्पुट व स्वीकृतियों के कामों को शीघ्र निपटाने के लिए राज्य के मुख्य सचिव की अध्यक्षता में एक उच्चाधि-कार प्राप्त समिति (Empowered committee) स्थापित की गई जिसे अन्तिम निर्णय के अधिकार दिए गए। प्रत्येक विभाग या संगठन में एक वरिष्ठ अधिकारी प्रमुख या 'नोडल अधिकारी' बनाया गया जिसे उद्यमकर्ता व विभाग के बीच सम्पर्क का काम दिया गया। राज्य स्तर व जिला-स्तर पर सहूलियत-समूह (Facilitation groups) स्थापित किए गए ताकि शीघ्रतापूर्वक स्वीकृतियाँ दिलाई जा सकें। राज्य-स्तर पर समिति के अध्यक्ष उद्योग-सचिव और जिला-स्तर पर जिलाधीश रखे गए। राज्य-स्तर पर इस कार्य का सचिवालय 'बिप' (Bureau of Industrial Promotion) (BIP) तथा जिला-स्तर पर जिला-उद्योग-केन्द्र (DIC) रखा गया।

इस प्रकार सभी प्रकार की स्वीकृतियाँ समयबद्ध सारणी के अनुसार नियोजित की गई।

3. निर्यात (Exports)

1993-94 में राजस्थान से लगभग 1432 करोड़ रु. के माल का निर्यात किया गया था, जो बाद के वर्षों में बढ़ा है। मुख्य सचिव की अध्यक्षता में राज्य स्तर पर एक निर्यात-विकास-परिषद का पुनर्गठन किया गया। निर्यात के लिए एक अन्तर्देशीय-कन्टेनर-डिपो (Inland Container Depot) (ICD) व एयर-कार्गो-कॉम्प्लेक्स जयपुर में कार्यरत हैं। एक नया ICD जोधपुर में स्थापित करने का निर्णय लिया गया। औद्योगिक नीति में निर्यातों को प्रोत्साहन देने के लिए अग्र उपाय सुझाए गए—

(i) **निर्यात-प्रोत्साहन-औद्योगिक पार्क (Export Promotion Industrial Park) (EPIP)**—भारत सरकार की मदद से राज्य में स्थापित करने का निश्चय किया गया ताकि इस पार्क में उच्च श्रेणी की आधार-सुविधा उपलब्ध कराई जा सके।

(ii) यह कहा गया कि निजी क्षेत्र को निर्यात-प्रोसेसिंग क्षेत्र (Export Processing Zones) (EPZs) स्थापित करने के लिए प्रोत्साहन दिया जाएगा।

(iii) पावर कनेक्शन देने में 100% निर्यातोन्मुख इकाइयों को प्राथमिकता दी गई।

(iv) 100% निर्यातोन्मुख इकाइयों को अतिरिक्त प्रेरणाएँ दी गई। 15 करोड़ रु. से 100 करोड़ रु. के प्रोजेक्टों के लिए 5 से 7 वर्ष तक कच्चे माल पर क्रय-कर से मुक्ति दी गई। 5 करोड़ रु. से 15 करोड़ रु. के प्रोजेक्टों के लिए 50% की छूट दी गई। कृषि आधारित इकाइयों के लिए विनियोग की निचली सीमा 1 करोड़ रु. रखी गई। 10 करोड़ रु. से ऊपर विनियोग वाली इकाइयों को पावर-कटौती से मुक्त रखा गया। मशीनरी की

खरीद पर बिक्री-कर नहीं लगाया गया । पूँजी-विनियोग सब्सिडी अनिवासी या प्रवासी भारतीयों (NRIs) की इकाइयों के समान कर दी गई । गुणवत्ता के लिए ISO 9000 व BIS 14000 सिरीज में रजिस्ट्रेशन पाने के लिए जाँच-उपकरण (Testing equipment) की खरीद पर सब्सिडी उसकी लागत का 50% रखी गई ताकि गुणवत्ता में सुधार हो सके । मालभाड़ा सब्सिडी (Freight subsidy) कुल मालभाड़े का 25% निर्धारित की गई । यह ICD के मार्फत बन्दरगाहों तक कन्टेनर्स भेजने पर लागू की गई । यह कहा गया कि एक व्यापार-केन्द्र स्थापित किया जाएगा तथा निर्यात-उत्पादन, डिजाइन-विकास व वस्तु में नयापन लाने हेतु कई प्रयास किए जाएँगे ।

1993-94 व 1996-97 में राजस्थान से किए गए निर्यातों की स्थिति अध्याय के अंत में परिशिष्ट 2 में दी गई है ।

4. औद्योगिक रुग्णता (Industrial Sickness)

***(i)* रुग्ण इकाइयों के पुनर्जीवन के लिए वर्तमान सुविधाएँ**—बिक्री-कर प्रेरणा/आस्थगन स्कीम 1987 अथवा 1989 के अन्तर्गत रुग्ण इकाइयों को कर-देयताओं (Tax liabilities) की 50% की दर से छूट/आस्थगन की सुविधा दी जाती है । उनको बिजली कटने की अवधि के लिए न्यूनतम चार्जेज के भुगतान से मुक्त रखा जाता है (जो इकाइयाँ रीको या अन्य संस्थाओं द्वारा पुनर्जीवित की जा रही हैं) । राज्य विद्युत मण्डल की बकाया राशियाँ विलम्ब-भुगतान-सरचार्ज के स्थान पर 15% वार्षिक ब्याज लगाकर वसूल की जाती हैं । इनको विद्युत-शुल्क के भुगतान की नई तारीख एवं बिक्री-कर की बकाया-राशियों के लिए नई तारीख की सुविधा दी जाती है । अतिरिक्त भूमि को बेचकर प्राप्त राशि ब्याज मुक्त-कर्ज के रूप में दी जाती है । भूमि को वित्तीय संस्थाओं को गिरवी रखने की तेजी से इजाजत दी जाती है । लघु इकाइयों को पुनर्स्थापना के दौरान 50 हजार रु. की मार्जिन मुद्रा कर्ज के रूप में दी जाती है ।

***(ii)* 1994 की औद्योगिक नीति में रुग्ण इकाइयों के पुनर्जीवन के लिए अतिरिक्त सुविधाएँ**—नीति में यह व्यवस्था की गई कि भारतीय रिजर्व बैंक की परिभाषा के अनुसार रुग्ण लघु इकाइयों व अन्य गैर-बी आई.एफ.आर. इकाइयों को पहचाना जाएगा । इन्हें अतिरिक्त भूमि बेचने, भुगतान की बकाया राशियों के लिए आगे की तारीख तय करने, विद्युत-शुल्क व बिक्री-कर का ब्याज/जुर्माना माफ करने, पुनर्स्थापना के लिए अतिरिक्त संयंत्र व मशीनरी पर चुंगी के भुगतान की छूट देने की व्यवस्था की गई । बीआईएफआर (BIFR) के मामलों में अतिरिक्त भूमि को औद्योगिक कार्य के लिए बेचने की इजाजत दी गई । इस बात पर जोर दिया गया कि स्थानीय अधिकारियों की इजाजत से यह अन्य कार्यों के लिए भी बेची जा सकेगी और बिक्री से प्राप्त राशियाँ रीको या राजस्थान वित्त निगम के पास जमा करानी होंगी, जो पुनर्स्थापन के लिए उनको ब्याज मुक्त कर्ज के रूप में दी जाएगी । राज्य विद्युत मण्डल भविष्य में बकाया राशियों पर विलम्ब-भुगतान-सरचार्ज की जगह सामान्य दशाओं में केवल 15% वार्षिक ब्याज लेगा ।

5. प्रेरणाएँ (Incentives)

पूँजी-विनियोग-सब्सिडी (Capital Investment Subsidy)—1 अप्रैल, 1990 के बाद उत्पादन में आने वाली इकाइयों को यह सुविधा निम्न प्रकार से उपलब्ध की गई—बड़े व मध्यम उद्योगों को स्थिर विनियोग पर सब्सिडी 15% की दर से, लेकिन एक इकाई को सर्वाधिक राशि 15 लाख रुपए तथा लघु इकाइयों के लिए 20% की दर से, लेकिन सर्वाधिक राशि 20 लाख रु. । बड़ी व मध्यम इकाइयाँ, जो 100% निर्यातोन्मुख हों, या साधन-आधारित हों, उनको भी 20% या अधिकतम 20 लाख रु की सब्सिडी दी गई। उद्योग-विहीन जिलों व जनजाति उप-योजना क्षेत्रों में अतिरिक्त 5% सब्सिडी (अधिकतम 5 लाख रु) बड़े व मध्यम उद्योगों को, तथा लघु इकाइयों को अतिरिक्त 10% (अधिकतम 10 लाख रु) सब्सिडी दी गई। अनिवासी या प्रवासी भारतीयों (NRIs) द्वारा इक्विटी में 40% तक अंश वाली इकाइयों को 20% सब्सिडी, अथवा अधिकतम 35 लाख रु. की सब्सिडी दी गई। सब्सिडी की यह स्कीम 31 मार्च, 1995 को समाप्त हो गई। इसमें निम्न संशोधन किए गए।

सब्सिडी की चालू स्कीम में परिवर्तन—*(i)* इसमें सोफ्टवेयर विकास, विशिष्ट क्षेत्रों में दूध-उत्पाद, विशेष विनियोग सीमा तक सोफ्ट पेय की इकाइयों, औद्योगिक अल्कोहल, पावर-गहन-इकाइयों व बियर को भी शामिल किया गया। *(ii)* लघु इकाइयों के सम्बन्ध में सब्सिडी के मामले जिलास्तरीय समितियों द्वारा निपटाने का निर्णय लिया गया। *(iii)* इन्फ्रास्ट्रक्चर के विकास पर अधिक बल दिया गया और प्रत्यक्ष संवर्धनात्मक (Direct promotional) सब्सिडी पर कम बल दिया गया। सब्सिडी का उपयोग रोजगार में वृद्धि करने व लाभ उठाने वाले उद्योग को प्रतिस्पर्धात्मक बनाने में करने पर ध्यान केन्द्रित किया गया।

यह स्कीम मार्च, 1997 तक लागू की गई, लेकिन इसमें निम्न परिवर्तन किए गए—

(अ) सब्सिडी लघु व मध्यम पैमाने के उद्योगों को जारी रखी गई। बड़े उद्योगों के सम्बन्ध में एक पंचायत समिति में स्थापित होने वाली प्रथम इकाई को ही सब्सिडी दी गई। (आ) मध्यम पैमाने के उद्योगों के विस्तार व विविधीकरण के लिए सब्सिडी नहीं दी गई। (इ) शहरी क्षेत्रों में 1 लाख जनसंख्या से ऊपर वाले क्षेत्रों में सब्सिडी नहीं दी गई।

मार्च, 1997 के बाद उत्पादन में आने वाली इकाइयों को सब्सिडी या अन्य लाभ नहीं दिया गया। लेकिन यदि कोई औद्योगिक इकाई स्कीम की अन्तिम तारीख तक प्रोजेक्ट-लागत का कम से कम 25% विनियोग कर लेती है, और इस तारीख के बाद 3 वर्ष की अवधि में व्यावसायिक उत्पादन चालू कर देती है, तो उसको सब्सिडी का लाभ दिया गया।

बिक्री कर प्रेरणा/आस्थगन की स्कीम—यह सुविधा 1989 व 1987 की स्कीमों में नई इकाइयों, पुनर्स्थापन में लगी रुग्ण इकाइयों व विस्तार/विविधीकरण में लगी इकाइयों

को उपलब्ध रही है। यह उद्योग के आकार-प्रकार के आधार पर 7 से 11 वर्ष तक दी जाती है। सुविधा की मात्रा स्थिर विनियोग व कर-देयताओं (Tax-liability) की मात्रा के अनुसार सीमित होती है। यह स्थिर पूँजीगत विनियोगों के 100% से 125% तक सीमित की गई। कर-देयताओं के रूप में यह 75% से 100% तक सीमित की गई। यह सुविधा मध्यम व लघु इकाइयों को जिला स्तर पर तथा बड़ी इकाइयों को राज्य-स्तर पर स्वीकृत की जाती है।

राज्य सरकार ने इस स्कीम के सम्बन्ध में निम्न निर्णय लिए—

(i) महिला उद्यमियों द्वारा स्थापित टाइनी औद्योगिक इकाइयों को 100% तक 3 वर्षों के लिए बिक्री-कर से छूट दी गई। *(ii)* रेलवे साइडिंग्स, रोलिंग स्टॉक, रेक्स व रेल-इंजनों को भी स्थिर परिसम्पत्ति (Fixed assets) में शामिल किया गया। *(iii)* 10 करोड़ रु. से अधिक विनियोग वाली सोफ्टवेयर विनिर्माण इकाइयों को इस स्कीम की नकारात्मक सूची से निकाल दिया गया।

बिक्री कर प्रेरणा/आस्थगन स्कीम में निम्न परिवर्तन करने की घोषणा की गई—

(i) **बिक्री-कर में एकत्र राशि व उद्यमकर्ता द्वारा रखी गई राशि राज्य सरकार को दी हुई मानी जाएगी और वह उद्यमकर्ता को ब्याज-मुक्त कर्ज के रूप में दी हुई मानी जाएगी, जब तक कि यह स्कीम के मुताबिक पुनः वापस नहीं कर दी जाती। इससे फर्म के लिए आयकर की समस्या नहीं रही।** *(ii)* आस्थगन स्कीम के अन्तर्गत बिक्री कर की एकत्र राशि, सुविधा चालू होने के 4 वर्ष बाद देय की गई। *(iii)* इस स्कीम में श्रम-गहन-इकाइयों को स्थिर पूँजी विनियोग के अतिरिक्त 20% बिन्दु तक लाभ दिया गया। *(iv)* बियर, औद्योगिक अल्कोहल, आदि इकाइयों को भी यह सुविधा दी गई। *(v)* 100 करोड़ रु. से ऊपर के विनियोग वाली नई सीमेंट इकाइयों को (गैर-जनजाति उप-योजना क्षेत्र में) आस्थगन स्कीम में लाभ 25% से बढ़ाकर 50% किया गया। *(vi)* यदि स्कीम के बन्द होने की तारीख तक प्रोजेक्ट-लागत का कम से कम 25% विनियोग हो चुका है, तो उस इकाई को इस स्कीम का लाभ दिया गया।

क्रय-कर—ईसबगोल पर क्रय-कर 2.5% से घटाकर 1% कर दिया गया, क्योंकि इसके निर्यात की सम्भावनाएँ हैं। यह व्यवस्था की गई कि विनिर्माता कच्चा माल 3% का रियायती कर देकर प्राप्त कर सकेंगे। लेकिन 4% कर देकर ब्रांच-ट्रान्सफर की इजाजत दी जा सकेगी। मशीनों की खरीद पर बिक्री-कर से छूट दी गई। यह सुविधा 31 मार्च, 1997 तक बढ़ा दी गई। विशेष इन्जीनियरी व रसायन उद्योग इसके दायरे में लाए गए। डीजल जेनरेटिंग सेट पर सब्सिडी की राशि लागत का 25%, अथवा 1.50 लाख रु. (पहले 50 हजार रु.) जो भी कम हो, कर दी गई। कैप्टिव-पावर-प्लांट पर विद्युत-शुल्क से छूट दी गई। राज्य विद्युत मण्डल ने विलम्ब-भुगतान-सरचार्ज को पहले से अधिक उदार बनाया।

अनुसूचित जाति व अनुसूचित जनजाति के उद्यमकर्ताओं को विशेष सहायता— *(i)* रीको के औद्योगिक क्षेत्रों में 4000 वर्गमीटर तक के प्लाटों के आवंटन पर 50% रिबेट दी गई।

(ii) राजस्थान वित्त निगम द्वारा दिए जाने वाले कर्जों पर ब्याज में 2% की रिबेट (2 लाख रु के स्थान पर 5 लाख रुपयों के कर्ज तक) दी गई। जनजाति उप-योजना क्षेत्र में ब्याज में 1% की अतिरिक्त रिबेट दी गई। ऐसे कर्ज पर मार्जिन मुद्रा 25% की जगह 5% ही रखी गई।

(iii) RFC कर्ज की प्रोसेसिंग-फीस पर 50% की रियायत दी गई।

(iv) राज्य विद्युत मण्डल द्वारा पावर-कनेक्शन प्राथमिकता के आधार पर दिया जाता है।

(v) प्रधानमंत्री की रोजगार योजना में 22 5% रिजर्वेशन उपलब्ध है।

(vi) इनके लिए अलग से उद्यमकर्ता विकास कार्यक्रम संचालित किए गए।

महिला-उद्यमकर्ताओं के लिए प्रोत्साहन—*(i)* महिला उद्यमियों के लिए 2000 वर्गमीटर की औद्योगिक भूमि पर 10% स्पेशल रिबेट तथा युद्ध काल की विधवा महिलाओं (War-widows) के लिए 25% रिबेट दी गई।

(ii) RFC द्वारा महिला-उद्यम-निधि-स्कीम (भारतीय लघु उद्योग विकास बैंक की) के अन्तर्गत महिला उद्यमियों को नए प्रोजेक्ट (15 लाख रु की लागत तक) के लिए 1% सालाना, ब्याज की दर पर इक्विटी-टाइप सहायता उपलब्ध कराई गई।

(iii) घरेलू उद्योगों के लिए शहरी निर्धन महिलाओं के लिए प्रशिक्षण की व्यवस्था की गई।

(iv) टाइनी इकाइयों पर बढ़ी हुई दरों से बिक्री-कर पर छूट दी गई।

(v) उद्यमकर्ता विकास कार्यक्रमों का लाभ महिला उद्यमशीलता के विकास के लिए भी उपलब्ध किया गया।

6. विशेष उद्योगों के विकास के उपाय

***(i)* चमड़ा-आधारित उद्योग (Leather-based Industries)**—वर्तमान में इस उद्योग का अधिकांश कच्चा माल राज्य के बाहर भेज दिया जाता है। औद्योगिक नीति में इस उद्योग में परम्परागत विधियों के स्थान पर आधुनिक व वैज्ञानिक विधियों को अपनाने पर बल दिया गया तथा **बिक्री- दर की देयताओं की सीमाएँ 75% से बढ़ाकर 90% (नई इकाइयों के लिए) तथा विस्तार/विविधीकरण के लिए 60% से बढ़ाकर 75% कर दी गई।** कच्चे माल जैसे कच्चा चमड़ा, खालों आदि पर क्रय-कर 3% से घटाकर 1% करने का निर्णय लिया गया।

***(ii)* चीनी मिट्टी व काँच के उद्योग (Ceramic and Glass Industries)**—राज्य में फेलसपार, सिलीका मिट्टी, क्वार्ट्ज व बेन्टोनाइट, आदि के बड़े भण्डार पाए जाते हैं। इन उद्योगों का 40% से 70% कच्चा माल राज्य के बाहर प्रोसेसिंग के लिए भेज दिया जाता है। औद्योगिक नीति में बिक्री-कर-प्रोत्साहन-स्कीम 1989 के अन्तर्गत 5 करोड़ से 25 करोड़ रु. के विनियोग वाली इकाइयों को बिक्री-कर का लाभ 7 वर्ष से

बढ़ाकर 9 वर्ष तथा 25 करोड़ रु. से 100 करोड़ वाली इकाइयों को 9 वर्ष से बढ़ाकर 11 वर्ष किया गया। उपर्युक्त दोनों श्रेणियों के लिए कर-देयता (Tax-liability) से छूट 75% से बढ़ाकर 90% तथा 75% से बढ़ाकर 100% करने की घोषणा की गई।

(iii) **ऊन उद्योग (Wool Industry)**—इस उद्योग में गुणवत्ता सुधार, प्रशिक्षण, वस्तु-विविधीकरण, ऊन की ग्रेडिंग, नमदा उत्पादन, क्रय कर में कमी करने (1%) की सुविधा दी गई।

(iv) **इलेक्ट्रोनिक्स उद्योग (Electronics Indu-stries)**—इनको भी चीनी मिट्टी व कांच के उद्योग की भाँति नई सुविधाएँ दी गई। इसकी इकाइयों के लिए क्रय-कर 2% रखा गया तथा ब्रांच-ट्रान्सफर की सुविधा दी गई।

(v) **खनिज-आधारित उद्योग (Mineral-based Industries)**—राज्य फेल्सपार व वोलस्टोनाइट का अकेला उत्पादक है, तथा इसका जस्ते, जिप्सम, फ्लोराइट, एस्बेस्टस व केल्साइट के उत्पादन में एकाधिकार है एवं यह सीसे, टंग्स्टन, फॉस्फोराइट, फ्लोर्सपार, आदि का प्रमुख उत्पादक है। इस क्षेत्र में उद्योगों का विकास करने के लिए निम्न कदम उठाए गए—खनन पट्टे वित्तीय संस्थाओं को गिरवी रखकर अवधि-कर्ज प्राप्त करने की सुविधा दी गई। बड़े खनिजों के लीज की स्वीकृति का न्यूनतम क्षेत्र 5 हैक्टेयर कर दिया गया। राज्य में प्रोसेसिंग इकाई लगाने वाले उद्यमकर्ताओं को खनन-लीज स्वीकृत करने में प्राथमिकता दी गई।

(vi) **कृषि व खाद्य-प्रसंस्करण उद्योग (Agro and Food Pro-cessing)**—राज्य में देश का 40% सरसों उत्पन्न होता है। सोयाबीन में इसका द्वितीय स्थान है। यहाँ धनिया, जीरा व लालमिर्च बहुत होती है। राज्य कपास, सोयाबीन, सरसों, गुआर गम (guar gum), ईसबगोल, आदि का निर्यात कर सकता है। राज्य में कुकुरमुत्ता (Mushroom), शतावरी (Asparagus), जोजोबा, कट-फ्लॉवर, आदि के उत्पादन की भी सम्भावनाएँ हैं। भविष्य में कोल्ड स्टोरेज व ग्रीन हाउस के लिए सब्सिडी देने की व्यवस्था की गई। टिस्यू कल्चर व फूलों की खेती को बढ़ाने पर बल दिया गया। 100% निर्यातोन्मुख इकाइयों की भाँति इनकी स्थिर पूँजी के विनियोग पर भी सब्सिडी दी गई। निर्यातोन्मुख फसलों व ऊँचे मूल्य वाली फसलों को विदेशी सहयोग से आगे बढ़ाने तथा आवश्यक मामलों में सीलिंग कानून से छूट देने की नीति का समर्थन किया गया।

(vii) **पर्यटन (Tourism)**—राज्य के लिए एक व्यापक पर्यटन विकास योजना तैयार करने तथा अन्तर्राष्ट्रीय एजेन्सियों से धन प्राप्त करने की आवश्यकता स्वीकार की गई।

(viii) सीमेन्ट, वस्त्र, वनस्पति/खाद्य-तेलों को सहायता जारी रखी गई। विशेष कॉम्पलेक्स स्थापित करके इन उद्योगों का विकास करने पर बल दिया गया।

राजस्व-विकास, उद्योग-निदेशालय, रीको/आर एफ सी. पर्यावरण विभाग, फैक्ट्री व बॉयलर इन्स्पेक्टर, राजस्थान राज्य विद्युत मण्डल आदि के लिए विभिन्न कार्यों के लिए समय-सीमाएँ निर्धारित कर दी गई ताकि राज्य का औद्योगिक विकास द्रुतगति से हो सके।

औद्योगिक नीति, जून 1998
(Industrial Policy, June 1998)

नई औद्योगिक नीति की व्यूहरचना (Strategy)—नई नीति में विकास पर विशेष रूप से बल दिया गया है और इसके लिए **समूहों के विकास (development of clusters) की रणनीति अपनाई गई है ताकि समूह की किफायतों (economies of agglomeration) व प्रमुख क्षेत्रों की प्रगति को सुनिश्चित किया जा सके।** इस नीति की व्यूहरचना में आधारभूत ढाँचे के सुधार को सर्वोच्च प्राथमिकता दी गई है तथा विकास व रोजगार की दृष्टि से कुछ प्रमुख क्षेत्रों के विकास पर अधिक ध्यान केन्द्रित किया गया है, नियम व प्रक्रियाएँ सरल की गई हैं, नीति के क्रियान्वयन में उद्योग व सरकार की साझेदारी को स्वीकार किया गया है, उद्योग की नई आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए मानवीय संसाधनों के विकास पर अधिक बल दिया गया है और राज्य के आर्थिक विकास में निजी उपक्रम की साझेदारी बढ़ाई गई है।

इन्फ्रास्ट्रक्चर का विकास—आधारभूत ढाँचे के विकास के लिए राज्य के साधनों के अधिकतम उपयोग व निजी क्षेत्र के सहयोग की नीति अपनाई गई है। इसके लिए क्षेत्रीय समूहों (Sectoral Clusters) का विकास करने के विशेष उपाय करने पर बल दिया गया है।

विनियोग बोर्ड का पुनर्गठन 'इन्फ्रास्ट्रक्चर विकास व विनियोग बोर्ड' के रूप में किया गया है ताकि उद्योग से जुड़े इन्फ्रास्ट्रक्चर पर अधिक ध्यान केन्द्रित किया जा सके। इससे औद्योगिक क्षेत्रों में समय पर सुविधाएँ उपलब्ध करने में मदद मिलेगी और अन्य लाभ भी प्राप्त होंगे।

निजी क्षेत्र में एक परियोजना विकास निगम (Project Development Corporation) (PDCOR) की स्थापना की गई है जिसमें राज्य सरकार ने शेयर-पूँजी में भाग लिया है। यह कम्पनी व्यावसायिक दृष्टि से लाभप्रद परियोजनाओं पर **'विनियोग बैंकिंग रिपोर्ट'** प्रस्तुत करेगी। इसमें इन्फ्रास्ट्रक्चर लीजिंग एण्ड फाइनेन्सियल सर्विसेज लि. (IL & FS) तथा हाउसिंग डेवलपमेण्ट एण्ड फाइनेंस कॉरपोरेशन (HDFC) का योगदान होगा।

राज्य के मुख्य औद्योगिक क्षेत्रों में निजी क्षेत्र के सहयोग से व्यवसाय-केन्द्र (Business Centres) स्थापित करने पर जोर दिया गया है जिनके लिए रीको भूमि या भवन की व्यवस्था करेगा। इनमें उद्यमकर्ताओं को टेलीफोन, फेक्स, सम्मेलन के स्थान, आदि की सुविधा प्रदान की जाएगी।

निम्न स्थानों पर विशेष उद्योगों के लिए औद्योगिक समूह (Industrial Complexes) स्थापित किए जाएँगे—

1 जेम्स एण्ड ज्वैलरी	EPIP व जेम पार्क, जयपुर
2 होजियरी	चोपन्की, भिवाड़ी
3 ऑटो सहायक पदार्थ	घटल (भिवाड़ी) तथा सीतापुरा (जयपुर)
4 सिरेमिक्स	खारा (बीकानेर)
5 सोफ्टवेयर टेक्नोलोजी	EPIP (जयपुर)
6 इलेक्ट्रोनिक्स व टेलीकम्यूनिकेशन्स	कूकस (जयपुर)
7 टेक्सटाइल्स	भीलवाड़ा, सांगानेर, सीतापुरा, पाली, जोधपुर, बालोतरा
8 कृषि (एग्रो) उद्योग	इन्दिरा गाँधी नहर प्रोजेक्ट क्षेत्र
9 चमड़ा	मानपुरा-माचेड़ी
10 ऊन उद्योग	ब्यावर, बीकानेर
11 दस्तकारियाँ	शिल्पग्राम (जोधपुर व जैसलमेर)
12 डाइमेन्शनल स्टोन (आयामी पत्थर)	किशनगढ़, उदयपुर, चित्तौडगढ़ ।

औद्योगिक क्षेत्रों में आधारभूत सुविधाएँ; जैसे—सड़क, पावर, जल-पूर्ति, आदि विकसित की जाएँगी तथा साथ में सामाजिक आधारभूत सुविधाएँ; जैसे शिक्षा, आवास, अस्पताल, आदि का भी विकास किया जाएगा । **नेशनल हाईवे संख्या 8 पर जयपुर से भिवाड़ी तक समन्वित औद्योगिक विकास का कार्यक्रम सम्पन्न किया जाएगा** । समन्वित औद्योगिक पार्क रीको के साथ संयुक्त उपक्रम के रूप में या निजी क्षेत्र में विकसित किए जाएँगे ।

पहले निजी क्षेत्र में औद्योगिक क्षेत्रों का विकास रीको के औद्योगिक क्षेत्रों की 10 किलोमीटर की दूरी में नहीं हो सकता था । इसे अब घटाकर 5 किलोमीटर किया गया है । भूमि-रूपान्तरण (Land Conversion) 5 हैक्टेयर तक स्वचालित हो सकेगा । राजस्व-अधिकारी को दिए गए आवेदन की तारीख से 30 दिन बीत जाने पर रूपान्तरण हुआ मान लिया जाएगा । इसे तहसीलदार/ग्राम पंचायत 7 दिन में गाँव के रिकार्डों में प्रविष्टि दे देंगे । औद्योगिक क्षेत्रों के लिए सलाह देने के लिए सलाहकार समितियाँ नियुक्त की जाएँगी । उद्यमकर्ताओं के विवादों को निपटाने के लिए निपटारा-समितियाँ बनाई जाएँगी ।

शक्ति (Power)—नई औद्योगिक नीति में पावर की प्रस्थापित क्षमता बढ़ाने के लिए वर्ष 1998 व वर्ष 1999 में सूरतगढ़ चरण-1 परियोजना की दो इकाइयाँ (प्रत्येक इकाई 250 मेगावाट की) चालू हो जाएँगी । इनके अलावा निम्न बड़े शक्ति-संयंत्र (पावर-प्लांट) नवीं पंचवर्षीय योजना की अवधि में व दसवीं योजना के प्रारम्भिक वर्षों में चालू किए जाएँगे ।

क्षमता (मेगावाट में)

1	धौलपुर पावर प्रोजेक्ट (तरल ईंधन पर आधारित)	700
2	बरसिंगसर पावर प्रोजेक्ट (लिग्नाइट पर आधारित)	500
3	सूरतगढ़ चरण-II पावर प्रोजेक्ट (कोयले पर आधारित)	500
4	कपूरडी व जालीपा प्रोजेक्ट (लिग्नाइट पर आधारित)	1200
	कुल	2900

राज्य में कैप्टिव पावर संयंत्रों को लगाने की पूरी स्वतन्त्रता होगी । इसके लिए RSEB की अनुमति की आवश्यकता नहीं होगी । RSEB की तरफ से प्रोसेस उद्योग, निर्यातोन्मुख इकाइयों व EPIP में स्थापित इकाइयों के लिए बिजली की निर्बाध रूप में पूर्ति की व्यवस्था की जाएगी । रीको निजी क्षेत्र में लगाए जाने वाले पावर संयंत्रों के लिए भूमि उपलब्ध कराएगा जो RSEB के ग्रिड स्टेशन के पास होगी । ईंधन सरचार्ज तिमाही आधार पर संशोधित किया जाएगा । जो औद्योगिक उपभोक्ता अपनी पावर से अपना संयंत्र चलाता है उससे कोई न्यूनतम चार्ज नहीं लिया जाएगा । नए बड़े औद्योगिक उपभोक्ताओं को प्रथम छः माह के लिए वास्तविक उपभोग के आधार पर बिजली का भुगतान करना होगा, और अगले छः माह के लिए वास्तविक उपभोग, अथवा न्यूनतम चार्जेज के 50% (जो भी अधिक हो), के आधार पर भुगतान करना होगा ।

दूरसंचार की सुविधा कार्यकुशल व विश्वसनीय बनाई जाएगी । सेल्यूलर फोन की सुविधा जयपुर, अजमेर, उदयपुर, जोधपुर व कोटा के अलावा अलवर, भिवाड़ी, पाली व ब्यावर, आदि को भी प्रदान की जाएगी ।

भीलवाड़ा व उदयपुर को निकट भविष्य में ब्रोडगेज से जोड़ने का तथा भिवाड़ी को भी रेल-मार्ग पर लाने का प्रयास किया जाएगा ।

नवीं पंचवर्षीय योजना में 1500 किलोमीटर की दूरी में राज्य हाईवे नेटवर्क को विश्व बैंक की सहायता से सुधारा जाएगा ।

राष्ट्रीय राजमार्ग संख्या-8 पर जयपुर-दिल्ली के बीच चार लेन का राजमार्ग बनाया जाएगा जिसमें जयपुर-कोटपूतली मार्ग तो पूरा हो गया है और कोटपूतली-दिल्ली का शेष अंश शीघ्र ही पूरा किया जाएगा । दूसरे चरण में जयपुर-अजमेर खण्ड लिया जाएगा । प्रमुख औद्योगिक क्षेत्रों में लिंक-सड़कों का विकास किया जाएगा ।

कान्दला में एक बर्थ-सुविधा विकसित करने का प्रयास किया जाएगा । वायु-परिवहन के विकास के लिए सरकार की वर्तमान 19 एयर-स्ट्रिप्स (हवाई पट्टियों) की सुविधा एयर टैक्सी ऑपरेटरों को उपलब्ध करा दी गई है ।

प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड से स्वीकृति (Clearance) प्राप्त करने की सुविधा—रीको अथवा और कोई एजेन्सी पर्यावरण विभाग से पर्यावरण-प्रभाव-मूल्यांकन (Environment

Impact Assessment) (EIA) तथा पर्यावरण-प्रबन्ध योजना (Environment Management Plan) (EMP) सम्पूर्ण क्षेत्र अथवा किसी क्षेत्र के विशेष भाग के लिए स्वीकृत करा लेगी। उसके बाद एक औद्योगिक इकाई को अलग से पर्यावरण-विभाग से स्वीकृति लेने की आवश्यकता नहीं होगी।

औद्योगिक इकाइयों को राष्ट्रीय या राज्यीय राजमार्गों से सामान्यतया 150 मीटर से परे के क्षेत्रों में अपनी इकाई स्थापित करने की इजाजत दी जाएगी ताकि ट्रैफिक के मुक्त प्रवाह में किसी प्रकार की बाधा नहीं आए। लेकिन बड़े पैमाने पर विकसित क्षेत्रों में जिला स्तरीय समिति की इजाजत से इसमें कुछ रियायत दी जा सकेगी। सीमेंट संयंत्रों, ग्राइन्डिंग इकाइयों व अन्य काफी प्रदूषण फैलाने वाली इकाइयों को राजमार्गों से 300 मीटर की दूरी में अपनी इकाई लगाने की इजाजत नहीं दी जाएगी। रीको में प्रदूषण-नियंत्रण के लिए एक सलाहकारी प्रकोष्ठ स्थापित किया गया है। प्रदूषण-नियंत्रण बोर्ड बड़े औद्योगिक क्षेत्रों में प्रादेशिक कार्यालय स्थापित करेगा ताकि यह काम विकेन्द्रित आधार पर निपटाया जा सके। लघु व टाइनी इकाइयों के लिए 7 दिन में अनापत्ति प्रमाण-पत्र (NOCs) देने की सुविधा दी जाएगी। इस नीति में 115 उद्योगों के स्थान पर 150 लघु पैमाने के उद्योगों को NOCs/स्वीकृति लेने से मुक्त कर दिया गया।

औद्योगिक सम्बन्धों में सुधार के लिए प्रयास किए जाएँगे। फैक्ट्री के अन्दर धमकी देने, श्रमिकों से पैसा ऐंठने व हिंसा करने जैसी प्रतिबन्धात्मक श्रम-विधियों को सम्बद्ध नियमों के तहत कड़ाई से रोका जाएगा ताकि उत्पादन को किसी प्रकार की हानि न पहुँचे। जिलाधीश की अध्यक्षता में श्रम-समस्याओं के निपटारे के लिए समिति बनाने पर जोर दिया गया।

रीको के भूमि-आवंटन नियमों को अधिक सरल बनाया गया। 40 हजार वर्गमीटर तक के भूखण्डों पर भवन-निर्माण की योजनाओं की स्वीकृति की आवश्यकता नहीं होगी। रीको क्षेत्रों में औद्योगिक प्लाटों पर आवासीय सुविधाएँ उदार कर दी गई हैं। शहरी क्षेत्रों में 20% क्षेत्र में तथा ग्रामीण क्षेत्रों में 30% क्षेत्र में आवासीय सुविधाएँ दी गई हैं। प्रथम मंजिल पर रिहायशी निर्माण के लिए सारे प्रतिबन्ध हटा लिए गए हैं। रीको क्षेत्रों की एक किलोमीटर दूरी तक भूमि-रूपान्तरण के लिए NOC लेने की आवश्यकता नहीं होगी। अस्पतालों/नर्सिंग होम्स के लिए भू-आवंटन औद्योगिक दरों पर किया जाएगा, न कि पूर्व की भाँति व्यावसायिक दरों पर।

निर्यात-प्रोत्साहन—नई औद्योगिक नीति में निर्यातों के लिए आधारभूत सुविधाओं का विस्तार करने पर बल दिया गया है। सीतापुरा, जयपुर में 365 एकड़ में एक निर्यात-प्रोत्साहन-औद्योगिक-पार्क (EPIP) स्थापित किया जा चुका है। दूसरा EPIP भिवाड़ी में स्थापित किया जाएगा। इनलैण्ड कन्टेनर डिपो (ICD) जयपुर, जोधपुर, कोटा व उदयपुर में स्थापित हो चुके हैं। नए कन्टेनर डिपो भीलवाड़ा, भिवाड़ी व गंगानगर में स्थापित किए जाएँगे। इनके लिए रेल-लिंक स्थापित करने के प्रयास जारी हैं।

निर्यात-प्रोत्साहन के लिए अन्य उपाय निम्नांकित हैं—

(i) राजस्थान लघु उद्योग निगम द्वारा एक अन्तर्राष्ट्रीय व्यापारिक क्षेत्र (international trading zone) स्थापित किया गया है जिसका नाम इन्डोबाजार कॉम (WWW) (World Wide Web) रखा गया है। इनमें क्रेता व विक्रेता एकत्र होकर अपनी क्रय-विक्रय की आवश्यकताओं को पूरा कर सकेंगे। इससे निर्यात बढ़ाने में मदद मिलेगी।

(ii) निर्यात के अवसरों व विधियों की जानकारी बढ़ाने के लिए वर्कशॉप, सेमीनार व प्रशिक्षण-कार्यक्रम सम्पन्न किए जाएँगे।

(iii) सीतापुरा, जयपुर में एक अन्तर्राष्ट्रीय नुमाइश समूह (Exhibition Complex) व कन्वेन्शन केन्द्र स्थापित किया जाएगा। यह रीको व निजी क्षेत्र का संयुक्त उपक्रम होगा। इसमें पन्द्रह वर्ष तक मनोरंजन कर से छूट रहेगी।

(iv) प्रमुख औद्योगिक क्षेत्रों में बाण्डेड वेयरहाउस की सुविधा प्रदान की जाएगी।

(v) 100% निर्यातोन्मुख इकाइयों के लिए प्रेरणाएँ अधिक उदार बना दी गई हैं। अब ये प्रेरणाएँ अपने 50% उत्पादन का निर्यात करने वाली इकाइयों को भी उपलब्ध हो सकेंगी।

(vi) ऐसी सभी इकाइयों को ये प्रेरणाएँ सार्वजनिक यूटिलिटी स्टेटस औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 के अनुच्छेद 2 (एन) के अन्तर्गत मिल सकेंगी।

(vii) 31 मार्च, 2003 तक स्थापित होने वाली इकाइयों को पाँच वर्ष तक मशीनरी के क्रय पर बिक्री-कर देने से मुक्ति प्रदान की गई है।

(viii) निर्यातक इकाइयों के लिए कच्चे माल पर क्रय-कर की दरें युक्तिसंगत बनाई गई हैं।

(ix) विदेशी प्रत्यक्ष विनियोगों व प्रवासी भारतीयों के विनियोगों को आकर्षित करने के लिए पारदर्शी नीतियाँ व नियम बनाए गए हैं।

(x) प्रवासी भारतीयों को रिहायशी मकानों के आवंटन में राजस्थान हाउसिंग बोर्ड, जयपुर विकास प्राधिकरण व शहरी-सुधार-ट्रस्ट (UIT) प्राथमिकता देंगे, बशर्ते कि वे राज्य में औद्योगिक प्रोजेक्ट लगाएँ। उन्हें औद्योगिक क्षेत्रों में भू-आवंटन में प्राथमिकता दी जाएगी। औद्योगिक प्रोत्साहन ब्यूरो (BIP) प्रत्येक FDI/NRI प्रोजेक्ट पर एक 'नोडल अधिकारी' नियुक्त करेगा जो उनको आवश्यक सहायता प्रदान करेगा ताकि आवश्यक स्वीकृतियाँ शीघ्रतापूर्वक मिल सकें।

नई औद्योगिक नीति में समाज के कमजोर वर्ग के उद्यमकर्ताओं के लिए विशेष सहायता व प्रोत्साहन की व्यवस्था—

(अ) अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति के उद्यम- कर्ताओं को दी जाने वाली सहायता—

(i) रीको के औद्योगिक क्षेत्रों में 4000 वर्गमीटर तक के भूखण्डों के आवंटन में 50% की रिबेट।

(ii) - राजस्थान वित्त निगम द्वारा दिए जाने वाले 5 लाख रु. तक के अवधि-कर्जों पर ब्याज में 2% की रिबेट (पूर्व में यह 2 लाख रु की सीमा तक हुआ करती थी)।

(iii) जनजाति उप-योजना क्षेत्र में 1% की अतिरिक्त ब्याज की रिबेट।

(iv) मार्जिन मनी 25% के स्थान पर 5%।

(v) कर्ज के आवेदन-पत्रों की जाँच की फीस में 50% की रियायत।

(vi) विद्युत-कनेक्शन क्रम को छोड़कर उपलब्ध कराना।

(vii) प्रधानमंत्री रोजगार योजना के तहत 22 5% आरक्षण।

(viii) उद्यमकर्ता विकास कार्यक्रमों में प्राथमिकता।

(आ) महिला उद्यमकर्ताओं को दी जाने वाली सहायता में बढ़ोतरी—

(i) महिलाओं की उद्यमशीलता-दक्षता, साख-सुविधा व रोजगार-संवर्धन की दृष्टि से मदद की जाएगी।

(ii) औद्योगिक भूमि पर 10% की विशेष रिबेट व महिला-उद्यम-निधि-स्कीम के अन्तर्गत इक्विटी (शेयर-पूँजी) की सहायता जारी रखी जाएगी।

(iii) महिला उद्यमकर्ताओं के लिए प्रशिक्षण-पाठ्य-क्रम पूरा करने पर फैक्ट्री-प्लेट आवंटित किए जा सकेंगे। उद्यमशीलता व प्रबन्ध-विकास-संस्थान के पाठ्यक्रमों में 30% सीटें इनके लिए आरक्षित की जाएँगी। इनके लिए पारिवारिक उद्योग स्कीम को सुदृढ़ किया जाएगा। प्रोजेक्ट-रिपोर्टों को समय-समय पर नवीनतम बनाया जाएगा।

प्रमुख या थ्रस्ट क्षेत्रों के विकास के लिए विशेष प्रयास—राज्य की विशेष क्षमता व विकास की भावी सम्भावनाओं को ध्यान में रखते हुए निम्न क्षेत्रों की प्रगति पर अधिक ध्यान केन्द्रित किया गया है—(1) गारमेंट्स व बुने हुए कपड़े, (2) रत्न व आभूषण, (3) वस्त्र (टेक्सटाइल्स), (4) इलेक्ट्रोनिक्स व दूरसंचार, (5) सूचना-प्रौद्योगिकी (Information Technology), (6) स्वचालित वाहन व उनके पुर्जे, (7) जूते व चमड़े की वस्तुएँ, (8) आयामी (डाइमेन्शनल) पत्थर, (9) सीमेंट, (10) काँच व सिरेमिक्स, (11) कृषि उत्पाद प्रसंस्करण।

इन उद्योगों में उत्पादन, बिक्री, निर्यात, गुणवत्ता-सुधार, प्रौद्योगिकीय प्रगति, आदि पर विशेष ध्यान देकर इनकी प्रतिस्पर्धात्मक शक्ति को उन्नत करने के आवश्यक कार्यक्रम अपनाए जाएँगे।

लघु, टाइनी व कुटीर उद्योगों का क्षेत्र तथा उसको उन्नत करने के उपाय—इनके सम्बन्ध में बिक्री, तकनीकी सुधार, कच्चे माल की उपलब्धि, आदि के लिए आवश्यक प्रयास किए जाएँगे। जिला-उद्योग-केन्द्रों में इनके उद्यम-कर्ताओं को समय पर सेवाएँ उपलब्ध की जाएँगी और इनकी गुणवत्ता व उत्पादकता में सुधार हेतु उत्तमता-पुरस्कार प्रारम्भ किए जाएँगे। इसी प्रकार दस्तकारियों के लिए डिजाइन में सुधार, हथकरघा क्षेत्र में बुनकरों की आमदनी में वृद्धि, उनके लिए कच्चे माल (सूत) की उपलब्धि, आदि की

व्यवस्था को बेहतर बनाया जाएगा। खादी व ग्रामीण उद्योग बोर्ड के माध्यम से इस क्षेत्र का विकास किया जाएगा। ग्रामीण गैर-कृषि क्षेत्र के विकास में चमड़ा उप-क्षेत्र, ऊन-उप-क्षेत्र, लघु खनिज उप-क्षेत्र, आदि को प्रोत्साहन दिया जाएगा। सरकारी खरीद में इनको 70% तक कीमत-अधिमान जारी रखा जाएगा। इससे लघु क्षेत्र की इकाइयों को लाभ होगा। सरकार नमक-क्षेत्रों के विकास पर अधिक ध्यान देगी और 18000 एकड़ खाली पड़े क्षारयुक्त भूखण्डों में चरणबद्ध तरीके से कृषि-कार्य चालू किया जाएगा।

4 मार्च, 1989 को पर्यटन का क्षेत्र उद्योग के अन्तर्गत ले लिया गया है। सरकार इसके लिए बुनियादी सुविधाओं के विकास, ऐतिहासिक स्थलों की सुरक्षा, आदि के लिए कृतसंकल्प है। इसके लिए प्रमुख सचिव, वित्त की अध्यक्षता में एक समिति बनाई गई है जो पर्यटन के विकास पर ध्यान केन्द्रित करेगी।

औद्योगिक विकास के लिए प्रेरणाएँ/रियायतें—पूर्व कमियों को दूर करने के लिए नई औद्योगिक नीति में उद्योगों के विकास के लिए नया पैकेज इस प्रकार रखा गया है—

बिक्री कर मुक्ति/आस्थगन योजना, 1998
(Sales Tax Exemption/Deferment Scheme, 1998)

एक नई बिक्री-कर मुक्ति/आस्थगन स्कीम, 1998 वर्तमान स्कीम, 1989 की एवज में लाई गई है। यह पहले की योजना से निम्न प्रकार से भिन्न मानी जा सकती है—

(i) नई स्कीम पहले से ज्यादा स्पष्ट है और इसका अर्थ लगाना अधिक आसान है।

(ii) अब प्रेरणाएँ घटते हुए क्रम में 11 से 14 वर्ष तक दी जाएँगी।

(iii) विकास-केन्द्रों के लिए प्रेरणाओं की मात्रा ऊँची रखी गई है ताकि उनका अधिक व्यवस्थित रूप में और समूहों (clusters) के रूप में विकास हो सके।

(iv) **अब एक प्रोजेक्ट उस स्थान पर भी लगाया जा सकेगा जहाँ पहले से उसी वस्तु का उत्पादन किया जा रहा है।** अतः प्रेरणाओं का सम्बन्ध स्थान (location) की बजाय उत्पादन-क्षमता व विनियोग से कर दिया गया है।

(v) अब स्थिर पूँजी विनियोग के क्षेत्र में इन-हाउस प्रशिक्षण सुविधाओं, अनुसंधान व गुणवत्ता नियंत्रण-उपकरणों का व्यय भी शामिल किया जा सकेगा।

(vi) नई प्रेरणा-योजना में प्रथम बिक्री की तारीख से, या विस्तार/विविधीकरण की तारीख से, अथवा रुग्णता घोषित होने की तारीख से औद्योगिक इकाई को लाभ मिल सकेंगे।

(vii) 150 करोड़ रु. व अधिक के विनियोग वाले प्रमुख प्रोजेक्टों तथा 500 व्यक्तियों को नियमित रोजगार देने वाले प्रोजेक्टों अथवा ग्रस्ट क्षेत्रों के प्रोजेक्टों को (कस्टमाइज्ड पैकेज) दिए जाएँगे।

(viii) वस्तुओं के विनिर्माण में प्रयुक्त कच्चे माल पर लगे रियायती क्रय-करों का पुनरीक्षण करके उन्हें युक्तिसंगत बनाया जाएगा।

ब्याज पर सब्सिडी (Interest Subsidy)—नई औद्योगिक नीति में पूँजी-विनियोग सब्सिडी (Capital investment subsidy) के स्थान पर ब्याज

पर सब्सिडी की योजना लागू करने पर अधिक बल दिया गया है। यह प्लान्ट व मशीनरी में 60 लाख रु. तक के विनियोग वाली इकाइयों को उपलब्ध होगी और भुगतान की अवधि तक ब्याज में 2% की दर से दी जाएगी और इसकी अधिकतम सीमा 15 लाख रु. होगी। यह सब्सिडी वित्तीय संस्थाओं व बैंकों को नियमित रूप से भुगतान करने पर ही प्राप्त हो सकेगी। यह व्यवस्था 31 मार्च, 2003 तक लागू करने का सुझाव दिया गया।

चुंगी से मुक्ति (Octroi exemption)—नवीं योजना में यह लाभ (चुंगी से मुक्ति) शहरी क्षेत्रों में 5 वर्ष तक प्लान्ट व मशीनरी तथा कच्चे माल की खरीद पर तथा ग्रामीण क्षेत्रों में 7 वर्ष तक नई इकाइयों को उपलब्ध होगा। लेकिन विस्तार व विविधीकरण के लिए यह केवल प्लान्ट व मशीनरी की खरीद पर ही उपलब्ध होगा।

चुंगी से मुक्ति की योजना को लागू करने की विधि को सरल किया गया है। प्लान्ट व मशीनरी तथा कच्चे माल के आयात का आवेदन-पत्र प्राप्त होने पर जिला-उद्योग-केन्द्र का जनरल मैनेजर चार माह के लिए चुंगी-मुक्ति सर्टिफिकेट जारी कर सकेगा और एक पास-बुक जारी की जाएगी ताकि वस्तुओं का आवागमन निर्बाध रूप से हो सके।

डीजल जेनेरेटिंग (DG) सेट पर सब्सिडी—यह लघु इकाइयों के लिए DG सेट की खरीद पर खरीद मूल्य के 25% की दर से (अधिकतम 2 50 लाख रु) दी जाएगी। यह सुविधा 31 मार्च 2003 तक उपलब्ध रहेगी।

मुद्रांक या स्टाम्प-शुल्क को युक्तिसंगत बनाना

मद	रियायत
1 कस्टम बॉंड पर	बॉंड राशि के 1% से घटाकर 0 1%, न्यूनतम राशि 100 रु तथा अधिकतम राशि 1000 रुपए
2. गिरवी प्रपत्र के प्रतिभूति बॉंड पर	0 5% से घटाकर 0 1%
3 प्रपत्र के पंजीकरण पर	1% फीस, अधिकतम राशि 25,000 रुपए

संशोधित साझेदारी प्रपत्रों/पूरक लीज-प्रपत्रों पर भी स्टाम्प-शुल्क 100 रु किया गया है। साझेदारी में परिवर्तन की स्थिति में प्रपत्र पर स्टाम्प-शुल्क 500 रु. निर्धारित किया गया है, बशर्ते कि शेयर राशि का 50% से कम हस्तान्तरित किया गया हो। रुग्ण इकाइयों की बिक्री व हस्तान्तरण पर स्टाम्प-शुल्क से मुक्ति रहेगी।

भूमि व भवन कर—इस नीति के तहत उद्योगों के लिए भूमि व भवन कर से छूट की सीमा 5 लाख रु. से बढ़ाकर 20 लाख रु. कर दी गई। यह कर बाज़ार-दर के आधार पर वसूल किया जाएगा। नई औद्योगिक इकाइयाँ उत्पादन की तारीख से 4 वर्ष की अवधि तक भूमि व भवन कर के भुगतान से मुक्त रहेंगी। यदि BIFR या वित्तीय संस्थाओं की किसी योजना के तहत कोई रुग्ण इकाई पुनः उत्पादन में आ जाती है तो वह भूमि व भवन कर से मुक्त रहेगी।

भूमि व भवन कर की उपर्युक्त शर्तें पर्यटन की परियोजनाओं पर भी लागू होंगी। 1 अप्रैल, 2003 से स्वयं भूमि व भवन कर ही समाप्त कर दिया गया है।

राज्य स्तरीय वित्तीय संस्थाओं के द्वारा उदारीकरण के उपाय

(अ) राजस्थान वित्त निगम (RFC) के उपाय—फील्ड स्तर पर कर्ज की स्वीकृति के अधिकार 2 लाख रु. से बढ़ाकर 20 लाख रु तक किए गए हैं। पूरी सूचना देने पर कर्ज की स्वीकृति 30 दिन के भीतर की जा सकेगी। RFC की शाखाओं को कर्ज के वितरण के लिए अधिकृत किया गया है। मूल्यांकन के लिए 7 दिन का समय नियत किया गया है। सारे कागजात पूरे होने पर व मूल्यांकन के बाद 24 घंटों के भीतर कर्ज का वितरण कर दिया जाएगा। उत्तम श्रेणी के उधार लेने वालों से ब्याज की दर 1% कम की जाएगी। पर्यटन की परियोजनाओं पर ब्याज की दर 1% कम होगी। समय पर भुगतान करने पर रिबेट 1% होगी।

(आ) रीको के उदारीकरण की दिशा में प्रयास—रीको उद्योगों को कई प्रकार से वित्त की सुविधा प्रदान करता है, जैसे लीज पर वित्तीय व्यवस्था, कार्यशील पूँजी के कर्ज देना उपकरण-वित्त-व्यवस्था, बिल पर बट्टा काटना, आदि। 10 करोड़ रु. से ऊपर की लागत वाले प्रोजेक्टों के लिए वित्तीय सहायता दी जाएगी। उद्योग से जुड़ी इन्फ्रास्ट्रक्चर परियोजनाओं के लिए (औद्योगिक क्षेत्रों में) वित्तीय सहायता दी जाएगी। समय पर भुगतान करने वालो को ब्याज में 2% की छूट दी जाएगी।

रुग्ण इकाइयों के पुनर्जीवन (Revival of sick units) के प्रयास—सरकार ने नई औद्योगिक नीति में रुग्ण औद्योगिक इकाइयों के पुनर्जीवन व पुनरुत्थान के लिए कुछ उपायों की घोषणा की है जो इस प्रकार हैं—

(i) राज्य सरकार बी.आई एफ आर (Board for Industrial and Financial Reconstruction) के नमूने पर उन रुग्ण इकाइयों के पुनर्जीवन व पुनर्स्थापन के लिए एक पृथक प्राधिकरण स्थापित करने पर विचार कर रही है जो बी.आई एफ आर. के दायरे में नहीं आते।

(ii) रीको व आर.एफ.सी. रुग्णता रोकने पर अधिक ध्यान देंगे। इसके लिए वे नियमित भुगतान करने वालों से 2% कम ब्याज की दर वसूल करेंगे।

(iii) इसके लिए राज्य वित्तीय संस्थाएँ प्रबंध के परिवर्तन, एक बार मे निपटारा, आदि पर भी विचार कर सकेंगी।

(iv) रुग्ण इकाइयों के लिए नई बिक्री कर प्रेरणा योजना में अधिक उदार रूप से प्रेरणा की व्यवस्था की गई है। जिन रुग्ण इकाइयों को प्रबंध में परिवर्तन करके नए विनियोग से पुनर्जीवित किया गया है, उन्हें नई इकाइयों के समान प्रेरणाएँ मिल सकेंगी। लेकिन शर्त यह होगी कि इन इकाइयों को भूतकाल में ऐसी प्रेरणा का लाभ नहीं मिला हुआ हो।

(v) रुग्णता की अवधि में रुग्ण इकाई से कोई भूमि व भवन कर नहीं लिया जाएगा, बशर्ते कि बी.आई एफ.आर. या वित्तीय संस्थाओं ने कोई पुनर्जीवन की योजना तैयार की है।

(vi) रुग्ण इकाइयों को पुनर्स्थापन योजना के तहत चुंगी-मुक्ति का लाभ मिलेगा, जैसा कि पुनर्स्थापन पैकेज में स्वीकार किया गया है।

(vii) रुग्ण इकाई के पुनर्जीवन के लिए राजस्थान राज्य विद्युत मण्डल (RSEB) न्यूनतम चार्जेज का 1/3 अंश, या वास्तविक उपभोग चार्जेज, (जो भी अधिक हो) वसूल कर सकेगा।

(viii) अपनी स्वयं की भूमि पर स्थापित इकाइयों द्वारा अतिरिक्त भूमि की बिक्री से प्राप्त राशि को संस्थापक का अंशदान (promoter's contribution) मानने की इजाजत दी गई है (बजाय राज्य सरकार से प्राप्त ब्याज मुक्त कर्ज के)। यह शर्त उन रुग्ण इकाइयों पर लागू होगी जिनके पुनर्स्थापन/ पुनर्जीवन की योजना बी.आई.एफ आर या वित्तीय संस्थाओं ने तैयार की है।

(ix) राज्य स्तरीय अन्तर-संस्थागत समिति (State level inter-institutional committee) का पुनर्गठन किया गया है ताकि वह बी.आई.एफ.आर. के दायरे से बाहर वाली इकाइयों पर ध्यान केन्द्रित कर सके।

नीति का क्रियान्वयन—उपर्युक्त नीति के क्रियान्वयन के लिए मुख्य सचिव की अध्यक्षता में एक अधिकार प्राप्त समिति बनाई गई है। वह इसके समयबद्ध क्रियान्वयन पर ध्यान देगी। राज्य सरकार द्वारा एक इन्फ्रास्ट्रक्चर विकास व विनियोग बोर्ड स्थापित किया गया है जिसके अध्यक्ष मुख्यमंत्री हैं। यह बड़ी परियोजनाओं व नीति सम्बन्धी प्रश्नों पर विचार करता है। यह निर्णय-प्रक्रिया में विलम्ब को कम करता है। बिक्री-कर ढाँचे को सुव्यवस्थित करने के लिए एक राज्य-स्तरीय समिति बनाई गई है।

राज्य सरकार विकास-समितियाँ गठित करेगी। इनमें विशेषज्ञ, उद्योग व सरकार के नुमाइन्दे होंगे जो प्रत्येक क्षेत्र के लिए कार्य-योजना तैयार करेंगे, प्रगति का मूल्यांकन करेंगे और आवश्यकता पड़ने पर सुधारों के बारे में सुझाव देंगे।

नई औद्योगिक नीति, 1998 की समीक्षा–इसमें कोई संदेह नहीं कि औद्योगिक नीति, 1998 पहले की औद्योगिक नीतियों की तुलना में ज्यादा व्यापक व अधिक उदार किस्म की है। इसमें उद्योगों के आधारभूत ढाँचे को मजबूत करने के लिए कई कदम उठाए गए हैं। उद्योगों को ब्याज-सम्बन्धी रियायतें देने पर काफी बल दिया गया है। पूँजी-विनियोग सब्सिडी समाप्त करके उसके स्थान पर ब्याज-सब्सिडी की नई व्यवस्था लागू की गई है। इस नीति को विशेष उद्योगों के विकास की दृष्टि से तैयार किया गया है। अतः यह विशेष उद्योगपरक नीति (industry-specific policy) कही जा सकती है। इसमें विकास की आवश्यकताओं का पूरा ध्यान रखा गया है।

अतः 1998 की नई औद्योगिक नीति पहले से ज्यादा व्यापक किस्म की है और इसमें राजस्थान के तीव्र गति से औद्योगीकरण की कल्पना की गई है।

क्या नई औद्योगिक नीति, 1998 राज्य की औद्योगिक समस्याओं का निराकरण कर पाएगी ?

यद्यपि नई औद्योगिक नीति, 1998, पूर्व औद्योगिक नीतियों की तुलना में अधिक व्यापक व अधिक स्पष्ट है; लेकिन प्रश्न उठता है कि क्या यह राज्य का तीव्र गति से

औद्योगीकरण कर पाएगी ? इसके साथ कई अन्य प्रश्न भी उत्पन्न होते हैं; जैसे क्या इस नीति से राज्य की आय में विनिर्माण क्षेत्र का योगदान तीव्र गति से बढ़ पाएगा, क्या यह नीति औद्योगिक रोजगार बढ़ा पाएगी, क्या इससे राज्य में संतुलित औद्योगिक विकास हो पाएगा, आदि, आदि।

औद्योगिक नीति 1998 की आलोचना के निम्न बिन्दुओं पर ध्यान दिया जाना चाहिए—

(1) यह नीति ऐसे समय में घोषित की गई थी जब देश औद्योगिक मंदी के दौर से गुजर रहा था और उसका राजस्थान के उद्योगों पर भी प्रतिकूल प्रभाव पड़ा था। औद्योगिक मंदी का मुख्य कारण माँग की कमी माना गया है। इसलिए जब तक औद्योगिक माल की माँग नहीं बढ़ती तब तक उद्योगों की स्थिति में सुधार नहीं आ सकता। अतः नई औद्योगिक नीति के उदार होते हुए भी जब तक देशव्यापी तीव्र औद्योगिक विकास का मार्ग प्रशस्त नहीं होता तब तक राज्य में औद्योगिक विकास की दर तेज होने के आसार नजर नहीं आ सकते। इसके अलावा 1998 का वर्ष राज्य में विधानसभा के चुनावों का वर्ष रहा था, जिससे नीति के क्रियान्वयन की दिशा में सक्रिय कदम उठाने में कठिनाई रही। सरकार नई औद्योगिक नीति के आधार पर राज्य में औद्योगिक विनियोगों को प्रोत्साहन देने के लिए देश के प्रमुख शहरों में 'औद्योगिक अभियान' (industrial campaigns) चला रही है, आशा है देश में औद्योगिक मंदी के बादल छंटने से राज्य भी औद्योगिक प्रगति के मार्ग पर तेजी से आगे बढ़ने लगेगा।

(2) राज्य की पावर की स्थिति को सुदृढ़ करने के मार्ग में कई प्रकार की बाधाएँ उत्पन्न हो गई हैं। पूर्व में चयनित सौर्य ऊर्जा की परियोजनाएँ संकट का सामना करने लगी हैं। इसलिए जब तक राज्य की पावर की स्थिति में काफी सुधार नहीं आ जाता तब तक औद्योगिक विकास के नए अवसरों का लाभ उठाने में बाधा जारी रहेगी।

(3) नई नीति में पूँजी-सब्सिडी के स्थान पर ब्याज पर सब्सिडी की नई योजना लागू की गई है। इसका एक प्रभाव तो यह होगा कि चालू औद्योगिक इकाइयों के समक्ष नई इकाइयों के आने से (जो पूँजी-सब्सिडी के कारण आने का प्रयास करतीं) जो प्रतिस्पर्धा उत्पन्न होती उसमें कमी आएगी। इससे चालू इकाइयों को अपना अस्तित्व बनाए रखने में मदद मिलेगी। **लेकिन यदि पड़ौसी राज्यों जैसे गुजरात, मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश आदि में पूँजी-सब्सिडी जारी रही व अधिक उदार बना दी गई तो राजस्थान में नए उद्योगों की स्थापना में (विशेष रूप से पिछड़े क्षेत्रों में) कठिनाई आ सकती है।** देखना यह है कि **पूँजी-सब्सिडी के स्थान पर ब्याज की सब्सिडी का विकल्प कितना सफल प्रमाणित होता है। यह औद्योगिक विकास को किस सीमा तक प्रोत्साहित कर पाता है।**

(4) नई औद्योगिक नीति में भी पूर्व नीतियों की भाँति सार्वजनिक व सहकारी उद्योगों की समस्याओं के समाधान का कोई कार्यक्रम प्रस्तुत नहीं किया गया है। वर्तमान में इस क्षेत्र में कई इकाइयों की लाभप्रदता का स्तर काफी नीचा पाया जाता है। अतः इस क्षेत्र की समस्याओं के हल के लिए भी एक व्यापक पैकेज की आवश्यकता बनी हुई

है। लगातार हानि उठाने वाली इकाइयों के सम्बन्ध में एक नई व प्रभावपूर्ण नीति की आवश्यकता आज भी बनी हुई है।

(5) 1994 की नीति में 'इन्सपेक्टर राज' कम करने पर बल दिया गया था। उद्यमकर्ताओं का मानना है कि इसमें ऊपरी तौर पर तो अवश्य कुछ कमी हुई है, लेकिन व्यवहार में बिक्री-विभाग, उत्पादन-शुल्क (आबकारी) विभाग, आयकर-विभाग, व अन्य विभागों के विभिन्न स्तरों के इन्सपेक्टरों से उद्यमकर्ताओं को काफी सीमा तक अनावश्यक परेशानी का सामना करना पड़ता है। अतः इस सम्बन्ध में अधिक पारदर्शी व प्रामाणिक परिवर्तन की आवश्यकता बनी हुई है; जिस पर विचार करके कोई विश्वसनीय व ठोस कार्यक्रम प्रस्तुत किया जाना चाहिए। राज्य-स्तर पर इन्सपेक्टर राज की समस्या काफी चर्चा का विषय रही है, लेकिन इसे समाप्त करने की दिशा में अभी तक कोई प्रभावी व ठोस कदम नहीं उठाया जा सका है। राज्य के उद्यमकर्ताओं ने इस सम्बन्ध में संतोष जाहिर नहीं किया है।

(6) कभी-कभी केन्द्र के कुछ निर्णयों से राज्य के उद्योग संकट में पड़ जाते हैं और उस स्थिति में औद्योगिक नीति कारगर नहीं हो पाती। उदाहरण के लिए, उच्चतम न्यायालय के एक आदेश के आधार पर पर्यावरणीय कारणों से कुछ वर्ष पूर्व राज्य की कई खानें बंद कर दी गई थीं, जिससे खनिज-पदार्थों पर आधारित उद्योगों को काफी आघात पहुँचा था। इसी प्रकार कभी-कभी केन्द्र की कर-नीति से कुछ उद्योगों के लिए कठिनाई उत्पन्न हो जाती है; जैसे 1998-99 के केन्द्रीय बजट में मार्बल उद्योग पर उत्पाद-शुल्क के बढ़ाने से संकट छा गया था (30 रु. प्रति वर्गमीटर से 40 रु. प्रति वर्गमीटर उत्पाद-शुल्क कर देने से)। बाद में केन्द्रीय वित्त मंत्री ने 400 रु. प्रति वर्ग मीटर के मूल्य से कम की टाइलों पर तो उत्पाद-शुल्क घटाकर 30 रु. प्रति वर्गमीटर की दर से कर दिया, लेकिन इस मूल्य से ऊपर के लिए 40 रु. प्रति वर्गमीटर ही रखा, जिस पर राज्य सरकार ने केन्द्र से पुनः विचार करने का आग्रह किया था।

निष्कर्ष व सुझाव—राजस्थान में औद्योगिक विकास की भावी सम्भावनाएँ काफी हैं। नई औद्योगिक नीति में बुनियादी सुविधाओं के विकास पर पर्याप्त रूप से बल दिया गया है। लेकिन वर्तमान में निजी उद्यमकर्ताओं को कई प्रकार की कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है; जैसे उत्पादन के लिए ऋणों पर ब्याज की ऊँची दरें, उन पर कई प्रकार के करों का भार, माल की बिक्री-सम्बन्धी कठिनाइयाँ, कार्यशील पूँजी की कमी आदि। अतः भविष्य में उद्यमकर्ताओं की विभिन्न समस्याओं को हल करने पर अधिक जोर देना चाहिए, इन्फ्रास्ट्रक्चर; जैसे विद्युत, सड़क, रेल-परिवहन, संचार, आदि के विकास को तेज किया जाना चाहिए एवं माल की बिक्री की सुविधाओं का तेजी से विस्तार किया जाना चाहिए।

अतः औद्योगिक विकास पर कई तत्वों का प्रभाव पड़ता है जिन पर एक साथ अधिक सक्रिय रूप से ध्यान देने से राजस्थान औद्योगिक दृष्टि से विकसित राज्यों की पंक्ति में अपना स्थान पा सकता है। लेकिन इसके लिए अभी भारी प्रयास करना होगा। निस्संदेह नई

औद्योगिक नीति इस दिशा में अपना योगदान देगी । इसमें प्रस्तावित विभिन्न प्रेरणाओं व प्रोत्साहनों को व्यवहार में पूर्णरूप से व पूरी तत्परता से लागू करने की आवश्यकता है ।

पूर्व में गहलोत सरकार द्वारा औद्योगिक विकास के लिए उठाए गए कदम[1]

कांग्रेस सरकार ने औद्योगिक नीति 1998 को आवश्यक परिवर्तनों के आधार पर आगे बढ़ाने का प्रयास किया था । उस समय राज्य में 33 जिला उद्योग-केन्द्र व 8 उप-केन्द्र उद्योग-निदेशालय के अन्तर्गत कार्य कर रहे थे ।

राज्य मे बीकानेर, धौलपुर, झालावाड़, आबू रोड़ व भीलवाड़ा में औद्योगिक विकास केन्द्रों की स्थापना का कार्य किया गया था। प्रत्येक केन्द्र पर 30 करोड़ रु. खर्च किये जाने थे। चार एकीकृत एन्फ्रास्ट्क्चर विकास केन्द्र (मिनी ग्रोथ सेन्टर) जोधपुर, नागौर, निवाई व कलड़वास में, प्रत्येक 5 करोड़ रु. की लागत से स्वीकृत किये गये। ब्याज पर सब्सिडी की 2% की स्कीम लागू की गयी थी। डीजल जेनरेटिंग सैट की खरीद पर 25% की सब्सिडी (अधिकतम 2.50 लाख रु.) लागू की गयी। औद्योगिक विकास की दिशा में पिछली सरकार के प्रयास इस प्रकार रहे थे—

(i) संशोधित प्रधानमंत्री रोजगार योजना के तहत व्यावसायिक सेवा के लिए 1 लाख रु , तथा औद्योगिक इकाई स्थापित करने के लिए 2 लाख रु का कर्ज, 8वीं कक्षा पास युवकों के लिए, उपलब्ध कराया गया ।

घरेलू उद्योगों की स्कीम के तहत विधवाओं, आर्थिक दृष्टि से कमजोर व तलाक शुदा औरतों के लिए प्रशिक्षण की व्यवस्था की गयी ताकि वे आत्म-निर्भर हो सकें ।

(ii) ब्यूरो ऑफ इण्डस्ट्रियल प्रोमोशन (BIP) के माध्यम से निवेशकर्ताओं के लिए 'एकल खिड़की स्कीम' (Single window scheme) लागू की गयी ।

2002-2003 तक 2 41 लाख औद्योगिक इकाइयो का पंजीकरण किया जा चुका था जिनमें 3571 करोड़ रु. की पूँजी लग चुकी थी। इनमें 9 27 लाख व्यक्तियों को काम दिया गया। 6-10 जनवरी, 1999 के बीच भारतीय-उद्योग-परिसंघ (CII) के सहयोग से एक 'पार्टनरशिप शिखर सम्मेलन' जयपुर मे किया गया, जो राज्य को नई सहस्राब्दि के लिए तैयार करने की दृष्टि से काफी महत्त्वपूर्ण रहा ।

(iii) एक उच्चस्तरीय 'आर्थिक विकास बोर्ड' गठित किया गया जिसके अध्यक्ष मुख्यमंत्री थे। इसका काम राज्य के समग्र विकास की दीर्घकीलन योजना में अपना योगदान देना था ।

(iv) इण्डिया स्टोनमार्ट, 2000 का आयोजन 2-6 फरवरी, 2000 के बीच तथा इण्डिया स्टोनमार्ट 2003 का 31 जनवरी, 2003 से 4 फरवरी, 2003 के बीच जयपुर में किया गया। इसे 'स्टोन्स के विकास केन्द्र' (CDOS) ने संगठित किया था। इसमें स्टोन से जुड़ी विश्व की बड़ी कम्पनियो ने भाग लिया था । इससे राज्य के स्टोन-उद्योग के विकास में मदद मिलने की सम्भावना व्यक्त की गयी ।

(v) भिवाड़ी को रेल से जोड़ने का प्रयास किया गया ।

(vi) औद्योगिक क्षेत्रो में सामाजिक बुनियादी ढाँचा मजबूत किया गया ।

(vii) उस समय राजस्थान, पंजाब, हरियाणा व दिल्ली राज्य मिलकर गुजरात में एक 'ड्राई-पोर्ट' स्थापित करने को सहमत हो गए थे। कोटा के सकतपुरा स्थान पर एक फ्लाई एश प्रोजेक्ट स्थापित करने का निर्णय किया गया ।

---

1. Economic Review 2003-2004, pp 25-31

(viii) रीको, आर.एफ.सी. व लघु उद्योग निगमों के कार्यों को अधिक चुस्त-दुरुस्त करने का प्रयास किया गया ।

(ix) 'सिंगल-विन्डो-क्लीयरेन्स' के लिए त्रिस्तरीय समितियाँ गठित की गयी थीं। प्रथम स्तर के लिए विनियोग की सीमा 3 करोड़ रु. रखी गयी, जिसके लिए जिलाधीश की अध्यक्षता वाली समिति निर्णय लेगी; 3 करोड़ रु. से 25 करोड़ रु. तक के लिए विनियोग के लिए राज्य के मुख्य सचिव की अध्यक्षता वाली समिति निर्णय लेगी और 25 करोड़ रु. से ऊपर के विनिवेश के लिए निर्णय 'इन्फ्रास्ट्रक्चर व विनियोग प्रोत्साहन बोर्ड' की समिति मुख्यमंत्री की अध्यक्षता में निर्णय लेगी । इन तीनों अधिकार प्राप्त समितियों के निर्णय सम्बद्ध विभागों के लिए बाध्य माने जाएंगे । 'इन्फ्रास्ट्रक्चर व विनियोग प्रोत्साहन बोर्ड' ने कई प्रतिष्ठामूलक निवेश प्रस्तावों को क्लीयरेंस प्रदान की थी ।

जनवरी 2004 से बी जे पी सरकार मुख्यमंत्री श्रीमती वसुंधरा राजे के नेतृत्व में राज्य के औद्योगिक विकास के लिए नई नीति व नया कार्यक्रम तैयार करने में संलग्न है । नई सरकार प्रमुखतया निवेश को बढ़ाने पर सक्रिय रूप से विचार कर रही है ताकि राज्य अपनी औद्योगिक क्षमता का विस्तार कर सके ।

आशा है नई सरकार औद्योगिक विकास को नए आयाम दे पाएगी ।

परिशिष्ट-I : बहुराष्ट्रीय कम्पनियों व अन्य निगमित संस्थाओं (MNCs/OCBs) द्वारा राजस्थान में विनियोग (1990-91 से 2000-01 की अवधि में)

क्र. सं.	प्रोजेक्ट का नाम व स्थान	सहयोगी का नाम व देश	वस्तु	प्रोजेक्ट लागत (करोड़ रु.)
	वर्ष 1990-91			
1	बोश एण्ड लोम्ब (इण्डिया) लि., भिवाड़ी	बोश एण्ड लोम्ब Inc अमेरिका	सोफ्ट कॉन्टेक्ट लैंस मेटैलिक स्पेक्टेकल फ्रेम सन ग्लासेज	70.00
2	महाराजा इन्टरनल लि (इलेक्ट्रोलक्ष), शाहजहाँपुर	एबी इलेक्ट्रोलक्ष स्वीडन	वाशिंग मशीनें, डिश वाशर्स एण्ड रेफ्रिजरेटर्स	15.00
3	राजस्थान पोलीमर्स एण्ड रेजीन्स लि., आबू रोड (बन्द, BIFR में)	एम जी ओ टैक्नोचिम, रूस	एबीसी रेजीन्स	73.00
	उप जोड़ (Sub-total)			158.00
	वर्ष 1991-92			
4	सेम्कोर ग्लास लि., नया नोहरा	कोर्निंग एण्ड सेम्संग, अमेरिका व कोरिया	ग्लास शैल, ब्लेक एण्ड व्हाइट टीवी पिक्चर ट्यूबों व मोनीटर (इकाई I)	210.00

क्र. सं.	प्रोजेक्ट का नाम व स्थान	सहयोगी का नाम व देश	वस्तु	प्रोजेक्ट लागत (करोड़ रु.)
5	एस आई सी पी ए (इण्डिया) लि , भिवाड़ी	SICPA. SA, स्विट्जरलैण्ड	सिक्यूरिटी प्रिंटिंग स्याही	34 00
6	राजस्थान ब्रुअरीज लि शाहजहाँपुर (बंद)	स्ट्रो (stroh), अमेरिका	बीयर, जौ माल्ट, माल्ट स्पिरिट, पेप्सी सोफ्ट ड्रिंक कैनिंग	125 00
7	क्लाइमेट सिस्टम्स (I) लि , भिवाड़ी	फोर्ड मोटर कं , अमेरिका	यान्त्रिक दृष्टि से जोड़े गए अल्यूमिनियम रेडियेटर्स	26 00
8	प्रेफ्को इण्डस्ट्रीज लि. एम आई ए	युडियम, अमेरिका	स्टोन उद्योग के लिए डायमण्ड इम्प्रेगनेटेड कटिंग टूल्स	20 00
9	सुपर कॉम्पेक्ट डिस्क लि , शाहजहाँपुर	डेल्टा, यू के (संयुक्त राज्य)	ऑडियो कॉम्पेक्ट डिस्क	13.28
	उप जोड़			428.28
	वर्ष 1992–93			
10	अम्बे स्नेड ओक्साइड्स (Ambe Sneyd Oxides) लि भिवाड़ी	Sneyd Oxides Ltd यू.के	सिरेमिक कलर्स	11.50
11	राठी ग्राफिक टेक. लि , भिवाड़ी	रेवन इण्डस्ट्रीज, अमेरिका	टोनर्स एण्ड डेवलपर्स	14 30
	वर्ष 1992–93			
12	एरिकशन टेलीकम्यूनि-केशन्स, लि , कूकस	एल एम एरिकसन, स्वीडन	इलेक्ट्रोनिक स्विटिंग सिस्टम	20 00
13	पोदार पिगमेण्ट्स लि., सीतापुरा	रिसर्च इन्स्टीटयूट फॉर मेनमेड फिल्स, चेकोस्लोवाकिया	मास्टर बैचेज	19 75
14	एशियन कन्सोलीडेटेड लि , शाहजहांपुर (छोड़ दिया गया)	CMB पैकेजिंग टेक्नोलोजी, यू के	बीयर केन्स	125 00
15	गोविन्द रबर लि. भिवाड़ी	यूनियन रबर इण्डिया कं. लि , ताइवान	साइकिल टायर व ट्यूब	27 02
16	इण्डिया शेविंग प्रोडक्ट्स लि , भिवाड़ी	जिलेट, अमेरिका, अमेरिका	शेविंग ब्लेडें, शेविंग रेजर्स एण्ड शेविंग सिस्टम	119 00

क्र. सं.	प्रोजेक्ट का नाम व स्थान	सहयोगी का नाम व देश	वस्तु	प्रोजेक्ट लागत (करोड़ रु.)
17	सोपानी वर्स्टेड इण्डस्ट्रीज लि., सुखेरा (छोड दिया गया)	EMS इन्वेन्टा AG स्विट्जरलैण्ड	ऊनी वर्स्टेड यार्न	120.00
18	विजय ब्रूअरीज लि., भिवाड़ी	Henniger, जर्मनी	बीयर	20.96
19	टेरी FAB (इण्डिया) लि केंदई	GMC अमेरिका	टेरी टोवल्स	19.62
20	अम्बूजा इण्डस्ट्रीज लि., भिवाड़ी	स्टील यूनियन कं., स्पेन	कोल्ड रोल्ड स्टील स्ट्रिप्स	15.15
21	बीनस ओवरसीज इलेक्ट्रिकल्स, लि. सीतापुरा	BMS Gmbh जर्मनी	हाइब्रिड माइक्रो सर्किट्स	15.80
	उप-जोड़			528.10
	वर्ष 1993–94			
22	टैक गैस इक्विपमेंट्स प्रा लि अलवर	कार्बोनिस, स्विट्जरलैण्ड	एयर सेपरेटर्स प्लान्ट	13.30
23	ग्वालियर पोलीपाइप्स लि., कोटा (छोड दिया गया)	CIDA, कनाडा (कनाडा की अन्तर्राष्ट्रीय विकास एजेन्सी)	PVC रिजिड पाइप्स	11.26
	वर्ष 1993–94			
24	Aksh इण्डिया लि. भिवाड़ी	रोजेनडॉल (Rosendaul) Austria (Alcatel की सहायक कं.)	ऑप्टिकल फाइबर केबल्स	17.00
	उप-जोड़			41.56
	वर्ष 1994-95			
25	अक्श (Aksh) इण्डिया लि भिवाड़ी	Rosendaul ऑस्ट्रिया	ऑप्टिकल फाइबर लाइन टर्मिनल उपकरण	10.00
26	सोलरटेक इण्डिया लि बगरू	IREDA, इटली	सिलीकोन वैफर्स	8.00
	उप-जोड़			18.00
	वर्ष 1995-96			
27	सिलीकोन्स इण्डस्ट्रीज (इण्डिया) लि., तिजारा (बंद)	क्रेमीनीज पोलीमर, यूक्रेन	सिलीकोन प्रोडक्ट्स	60.25
28	महाराजा इन्टरनल लि. (इलेक्ट्रोलक्स) शाहजहाँपुर	ए बी इलेक्ट्रोलक्स स्वीडन	कम्प्रेसर फॉर रेफ्रिजरेटर्स	10.00
29	फिलिप्स इण्डिया लि., कोटा (छोड दिया गया)	फिलिप्स हालेण्ड, हालेण्ड	FTL & GIS लैम्प	200.00

क्र. सं.	प्रोजेक्ट का नाम व स्थान	सहयोगी का नाम व देश	वस्तु	प्रोजेक्ट लागत (करोड़ रु)
30	सकाटा Ins (इण्डिया) लि. भिवाडी	सकाटा (Sakata) जापान	पैकेजिंग इंक	14 28
31	कमल sabre मोटर लि सीतापुरा (छोड दिया गया है)	Sabre Intl Corp. अमेरिका	स्पोर्ट्स कार	5 00
32	महाराजा इन्टरनेशनल लि (इलेक्ट्रोलक्स) शाहजहाँपुर	AB इलेक्ट्रोलक्स स्वीडन	फ्रोस्ट फ्री रेफ्रिजरेटर एण्ड अन्य व्हाइट गुडस (विस्तार)	50 00
33	इथकॉन इण्डस्ट्रीज लि उदयपुर	Bausano SPS इटली	प्लास्टिक लकडी (फोम वाली PVC शीट)	16 65
34	ट्रेन्डी ट्रोपीकल फूडस लि सीतापुरा (छोड दिया गया)	Gauthier SA फ्रास	सेमी–केन्डीड फ्रूट्स	4 60
	उप जोड			360 78
	वर्ष 1996-97			
35	सेम्कोर ग्लास लि नया नोहरा	कोर्निंग एण्ड सेम्सग एण्ड कोरिया	कलर टयूब ग्लास शैल्स (फेज II)	800 00
36	कॉम्प्यूकॉम टेक्नोलोजीज प्रा लि कनकपुरा	कॉम्प्यूकॉम अमेरिका	कम्प्यूटर सॉफ्टवेयर	1 50
37	रोयल इण्डिया ज्यूलरी मैन्यूफेक्चरिंग क लि मालवीय इण्डस्ट्रियल एरिया	रोमर स्पेन	स्वर्ण–आभूषण	2 00
38	मोटर इण्डस्ट्रीज क लि (MICO) सीतापुरा	बोश जर्मनी	फ्यूअल इन्जेक्शन उपकरण	250 00
	उप–जोड			1053 50
	वर्ष 1998 99			
39	कॉपर ऑटोमोबाइल प्रोडस (I) लि भिवाडी	चैम्पिअन अमेरिका	स्पार्क प्लग्स	120 00
40	फ्लाइमेट सिस्टम्स (I) लि भिवाडी	फोर्ड मोटर क अमेरिका	यान्त्रिक दृष्टि से जोडे गए अल्यूमिनियम रैडियेटर्स (विस्तार)	30 00
41	रियोना इण्डस्ट्रीज लि जोधपुर	Cnlofle फ्रास	स्टेनलेस स्टील कटलरी	12 40
	उप–जोड			162 40
	वर्ष 2000-2001			
42	ओसीएपी चेसीस पार्ट्स प्रा लि भिवाडी अलवर (क्रियान्वयन में)	OCAP S P A इटली	स्टीयरिंग एण्ड ससपेन्सन पार्ट्स	12 00
	उप–जोड			12 00
	कुल (Total)			2762 62
			घटाओ निवेश बंद इकाइयाँ	757 00
			विशुद्ध निवेश (लगभग) 2000 करोड रु	

(स्रोत रीको अक्टूबर 2001) [नोट: तालिका से स्पष्ट होता है कि अधिकांश MNCs अमेरिका की रही हैं तथा ये ज्यादा संख्या में भिवाडी में स्थित है।]

परिशिष्ट–II
राजस्थान से निर्यात[1]
(Exports from Rajasthan)

(करोड़ रु. में)

वस्तुओं के नाम	1991-92	1996-97
इंजीनियरिंग	53.3	175.5
इलेक्ट्रोनिक्स	3.8	73.2
फूड/एग्रो प्रोडक्ट्स	80.2	533.3 III
रेडीमेड गारमेंट्स	68.0	370.0
टेक्सटाइल	142.7	588.0 I
कारपेट एण्ड दरीज	58.0	134.0
प्लास्टिक एण्ड लिनोलियम	3.1	28.0
जैम एण्ड ज्यूलरी	206.0	575.1 II
डायमण्ड	—	446.6 IV
केमिकल एण्ड एलाइड	34.6	234.1
ड्रग्स एण्ड फार्मास्यूटिकल्स	1.6	18.0
हैण्डीक्राफ्ट्स	28.4	176.2
लैदर	5.2	37.2
मार्बल एण्ड ग्रेनाइट	3.6	87.1
वूल एण्ड वूलन्स	0.4	3.5
हैण्डलूम	—	0.2
कुल	688.9	3480.0

[तालिका से स्पष्ट होता है कि 1996-97 में 400 करोड़ रुपए से अधिक की निर्यात की मदों में स्थान चार मदों का क्रमशः टेक्सटाइल (वस्त्रों), जेम्स व ज्यूलरी, फूड/कृषि-उत्पादों व डायमंड का रहा। इनका निर्यात 2143 करोड़ रुपए का रहा, जो राज्य के कुल निर्यातों का 62% (लगभग 2/3) आँका गया है।]

पूर्व सरकार ने नई निर्यात-नीति (new export policy) की रूपरेखा तैयार की थी जिसके तहत वर्ष 2003 तक 15 हजार करोड़ रु. का निर्यात करने का लक्ष्य प्रस्तावित था। राज्य से तैयार वस्त्र, रत्न व आभूषण, हैण्डीक्राफ्ट, इमारती पत्थर,

1 राजस्थान एजस, अप्रैल-जुलाई 1999, सूचना एवं जनसम्पर्क निदेशालय, जयपुर पृ 9

कपड़ा, कम्प्यूटर सोफ्टवेयर व जड़ी-बूटी आधारित दवाओं (हर्बल दवाओं) का निर्यात बढ़ाया जा सकता है।

प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. राजस्थान की औद्योगिक नीति के सम्बन्ध में कौनसा कथन सही माना जाएगा ?
   (अ) यह पूँजी-गहन की बजाए श्रम-गहन विधियों पर अधिक बल देती है।
   (ब) यह पिछड़े क्षेत्रों के विकास पर अधिक जोर देती है
   (स) यह उदारवादी है
   (द) यह सुधारवादी है
   (ए) यह निर्यातोन्मुखी है
   (ऐ) सभी (ऐ)
2. वर्तमान में राज्य के औद्योगिक विकास में कौनसा औद्योगिक समूह सबसे ज्यादा सहायक हो सकता है ?
   (अ) खनिज-आधारित (ब) वन-आधारित
   (स) कृषिगत पदार्थ-आधारित (द) तिलहन-आधारित (अ)
3. जयपुर जिले में मानपुरा-माचेड़ी को विकसित किया गया है—
   (अ) सोफ्टवेयर कॉम्पलेक्स के रूप में
   (ब) हार्डवेयर कॉम्पलेक्स के रूप में
   (स) लेदर (चमड़ा) कॉम्पलेक्स के रूप में
   (द) हैण्डीक्राफ्ट कॉम्पलेक्स के रूप में (स)
   [RAS 1998, सामान्य ज्ञान व सा. विज्ञान]
4. वर्ष 2003 में राज्य में किस वस्तु का उत्पादन पिछले वर्ष की तुलना में सबसे ज्यादा घटा ? (प्रतिशत में)
   (अ) खाद्य-तेल (ब) घी
   (स) सोडियम क्लोराइड (नमक) (द) सभी किस्म की खल (35%) (ब)
5. राज्य में गलीचा प्रशिक्षण केन्द्र कौन संचालित करता है ?
   (अ) राजस्थान वित निगम (ब) रीको
   (स) राजसीको (द) राज्य का गलीचा विभाग (स)
6. राज्य में औद्योगिक विकास केन्द्र (IGC) स्थापित किए गए हैं—
   (अ) बीकानेर, धौलपुर, झालावाड़, आबूरोड़ व भीलवाड़ा
   (ब) बीकानेर, जोधपुर, झालावाड़, सिरोही, नागौर
   (स) उदयपुर, भीलवाड़ा, आबूरोड, जोधपुर, निवाई
   (द) कोटा, झालावाड़, अजमेर, गंगानगर, आबूरोड (अ)

7. राजस्थान में मार्च, 2003 के अंत में कितने औद्योगिक क्षेत्र स्थापित हो चुके थे ?

(अ) 275 (ब) 270

(स) 286 (द) 302 (स)

8. मठार औद्योगिक क्षेत्र किस जिले में स्थित है ?

(अ) जोधपुर में (ब) बीकानेर में

(स) कोटा में (द) झालावाड़ में (अ)

9. राज्य में कितने औद्योगिक विकास केन्द्र स्थापित हो चुके हैं ?

(अ) 5 (ब) 6

(स) 4 (द) 7 (अ)

10. जयपुर जिले में मानपुरा-माचेड़ी को विकसित किया गया है—

(अ) हार्डवेयर कॉम्पलेक्स के रूप में

(ब) लेदर (चमड़ा) कॉम्पलेक्स के रूप में

(स) सोफ्टवेयर कॉम्पलेक्स के रूप में

(द) हैण्डीक्राफ्ट कॉम्पलेक्स के रूप में (ब)

11. 1998 की औद्योगिक नीति की सबसे प्रमुख बात है—

(अ) समूहों के विकास पर विशेष बल

(ब) आधारभूत सुविधाओं में वृद्धि करना

(स) विशेष प्रकार के उद्योगों के विकास पर ध्यान केन्द्रित करना

(द) मानवीय संसाधनों का विकास (अ)

12. राज्य में सोफ्टवेयर-टेक्नोलोजी-पार्क कहाँ स्थापित होगा ?

(अ) गंगानगर क्षेत्र में

(ब) निर्यात-प्रोत्साहन-औद्योगिक-पार्क, जयपुर में

(स) कोटा में

(द) जोधपुर में (ब)

13. राजस्थान का पहला निर्यात प्रोत्साहन औद्योगिक पार्क (EPIP) कहाँ विकसित किया गया है ?

(अ) भिवाड़ी में (ब) सीतापुरा (जयपुर) में

(स) हीरावाला (जयपुर) में (द) उदयपुर में (ब)

14. राजस्थान का पहला निर्यात प्रोत्साहन औद्योगिक पार्क (EPIP) कहाँ विकसित किया गया है—

(अ) भिवाड़ी (ब) सीतापुरा (जयपुर)

(स) कोटा (द) इनमें से कोई नहीं (ब)

15. 1998 की औद्योगिक नीति की सबसे प्रमुख बात है—
(अ) समूहों के विकास पर विशेष बल
(ब) आधारभूत सुविधाओं में वृद्धि करना
(स) विशेष प्रकार के उद्योगों के विकास पर ध्यान केन्द्रित करना
(द) मानवीय संसाधनों का विकास (अ)

अन्य प्रश्न

1. राजस्थान की नई औद्योगिक नीति, 1998 का आलोचनात्मक परीक्षण कीजिए। यह राज्य के औद्योगिक विकास को कहाँ तक प्रभावित कर पाएगी ?
2. नई औद्योगिक नीति 1998 का वर्णन निम्न शीर्षकों के अन्तर्गत कीजिए।
   (i) इन्फ्रास्ट्रक्चर का विकास,
   (ii) औद्योगिक समूहों (complexes) की स्थापना,
   (iii) शक्ति का विकास,
   (iv) निर्यात-संवर्धन,
   (v) उद्योग-विशिष्ट क्षेत्र या थ्रस्ट-क्षेत्र,
   (vi) बिक्री-कर मुक्ति/आस्थगन योजना, 1998,
   (vii) रुग्ण इकाइयों को पुनर्जीवन तथा
   (viii) विविध प्रकार की प्रेरणाएँ।
3. राजस्थान सरकार द्वारा औद्योगिक विकास के लिए दिए गए विभिन्न प्रोत्साहनों एवं सुविधाओं का वर्णन कीजिए।

18

राजस्थान में सार्वजनिक उपक्रम
(Public Enterprises in Rajasthan)

योजनाबद्ध विकास में सार्वजनिक उपक्रमों की महत्त्वपूर्ण भूमिका मानी गई है। वे न केवल आधार-ढाँचे (infrastructure) के निर्माण में मदद देते हैं, बल्कि पिछड़े क्षेत्रों के औद्योगिक विकास, रोजगार-संवर्द्धन, निर्धनता-उन्मूलन व कई प्रकार के जन-कल्याण कार्यों व सार्वजनिक उपयोगिताओं से सम्बद्ध उपक्रमों (Public utilities) के विकास में भी सहयोग देते हैं। उनसे यह भी आशा की जाती है कि वे योजनाओं की वित्तीय व्यवस्था के लिए साधन जुटाने में भी मदद करेंगे।

राजस्थान में सार्वजनिक उपक्रमों को दो भागों में बाँटा जा सकता है—(अ) केन्द्रीय सरकार द्वारा स्थापित किए गए उपक्रम, (आ) राज्य सरकार द्वारा स्थापित सार्वजनिक उपक्रम।

(अ) केन्द्रीय क्षेत्र के सार्वजनिक उपक्रम—1980-81 में राजस्थान में केन्द्रीय औद्योगिक परिसम्पत्तियों (assets) का 1.7% अंश लगा हुआ था, जो 1999-2000 में लगभग 2.2% रहा।[1] रोजगार में यह अनुपात 1.6% पर यथावत रहा है। केन्द्रीय क्षेत्र की सार्वजनिक इकाइयों में हिन्दुस्तान जिंक लि. (देबारी, उदयपुर), हिन्दुस्तान कॉपर लि. (खेतड़ी), हिन्दुस्तान मशीन टूल्स, अजमेर, इन्स्ट्रूमेंटेशन लि. कोटा, सांभर साल्ट्स लिमिटेड (हिंदुस्तान साल्ट्स लिमिटेड की सहायक कम्पनी), मॉडर्न बेकरीज (विश्वकर्मा

---

1. 1980-81 में कुल केन्द्रीय औद्योगिक परिसम्पत्तियों (assets) की राशि 21182 करोड़ रु. थी, जिसमें राजस्थान का हिस्सा मात्र 362 करोड रु. (1.7%) था। 1999-2000 में ये राशियाँ क्रमश: 381365 करोड़ रुपए व 8419 करोड रुपए (2.2%) रहीं।—**Handbook of Industrial Policy & Statistics, 2001, p.368,** Office of The Economic Adviser Ministry of Commerce And Industry, GOI New Delhi Published in March 2002

औद्योगिक क्षेत्र, जयपुर) तथा राजस्थान इलेक्ट्रॉनिक्स एण्ड इन्स्ट्रूमेंट्स लि., कनकपुरा, (जयपुर के समीप) शामिल हैं। एच एम टी लि. इंजीनियरी, सुरक्षा व वाहन उद्योग के लिए प्रिसीजन ग्राइण्डिंग मशीनों का उत्पादन करती है। राष्ट्रीय थर्मल पावर निगम (NTPC) द्वारा अन्ता (कोटा) में गैस आधारित पावर संयंत्र की स्थापना से राज्य में केन्द्रीय विनियोग की राशि में वृद्धि हुई है।

विभिन्न इकाइयों का संक्षिप्त विवरण नीचे दिया जाता है—

(i) **हिन्दुस्तान जिंक लि.**—इसके अन्तर्गत 5 खानें (तीन राजस्थान में, एक आंध्र प्रदेश में तथा एक उड़ीसा में) तथा 3 स्मेल्टर्स हैं (एक राजस्थान में, एक बिहार में तथा एक विशाखापट्टनम में)। इसे पावर व पानी की कमी का सामना करना पड़ा है।

प्रायः देबारी जिंक स्मेल्टर तथा जावर ग्रुप ऑफ माइन्स में उत्पादन-क्षमता का पूरा प्रयोग नहीं हो पाता है।

(ii) **हिन्दुस्तान कॉपर लि.**—यह नवम्बर 1967 में एक निजी कम्पनी के रूप में स्थापित हुई थी। इसके अन्तर्गत खेतड़ी तांबा कॉम्पलेक्स, इण्डियन कॉपर कॉम्पलेक्स, घाटसिला, बिहार तथा पंजीकृत कार्यालय कलकत्ता में तथा ब्रांच कार्यालय दिल्ली, बम्बई तथा मद्रास में हैं। इसके द्वारा उत्पादित वस्तुएँ कई प्रकार हैं, जैसे ब्लिस्टर कॉपर, वायर बार, सल्फ्यूरिक एसिड, ब्रास रोल्ड, निकल सल्फेट, सेलेनियम, सोना, चाँदी व सिंगल सुपर फास्फेट।

(iii) **हिन्दुस्तान मशीन टूल्स, अजमेर**—भारत सरकार की कम्पनी HMT के अन्तर्गत 6 इकाई HMT, 4 इकाई वाच व तीन डेयरी मशीनरी आदि की हैं, जो देश के विभिन्न भागों में कार्यरत हैं। HMT अजमेर इस क्रम की छठी इकाई है। भारत की HMT कम्पनी लाभ में चल रही है। HMT की केन्द्रीय इकाई 1991-92 तक घाटे में चल रही थी।

(iv) **इन्स्ट्रूमेण्टेशन लि., कोटा**—इसकी एक इकाई कोटा व दूसरी पालघाट (केरल) में स्थित है। कोटा संयंत्र 1965 में स्थापित किया गया था। इसमें 1968-69 से उत्पादन चालू हुआ था। राजस्थान इलेक्ट्रॉनिक एण्ड इस्ट्रूमेन्ट्स लि. जयपुर इसकी एक सहायक कम्पनी है जो रीको के साथ संयुक्त क्षेत्र में 1982-83 में स्थापित हुई थी।

(v) **सांभर साल्ट्स लि.**—यह 30 सितम्बर, 1964 में स्थापित हुई थी। सांभर झील 90 वर्ग मील में फैली हुई है।

(vi) **मॉडर्न फूड इण्डस्ट्रीज (इण्डिया) लिमिटेड**—यह 1965 में स्थापित हुई थी। इसकी 14 ब्रेड इकाइयाँ हैं, जिनमें से एक जयपुर (राजस्थान) में है। इसे मॉडर्न बेकरीज कहते हैं। यह उपभोक्ता वस्तु के उद्योग में आती है।

(vii) जैसा कि पहले कहा जा चुका है, **राजस्थान इलेक्ट्रॉनिक्स व इन्स्ट्रूमेन्ट्स लि. (REEL) कनकपुरा** (जयपुर) कोटा इन्स्ट्रूमेन्ट्स लि. कोटा की सहायक कम्पनी

होने के नाते यह केन्द्रीय सरकार के उपक्रम में शामिल की जाती है। इसमें भारत सरकार की 51% तथा रीको की 49% पूँजी लगी है। इसे संयुक्त क्षेत्र की इकाई भी कहा जाता है।

अन्य—राजस्थान ड्रग्स व फार्मास्यूटिकल्स लि. की स्थापना नवम्बर 1978 में इसकी प्रधान कम्पनी IDPL की सहायक इकाई के रूप में रीको के साथ संयुक्त क्षेत्र में की गई थी। बिक्री के आर्डर न मिलने से इसकी उत्पादन-क्षमता का पूरा उपयोग नहीं किया जा सका है तथा इसे छोटे उत्पादकों से प्रतिस्पर्धा का सामना करना पड़ा है। कम्पनी के लिए कार्यशील पूँजी का भी अभाव रहा है।

(आ) राजस्थान के सार्वजनिक उपक्रमों को चार श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है। **वर्तमान में इनकी संख्या 37 आँकी गई है तथा इनका वर्गीकरण इस प्रकार है—**

***(i)* वैधानिक निगम बोर्ड—इनकी संख्या 7 थी।** इस श्रेणी में राजस्थान राज्य विद्युत बोर्ड (RSEB), राजस्थान सड़क परिवहन निगम, राजस्थान वित्त निगम, राजस्थान राज्य वेयर-हाउसिंग निगम, राजस्थान आवासन बोर्ड, राजस्थान भूमि विकास निगम तथा राजस्थान राज्य कृषि विपणन बोर्ड आते हैं।

***(ii)* पंजीकृत कम्पनियाँ—इनकी संख्या 15 आँकी गई है** और ये कम्पनी अधिनियम, 1956 के अन्तर्गत पंजीकृत हुई हैं। इनके नाम इस प्रकार हैं—दी गंगानगर शुगर मिल्स लि., स्टेट माइन्स व मिनरल्स लि., रीको, राजस्थान राज्य खनिज विकास निगम, राजस्थान लघु उद्योग निगम लि., राज्य होटल निगम लि., पर्यटन विकास निगम लि., राज्य बीज निगम लि., कृषि-उद्योग निगम लि., ब्रिज व कन्स्ट्रक्शन निगम लि. हाथकरघा विकास निगम लि., जल विकास निगम लि., राजस्थान इलेक्ट्रॉनिक्स लि., (REL), राज्य टंगस्टन विकास निगम लि. तथा राज्य टेनरीज लि.। इनमें कई इकाइयों के नामों में निगम के बाद लिमिटेड शब्द आने से ये कम्पनी संगठन में शामिल की गई हैं। कुछ वर्ष पूर्व राज्य टेनरीज लि. को एक निजी उद्यमकर्त्ता को हस्तान्तरित करने का समझौता किया गया जिससे अब यह इकाई राजकीय उपक्रमों में शामिल नहीं है। **राज्य माइन्स एण्ड मिनरल्स लि. व राज्य खनिज विकास निगम लि. को मिला दिया गया है।**

***(iii)* पंजीकृत सहकारी समितियाँ—इस श्रेणी की 13 इकाइयाँ इस प्रकार थीं**—श्रीगंगानगर सहकारी कॉटन कॉम्प्लेक्स लि. (1993-94 से); अनुसूचित जाति व जनजाति विकास सहकारी फैडरेशन लि., जनजाति क्षेत्र विकास सहकारी फैडरेशन लि., राज्य बुनकर सहकारी संघ लि., सहकारी भेड़ ऊन विपणन फैडरेशन लि., राज्य सहकारी मार्केटिंग फैडरेशन लि., सहकारी उपभोक्ता संघ लि., श्री केशोरायपाटन सहकारी शुगर मिल्स लि., केशोरायपाटन, राज्य सहकारी कताई व जिनिंग मिल्स संघ लि. (स्पिन-फेड)*, सहकारी

---

* "स्पिनफेड" अप्रैल, 1993 से अस्तित्व में आया है। इसमें पहले की गुलाबपुरा, गंगापुर व हनुमानगढ़ की सहकारी कताई मिलें तथा गुलाबपुरा की जिनिंग मिल शामिल की गई हैं।

हाउसिंग फैडरेशन लि., श्रीगंगानगर सहकारी तिलहन प्रोसेसिंग मिल्स लि., गजसिंहपुर तथा राजस्थान सहकारी तिलहन उत्पादक फेडरेशन (तिलम संघ) तथा राज्य सहकारी डेयरी संघ लि।

(iv) विभागीय उपक्रम—अब इस श्रेणी में निम्न 2 उपक्रम लिए गए हैं— राजस्थान राज्य केमिकल्स वर्क्स (सोडियम सल्फेट वर्क्स), डीडवाना तथा राजस्थान सरकार नमक वर्क्स, डीडवाना।

बहुधा सार्वजनिक उपक्रमों में सहकारी संगठनों को शामिल नहीं किया जाता है और इनमें वैधानिक निगम या बोर्ड, पंजीकृत कम्पनियों व विभागीय उपक्रमों को ही शामिल किया जाता है। लेकिन राजस्थान सरकार के राज्य उपक्रम विभाग (सार्वजनिक उपक्रमों के ब्यूरो) द्वारा प्रकाशित "Public Enterprises Profile" में सार्वजनिक उपक्रमों की वित्तीय उपलब्धियों में सहकारी इकाइयों को भी पहले शामिल किया गया था। **लेकिन 1996 से सहकारी उपक्रमों को सार्वजनिक उपक्रमों के ब्यूरो (BPE) से पृथक् कर दिया गया है। इसलिए वर्ष 1996-97 तथा बाद में प्रकाशित BPE की "सार्वजनिक उपक्रमों की प्रोफाइलों" में 23 राजकीय उपक्रमों का ही विस्तृत विवरण दिया गया है। सहकारी उपक्रमों का विवरण अलग से तैयार किया जाने लगा है।**

सहकारी उपक्रमों को छोड़कर अन्य 24 राजकीय सार्वजनिक उपक्रमों का निष्पादन (performance)[1]

इस सम्बन्ध में उल्लेखनीय तथ्य इस प्रकार हैं—

(i) राज्य सार्वजनिक उपक्रमों में निवेश 1997-98 में लगभग 8986 करोड़ रुपए से बढ़कर 1998-99 में 10179 करोड़ रुपए हो गया। निवेश में परिदत्त पूँजी और अवधि-ऋण शामिल होते हैं। कुल कोषों में रिजर्व व सरप्लस की राशि भी शामिल होती है। 1994-95 में कुल कोषों की राशि लगभग 6488 करोड़ रुपए से बढ़कर 1998-99 में 11106 करोड़ रुपए हो गई। इस अवधि में कुल कोषों में परिदत्त पूँजी का अंश बढ़ा है तथा दीर्घकालीन कर्जों का अंश घटा है।

(ii) राज्य सरकार का परिदत्त पूँजी व अवधि-कर्ज के रूप में योगदान 1994-95 में लगभग 2909 करोड़ रुपए से बढ़कर 1998-99 में 3920 करोड़ रुपए हो गया है। यह राज्य के सार्वजनिक उपक्रमों में कुल निवेश का लगभग 38% रहा है।

(iii) कर्ज-शेयर पूँजी (इक्विटी) अनुपात 1994-95 में 5.3 : 1 से घटकर 1998-99 में 2.6 : 1 पर आ गया है।

---

1 Based on the **Report of The Committee on Reorganisation, Strengthening And Disinvestment of State Public Sector Undertakings & Industrial Development,** (Convenor, Rajsingh Nirwan) March 2001 for latest data on financial performance

(iv) 1999-2000 में सर्वाधिक शुद्ध लाभ 17 1 करोड़ रुपए का राज्य खान व खनन लि को प्राप्त हुआ है, और सर्वाधिक शुद्ध घाटा राज्य सड़क परिवहन निगम को 70 65 करोड़ रुपए का हुआ है।

(v) राज्य केमिकल वर्क्स, डीडवाना (सोडियम सल्फेट वर्क्स) व राज्य सरकार नमक वर्क्स, डीडवाना बन्द पड़े हैं और राज्य टेनरीज लि का कार्य निजी क्षेत्र को हस्तान्तरित कर दिया गया है।

(vi) **1998-99 में राजस्थान के सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों में रोजगार की मात्रा 96017 थी जिसमें राज्य विद्युत मण्डल के कर्मचारी भी शामिल हैं। इनमें 4917 कर्मचारी प्रबन्धकीय स्तर के थे तथा शेष 91100 कार्मिक व अन्य श्रेणियों के थे।**

1999-2000 में शुद्ध लाभ कमाने वाले उपक्रम इस प्रकार रहे—

(करोड़ रु) (लगभग)

1	राज्य वेयरहाउसिंग निगम	64
2	राज्य खान व खनिज लि	171
3	राज्य खनिज विकास निगम लि	67
4	रीको	05
5	राजस्थान वित्त निगम	14
6	राजस्थान लघु उद्योग निगम लि	51
7	राज्य बीज निगम लि	16
8	राज्य कृषि विपणन बोर्ड	83
9	राजस्थान आवासन मण्डल	010
10	राज्य पुल व निर्माण निगम लि	24
11	गंगानगर चीनी मिल लि.	014
12	राज्य भूमि विकास निगम	14
13	राज्य जल विकास निगम	013

1999-2000 में घाटा उठाने वाली इकाइयाँ इस प्रकार रहीं—

(करोड रु.)

1	राज्य सड़क परिवहन निगम	706
2	राज्य होटल निगम लि	01
3	राज्य हथकर्घा विकास निगम लि	53
4	राज्य इलेक्ट्रोनिक्स लि	015
5	राज्य टंगस्टन विकास निगम लि	005

राज्य कृषि उद्योग निगम लि 1999-2000 में बन्द किया गया। राज्य पर्यटन विकास निगम लि को 1998-99 में 08 लाख रुपए का शुद्ध घाटा हुआ।

1996-97 से 1999-2000 तक लगातार चार वर्ष तक जिन उपक्रमों को शुद्ध घाटा हुआ है वे इस प्रकार हैं—

(i) राज्य हथकर्घा विकास निगम लि ,

(ii) राजस्थान इलेक्ट्रोनिक्स लि ,

(iii) राज्य टंगस्टन विकास निगम लि

1998-99 में 24 उपक्रमों में से 10 उपक्रमों ने अपना वित्तीय निष्पादन सुधारा और **10 चोटी के लाभ कमाने वाले उपक्रमों का मुनाफा कुल मुनाफे का 99% रहा।** 1998-99 में 8 उपक्रमों ने घाटा उठाया जो लगभग 50 करोड़ रुपए का था।

31 मार्च, 1998 के अंत तक 23 राजकीय उपक्रमों में से 7 उपक्रमों के संचयी घाटों (accumulated losses) की राशि 289 3 करोड़ रु पाई गई थी। जो इस प्रकार थी।[1]

		(31 मार्च, 1998 तक संचयी घाटों की राशि (करोड़ रु. में)
1	राज्य विद्युत मण्डल	172 9
2	राजस्थान वित्त निगम	74 9
3	राज्य कृषि उद्योग निगम लि	21 5
4	हथकरघा विकास निगम लि	12 8
5	राज्य खनन विकास निगम लि	3 4
6	इलेक्ट्रोनिक्स लि	2 3
7	राज्य टंगस्टन विकास निगम लि	1.5
	सातों का कुल	289.3

इस प्रकार राजकीय उपक्रमों के संचयी घाटों की राशि काफी ऊँची है। **CAG की मार्च 1999 को समाप्त होने वाले वर्ष की रिपोर्ट (पृ. 13) के अनुसार इसी अवधि के अंत तक राजस्थान वित्त निगम का संचयी घाटा (accumulated loss) 80.33 करोड़ रुपए हो गया था, जिससे इसकी 67.53 करोड़ रुपए की परिदत्त-पूंजी (paid-up capital) का ह्रास हो गया था।** भविष्य में इसकी स्थिति को सुधारने के लिए आवश्यक उपाय किए जाने चाहिए।

स्मरण रहे कि संचयी घाटों की राशि 31 मार्च 1992 को 721 करोड़ रु. व 31 मार्च 1995 को 537 करोड़ रु. थी जो घटकर 31 मार्च, 1998 के अन्त में

---

1 Public Enterprises profile of Raj for 1997–98, released in 2000, (BPE, Govt of Raj), p.30

289 करोड़ रु. के स्तर पर आ गई है। इसका मुख्य कारण यह बतलाया गया है कि पिछले तीन वर्षों में राजकीय उपक्रमों की वित्तीय स्थिति में सुधार आया था।

राज्य में सार्वजनिक उपक्रमों की कमजोर वित्तीय दशा के कारण—सार्वजनिक उपक्रमों की कार्यसिद्धि का मूल्यांकन केवल लाभ-हानि के आँकड़ों के आधार पर नहीं किया जा सकता। इसके लिए उनका रोजगार, उत्पादन, पिछड़े क्षेत्रों के विकास, सार्वजनिक राजस्व जैसे रॉयल्टी, उत्पाद-शुल्क, बिक्री-कर, आय-कर, आदि के रूप में प्राप्त राजस्व व सार्वजनिक कल्याण में वृद्धि के रूप में भी योगदान देखा जाना चाहिए। लेकिन इस बात पर अवश्य ध्यान दिया जाना चाहिए कि यथासम्भव उनके वित्तीय घाटे कम किए जाएँ। इसलिए **घाटे के कारणों का उपक्रमानुसार अध्ययन किया जाना चाहिए**। उपक्रमों में कई कारणों से घाटे हो सकते हैं, जैसे गलत परियोजना का चुनाव (Wrong project-selection), पर्याप्त मात्रा में कच्चे माल की उपलब्धि का अभाव, माँग की कमी, प्रबन्ध-सम्बन्धी कठिनाइयाँ, गलत मूल्य-नीति, आवश्यकता से अधिक श्रमिकों की नियुक्ति, प्रतिकूल श्रम-सम्बन्ध, आदि।

पूर्व वर्षों में राज्य विद्युत मण्डल के घाटों के कारण

राजस्थान राज्य विद्युत मण्डल को प्रायः भारी मात्रा में घाटे की स्थिति का सामना करना पड़ा है। पिछले वर्षों में घाटे की सर्वाधिक राशि 1989-90 में 168 6 करोड़ रु की रही थी। 1990-91 में घाटे का अनुमान 101 2 करोड़ रु. लगाया गया था। 1991-92 में राज्य विद्युत मण्डल को 28 9 करोड़ रु का मुनाफा हुआ जो 1992-93 में 58 करोड़ रु, 1993-94 में 53.5 करोड़ रु, 1994-95 में 48 1 करोड़ रु, 1995-96 में 169 2 करोड़ रु. तक पहुँच गया। लेकिन 1996-97 में 31 75 लाख रुपये का घाटा रहा। 1997-98 में इसके खातों में 55 9 करोड़ रु का मुनाफा दर्शाया गया है, लेकिन CAG की रिपोर्ट के अनुसार मुनाफा जरूरत से ज्यादा बतलाया गया है। यह वस्तुतः इतना है नहीं। जैसा कि पहले संकेत दिया गया है। राज्य सरकार से प्राप्त आर्थिक सहायता व कर्ज को अंशतः शेयर पूँजी में बदलने से यह अनुकूल स्थिति बनी है, जिनके अभाव में मण्डल को वस्तुतः घाटा ही उठाना पड़ता।

(1) पूर्व में इतने भारी घाटे का मुख्य कारण यह रहा कि लागतों में निरन्तर वृद्धि होती गई, जबकि विद्युत- प्रशुल्कों (electricity tariffs) में आनुपातिक वृद्धि नहीं की गई। अगस्त 1985 में विद्युत-प्रशुल्क में वृद्धि की गई थी, लेकिन इसके अच्छे परिणाम 1985-86 व 1986-87 के वर्षों में मिले। फिर भी घाटे की स्थिति जारी रही। इसका आशय यह है कि राज्य विद्युत मण्डल को घाटा कम करने में काफी कठिनाइयों का सामना करना पड़ा है। **RSEB के घाटे का मुख्य कारण ग्रामीण विद्युतीकरण में ऊँची लागत का आना है।** ग्रामीण इलाकों में लम्बी दूरी तक लाइनें डालने में काफी खर्च उठाना पड़ता है। किसानों को कम कीमत पर बिजली देनी पड़ती है। 1 सितम्बर, 1992 से बिजली की दरों में वृद्धि की गई थी। **कृषकों के लिए यह 37 पैसे प्रति यूनिट से बढ़ाकर 45 पैसे प्रति यूनिट की गई, हालांकि लागत के 130 पैसे प्रति यूनिट आने के**

कारण कृषकों को दी जाने वाली बिजली पर बाद में भी 85 पैसे प्रति यूनिट का घाटा जारी रहा। उपभोक्ताओं के लिए यह 75 पैसे प्रति यूनिट रखी गई थी। बड़े उद्योगों के लिए 135 पैसे प्रति यूनिट थी, जो दिल्ली, महाराष्ट्र व उत्तर प्रदेश से कम थी।

सितम्बर 1995 में विद्युत की दरों में 10 पैसे से 23 पैसे प्रति इकाई तक की वृद्धि की गई। लघु उद्योगों के लिए बिजली की नई दरें 2 10 पैसे प्रति इकाई रखी गईं। 100 होर्स पावर तक के मध्यम उद्योगों के लिए यह 2.30 पैसे प्रति इकाई तथा 100 होर्सपावर से अधिक के लिए 2 35 पैसे प्रति इकाई तथा बड़ी इकाइयों के लिए 2.55 पैसे प्रति इकाई रखी गई। व्यावसायिक उपयोगों के लिए भी बिजली की दरें बढ़ाई गई। लेकिन घरेलू व कृषिगत उपभोक्ताओं के लिए बिजली की दरें नहीं बढ़ाई गई।

राजस्थान राज्य विद्युत मण्डल के पूर्व अध्यक्ष श्री पी.एन. भण्डारी ने अप्रैल 1996 में पत्रिका में पाठक पीठ के अन्तर्गत लिखते हुए यह स्पष्ट किया था कि विद्युत मण्डल को महंगी बिजली खरीदकर उपभोक्ताओं को सस्ती दरों पर उपलब्ध कराने से प्रति दिन ढाई करोड़ रुपए का नुकसान होता रहा है। 45 लाख उपभोक्ताओं में से 37 लाख को अनुदानित बिजली (Subsidised Electricity) उपलब्ध कराई जाती है। प्रतिदिन विद्युत मण्डल को डेढ़ से दो करोड रु. तक का कोयला खरीदना पड़ता है। रेलवे व कोयला कम्पनियों को बड़ी मात्रा में भुगतान करना होता है। विभिन्न क्षेत्रों से करीब 1150 करोड़ रुपए की बिजली प्रतिवर्ष खरीदनी पड़ती है। कोल इण्डिया, रेलवे व राष्ट्रीय थर्मल पावर कॉरपोरेशन को भुगतान करना होता है, तभी वे क्रमशः कोयला, वैगन व बिजली उपलब्ध कराते हैं। राजस्थान को 1100 किलोमीटर दूरी से कोयला मँगाना पड़ता है तथा कोयले पर व्यय से दुगुना व्यय उसके परिवहन पर लगता है। ऐसी स्थिति में राज्य विद्युत मण्डल को घाटा उठाना पड़ता है।[1]

(2) राजस्थान में विद्युत के ट्रान्समिशन व वितरण की हानि (T and D losses) का अनुपात 26% से घटकर 21% पर आ गया था। इस सम्बन्ध में समस्त देश का औसत 22% है। वर्तमान में इसे राज्य में 35% आंका गया है। एम.आर. गर्ग, पूर्व मुख्य अभियंता और तकनीकी सदस्य, राज्य विद्युत मण्डल के अनुसार राज्य में बिजली की चोरी व छीजत का अनुपात 45% से कम नहीं होगा।[2] अतः इसे प्रयत्न करके आगामी वर्षों में घटाया जाना चाहिए। बिजली की चोरी को भी रोका जाना चाहिए।

(3) राजस्थान विद्युत इकाइयों में श्रमिक आवश्यकता से ज्यादा लगे हुए हैं। राजस्थान में विद्युत के क्षेत्र में अतिरिक्त श्रम की समस्या पायी जाती है। उद्योगों के वार्षिक सर्वेक्षण (फैक्ट्री सेक्टर) 1997-98 के अनुसार राजस्थान में कुल फैक्ट्री कर्मचारियों का लगभग 16 9% अंश विद्युत में लगा था, जबकि समस्त देश के लिए यह लगभग 10% रहा है। 1997-98 में राजस्थान में पूँजी–उत्पत्ति अनुपात विद्युत क्षेत्र में समस्त देश की तुलना में

---

1 राजस्थान पत्रिका, पाठक पीठ, 8 अप्रैल, 1996

2 एम आर. गर्ग, विद्युत मण्डल का विभाजन-लेख का दूसरा भाग, राजस्थान पत्रिका, 14 मार्च 2000

काफी ऊँचा पाया गया है । पूँजी-उत्पत्ति अनुपात जानने के लिए स्थिर पूँजी में जोड़े गए शुद्ध मूल्य का भाग दिया जाता है । 1997-98 में राजस्थान में विद्युत-क्षेत्र में 48945 कर्मचारी कार्यरत थे, जबकि राज्य में सभी फैक्ट्रियों में इनकी संख्या 290357 थी ।[1]

इस प्रकार विद्युत मण्डल को ऊँचे पूँजी-उत्पत्ति-अनुपात व अतिरिक्त श्रम (excess labour) की समस्या का सामना करना पड़ रहा है । जयपुर व अजमेर के निर्माण खण्डों में हजारों तकनीकी व दक्ष श्रमिक मौजूद थे, फिर भी भूतकाल में 132 व 220 के.वी. लाइनों का निर्माण करने के लिए प्राइवेट ठेकेदारों को करोड़ों रुपए दिए गए । ऐसी दशा में विद्युत मण्डल को घाटा होना स्वाभाविक था ।

(4) विद्युत के बिलों की राशि सही नहीं होती । बिजली की चोरी होने से कम राशि के बिल बनाए जाते हैं । 1987 में विद्युत मण्डल ने कोटा की एक फर्म का मामला सुप्रीम कोर्ट में जीता था, जिससे 17 करोड़ रुपए की राशि का भुगतान विद्युत मण्डल को प्राप्त हुआ था, हालांकि वह राशि 24 समान किस्तों में वसूल की गयी थी । फिर भी स्पष्ट है कि बिजली की चोरी रोकने का प्रयास करने से स्थिति सुधरेगी । कृषि के क्षेत्र में बिजली की चोरी का एक कारण यह रहा है कि सामान्य प्रार्थना पत्र देने और कुए का कनेक्शन देने में 8 से 9 वर्ष का समय लग जाता है । कई व्यक्ति इतनी लम्बी प्रतीक्षा करने की बजाय येन-केन-प्रकारेण अवैध रूप से बिजली का उपभोग कर कुए से पानी लेना चाहते हैं । **विद्युत मण्डल ने वर्ष 1997 में नर्सरी श्रेणी की योजना आरम्भ की थी जिसमें प्रतीक्षा सूची को लांघकर अतिरिक्त राशि लेकर कनेक्शन देने का प्रावधान किया गया था । इस योजना से हजारों किसानों ने विधिवत कृषि-कनेक्शन ले लिए थे, जो अभी तक अवैध रूप से बिजली काम में ले रहे थे ।** लेकिन अब यह व्यवस्था अप्रैल 1999 से समाप्त कर दी गई है । इस प्रकार बिजली-प्रशासन की आन्तरिक कमजोरियों से भी विद्युत-बोर्ड को घाटा उठाना पड़ा है ।

पूर्व में RSEB को राज्य सरकार की ओर से ऋण-राशि का 50% शेयर-पूँजी (equity) में बदलने से 57 5 करोड़ रु. के वार्षिक ब्याज की बचत हुई थी । विद्युत मण्डल पर केन्द्र व वित्तीय संस्थाओं का दबाव पड़ रहा है ताकि वह लगी पूँजी पर 3% प्रतिफल की दर प्राप्त करने की भरपूर कोशिश करे ।

राजस्थान राज्य विद्युत मण्डल (RSEB) को राजस्थान राज्य विद्युत निगम (RSEC) में परिवर्तित करने की दिशा में एक महत्त्वपूर्ण कदम उठाया गया है । विद्युत के वितरण-कार्य को निजी क्षेत्र में सौंपने की दिशा में प्रयास किया जा रहा है । सरकार द्वारा राज्य विद्युत मण्डल को तीन कम्पनियों में विभाजित करने का निर्णय लिया गया है यथा **सृजन, संचारण व वितरण** । लेकिन इसे लागू करने के लिए कर्मचारियों का पूर्ण सहयोग जरूरी है, क्योंकि इस कदम से उनके हितों को क्षति नहीं पहुँचनी चाहिए । **आशा है कि इस परिवर्तन से निजी क्षेत्र को उत्पादन व सप्लाई का काम ठेके पर देने से मौजूदा आर्थिक संकट को हल करने में कुछ सीमा तक मदद**

1. Report on ASI, Rajasthan 1997-98 DES ■ 215

मिलेगी, विद्युत की चोरी पर अंकुश लगेगा और बिलों की वसूली में सख्ती की जा सकेगी।

प्रथम चरण में अलवर व सवाईमाधोपुर जिलों में विद्युत-वितरण व बिल वसूली का काम ठेके पर दिया गया है। आगे चलकर पाली, जोधपुर, सिरोही व जोधपुर जिलों में यह व्यवस्था लागू की जाएगी।

राज्य में विद्युत-नियामक आयोग (SERC) एक स्वतंत्र संस्था के रूप में जनवरी 2000 में स्थापित किया गया है जो राज्य विद्युत निगम के कार्यों का नियमन करेगा और विद्युत के ट्रान्समिशन व सप्लाई के लाइसेंस जारी करेगा।

आशा है विद्युत के क्षेत्र में भावी सुधारों से इस क्षेत्र में गुणात्मक सुधार आएगा और राज्य विद्युत निगम की वित्तीय दशा में आमूल-चूल परिवर्तन सम्भव हो सकेगा।

सार्वजनिक उपक्रमों की वित्तीय स्थिति को सुधारने के लिए सुझाव—सार्वजनिक उपक्रमों की दशा को सुधारने के लिए अर्जुन सेन गुप्ता समिति ने अपनी रिपोर्ट पेश की थी, जो साप्ताहिक पत्रिका Mainstream के मार्च 14 व 21, 1987 के अंकों में प्रकाशित हुई थी। मई, 1987 में स्वर्गीय प्रोफेसर सुखमॉय चक्रवर्ती की अध्यक्षता में आर्थिक सलाहकार परिषद् (Economic Advisory Council) ने प्रधानमंत्री को Public Enterprise in India : Some Current Issues पर अपनी रिपोर्ट पेश की थी, जिसमें सार्वजनिक उपक्रमों को केन्द्र व राज्य स्तरों पर अधिक कार्यकुशल बनाने के लिए कई महत्त्वपूर्ण सुझाव दिए गए थे।

चक्रवर्ती समिति का यह मत था कि अलग-अलग क्षेत्रों में सार्वजनिक उपक्रमों व अलग-अलग इकाइयों की समस्याओं के हल के लिए विशिष्ट समाधान ढूँढने होंगे। समिति ने सार्वजनिक उपक्रमों की उत्पादन-क्षमता के उपयोग को बढ़ाने पर बल दिया था।

जिस प्रकार देश की अर्थव्यवस्था में सार्वजनिक उपक्रमों का महत्त्वपूर्ण स्थान होता है, उसी प्रकार राजस्थान की नियोजित अर्थव्यवस्था में भी सार्वजनिक उपक्रमों की कार्य-कुशलता व उपलब्धियों का विशेष महत्त्व माना जाता है। इसलिए इनकी लाभप्रदता में सुधार करने के लिए उप-क्रमानुसार कार्यक्रम बनाए जाने आवश्यक हैं। पिछले वर्षों में इस सम्बन्ध में निम्न सुझाव सामने आए हैं जिन्हें कार्यान्वित करने से स्थिति में आवश्यक सुधार होगा—

(1) प्रमुख अधिकारियों व प्रबन्ध संचालकों के कार्यकाल में वृद्धि—सार्वजनिक उपक्रमों के प्रमुख अधि-कारियों व पूर्णकालिक प्रबन्ध संचालकों को कम से कम पाँच वर्ष के लिए नियुक्त किया जाना चाहिए। प्रबन्ध में व्यवसायीकरण की नितांत आवश्यकता है। दो वर्ष की अवधि के डेप्यूटेशन पर अध्यक्षों व प्रमुख अधिकारियों की नियुक्ति से प्रबन्ध में दक्षता व निरन्तरता नहीं आ पाती है।

(2) स्वायत्तता (Autonomy)—सार्वजनिक उपक्रमों के प्रमुख अधिकारियों को काम करने में स्वायत्तता दी जानी चाहिए, ताकि वे उपक्रम के हित में शीघ्रता से सही निर्णय ले सकें। मंत्रालय व सार्वजनिक उपक्रमों के प्रबन्ध में उचित तालमेल स्थापित होना चाहिए।

(3) लेखादेयता (Accountability)—जहाँ एक तरफ प्रबन्ध में स्वायत्तता दी जानी चाहिए, वहाँ दूसरी तरफ प्रबन्धकों पर कार्य-सिद्धि के सम्बन्ध में अधिक जिम्मेदारी भी डाली जानी चाहिए। इसको कारगर बनाने के लिए प्रबन्धकों में मेमोरेण्डम ऑफ अण्डर-स्टेण्डिंग (MOUs) भरवाए जाने चाहिए, जिनमें आवश्यक विचार-विमर्श के बाद उप-क्रमानुसार उत्पादन के लक्ष्य आदि का वर्णन होना चाहिए। ऐसा केन्द्रीय स्तर पर इस्पात उद्योग व कोयला उद्योग में चालू किया गया है, हालांकि उनके परिणामों का मूल्यांकन करने में अभी समय लगेगा।

स्वायत्तता व लेखादेयता के बीच उचित संतुलन व तालमेल स्थापित किया जाना चाहिए। इस सम्बन्ध में प्रतियोगी वातावरण में काम करने वाली इकाइयों व अन्य प्रकार की इकाइयों में अन्तर किया जाना चाहिए।

(4) औद्योगिक सम्बन्धों में सुधार किया जाना चाहिए। सार्वजनिक उपक्रमों में श्रम को प्रबन्ध व पूँजी में साझेदारी दी जानी चाहिए, जिससे श्रमिकों का उत्पादन व उत्पादकता बढ़ाने में अधिक योगदान मिलेगा। इस दिशा में मजदूर-संघों का समुचित सहयोग वांछित होगा।[1]

(5) अतिरिक्त श्रमिकों की समस्या का समाधान यह होगा कि उनको प्रशिक्षण देकर अन्य प्रकार की क्रियाओं में लगाया जाना चाहिए। इसके लिए सार्वजनिक उपक्रमों का विविधीकरण (diversification) किया जाना चाहिए।

(6) निरन्तर घाटा उठाने वाली इकाइयों को बन्द कर देना चाहिए तथा श्रमिकों को अन्य कामों में लगाने की जिम्मेदारी सरकार को अपने कंधों पर लेनी चाहिए।

(7) चुने हुए उपक्रमों के निजीकरण (Privatisation) का प्रयास किया जाना चाहिए। यह प्रारम्भ में प्रबन्ध के सम्बन्ध में किया जा सकता है, तथा बाद में स्वामित्व के सम्बन्ध में किया जा सकता है। यदि घाटा उठाने वाली इकाइयों को वार्षिक लीज की निर्धारित राशि पर निजी व्यक्तियों द्वारा चलाने का निर्णय किया जाए तो उसके लिए भी प्रयास किया जा सकता है। लेकिन इस सम्बन्ध में सोडियम सल्फेट संयंत्र, डीडवाना तथा राजकीय ऊनी मिल्स, बीकानेर के अनुभव अनुकूल व उत्साहवर्धक नहीं रहे हैं, क्योंकि लीज की राशि का भुगतान न होने से न्यायालय की शरण लेनी पड़ती है जिससे कानूनी विवाद उत्पन्न हो जाते हैं।

(8) राज्य सरकार को उन सार्वजनिक क्षेत्र की इकाइयों का विस्तृत अध्ययन करवाना चाहिए जिनमें पिछले पाँच-सात सालों से लगातार घाटा हो रहा है और भविष्य में भी जिनकी वित्तीय स्थिति के सुधरने के कोई आसार नजर नहीं आते। उनकी रिपोर्टों पर शीघ्र व उचित कार्यवाही होनी चाहिए।

(9) जिस प्रकार केन्द्र काफी समय से सार्वजनिक क्षेत्र पर श्वेतपत्र तैयार करने का विचार रखता है, उसी प्रकार राज्य सरकार को भी इनके सम्बन्ध में एक श्वेतपत्र बनवाना

---

1 "Workers' participation in management along with issue of equity shares as bonus is proposed as means of increasing the morale of the workers and raising productivity" Chakaravarty Report, May 1987

चाहिए, जिनमें इनकी मूलभूत समस्याओं पर उपक्रमानुसार विचार किया जाना चाहिए तथा भविष्य में सुधार के लिए सुझाव पेश किए जाने चाहिए। इस सम्बन्ध में निकट भविष्य में विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है। हाल ही में केरल सरकार ने सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों के सम्बन्ध में एक विस्तृत श्वेत-पत्र प्रकाशित किया है जो इनके सुधार में काफी मदद देगा।

आशा है उपर्युक्त सुझावों को लागू करने पर राजस्थान में आगामी वर्षों में सार्वजनिक उपक्रमों की वित्तीय दशा में सुधार होगा जिससे इनके भावी विकास के लिए साधन जुटाने में मदद मिलेगी। पिछले वर्षों में इनमें घाटे की दशा के पाए जाने के कारण आम जनता में इनकी उपयोगिता व उपादेयता के सम्बन्ध में काफी संदेह उत्पन्न हो गए हैं, जिन्हें दूर करने के लिए इनमें प्रबन्धकीय कार्यकुशलता का विकास करना आवश्यक हो गया है। एक मजबूत, कार्यकुशल व प्रावैगिक सार्वजनिक क्षेत्र नियोजित अर्थव्यवस्था का हृदय होता है, तथा एक दुर्बल, अकार्यकुशल व गतिहीन सार्वजनिक क्षेत्र नियोजन को निष्प्राण बना देता है। अतः इस क्षेत्र को अधिक सजीव व अधिक सबल बनाना सभी के हित में होगा। ये पंचवर्षीय योजनाओं की वित्तीय व्यवस्था करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं। इनकी बचतो का उपयोग आर्थिक विकास में किया जा सकता है।

राज्य सरकार ने राजकीय उपक्रमों (State enterprises) के बारे में रिपोर्ट देने के लिए मथुरादास माथुर की अध्यक्षता में एक समिति का गठन अक्टूबर, 1991 में किया गया था। समिति ने अपनी प्रथम रिपोर्ट (जून, 1992) में निम्न सात उपक्रमों की वित्तीय स्थिति पर विचार किया था। गंगानगर शुगर मिल्स लि., राजस्थान राज्य बीज निगम लि, राजस्थान जल-विकास निगम लि, राज्य सहकारी उपभोक्ता संघ लि., राज्य सहकारी विपणन संघ, श्री केशोरायपटन सहकारी शुगर मिल्स लि, तथा गंगानगर तिलहन प्रोसेसिंग मिल्स लि, गजसिंहपुर।

दूसरी रिपोर्ट में राजस्थान भूमि विकास निगम, राजस्थान राज्य होटल निगम लि., (खासा कोठी जयपुर व आनन्द भवन, उदयपुर), सहकारी भेड़ व ऊन विपणन संघ लि, तथा राज्य सहकारी आवास संघ लि., नामक चार राजकीय उपक्रमों की वित्तीय स्थिति की समीक्षा की गई थी। इसके सुझाव सरकार को पेश किए गए थे।

राजकीय उपक्रमों में *कई ऐसे उपक्रम हैं जिन्हें 1980-81 से 1994-95* के 15 वर्षों में से अधिकांश वर्षों में घाटा रहा है। राजस्थान एग्रो-उद्योग निगम लि., को लगातार पन्द्रह वर्षों तक घाटा हुआ है। राज्य लघु उद्योग निगम लि., को बारह वर्ष तक व राज्य बीज निगम लि को दस वर्षों तक घाटा रहा है। राजस्थान एग्रो-उद्योग निगम लि को 1995-96 व 1996-97 में भी घाटा हुआ है। इस प्रकार इसे सदैव घाटा होता रहा है।

अन्य उपक्रम जिन्हें उक्त अवधि (15 वर्ष की) में अधिकांश वर्षों में घाटा रहा है, उनके नाम इस प्रकार हैं—राजस्थान भूमि विकास निगम (आठ वर्ष), राजस्थान पर्यटन विकास निगम लि., (आठ वर्ष), राज्य सहकारी भेड़ व ऊन विपणन संघ लि, (आठ वर्ष), राज्य सहाकारी उपभोक्ता संघ लिवर्ष), सहकारी स्पिनिंग मिल्स लि., गुलाबपुरा' (सात वर्ष),

गंगापुर सहकारी स्पिनिंग . (सात वर्ष), केशोरायपटन सहकारी शुगर मिल्स लि , (आठ मिल्स* लि. (सात वर्ष), श्रीगंगानगर सहकारी तिलहन प्रोसेसिंग मिल्स लि., गजसिंहपुर (पिछले तेरह वर्ष से लगातार), राजस्थान राज्य केमिकल वर्क्स (सोडियम सल्फाइड फैक्ट्री) डीडवाना (दस वर्ष), आदि, आदि ।

भविष्य में राजकीय उपक्रमों के घाटों की पूर्ति बजट से करना सम्भव नहीं होगा । अत: इनकी वित्तीय दशा सुधारने के लिए आवश्यक कदम उठाने जरूरी हो गए हैं । इनमें से कुछ को बंद करना होगा, और कर्मचारियों को वैकल्पिक स्थानों या विभागों में काम पर लगाना होगा । कुछ का निजीकरण किया जा सकता है, जैसे होटल जैसी क्रिया को निजी क्षेत्र में देना ज्यादा हितकर सिद्ध हो सकता है । कुछ की प्रबन्ध-व्यवस्था में सुधार करके उन्हें लाभ में लाने का प्रयास किया जा सकता है ।

राजस्थान भूमि विकास निगम ने 1991 में कोई फार्म-विकास क्रिया संचालित नहीं की थी । इसका समग्र घाटा 14 करोड़ रुपए हो गया था, जबकि इसकी परिदत्त पूँजी 20 करोड़ रुपए ही थी । निगम को व्यापारिक बैंकों व वित्तीय संस्थाओं को लगभग 70 करोड़ रुपए कर्ज के चुकाने थे । इसे किसानों से लगभग 84 करोड़ की बकाया राशि वसूल करनी थी, जबकि इंदिरा गाँधी नहर परियोजना क्षेत्र में सरकार द्वारा बकाया कर्जों की वसूली रोक दी गई थी । इसी क्षेत्र के किसान बिना भूमि विकास निगम की अनुमति के अपनी भूमि बेच देते थे । ऐसी स्थिति में इस निगम का कार्यरत रहना कठिन हो गया था । सरकार ने इसे बंद करने का निर्णय किया है । सार्वजनिक उपक्रम ब्यूरो ने इस निगम के काफी कर्मचारी अन्य उपक्रमों में लगा दिए हैं और शेष कर्मचारी भी इस प्रकार अन्यत्र काम पर लगा दिए जाएँगे ।

1991-92 में सरकार ने राज्य वन विकास निगम लि. को बंद कर दिया था । राजस्थान इलेक्ट्रोनिक्स लि. को भी बंद कर दिया गया है तथा इसकी स्थिर परि-सम्पत्तियाँ इन्स्ट्रूमेण्टेशन लि., कोटा को हस्तान्तरित कर दी गई हैं, जो एक केन्द्रीय क्षेत्र का सार्वजनिक उपक्रम है । राजस्थान राज्य टंगस्टन विकास निगम लि. की टंगस्टन- क्रिया हिन्दुस्तान जिंक लि. को हस्तान्तरित कर दी गई है । राज्य टेनरीज लि. में सरकारी शेयर पूँजी एक निजी उद्यमकर्ता को हस्तान्तरित करने का समझौता किया गया है । राज्य केमिकल वर्क्स की सोडियम सल्फाइड फैक्ट्री बन्द पड़ी है । राज्य सरकार के सॉल्ट-वर्क्स, पचपदरा भी 1992-93 से बन्द हैं । बन्द पड़ी इकाइयों से वार्षिक खाते प्राप्त नहीं हुए हैं ।

पूर्व में सरकार ने निम्न उपक्रमों को बंद करने का निर्णय लिया था ।[1]

(i) राज्य कृषि-उद्योग निगम, *(ii)* हाई टेक ग्लास फैक्ट्री, धौलपुर (जो गंगानगर चीनी मिल की एक इकाई है), *(iii)* श्रीगंगानगर सहकारी तिलहन प्रोसेसिंग मिल्स लि.,

---

* अब स्पिनफेड में शामिल ।

1 Public Enterprises Profile of Rajasthan for 1991-92 to 1994-95 March, 1997

गजसिंहपुर तथा *(iv)* लाडनूँ व चूरू की ऊनी मिलें जो राजस्थान लघु उद्योग निगम के अधीन थीं । *(v)* राजस्थान राज्य सहकारी विपणन संघ लि. (सत ईसबगोल फैक्ट्री, आइस प्लान्ट व फैक्ट्री, अलवर) अन्य उपक्रमों के सम्बन्ध में भी मजदूरों के हितों की रक्षा करने हेतु उचित निर्णय लेने होंगे । राजस्थान राज्य सड़क परिवहन निगम को 1991-92 से 1997-98 की अवधि में निरन्तर सात वर्षों तक लाभ प्राप्त हुआ था । 1994-95 में लाभ की राशि 24 I करोड़ रु. रही थी जो बाद के वर्षों में घटी, लेकिन फिर भी इसे 1997-98 में लगभग 4 करोड़ रु का मुनाफा प्राप्त हुआ । **1998-99 में इसे लगभग 50 करोड़ रु. का घाटा हुआ था तथा 1999-2000 में इससे भी अधिक का घाटा हुआ है**, जिसके पीछे रोडवेज के कुप्रबन्धन, भ्रष्टाचार, अवैध रूप से निजी बसों का धड़ल्ले से संचालन, निजी बसों की तुलना में रोडवेज की बसों का अधिक किराया, आदि तत्त्व जिम्मेदार माने गए हैं ।

व्यावहारिक आर्थिक अनुसंधान की राष्ट्रीय परिषद् (NCAER) ने अगस्त 1994 में राजस्थान के सभी राज्य स्तरीय सार्वजनिक उपक्रमों के अध्ययन पर एक विस्तृत रिपोर्ट प्रस्तुत की है जो एक अनूठा प्रयास है ।[1] इसमें सभी राज्य स्तरीय सार्वजनिक व सहकारी उपक्रमों की वित्तीय कार्य-सिद्धि पर क्रमवार विचार किया गया है, जो 1990-91 तक के आँकड़ों पर आधारित हैं ।

इसमें SWOT विश्लेषण लागू किया गया है जिसके अन्तर्गत क्रमशः Strength, Weakness, Opportunity and Threats (शक्ति, कमजोरी, अवसर व सम्भावित खतरा या धमकी) प्रत्येक उपक्रम के लिए अलग-अलग देखे जाते हैं और फिर यह तय किया जाता है कि उसे चालू रखना है अथवा बंद करना है । इस प्रकार के विश्लेषण में प्रत्येक उपक्रम की शक्ति के बिन्दु, कमजोर बिन्दु, आगे के विकास के अवसर के बिन्दु तथा उसके लिए सम्भावित खतरों के बिन्दु अलग-अलग निर्धारित किए जाते हैं और फिर कोई अन्तिम निर्णय लिया जाता है ।

उपर्युक्त अध्ययन में निम्न सात उपक्रमों को बंद करने की सिफारिशें की गई थीं-धौलपुर ग्लास फैक्ट्री, राज्य सहकारी उपभोक्ता संघ, टेनरीज लि., भूमि विकास निगम, वन विकास निगम, इलेक्ट्रोनिक्स लि., तथा टंगस्टन विकास निगम लि. । सम्भवतः राज्य सरकार ने इसी रिपोर्ट की सिफारिश पर कुछ सार्वजनिक क्षेत्र की इकाइयों को बंद करने का निर्णय लिया है । ऐसी रिपोर्ट पहली बार किसी राज्य के लिए तैयार की गई है । कांग्रेस की नई सरकार ने सत्ता में आने के बाद जनवरी 1999 में सार्वजनिक उपक्रमों के बारे में रिपोर्ट देने के लिए एक तीन सदस्यों की समिति गठित की है, जिसकी सिफारिशों के आधार पर इनकी भावी पुनर्रचना का प्रयास किया जाएगा ।

भारत सरकार ने आर्थिक उदारीकरण की नई नीति में निरंतर घाटे में चलने वाली इकाइयों में श्रमिकों की छंटनी, पुनर्प्रशिक्षण, उनको नए काम में लगाने की नीति लागू करने

---

1 S L Rao & R Venkatesan, **Restructuring of State Level Public Enterprises in Rajasthan, August, 1994.**

का निर्णय लिया है। राज्य सरकार को भी इस दिशा मे आवश्यक कदम उठाने चाहिए। लेकिन इसके लिए मजदूर–सघों से बातचीत करके ही कोई उचित मार्ग निकला जा सकता है। भारत सरकार की श्रम–सबधी बहिर्गमन नीति का विरोध किया गया है। इससे बेरोजगारी उत्पन्न होने का भय उत्पन्न हो गया है।

अत विभिन्न सार्वजनिक व सहकारी उपक्रमों पर विस्तृत अध्ययन व विश्लेषण करके सरकार को एकश्वेत-पत्र (white paper) निकाल कर इनके सम्बन्ध में अपनी भावी नीति स्पष्ट करनी चाहिए। तभी इनकी स्थिति मे स्थायी सुधार हो सकता है। इनमें से कुछ इकाइयो को आपस मे मिलाने. रुग्ण इकाइयों को बद करने तथा इनके कार्य संचालन को प्रगतिशील बनाने के लिए सरकार को कुछ कडे कदम उठाने चाहिए, अन्यथा लगातार घाटे मे चलने वाली इकाइयाँ राज्य की वित्तीय स्थिति को कभी दुरस्त नहीं होने देगी। इस सम्बन्ध मे प्रति वर्ष CAG की रिपोर्ट मे दिए गए सुझावो पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है। शुद्ध लाभ–हानि का आकलन भी अधिक सही व अधिक सुनिश्चित होना चाहिए। केवल हिसाबी–समायोजन (accounting-adjustment) से सतोष नहीं करना चाहिए।

राजस्थान में स्थापित राजकीय उपक्रमों को सुव्यवस्थित (streamline) करने की दृष्टि से श्री राजसिंह निर्वाण, पूर्णकालिक सदस्य, राज्य योजना बोर्ड, के संयोजकत्व में जून 1999 में 'राजकीय उपक्रमों के पुनर्गठन, सशक्तिकरण, व विनिवेश तथा औद्योगिक विकास' समिति का गठन किया गया था। समिति ने विभिन्न सवैधानिक निगमो/बोर्डों व पंजीकृत कम्पनियो की प्रथम चरण मे समीक्षा करके अपना प्रतिवेदन 15 मई, 2001 को राज्य के मुख्यमंत्री को प्रस्तुत किया। दूसरे चरण मे सहकारी (राजकीय) उपक्रमो की समीक्षा की गई है।

समिति की प्रमुख सिफारिशे इस प्रकार हैं[1]–

(1) समिति ने निम्न सात सार्वजनिक उपक्रमों को बन्द करने की सिफारिश की है– हथकर्घा विकास निगम भूमि विकास निगम जल विकास निगम, कृषि उद्योग निगम, टगस्टन विकास निगम, इलेक्ट्रोनिक्स लिमिटेड तथा टेनरीज लिमिटेड।

(2) इसने पर्यटन विकास निगम व होटल निगम के पूर्ण निजीकरण की सिफारिश की है।

(3) समिति ने श्रीगंगानगर शूगर मिल को वन्द करने तथा इसकी शराब इकाई को सरकार से अलग करके निजी हाथों मे सौंपने की सिफारिश की है।

(4) निम्न ग्यारह इकाइयो के विलय, कामकाज के बटवारे अथवा कुछ शेयर निजी क्षेत्र को बेच देने की आवश्यकता बतलाई है। राजस्थान वित्त निगम, रीको, राजस्थान माइन्स एवं मिनरल्स लिमिटेड, खनिज विकास निगम, भण्डारण (वेयर हाउसिग) निगम, लघु उद्योग निगम, आवासन मण्डल, बीज निगम, रोडवेज, कृषि विपणन निगम तथा पुल व निर्माण निगम।

---

1 पूर्वोद्धृत रिपोर्ट मार्च 2001तथा दैनिक भास्कर 3 दिसम्बर 2001

(i) इसमे रीको की उत्पादक इकाइयो को या तो बन्द करे अथवा बेच दे। दूसरा कामकाज दो भागो में बाट दे– एक आधारभूत सुविधाओं के विकास हेतु और दूसरा विनियोग के लिए।

(ii) लघु उद्योग निगम मे स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति योजना (VRS) के जरिए कर्मचारी कम करे।

(iii) रोडवेज को क्षेत्रवार अलग–अलग कम्पनियो मे बाँट देने की सिफारिश की गई है। राष्ट्रीय मार्गो की सख्या को बढाने का सुझाव दिया गया है।

(iv) आवासन मण्डल को एक निगम मे बदलने व आशिक रूप से निजी हाथो मे सौपने तथा इसके कामकाज मे व्यापक सुधार करने के सुझाव दिए गए है।

आशा है राज्य सरकार समिति की सिफारिशो पर उचित निर्णय लेकर सरकारी उपक्रमो मे सुधार की दिशा मे आवश्यक कदम उठाएगी।

प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. राजस्थान मे अब तक सबसे ज्यादा सचित घाटा किस उपक्रम को हुआ है?
   (अ) राज्य विद्युत मण्डल (ब) राजस्थान वित्त निगम
   (स) राज्य कृषि–उद्योग निगम लि (द) हथकरघा विकास निगम लि (अ)
2. राजकीय उपक्रमो की वित्तीय दशा को सुधारने के लिए क्या किया जाना चाहिए?
   (अ) अतिरिक्त स्टॉफ मे कमी (ब) टेक्नोलोजी का उन्नयन
   (स) उचित कीमत–निर्धारण (द) सभी (द)
3. निम्न मे से कौन–सा उपक्रम निगम (corporation) नहीं माना जाएगा?
   (अ) राज्य विद्युत मण्डल
   (ब) राज्य सडक परिवहन निगम
   (स) राजस्थान राज्य औद्योगिक विकास व विनियोग निगम लि
   (द) राजस्थान वित्त निगम (स)
4. निम्न मे से राजस्थान का कौन सा राजकीय उपक्रम बन्द है?
   (अ) राज्य वन विकास लि
   (ब) राजस्थान सरकार साल्ट वर्क्स, पचपदरा
   (स) राज्य केमिकल वर्क्स (सोडियम सल्फाइड फैक्ट्री), डीडवाना
   (द) सभी (द)

अन्य प्रश्न

1. राजस्थान मे सार्वजनिक उपक्रमो की वित्तीय कार्यसिद्धि का परिचय दीजिए तथा, इसको सुधारने के लिए आवश्यक सुझाव दीजिए।
2. सक्षिप्त टिप्पणी लिखिए–
   (i) राज्य विद्युत मण्डल का घाटा,
   (ii) राज्य सरकार के उपक्रमों की वित्तीय कार्यसिद्धि,
   (iii) राजस्थान सरकार के सार्वजनिक उपक्रमो की लाभप्रदता को बढाने के उपाय।